बुन्देलखण्डी लोककथाओं में कथाभिप्राय

डी०फिल्० उपाधि के लिए प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध

निर्देशिका

डॉ० मालती सिंह

आचार्य, हिन्दी विभाग

इलाहाबाद विश्वविद्यालय

इलाहाबाद

शोधकर्त्ता

यशवन्त सिंह

हिन्दी विभाग

इलाहाबाद विश्वविद्यालय

इलाहाबाद

1998

आमुख

प्रत्येक व्यक्ति बाल्यावस्था से ही अपने जीवन की विशिष्ट घटनाओं को स्मृति-पटल में अमूल्य थाती के रूप में आजीवन संजोए रखता है। इन्हीं घटनाओं में दादी, नानी एवं माता से सुनी हुई लोककथाएँ भी होती हैं, जो सदियों से मनुष्य का मनोरंजन करती आई हैं। जैसे-जैसे मनुष्य की वय बढ़ती जाती है, वह उनमें और संचय करता जाता है; फिर पैतृक-सम्पत्ति के समान कथा-सम्पत्ति को वह अपनी अगली पीढ़ी को हस्तांतरित कर देता है।

बाल्यावस्था से लोककथा सम्पत्ति के मानसिक प्रभुत्व को देखकर एक विचार सायास व अनायास मन-मस्तिष्क को उद्वेलित करता रहा कि इन विशुद्ध काल्पनिक कही जाने वाली लोककथाओं में ऐसी क्या मूढ़ता है कि मनुष्य प्रबुद्ध और परिपक्व होने पर भी इनके प्रति मोह को त्याग नहीं पाता है।

लोककथाओं के प्रति उत्पन्न जिज्ञासा हृदय में अपना स्थान बना चुकी थी; अतः जब शोध-कार्य के लिए विषय-चयन का प्रश्न उपस्थित हुआ तो, लोककथाओं की तात्त्विक-भिज्ञता प्राप्त करने की बात मस्तिष्क में जाग्रत हुई। लेकिन लोककथाओं का क्षेत्र अथाह-सिन्धु होने के कारण इसके लिए क्षेत्र निर्धारित करना अपरिहार्य था। बुन्देलखण्ड से जन्म एवं लालन-पालन का सम्बंध होने के कारण क्षेत्र-विशेष के निर्धारण की समस्या का समाधान सहज हो गया और बुन्देलखण्ड की लोककथाओं को अपने शोध-विषय का क्षेत्र निर्धारित किया।

हिन्दी-भाषा प्रदेशों में राजस्थान एवं ब्रज-क्षेत्र की तरह बुन्देली-क्षेत्र भी लोककथाओं की दृष्टि से अत्यन्त धनी है। यद्यपि अपने शोध के लिए एकत्रित बुन्देली लोककथाओं को सम्पूर्णतः तो नहीं कह सकता, फिर भी मैंने प्रत्येक दृष्टि से बुन्देली-क्षेत्र की विशिष्ट लोककथाओं को अपने शोध-प्रबंध में समेटने का प्रयास अवश्य किया है।

प्रस्तुत शोध-प्रबंध में सम्पूर्ण विषय-वस्तु को तेरह अध्यायों में विभाजित किया गया है।

प्रथम अध्याय में अभिप्राय, कथाभिप्राय, एवं लोककथा के सैद्धान्तिक पक्ष पर विभिन्न पहलुओं से प्रकाश डाला है। अभिप्राय का विस्तार लोककथाओं के साथ संगीत, कला एवं साहित्य के क्षेत्र में भी पाया जाता है। लोककथाओं में कतिपय ऐसी विशिष्ट घटनाओं का समावेश मिलता है, जिन्हे कथाभिप्राय कहा जाता है। ये कथाओं में प्रयुक्त होकर उन्हें गति प्रदान करते हैं, चमत्कार उत्पन्न करते हैं, तथा उनमें रोचकता की सृष्टि करते है। लोककथाओं में चरित्र- उद्घाटन एवं नैतिक-शिक्षा की दृष्टि से भी ये कथाभिप्राय उपयोगी हैं। कथाभिप्रायो के अध्ययन से सांस्कृतिक धरातल पर विश्व की एकता व सार्वजनिकता सिद्ध होती है अर्थात् इनका प्रयोग विश्व की लोककथाओं में समान रूप से होता है। अध्याय के अन्त में लोककथा को परिभाषित करते हुए उसके विभिन्न तत्वों पर प्रकाश डाला गया है।

द्वितीय अध्याय बुन्देली भाषा के क्षेत्र, संस्कृति व बुन्देली लोककथाओं की सामान्य विशेषताओं पर केन्द्रित है। किसी भी क्षेत्र की लोकसंस्कृति का प्रभाव वहाँ की लोककथाओं पर पड़ता है। फलस्वरूप उसके अनुसार ही कथाभिप्रायो की रचना एवं प्रयोग होता है। अत: किसी भी लोकभाषा की कथाओं का अध्ययन उस क्षेत्र-विशेष की भाषा एवं संस्कृति के अध्ययन के बिना अधूरा रहेगा। इसलिए यहाँ बुन्देली-क्षेत्र की भाषा और लोकसंस्कृति का विवेचन प्रस्तुत किया गया है, जिससे स्पष्ट हो जाता है कि विभिन्न युगों की संस्कृतियों को आत्मसात करते हुए बुन्देली भाषा एवं लोकसंस्कृति ने निजता प्राप्त की है। अध्याय के अन्त में बुन्देली लोककथाओं का सामान्य परिचय देते हुए उनका वर्गीकरण प्रस्तुत किया गया है।

शोध-प्रबंध में आगे बुन्देली लोककथाओं में प्राप्त अभिप्रायों को उनकी प्रकृति के अनुसार विभिन्न पृथक अध्यायों में विभाजित किया गया है।

तृतीय अध्याय में 'परकाय-प्रवेश' कथाभिप्राय को विवेचित किया गया है। यह कथाभिप्राय लोकविश्वास के साथ यौगिक सिद्धियों द्वारा भी समर्थित रहा है, जिसे एककाय प्रवेश तथा बहुकाय प्रवेश में विभाजित किया गया है। एककाय प्रवेश में जीवित मानव में प्रवेश, मृत मानव में प्रवेश, पशु-पक्षियों में प्रवेश तथा जड़ पदार्थों में प्रवेश का विवेचन महाभारत, कथासरित्सागर , भक्तमाल, बेताल-पच्चीसी तथा विभिन्न बुन्देली व ब्रज की लोककथाओं से प्राप्त उदाहरणों के आधार पर किया गया है।

चतुर्थ अध्याय में 'प्राणों की अन्यत्र स्थिति' कथाभिप्राय को विवेचित किया गया है। जिसके अनुसार किसी व्यक्ति के प्राण उसके शरीर से बाहर भी किसी वस्तु में सुरक्षित रह सकते हैं तथा वह व्यक्ति तभी मर सकता है जब उसके प्राण-निहित आधार को नष्ट कर दिया जाय। इसे शरीर के बाहर प्राणों की स्थिति तथा शरीर के किसी विशेष अंग में प्राणों की स्थिति, में विभाजित करके विवेचित किया गया है।

पंचम अध्याय में 'रूप-परिवर्तन' कथाभिप्राय को विवेचित किया गया है। जिसके अनुसार मनुष्य या मनुष्येत्तर प्राणी अपना रूप बदल सकते हैं अथवा उनके द्वारा अन्य व्यक्तियों का रूप परिवर्तित किया जा सकता है। इस कथाभिप्राय को तीन भागों में विभाजित किया किया है, जिसमें प्रथम के अन्तर्गत किसी अलौकिक शक्ति या विद्या द्वारा रूप परिवर्तन को विश्लेषित किया गया है। द्वितीय के अर्न्तगत किसी मंत्रविद, तांत्रिक, जादूगर के द्वारा रूप-परिवर्तन को तथा तृतीय के अन्तर्गत किसी सरोवर में स्नान करने, किसी वस्तु को खाने व किसी वस्त्र-विशेष के धारण करने से हुए रूप परिवर्तन को उदाहरण देकर विश्लेषित किया गया है।

षष्ठ अध्याय के अन्तर्गत उन सभी 'निबंधों' को विवेचित किया है, जिनके उल्लंघन से नायक अथवा नायिका को अनेक कष्ट सहने पड़ते हैं। इस कथाभिप्राय को

कक्ष-विशेष में गमन का निषेध, भेद को प्रकट करने का निषेध, स्थान-विशेष में ठहरने का निषेध, दिशा-विशेष में गमन का निषेध, पीछे लौटकर देखने का निषेध, तथा लालचवश या आकर्षित होकर निषेधों का उल्लंघन करने में विभक्त करके विश्लेषित किया गया है। जिससे यह विदित होता है कि निषेध तथा उसका उल्लंघन प्रायः एक साथ जुड़े रहते हैं।

सप्तम् अध्याय में 'शर्त-बदना' कथाभिप्राय को विवेचित किया है। जिसके अन्तर्गत किसी इच्छित वस्तु की प्राप्ति के शर्त और नायिका से विवाह करने के लिए विभिन्न कठिन एवं दुस्साध्य शर्तें सम्मिलित हैं, जो नायक द्वारा पूरी की जाती है।

अष्ठम् अध्याय में 'सहायक घटक' कथाभिप्राय की विवेचना की गई है। लोककथाओं में प्रायः संकटग्रस्त नायक या नायिका की सहायता करने कोई देवी-देवता, साधु-सन्यासी, अति मानवीय प्राणी, लौकिक प्राणी या पशु-पक्षी अवश्य आते हैं। जिनके माध्यम से नायक या नायिका के प्राणों की रक्षा होती है तथा वे अपना लक्ष्य प्राप्त करने में सफल होते हैं।

नवम् अध्याय में 'वरदान एवं शाप' कथाभिप्राय को विवेचित किया गया है। किसी अलौकिक शक्ति सम्पन्न व्यक्ति के प्रसन्न होने पर उसके द्वारा कहे गये कथन को 'वरदान' तथा उसके रुष्ट होने पर कहे गये कथन को 'शाप' कहते हैं। इस कथाभिप्राय को देवी-देवताओं द्वारा वरदान एवं शाप, अलौकिक शक्ति सम्पन्न व्यक्तियों द्वारा वरदान एवं शाप तथा स्त्रियों द्वारा किया गया वरदान एवं शाप में विभक्त किया गया है तथा उनसे सम्बन्धित उदाहरण कथाओं से देकर विश्लेषित किया गया है।

दशम् अध्याय में 'प्रेममूलक अभिप्रायों' को विवेचित किया गया है। 'प्रेम' तो एक शाश्वत सत्य है किन्तु उसकी अभिव्यक्ति के साधन समय-समय पर बदलते रहे हैं। जिनमें स्वप्न-दर्शन जन्य प्रेम, चित्र-दर्शन-जन्य प्रेम, मूर्ति-दर्शन-जन्य प्रेम, रूप-गुण-श्रवण-जन्य प्रेम- प्रेम-सन्देश-जन्य प्रेम, साहचर्य-जन्य-प्रेम तथा सांकेतिक-भाषा-जन्य प्रेम के

उदाहरण विविध कथाओं से प्रस्तुत किए गये हैं।

एकादश अध्याय में 'आकाश-गमन' कथाभिप्राय को विवेचित किया गया है। प्रायः आकाश-मार्ग से एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचने की विद्या को आकाश-गमन नाम दिया जाता है। भारतीय कथाओं में देवी-देवता, विद्याधर, गन्धर्व आदि अतिप्राकृत शक्तियाँ तो जन्मना ही इस तरह की विद्याओं में पारंगत रही हैं। दूसरी ओर आकाश-गमन यौगिक क्रियाओं द्वारा भी समर्थित रहा है। बुन्देली तथा अन्य बोलियों की लोककथाओं के उदाहरण देकर इस अभिप्राय का विवेचन प्रस्तुत किया गया है।

द्वादश अध्याय में 'इच्छित भोज्य-पदार्थ देने वाले पात्र' कथाभिप्राय को विवेचित किया गया है। भारतीय कथाओं में इच्छित पदार्थ देने वाले ऐसे पात्रों का उल्लेख मिलता है, जिससे मनचाही भोज्य-वस्तुएँ तुरन्त प्राप्त की जा सकती हैं। इसी तरह लोककथाओं में भूख-प्यास से व्याकुल नायक या नायिका को देवी-देवता, साधु पुरुष या किसी अतिमानवीय प्राणियों के द्वारा ऐसे पात्रों की प्राप्ति हो जाती है, जिनकी सहायता से वे मनचाही भोज्य-वस्तुएँ प्राप्त करते हैं। इन सभी के उदाहरण कथाओं से प्रस्तुत किये गये हैं।

त्रयोदश अध्याय में 'हँसने से फूल बरसना, रोने से मोती' कथाभिप्राय को विवेचित किया गया है। इस कथाभिप्राय में नायक को प्रायः ऐसी सुन्दरी को ले आने का कार्य सौंपा जाता है , जिसके हँसने से फूल तथा रोने से मोती झरते हैं। किसी कथा में चिड़िया के हँसने से फूल तथा रोने से मोती झरने के वर्णन भी मिलते हैं। कथाभिप्राय के इन दोनों प्रकारों को लोककथाओं से उदाहरण देकर प्रस्तुत किया गया है।

'परिशिष्ट' में विभिन्न पाश्चात्य तथा भारतीय विद्वानों द्वारा अब तक किए गये कथाभिप्रायों के अध्ययन को दर्शाने का प्रयास किया गया है।

अभी तक मैंने ध्वनि संयोजक यन्त्र (टेप-रिकार्डर) की सहायता से बुन्देली-क्षेत्र की लगभग चौसठ अप्रकाशित लोककथाओं का संग्रह विभिन्न आयु-वर्ग के कथक्कड़ों से सुनकर किया है। जिनमें मुन्नूलाल कुरील, अवस्था- 20वर्ष; अर्जुन सिंह, अवस्था-70 वर्ष; श्रीमती गिरिजा देवी, अवस्था- 48 वर्ष ; राजाराम कुशवाहा, अवस्था- 40 वर्ष; देवीदीन (रैदास) , अवस्था- 65 वर्ष व गीता (श्रीमती) उर्फ गुड्डन, अवस्था- 20 वर्ष शामिल हैं। इनमें से आठ लोककथाओं को परिशिष्ट में प्रस्तुत किया गया है।

स्वयं संग्रहीत इन लोककथाओं के साथ ही विभिन्न विद्वानों द्वारा संकलित की गयी लगभग तीन सौ बुन्देली लोककथाओं का उपयोग मैंने अपने शोध-प्रबंध में किया है। जिनमें शिवसहाय चतुर्वेदी, बटुक चतुर्वेदी, श्रीकान्त व्यास, ओम प्रकाश चौबे, नर्मदा प्रसाद गुप्त के नाम प्रमुख हैं।

शोध-कार्य के लिए सर्वप्रथम मैं अपनी गुरू आदरणीया **डॉ0 मालती सिंह** के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट कर रहा हूँ, जिनकी प्रेरणा एवं प्रयास से यह कार्य पूरा हो सका है। इसके पश्चात् मैं अपनी पूज्यनीया माँ **श्रीमती गिरिजा देवी** के प्रति नतमस्तक हूँ, जिन्होंने मुझे बचपन से ही मनोरंजक कथाएँ सुनाकर इस विषय पर शोध करने की रुचि पैदा की। नतमस्तक हूँ अपने पूज्यनीय पिता **श्री राम औतार सिंह** के प्रति भी, जिनके अटूट धैर्य के चलते मैं यह कार्य पूरा करने में सक्षम हुआ हूँ।

मैं आभारी हूँ उन सभी कथक्कड़ों का, जिन्होंने मेरे बुन्देली लोककथा संग्रह में मौलिक योगदान दिया। इसके अतिरिक्त मैं विशेष आभारी हूँ उन सभी महानुभावों- **सर्वश्री हरिमोहन मालवीय,** अध्यक्ष हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद ; **स्व0 डॉ0 गनेशीलाल बुधौलिया,** राठ , हमीरपुर (उ0प्र0) व **श्री उदयशंकर दुबे,** साहित्य विभाग, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग; का, जिन्होंने समय-समय पर मुझे परामर्श व सुझाव देकर शोध-कार्य पूरा होने में अमूल्य योगदान दिया। शोध-प्रबंध के टंकणकर्ता **श्री राम राज पाण्डेय** को मैं धन्यवाद ज्ञापित कर रहा हूँ, जिनकी मेहनत से यह शोध-प्रबंध इस रूप में सामने है।

अपने शोध में मैंने राजकीय संग्रहालय, अजमेर के पुस्तकालय; भोपाल विश्वविद्यालय पुस्तकालय, जबलपुर विश्वविद्यालय पुस्तकालय, सागर विश्वविद्यालय पुस्तकालय व हिन्दी विभाग के अन्तर्गत स्थापित बुन्देली-पीठ; शासकीय पुस्तकालय, टीकमगढ़ एवं दिल्ली विश्वविद्यालय पुस्तकालय सहित इलाहाबाद में स्थित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद विश्वविद्यालय एवं रामकृष्ण मिशन सेवाश्रम के पुस्तकालयों का विशेष रूप से सहयोग लिया। इसके अतिरिक्त हमीरपुर, महोबा, झाँसी, टीकमगढ़, छतरपुर, सागर आदि जिलों में स्थित विभिन्न स्थानों में जाकर बुन्देली लोककथाओं एवं लोकसंस्कृति से सम्बन्धित सामग्री संकलित की, जो शोध-कार्य में अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुई।

*****

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

(2) हिन्दी की लोककथाओं के कथाभिप्रायों का अध्ययन (3) स्वय संग्रहीत बुन्देली लोककथायें- पडित-पंडिताइन, निपुत्री राजा, उजबासा रानी, राजा की लड़की, निपूता राजा, शंकर-घरघालन, तुम्हई आय पयार तरे घुसै रहा, राजा के लड़का व नेऊरा। 327-38

*****

****

अध्याय-एक

क- **अभिप्रायः** अर्थ, क्षेत्रविस्तार- संगीत, कला, साहित्य, लोककथा

ख- **कथाभिप्रायः** अर्थ, विशेषताएँ

ग- **कथाभिप्रायों का महत्वः** कथानक को मोड़ देना, चमत्कार उत्पन्न करना, रोचकता की सृष्टि, चरित्र-उद्घाटन, नैतिक-शिक्षा

घ- **कथाभिप्रायों के अध्ययन का महत्वः** सांस्कृतिक, मनोवैज्ञानिक, नृतत्वशास्त्रीय, समाजशास्त्रीय

ड.- **लोककथाः** परिभाषा, विभिन्न तत्व।

****

(क) अभिप्राय: अर्थ, क्षेत्रविस्तार

'अभिप्राय' अंग्रेजी का शब्द 'मोटिफ' (Motif) का हिन्दी पर्याय है, जिसका अर्थ मूल-भाव या आशय होता है। 'डिक्शनरी ऑव वर्ल्ड लिटरेचर' में 'मोटिफ' की परिभाषा इस प्रकार मिलती है- 'एक ऐसा शब्द अथवा विचारों का प्रारूप, जो किसी एक रचना में अथवा एक वर्ग की विभिन्न रचनाओं में समान परिस्थिति में घटित होता है अथवा समान भाव को उत्पन्न करता है।'[1]

'हिन्दी साहित्य कोश' में 'अभिप्राय' को इस प्रकार परिभाषित किया गया है- 'सामान्यतया रूढ़ि अथवा अभिप्राय का प्रयोग एक दूसरे के पर्याय के रूप में किया जाता है। अभिप्राय- जिसे अंग्रेजी में 'मोटिफ' कहते हैं, उस शब्द अथवा एक साँचे में ढ़ले हुए उस विचार को कहते हैं, जो समान परिस्थितियों में अथवा समान मनः स्थिति और प्रभाव उत्पन्न करने के लिए किसी एक कृति अथवा एक ही जादि की विभिन्न कृतियों में बार-बार आताा है।'[2]

सामान्यतः 'अभिप्राय' शब्द किसी भी प्रकार की पुनरावृत्ति को कहा जाता है। डॉ0 त्रिलोचन पाण्डेय के अनुसार- 'ये वस्तुतः किसी रचना की रूपगत विशेषताओं के द्योतक होते हैं, जो परम्परा में प्रयुक्त होते रहने के कारण एक ही साँचे में ढले जान पड़ते हैं और समान परिस्थितियों अथवा मनः स्थितियों को उत्पन्न करने के लिए बारम्बार प्रयुक्त होते हैं।'[3]

1- Motif- "A world or pattern of thought which recurs in a similar situation, or to evoke a similar mood, within a work, or in various works of a genere."
(Dictionary of World Literature, Joseph T. Shipley, P. 274)

2- हिन्दी साहित्य कोश (भाग एक), धीरेन्द्र वर्मा, पृ0-159

3- लोक साहित्य का अध्ययन, डॉ0 त्रिलोचन पाण्डेय, पृ0-265

भारतीय विद्वानों में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने सर्वप्रथम 'मोटिफ' के लिए 'कथानक-रूढ़ि' शब्द का प्रयोग किया। अन्य विद्वानों में डॉ0 कन्हैयालाल सहल ने इसे 'रूढ़-तन्तु', 'मूल-अभिप्राय', 'प्ररूढ़ियाँ' आदि नाम दिए; श्री श्यामाचरण दुबे ने इसे 'मूल या मुख्य-लक्षण' कहा। श्री कृष्णानन्द गुप्त ने इसे 'विशेष-लक्षण' कहा तो डॉ0 सत्येन्द्र ने इसे 'कलातन्तु' तथा 'अभिप्राय' नाम दिये। आजकल 'मोटिफ' के लिए 'अभिप्राय' शब्द का प्रयोग स्वीकार किया जा चुका है।

वस्तुतः 'अभिप्राय' की पहचान सबसे पहले संगीत के क्षेत्र में है।' सन् 1887 ई0 में हेन्सवोन वोल्जोजेन ने जर्मन शब्द 'लिट-मो-टेफ' (Lit-Mo-tef) जिसका अर्थ 'प्रमुख- उद्देश्य' (Leading Motive) या अभिप्राय है, को रिचर्ड वॉन्जर (1813-83 ई0) के संगीत-नाटकों में प्रयुक्त संक्षिप्त आवर्त्तक सुरीले अंशों के प्रकार की व्याख्या के लिए प्रयोग किया, जिसे वॉन्जर ने मूल विषय (Grund theme) कहा है।[1]

इस तरह संगीत से आरम्भ होकर अभिप्राय शब्द नाटक, साहित्य, लोकसाहित्य से होता हुआ लोककला एवं उसके नमूनों के लिए भी प्रयुक्त हुआ। अभिप्राय का क्षेत्र अत्यंत व्यापक है; इसकी व्यापकता को ध्यान में रखते हुए विद्वानों ने इसको दो मुख्य भागों में विभाजित किया- (1) कलात्मक- मूर्ति, संगीत, चित्र आदि कलाओं में पाये जाने वाले अभिप्राय एवं (2) साहित्यिक- जो नाटक, गाथा, काव्य एवं लोककथा आदि में प्रयुक्त किए जाते हैं। यह कहना अधिक समीचीन होगा कि अभिप्राय का व्यापक प्रयोग लोककथा, लोककला एवं लोकसंगीत के क्षेत्रों में विशिष्टता के साथ अपने मन्तव्य का स्पष्टीकरण कर उसे सार्वभौमिक एवं सामूहिक जीवन-पद्धति के चिन्तन का स्पर्श प्रदान करता है।

---

1. Encyclopaedia Americana, Vol.-17, Page-248.

'संगीत-कला' के अन्तर्गत गायन,वादन और नर्तन अर्थात् गाना, बजाना और नाचना का समावेश मिलता है। भारतीय संगीत को दो भागों में विभाजित किया गया है- {1} शास्त्रीय संगीत और {2} देशीय संगीत। इनमें शास्त्रीय संगीत ध्वनि प्रधान होता है, जबकि देशीय संगीत शब्द प्रधान होता है। ध्वनि को प्रधान मानकर राग-सुरों आदि के विशेष विधान से गाया जाने वाला संगीत 'शास्त्रीय संगीत' कहलाता है। संगीत या गायन भी और कलाओं की तरह प्रयोग प्रधान है। प्रयोग पहले होता है, शास्त्र या सिद्धान्त पीछे बनता है। इन्हीं शास्त्र या सिद्धान्तों के अन्तर्गत कतिपय रूढ़ियाँ प्रारम्भ से ही प्रयोग में चली आ रही हैं, जिन्हें 'संगीत-अभिप्राय' की संज्ञा दी जाती है। भारतीय शास्त्री-संगीत में शुद्ध-स्वर सात माने गये हैं- 'षड्ज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम पंचम, धैवत और निषाद।'[1] मुख्य रागों की संख्या छः हैं - 'श्री, बसंत, भैरव, पंचम, मेघ, नट्नारायण।'[2] इनमें पाँच शिवजी के मुख से तथा नट्नारायण पार्वती जी के मुख से उत्पन्न माने गये हैं। इनमें से प्रत्येक राग में छः-छः रागनियाँ भी प्रयुक्त होती हैं। इन रागों की उत्पत्ति शिव-पार्वती नर्तन के समय मानी गयी है।

संगीत में सात शुद्ध स्वरों का प्रयोग किया जाना संसार में सात समुद्र , सात महाद्वीप व सात आश्चर्यों की तरह एक 'अभिप्राय' है। रागों के गाने में काल या समय का निश्चित विधान होता है, उदाहरणार्थ- राग भैरवी सुबह के समय गाया जाता है तो श्रीराग के अन्तर्गत आने वाला राग पहाड़ी दिन के तीसरे पहर के बाद से लेकर अर्द्धरात्रि तक गाया जा सकता है। इन रागों के गाने मे ऋतु नियम भी हैं, उदाहरणार्थ- 'श्रीराग एवं उसकी रागनियों को शिशिर ऋतु में गाया जाता है तो राग वसंत- बसंत ऋतु में , भैरव- ग्रीष्म ऋतु में, पंचम- शरद ऋतु में, मेघ- वर्षा ऋतु में तथा नट्नारायण-हेमन्तु ऋतु में गाया जाता है।[3] प्राचीन

1- 'संगीत-शास्त्र', के0 वासुदेव शास्त्री, पृ0-26

2- वही, पृ0-185

3- वही, पृ0-188

समय में प्रचलित दीपक राग ग्रीष्म-ऋतु में गाया जाता था, लेकिन तानसेन के बाद इसका प्रचलन नही रहा। विशेष अवसर और काल-ऋतु आदि के विशेष राग इसलिए होते हैं क्योंकि आदमी और प्रकृति के स्वभाव में काफी समता है शास्त्रीय-संगीत के गायक इन नियमों का परम्परा से पालन करते चले आये हैं तथा ये संगीत-कला सम्बंधी रूढ़ियाँ या अभिप्राय कहे जाते हैं।

देशीय-संगीत के अन्तर्गत लोकगीत तथा लोकसंगीत का समावेश मिलता है। संगीत-शास्त्र की दृष्टि से लोकगीतों का महत्व अत्यधिक है। यद्यपि लोकगीतों में संगीत का सर्वांगपूर्ण शास्त्रीय रूप नही पाया जाता परन्तु लोकसंगीत शास्त्रीय-संगीत से सर्वथा पृथक भी नही है। लोकगीतों के गाने की पद्धति में एक विशेषता 'स्तोभ' की प्रणाली है जो लोकसंगीत का एक अभिप्राय है। 'स्तोभ' शब्द का अर्थ है ऐसी वस्तु या शब्द जो बीच में जोड़ दिया गया हो। गीतों को गाते समय नये शब्दों को जोड़ने की यह प्रथा सामवेद के काल से चली आ रही है। लोकगीतों के गायन में तीन तरह के स्तोभ उपलब्ध होते हैं-

(1) वर्ण-स्तोभ (2) पद-स्तोभ (3) वाक्य-स्तोभ। कहीं-कहीं 'मात्रा-स्तोभ' भी मिलता है। ये स्तोभ लोकगीतों में गायन की सुविधानुसार आदि मध्य अथवा अन्त में जोड़े जाते हैं; उदाहरणार्थ बुन्देलखण्ड में 'खेतों में बुवाई के समय गाया जाने वाला' 'रसिया' लोकगीत दृष्टव्य है-

'अरे रामा हो, ऊँचे से सेंमरा उगमगे,
फूले हैं लाल गुलाब
कौन बरन बाकी बौड़िया
कौन बरन फूल होय।
अरे रामा हो, हरद बरन बाकी बौंडिया
लाल बरन फूल होय।
को जौ फुलवो बीनन चले

बाबुल चूनर रंगाय

अरे रामा हो, पवन चले पुरवैया हो

फुलवा झर झर जाय।

दै देव माई टिपनियाँ हो,

हम फूल बीनन जॉय

अरे रामा हो, फूल तो सब बटोर लये।

चूनरी रंगाली रंगाय।

आन दो बेटी महुविया हो,

चुनरी कुसुमी रंगाय। अरे रामा हो.....".[1]

इस लोकगीत में 'अरे रामा हो' का प्रयोग 'पद-स्तोभ' का उदाहरण है, जिससे लोकगीत गाने में तारतम्यता आ जाती है। लोकगीतों में इन स्तोभों का प्रयोग रूढ़ि-रूप में होता है। इसी तरह लोकगीतों में 'टेक पदों की पुनरावृत्ति' बारम्बार मिलती है जो कि लोकसंगीत सम्बंधी रूढ़ि या अभिप्राय है, उदाहरणार्थ विवाह के अवसर पर 'चढाव' रस्म में गाया जाने वाला गीत दृष्टव्य है -

सिया जू को चढ़त चढ़ाव, जनक दशरथ मोहरये

कानन के तरका, पेटी अजब बनी, बिंदिया रतन जड़ाव।

सिया जू.........

हाथन को कगना अजब बनौ, झुमका है रतन जड़ाव।

सिया जू............

कम्मर को करधन अजब बनौ,

गुलूबंद है रतन जड़ाव।

सिया जू......

छांगल बहुतइ अजब बनौ, पौंची हैं रतन जड़ाव।

सिया जू........."[2]

1- बुन्देलखण्ड का लोकजीवन, अयोध्या प्रसाद गुप्त 'कुमुद', पृ0-31 व 32

2- वही, पृ0-15

इस लोकगीत में प्रथम पंक्ति जो कि टेक पद है, की पुनरावृत्ति बारम्बार मिलती है, जो कि रूढ़ि या अभिप्राय है। लोकगीतों में 'चैता,' 'कजरी,' 'बारहमासा,' उत्तर प्रदेश के पूर्वी जिलों तथा बिहार के पश्चिमी जिलों में गाये जाते हैं। 'बाउल' बंगाल के लोकगीत हैं। पंजाब में 'महिमा' इसी प्रकार के गीत हैं। होली के अवसर पर बृज में 'रसिया' चलता है तो उत्तर प्रदेश के पूर्वी इलाकों में 'जोगीड़ा' नाचा जाता है। भोजपुरी-भाषी क्षेत्रों में 'विदेशिया' प्रचलित है तो बुन्देलखण्ड मे 'आल्हा' गाया जाता है। लोकगीतों की ये विभिन्न शैलियाँ यद्यपि अन्य क्षेत्रों में भी प्रचलित मिलती हैं लेकिन अपने-अपने क्षेत्र विशेष के साथ इनका नाम रूढ़ हो गया है।' चूंकि क्षेत्रीय विशेषताओं के भी अपने अभिप्राय होते हैं। इसलिए इनको लोकगीतों की संगीत-शैली सम्बंधी अभिप्राय कहा जाता हैं।

अभिप्राय का क्षेत्र-विस्तार विभिन्न 'कला-रूपों' में मिलता है या विभिन्न कला-रूपों के अपने अलग-अलग अभिप्राय होते हैं। कला के जातीय-रूप जो चिरकाल से चले आ रहे हैं, इन्हें ही कला-सम्बंधी अभिप्रायों की संज्ञा दी जाती है। विविध प्रकार के स्थापत्य , मन्दिर, मूर्तियाँ, चित्र, लोकप्रथाएं, रीति-रिवाज की अनवरत् परम्परा लोकजीवन में मिलती है। प्रागैतिहासिक काल के पशु-पक्षियों के रेखांकन, हड़प्पा-सभ्यता की कलाकृतियाँ आज भी लोककलाओं में प्राप्त होती हैं, इनमें कला के प्रति भावना भी वही है जो पहले थी। उदाहरण के लिए हड़प्पा सभ्यता से मिट्‌टी की बनी हुई, उर्वरता की प्रतीक 'मातृदेवी' की मूर्तियाँ प्राप्त होती हैं जिनका प्रभाव आज भी लोककलाओं में प्राप्त होता है। हड़प्पा वासियों की यह धारणा की सृष्टि के आधार, संचालन तथा विनाश की शक्ति मातृदेवी में निहित है, कदाचित आज भी मान्य है और मातृदेवी की 'आद्य-शक्ति' के रूप में उपासना होती है।

भारतीय-संस्कृति में आठ मांगलिक चिन्हों- घट, स्वस्तिक, कमल, पंचागुलक, श्रीवत्स (चतुर्दल पुष्प), शंख, चक्र तथा मीनयुग्म का विधान मिलता हैं। जिसमें घट-शुभदायी मंगलकारी, स्वस्तिक-सार्वभौमिक, कमल-भारतीय संस्कृति का विश्वकोष, पंचागुलक- पंचतत्व का प्रतीक, श्रीवत्स- सम्पन्नता का प्रतीक, शंख- आकाश तत्व का प्रतीक, चक्र- निरन्तरता

का प्रतीक, व मीनयुग्म- सदैव लोकप्रियता का प्रतीक माना गया है। खाली स्थान या दरवाजों के खाली चौखट, खाली प्रवेश द्वारों पर इनका चित्रण रूढ़ि या अभिप्राय के रूप में होता चला आया है।

'विष्णुधर्मोत्तर-पुराण' के 'चित्रसूत्र' में चित्रकला सम्बंधी मान्यताएं यों मिलती हैं- 'देवताओं, नागों, किन्नरों, यक्षों का रूप सौम्य तथा राक्षसों का भीषण होना चाहिए, उनके केश उठे हुए एवं आँखें तनी हुई होनी चाहिए। वियोगिनी का वस्त्र श्वेत होना चाहिए, चिन्ता के कारण उसके केश पक चले हों, तन पर आभूषण न हो। सेनापति को खूब लम्बे-चौड़े शरीर का, भारी भुजा, कंधे और ग्रीवा वाला तथा चढ़ी भृकुटी वाला बनाना चाहिए, उसकी आकृति दृप्त और ऊर्जित होनी चाहिए। योद्धाओं को सैनिक वस्त्रों में और शास्त्रास्त्र से सजे होने चाहिए। गायक-नर्तकों का वेश उद्धत होना चाहिए। नगर और देहात के लोगों को भले वस्त्र पहने हुए और स्वभाव से प्रियदर्शी उरेहना चाहिए। कारीगरों को अपने काम में लगे हुए दिखाना चाहिए। पहलवानों को विशालकाय भरे कल्ले वाले और बदन पर मिट्टी लगाये दिखाना चाहिए। देश-देश के लोगों को ऐसा बनाना चाहिए कि वे उस-उस देश के मालूम हों, क्योंकि चित्र में सादृश्यकरण ही प्रधान है । नदी-देवताओं को हाथ में पूर्ण कुम्भ लिए हुए वाहनों पर दिखाना चाहिए समुद्र को हाथ में रत्न का पात्र लिए हुए बनाना चाहिए, उनके ज्योतिमंडल के स्थान पर पानी अंकित करना चाहिए।[1] चित्रकला सम्बंधी इन मान्यताओं कापालन रूढ़ियों के रूप में होता आया था तथा इनको चित्रकला के अभिप्रायों की संज्ञा दी जाती है।

भारतीय कला के आधारभूत तत्व- अग्नि, वायु, जल, आकाश और पृथ्वी के विविध पदार्थ हैं; इन्हें पंचमहाभूत तत्व कहते हैं। इनमें अग्नि का स्वरूप त्रिकोण , ऊर्ध्व रूप है; वायु का प्रतीक लहरदार, सर्पाकार गति रूप रेखाएं हैं; सूर्य, चन्द्रमा आकाश के

1- 'भारत की चित्रकला', रायकृष्णदास, पृष्ठ 21 व 22

साक्षी हैं; कोई भी मूर्ति चाहे वह मिट्टी की बनी हो, धातु की हो, गोबर की हो, वह पृथ्वी पदार्थ का प्रतीक है। कला के अन्तर्गत इन सब प्रतीकों का प्रयोग रूढ़ि या अभिप्रायों के रूप में होता है। भारतीय कला में शिव और विष्णु दोनों ऐसे प्रतीक हैं, जो अवगुण और गुणों की खान हैं-

'महादेव अवगुण भवन विष्णु सकल गुण धाम।
जाके जा पै मन रमै ताहि ताहि सो काम।।'

-(बालकाण्ड- रामचरित मानस)

'लोक-कलाएँ' समूचे समाज में पूर्ण स्वतंत्रता के साथ व्यवहार में लायी जाती हैं; उनके लिए किसी प्रकार की वर्जनाएं, प्रतिबंध अथवा नियमों के बंधन नही होते हैं। अधिकांश लोककलाएं जीवन के विविध संस्कारों, तिथि-त्योहारों, आदि से जुड़ी हुई हैं, जिनमें जनजीवन की छवि अंकित की जाती है। लोककला में डिजाइन के अभिप्राय होते हैं जैसे- 'साँजी' दशहरे का, 'होई', 'सुरौती' दीपावली का तथा करवाचौथ, हरछठ, नागपंचमी आदि व्रत त्योहारों के अवसर पर बनाई जाने वाली संरचनाएं। लोककलाओं के कुछ डिजाइन क्षेत्र-विशेष के साथ रूढ़ हो गये हैं, जैसे- 'अल्पना' बंगाल में, 'माँडना' राजस्थान में, 'साथिया' गुजरात में, 'रंगोली' महाराष्ट्र और दक्षिण भारत में, तथा 'चौक' उत्तर प्रदेश में प्रचलित हैं। होली, दिवाली, भाईदूज, विवाह और धार्मिक अनुष्ठान के अवसर पर इनको विशेषरूप से सजाया जाता है। 'अल्पना' और 'रंगोली' सजायी जाती है और 'चौक' पूरी जाती है, बनायी नही जाती। 'सजाना' मांगलिकता और 'पूरना' पूर्णत्व का, सम्पन्नता और समृद्धि का भाव प्रकट करता है।

'चित्रकला' में अभिप्राय का अर्थ है 'कोई चल या अचल, सजीव या निर्जीव, प्राकृतिक अथवा काल्पनिक वस्तु, जिसकी अलंकृत एवं अतिरंजित आकृति मुख्यतः सजावट के लिए किसी कलाकृति में बनाई जाय।'[1] जैसे- मोर, स्वस्तिक, बिजूका, तोता तथा स्त्री का चित्र आदि। 'भारतीय परम्परा में दामाद देव-तुल्य पूज्य माना जाता है और दुल्हन

1- हिन्दी साहित्य कोश (भाग एक), धीरेन्द्र वर्मा, पृ0-159

को साक्षात लक्ष्मी करार दिया जाता है। इसलिए स्वाभाविक है कि दोनों के स्वागत के लिए कमरे की दीवारों को सुसज्जित किया जाय। यही सज्जा 'कोहवरी-कला' है जो प्राचीनतम काल से आज भी जारी है। इस कला को चार श्रेणियों में बाँटा जा सकता है- एक में देवी-देवताओं की तस्वीरें होती हैं, दूसरे में दुल्हा-दुल्हन के चित्र भी बना दिए जाते हैं, तीसरे में कल्पना का हल्का सा पुट होता है और चौथे में परम्परागत प्रतीकों- सूरज, चाँद, कमल, बाँस , तोता, कछुआ, मछली आदि का समावेश होता है। कोहबरी कला की भाषा में सूरज व चाँद पवित्रता का, कमल के फूल को स्त्री का, बाँस के पेड़ को पुरुष का , तोते को प्रेम का, कछुअे को प्रेमियों के मिलन का तथा मछली को उर्वरता का प्रतीक माना जाता है।[1] इन सब प्रतीकों का प्रयोग चित्रकला के अभिप्रायों के अन्तर्गत किया जाता है।

भारतीय लोककलाओं में मांगलिकता की किरने बिखेरने वाले प्रतीक भरे पड़े हैं। 'थापा' भी एक ऐसा ही मांगलिक प्रतीक है। 'थापा' या पंचाग-गुल की आकृति पाँच उँगलियों वाले हाथ का प्रतीक है, जिसमें हाथ कर्म का प्रतीक है और कर्म सुख-समृद्धि के साथ-साथ धर्म की साधना और मोक्ष-प्राप्ति का प्रतीक। 'गणेश' जी विघ्नविनाशक, प्रथम पूज्य देवता हैं, 'स्वस्तिक' गणेश जी का लिपीय स्वरूप है, जो गतिशीलता का प्रतीक माना जाता है। 'कलश' सर्वोच्च सम्मान तथा सम्पन्नता का प्रतीक है। 'गज' तथा 'अश्व' भी समृद्धि, ऐश्वर्य एवं शक्ति के प्रतीक हैं। 'शंख' पवित्रता और ज्ञान का प्रतीक है। 'दीपक- ज्योति' शुभ्र-जीवन , परहितकारी- भावना , सात्विकता का एवं 'ज्योति' लक्ष्मी का प्रतीक है। 'सूर्य' और 'चन्द्र' शाश्वतता तथा पवित्रता के प्रतीक है। सूर्य तेजस्विता, गतिशीलता, जीवनता, अन्न तथा जल का दाता होने के कारण जगपालक तथा अरोग्यता का प्रतीक माना जाता है जबकि जबकि 'चन्द्रमा' शीतलता तथा अमृत का प्रतीक है। लोककलाओं में इन प्रतीकों का प्रयोग रूढ़ या अभिप्राय के रूप में होता है। इनके अलावा, लोककलाओं में ज्यामितिक

1- 'कोहबर की दीवारों पर इतिहास का सफर' (लेख), अरविन्द मिश्र, राष्ट्रीय सहारा, मंगलवार 31 अगस्त 1993 ई0, उमंग कालम।

आकृतियों, यथा- सरल रेखाएं, कोण, वृत्त, वृत्तांशों से बने अलंकरण, फूल-पत्तियाँ तथा पशु-पक्षियों का प्रयोग भी रूढ़ या अभिप्राय के रूप में होता है।

'प्रत्येक देश के साहित्य में अनुकरण और अत्यधिक प्रयोग के कारण कुछ साहित्य सम्बंधी रूढ़ियाँ बन जाती हैं और यांत्रिक ढंग से उनका प्रयोग साहित्य में होने लगता है, इन सभी रूढ़ियों को 'साहित्यिक-अभिप्राय' कहते हैं।'[1] हिन्दी-साहित्य में सर्वप्रथम आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इस साहित्यिक-अभिप्रायों की ओर ध्यान आकर्षित किया। 'पृथ्वीराज-रासो' और 'पद्मावत' की ऐतिहासिकता पर विचार करते हुए उन्होंने लिखा - 'ऐतिहासिक चरित्र का लेखक संभावनाओं पर अधिक बल देता है। सम्भावनाओं पर बल देने का परिणाम यह हुआ है कि हमारे देश में साहित्य में कथानक को गति और घुमाव देने के लिए कुछ ऐसे अभिप्राय बहुत दीर्घकाल से व्यवहृत होते आए हैं जो बहुत थोड़ी दूर तक यथार्थ होते हैं और जो आगे चलकर 'कथानक- रूढ़ि' में बदल गये हैं।'[2] परकाय-प्रवेश, लिंग-परिवर्तन, प्राणों की अन्यत्र स्थिति, स्वप्न में भावीप्रिया का दर्शन, समुद्रयात्रा के समय जलपोत का टूटना या डूबना ऐसे ही अभिप्राय हैं।

संस्कृति साहित्य में साहित्यिक-अभिप्राय का पर्याय 'कवि-समय' को माना गया है। ए0 वी0 कीथ ने अपने 'संस्कृत साहित्य का इतिहास' में लिखा है- 'अनुकरण की प्रवृत्ति का, अर्थ की विशेष चिन्ता छोड़कर अभ्यासार्थ पद्य-रचना करने की प्रवृत्ति का, तथा सुप्रसिद्ध विषयों पर विस्तृत रचनाओं की प्रवृत्ति का परिणाम यह हुआ कि बहुत से 'कवि-समयों' की स्थापना हो गयी, जिनको काव्य में लगभग यांत्रिक ढंग से दुहराया गया है; 'चक्रवाक-पक्षी रात्रि में अपनी प्रियतमा से विमुक्त हो जाता है और मानवीय दुख का निरन्तर स्मरण दिलाता है; चकोर चन्द्रमा की किरणें पीकर जीवित रहने वाला बताया

1- हिन्दी साहित्य कोश (भाग एक), धीरेन्द्र वर्मा, पृ0 159

2- हिन्दी साहित्य का आदिकाल , डॉ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ0 80

जाता है, और विषमय भोजन को देखते ही उसकी आँखें लाल हो जाती हैं; चातक केवल मेघों का ही जल पीता है; हंस पानी से दूध को अलग कर देता है; कीर्ति और हास समान रूप से श्वेत हैं; अनुराग को लाल माना गया है; .... अशोक वृक्ष प्रियतमा के पाद-प्रहार से खिल उठता है; और बहुत बड़ी संख्या में समान 'अभिप्राय' (Motifs) कवि परम्परा द्वारा बराबर वर्णित किये गये हैं।'[1] हिन्दी साहित्य के 'बारहमासा' के द्वारा नायिका के वियोग का वर्णन करना तथा 'ऋतु-वर्णन' के द्वारा नायिका के संयोग का वर्णन करना साहित्य सम्बंधी रूढ़ियों या 'अभिप्राय' के उदाहरण हैं।

'लोकसाहित्य' में अभिप्रायों का प्रयोग व्यापक रूप में होता है। हिन्दी 'लोकगीतों' में वर्णित दारूनियासास, सौतिया डाह, अर्थाजन के लिए प्रिय के परदेश चले जाने पर प्रेयसी का वियोग में दुखी होना, उसके लिए सारा संसार सूना लगना, घर काटने को दौड़ना, वियोग में प्रेयसी के साथ पशु (हिरनी) और पक्षियों (चकवा, चकई) आदि का भी प्रभावित होना, प्रेयसी के द्वारा प्रिय का लौट आने के लिए सन्देश भिजवाना आदि लोकगीत सम्बंधी अभिप्राय हैं। 'लोकगाथाओं' में प्रायः ऊँची अटरियाँ, चन्दन-किवार, दूधा के लड्डू, सोने के कलश, कंचन झारी, गंगाजलपानी आदि का वर्णन बहुलता से मिलता हैं। स्थानों की दूरी सदैव वनों की संख्या से प्रकट होती है तथा यह संख्या प्रायः तीन होती है। इन सभी को लोकगाथा सम्बंधी अभिप्रायों की संज्ञा दी जाती है।

लोक-साहित्य की विविध विधाओं में 'अभिप्राय' की दृष्टि से लोककथाओं का सबसे अधिक महत्व है। लोक-कथाएं लोक-जीवन का सर्वाधिक व्यापक क्षेत्र अपने में समाहित करती हैं। यह कहना अत्युक्तिपूर्ण न होगा कि कथाओं की व्यापकता के मूल अभिप्राय

1- संस्कृत साहित्य का इतिहास, मूल लेखक- ए0वी0 कीथ, अनुवादक- मंगलदेव शास्त्री, पृ0-404 व 405

ही है। परम्परागत कथाओं में ऐसे असाधारण तत्व ﴾अभिप्राय﴿ अपनी व्यापकता एवं प्रसिद्धि के कारण जनता के द्वारा सदैव याद रखे जाते हैं तथा वे लोककथाओं का एक अभिन्न अंग बन गये हैं। अभिप्राय ही लोककथा के मूल तत्व हैं जो दीर्घ यात्रा करके वर्तमान समय में भी जीवित हैं तथा लोककथाओं में अपना महत्वपूर्ण स्थान बनाये हुए हैं। अभिप्रायों के कारण ही कोई कथा लोककथा कही जा सकती है क्योंकि ये अभिप्राय लोकमानस के अवशेष होते हैं जो लोककथाओं में अंतःव्याप्त रहते हैं। लोककथाओं में पाये जाने वाले अभिप्रायों को 'कथाभिप्राय' कहा जा सकता है, जिन्हें तीन श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है- ﴾1﴿ काल्पनिक कथाभिप्राय ﴾2﴿ घटना-प्रधान कथाभिप्राय और ﴾3﴿ विचार अथवा विश्वास प्रधान कथाभिप्राय।

काल्पनिक कथाभिप्राय के अर्न्तगत आने वाले अभिप्राय मुख्यतः कल्पना पर आधारित होते हैं। लेकिन उन्हें विशुद्ध काल्पनिक भी नही कहा जा सकता, उनमें कुछ सीमा तक सत्यता भी होती है, जिसका आधार अतीत का अनुभव होता है। यद्यपि इन अभिप्रायों का आधार मुख्यतः मानव की कल्पना होती है, परन्तु फिर भी कथक्कड़ ﴾कथा कहने वाला﴿ इसे कल्पना नही कहता। लोककथाओं में सब कुछ यथार्थ होता है तथा सभी कुछ सम्भव होता है। उदाहरणस्वरूप लोककथाओं में प्राप्त 'सिंहलद्वीप' की रानी पद्‌मिनी' का अभिप्राय अत्यधिक प्रसिद्ध है लेकिन भारतवर्ष के नक्शे पर सिंहलद्वीप नाम का कोई द्वीप प्राप्त नही होता। इसी तरह, खूँटी द्वार हार निगलना, मुख से सर्प निकलना, स्वप्न में भावीप्रिया का दर्शन भी लोककथाओं में पाये जाने वाले काल्पनिक कथाभिप्राय है।

घटना-प्रधान कथाभिप्राय न तो पूर्णतः कल्पना पर आधारित होते हैं और न ही पूर्णतः सत्य होते हैं। अर्थात् इस प्रकार के कथाभिप्राय कल्पना एवं सत्य के मिश्रण होते हैं। लोककथाओं में प्रायः सहज रूप से गतिमान कथानक के मध्य कोई ऐसी विशिष्ट घटना घटित हो जाती है, जिसके आधार पर कथानक को नया आयाम मिल जाता है। यथा लोक-कथाओं जब नायक अनेक कष्टों पर विजय प्राप्त कर, किसी सुन्दरी नायिका को साथ लेकर अपने राज्य लौट रहा होता है , उनकी नाव समुद्र अथवा नदी के मध्य होती

है , तभी अचानक तूफान आने के कारण नाव टूट जाती है तथा नायक-नायिका का विछोह हो जाता है। कुछ कथाओं में ऐसा भी होता है कि मृगया के लिए निकला राजकुमार मार्ग भूलकर , भूख-प्यास से व्याकुल एक सरोवर के निकट पहुँचता है, जिसके तट पर अत्यंत रूपवती स्त्री अथवा उसकी मूर्ति या चित्र किो देखकर उस पर मोहित हो जाता है और उससे विवाह करने का दृढ़ निश्चय कर लेता है। विवाह का निश्चय अत्यंत दुष्कर कार्य कार्य होता है। लोक-कथाओं में इस प्रकार घटित होने वाली घटनाएं विशिष्ट प्रकार की होती हैं जिनका आगमन अनायास होता है तथा कथानक की सहजता को असहजता में परिवर्तित कर देता है एवं उसे मनचाहा मोड़ प्राप्त हो जाता है।

विश्वास-प्रधान कथाभिप्राय किसी न किसी ऐसे लोकविश्वास पर आधारित होता है, जिन्हें वैज्ञानिक दृष्टि से यथार्थ नही कहा जा सकता है। ये कथाभिप्राय मानव की आदिम मानसिकता से चले आ रहे विश्वासों पर आधारित होते हैं। इनकी सबसे बड़ी विशेषता यह होती है कि ये चमत्कारिक एवं अलौकिक होते हुए भी सत्यता पर आधारित होते हैं। इनका आधार प्रायः तंत्र-मंत्र, योग-साधना तथा सिद्धि-आदि शक्तियाँ होती हैं। परकाय-प्रवेश, लिंग परिवर्तन, सत्यक्रिया, प्राणों की अन्यत्र स्थिति ऐसे ही कथाभिप्राय हैं।

(ख) कथाभिप्रायः अर्थ, विशेषताएँ

विभिन्न लोककथाओं में बार-बार व्यवहृत होने वाले एक जैसे तत्व 'कथाभिप्राय' कहलाते हैं। कथाभिप्राय लोककथाओं के लघुतम तत्व, असाधारण तत्व, असाधारण घटनाएँ, साँचे में ढले हुए विचार, केन्द्रीय विचार, मूल भाव, अद्‌भुत एवं विलक्षण चरित्र तथा वस्तुएं होते हैं। कथाभिप्रायों का स्वरूप निर्धारित करने में विभिन्न विद्वानों ने अपने-अपने मतों की स्थापना की है।

'डिक्शनरी ऑव वर्ल्ड लिटरेचर' में कथाभिप्राय की परिभाषा यों मिलती है- 'अभिप्राय कहानी का सबसे छोटा, किन्तु स्पष्ट पहचान में आने वाला वह तत्व है, जो अपने आप में एक कहानी तैयार कर देता है।'[1]

स्टिथ थामसन के विचार से - 'अभिप्राय कथा का वह लघुतम तत्व है जो परम्परा में स्थिर रहने की शक्ति रखता है। इस प्रकार की शक्ति रखने के लिए उसमें कुछ असाधारणता और अपूर्वता होनी चाहिए। अभिप्राय कथानक के निर्माण तत्व हैं।'[2]

पेंजर ने कथाभिप्रायों को 'घटना' कहा है, उनके अनुसार- कथाभिप्राय का अर्थ कथा में बार-बार प्रयुक्त होने वाले ऐसे अभिप्रायों से है, 'जो किसी छोटी घटना (इन्सीडेंट) अथवा विचार (आइडिया) के रूप में कथा के निर्माण और उसे आगे बढ़ाने में योग देने वाले तत्व होते हैं।'[3]

1- "The Motif is the smallest recognizable element that goes to make up a complete story". (Dictionary of World Literature, Joseph T. Sheplay page-166).

2- लोकसाहित्य विज्ञान, डॉ0 सत्येन्द्र, संस्करण- 1962 ई0, पृ0 273 से उद्‌धृत

3- "Itis the incident in a story which forms the real guide to its history and migration". (The Ocean of story, N.M. Penzer, Vol-1, Page-29).

लोककथा के प्रवाह को आगे बढ़ाने के लिए कुछ घटनाएं ऐसी होती हैं जो कथाओं में बार-बार दुहरायी जाती हैं; उन्हें 'कथाभिप्राय' कहते हैं। लेकिन सभी घटनाएं कथाभिप्राय नहीं हो सकती हैं; क्योंकि सभी घटनाओं के माध्यम से कथा के उत्स का पता नही लगाया जा सकता है। फिर कथा में सभी घटनाएं सदैव एक सी नही रहती; इन पर परिस्थितियों का प्रभाव पड़ता रहता है और उसी के साथ ये बनती-बिगड़ती रहती हैं। अतः घटनाएं परिवर्तनशील हैं जबकि अभिप्राय अपरिवर्तनशील होते हैं। परन्तु कुछ घटनाएं अभिप्राय के रूप में रहती हैं और वे किसी विशेष भाव की द्योतक होती हैं। घटना- विशेष को अभि-प्राय मानने के उदाहरण हैं- राजकुमारी के मुँह से सॉप निकलना, जड़-पदार्थों का मानवीकरण, नायिका प्राप्त करने में आयी बाधाएं आदि। ये घटनाएं परम्परा प्रथित होने के कारण विशेष भावाभिव्यक्ति के लिए रूढ़ हो गयी हैं, इसलिए उन्हें अभिप्राय कहा जाता है। कुछ विद्वान घटनाओं के परिणाम को कथाभिप्राय कहते हैं। घूसखोरी की सजा, करनी का फल, धोखा देने का फल, पूर्वजन्म की करनी का फल, शील का फल आदि ऐसे अभिप्राय हैं। वस्तुतः एक ही घटना के अनेक परिणाम हो सकते हैं, जैसे- घूसखोरी की सजा सौ जूतों की मार भी हो सकती है, मृत्युदण्ड, काले पानी की सजा, तथा देश निकाला भी हो सकता है। पूर्वजन्म का फल अच्छा भी हो सकता है बुरा भी। इन घटनाओं में लोकमानस की कोई न कोई प्रवृत्ति अवश्य होती है, जिसे अभिप्राय कहा जाता है।

'कथाभिप्राय' की व्याख्या करते समय एक बात संशय में डाल देती है कि क्या अभिप्राय ही रूढि है? अर्थात अभिप्राय और रूढ़ि का परस्पर सम्बंध क्या है? सामान्यतः अभिप्राय एवं रूढ़ि का प्रयोग एक दूसरे के पर्याय रूप में किया जाता है। इस बात की पुष्टि आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अभिप्राय विवरण में कही गयी इस बात से हो जाती है कि अभिप्राय थोड़ी दूर चलकर कथानक रूढ़ि में परिवर्तित हो जाते हैं । लेकिन वही अभिप्राय रूढ़ि बनते हैं जो एक लम्बी अवधि तक व्यवहार में लाये जाते हैं। इनके लिए यह आवश्यक है कि उनमें कहीं न कहीं कुछ यथार्थता का समावेश हो। वे पूर्णतः अलौकिक एवं अशास्त्रीय नही होने चाहिए। अभिप्राय को रूढ़ि की संज्ञा प्रदान करने वाले उदाहरण

हैं- राजकुमार का स्वप्नसुन्दरी की खोज में जाना, राजकुमार का सहायक के साथ शिकार के लिए जाना, सर्प की मणि से सरोवर में रास्ता बनाना आदि; ये घटनाएं दीर्घकाल से लोककथाओं में व्यवहृत होकर रूढ़ हो गयी है, जो अपने बारम्बार प्रयोग के कारण 'कथाभिप्राय' कहलाती हैं। डॉ0 कन्हैयालाल सहल द्वारा प्रयुक्त 'प्ररूढ़ि' शब्द भाषा तात्विक दृष्टि से अभिप्राय के पर्याय के रूप में बहुत उपयुक्त बैठता है, क्योंकि इसमें आवृत्ति और गति दोनों का भाव निहित है।

डॉ0 सत्येन्द्र 'कथाभिप्राय' के लिए 'कलातन्तु' व 'अभिप्राय' शब्दों का प्रयोग करते हैं। इनमें कलातन्तु शब्द कथाभिप्राय के बाह्य पक्ष को मुखरित करता है। अर्थतात्विक दृष्टि से 'तन्तु' शब्द ताने-बाने के रूप में प्रयुक्त होता है। अतः कलात्मक अभिव्यक्ति प्रदान करने वाले शब्द तो कलातन्तु हो सकते हैं परन्तु अन्तर्निहित भावों का उद्रेक करने वाले या अपने आप में भावों को निहित करने वाले तत्व कलातन्तु नही हो सकते। उड़ते घोड़े, जादुई टोपी, कल्पवृक्ष तो कलातन्तु हो सकते हैं परन्तु सौतेली माँ जैसे चारित्रिक अभिप्राय जिनका सम्बंध विशेषतः ईर्ष्या-द्वेष की भावना से होता है, कलातन्तु नही हो सकते हैं। अतः कलातन्तु में आन्तरिक भावों के लिए कोई स्थान न होने के कारण इनका अस्तित्व नगण्य हो जाता है।

डॉ0 त्रिलोचन पाण्डेय लिखते हैं कि 'कथाभिप्रायों के निर्धारण में एक असंगत धारणा यह चल पड़ी है कि लगातार अभिव्यक्त होने वाले सभी विचारों तथा वर्णन की सभी रूढ़ परिपाटियों को इसमें सम्मिलित कर लेना चाहिए। षड्ऋतु की परम्परा अथवा बारहमासे की परम्परा का उल्लेख अथवा 'होनी होय सो होय' जैसी उक्तियों का बारम्बार प्रयोग इसके अतिरिक्त समाविष्ट नही करने चाहिए, क्योंकि ये तथ्य कथाप्रसंगों के साथ उतना सम्बंध नही रखते जितना कि समाज विशेष के जीवन-दर्शन एवं वर्णन-पद्धति से इनका सम्बंध रहता है। ये सांस्कृतिक तत्व हैं, कथाभिप्राय नही।''[1]

1- लोकसाहित्य का अध्ययन, डॉ0 त्रिलोचन पाण्डेय, पृ0-267

ए0बी0 कीथ के अनुसार- 'जिस भाँति परम्परा द्वारा ग्रहीत असाधारण कल्पना ने अनेक काव्य-परक रूढ़ियों को जन्म दिया, उसी भाँति कथात्मक साहित्य में भी उससे अधिक व्यापक क्षेत्र में विशिष्ट प्रकार की विचारावृत्तियों की बारम्बार आवृत्ति ने भारतीय कल्पना बहुल कथाओं में अनेक मोटिफ अथवा अभिप्राय-विशेषों को जन्म दिया है। उदाहरणार्थ- परकाय-प्रवेश, लिंग परिवर्तन, पशु-पक्षियों से वार्तालाप, किसी वाह्य पदार्थ में प्राणों को सुरक्षित रख देना आदि कुछ ऐसे ही, अभिप्राय-विशेष सूचक कथाभिप्राय हैं।'[1]

इस तरह 'कथाभिप्राय' लोककथा का वह लघुतम रूढ़तन्तु है, जिसका प्रभाव लोककथा में सर्वत्र देखा जा सकता है। परम्परागत लोककथाओं में बार-बार व्यवहृत होने वाले अत्यंत सरल प्रत्यय (Concept) भी कथाभिप्रायों का रूप धारण कर लेते हैं, उदाहरणार्थ- सौतेली माता, चतुर छोटा लड़का, वफादार दोस्त आदि। कभी वे असाधारण प्राणियों का रूप भी धारण कर लेते हैं, जैसे- परियाँ, चुड़ैल -डायनें, राक्षस, भयानक जीवन, दानव-दैत्य आदि। कभी-कभी वे ऐसी विस्मयजनक लोकसृष्टि भी हो सकता है या ऐसे विचित्र देश हो सकते हैं, जिनमें जादू-टोने का राज्य छाया रहता हे, उदाहरण- वीरान , उजाड़ नगर; तालाब के अन्दर महल आदि। कभी-कभी कथाभिप्राय किसी विशेष 'रस्म' के रूप में भी मिलता है; उदाहरण-विवाह के समय 'भांवर' पड़ने की रस्म। कभी-कभी तो कथाभिप्राय अनिवार्य रूप से कोई संक्षिप्त एवं लघु आकार वाली कहानी हो सकता है या ऐसी कोई घटना भी हो सकती है जो श्रोताओं को सुनने में पर्याप्त रूचिकर एवं मनोरंजक लगे। अतः अभिप्राय कथानक के सभी अंगों को अपने में समेटे हुए हैं; क्योंकि कथानक 'घटना चरित्र और कार्य के मेल से बनता है।' अभिप्राय घटना के भी हो सकते हैं, चरित्र के भी और कार्य के भी।'[2]

1- संस्कृत साहित्य का इतिहास, ए0बी0 कीथ, पृ0-343

2- लोकसाहित्य विज्ञान, डॉ0 सत्येन्द्र, पृ0-274

कथाभिप्रायों की सार्वजनीन विशेषता है- असाधारण पात्र, एवं उसके अद्भुत कृत्य। मनोरंजन के ध्येय से जन्मी लोककथाओं की शुरूआत प्रायः इस तरह से होती है- एक राजा था। उसके एक अनुपम सुन्दरी , इकलौती कन्या थी। जब वह युवा हुई तो राजा उसके विवाह के लिए उपयुक्त वर की तलाश करने लगा। अचानक एक रात्रि को दानव आया और राजकुमारी को उठाकर ले गया। सभी सेवक-सेविकाएं देखते रहे परन्तु किसी को भी साहस नही हुआ कि दानव से राजकुमारी को छुड़ा ले। जब राजा इस घटना से अवगत हुआ तो उसने घोषणा करवाई कि जो भी युवक उसकी पुत्री को दानव से मुक्त करवाकर लायेगा, राजकुमारी से उसका विवाह कर दिया जायेगा एवं साथ में उसे आधा राजपाट भी मिलेगा। यहाँ पर, अनुपम सुन्दरी इकलौती राजकुमारी एवं दानव आसाधारण पात्र हैं जिनका कथा के घटनाक्रम में समावेश होने से कथा सुनने वाले श्रोता न केवल हुंकारी ही भरते हैं वरन् कौतूहल-वश कथा के मध्य प्रश्न भी करतें हैं। इन असाधारण पात्रों की श्रेणी में सप्त-फणिक-सर्प, उड़ने-वाले-घोड़े, डायन- चूड़ैलों आदि का भी समावेश मिलता हैं। कथाभिप्रायों में, यह आवश्यक नही है कि ये अद्भुत कृत्य केवल असाधारण पात्रों द्वारा ही किए जाय, वरन् कभी-कभी सामान्य प्राणियों द्वारा भी सम्पन्न किए जाते हैं। उदाहरण स्वरूप 'राजकुमारी के मुँह से सर्प निकलना'; इस कथाभिप्राय से सम्बंधित कथाओं में 'रात के समय राजकुमारी के सोने के दौरान उसके मुख से सर्प निकलता है तथा पहरा देने वाले को, जो कि उस समय सो गया होता है डस (काट) लेता है जिससे उसकी मृत्यु हो जाती है। यह घटना नित्यप्रति होती है जिससे राजा के सभी लोग परेशान रहते हैं। अन्त में, एक दिन नायक पहरा देने को नियुक्त किया जाता है; किसी तरह वह रात भर जगकर पहरा देता है तथा सर्प को अपनी तलवार से काटकर मार डालता है।' यहाँ पर नायक अद्भुत कृत्य को सम्पन्न करता है जिससे कथा में कौतूहल उत्पन्न होता है।

लोककथाओं में प्रयुक्त कतिपय अभिप्राय ऐसे भी होते हैं जिनका निर्माण सायास होता है। सामान्यतः इनके निर्माण में दो ध्येय माने जाते हैं, प्रथम- उनकी सार्वजनिक विशिष्टता, और द्वितीय- उनसे लाभ। उदाहरणार्थ- 'पूर्व दिशा गमन निषेध' का कथाभिप्राय।

भारतीय लोककथाओं में 'प्रायः युवा राजकुमार अपने मित्र (मंत्री-पुत्र आदि) के साथ पिता की आज्ञा का उल्लंघन करके पूर्व-दिशा-गमन करता है। एक विशिष्ट स्थान पर पहुँचकर उन्हें इस बात का आभास होता है कि वे किसी ऐन्द्रजालिक दुनियाँ में फँस चुके हैं। बचने का कोई मार्ग उन्हें नही दिखायी देता। ये कहानियाँ प्रायः किसी जादूगरनी द्वारा पशु-पक्षी अथवा बन्दी बनाकर रखने जैसी होती है। अन्त में, अनेक कठिनाइयों पर विजय प्राप्त करके वे सकुशल अपने राज्य लौट आते हैं।' यहाँ पर पूर्व-दिशा-गमन के निषेध के उल्लंघन से हानि होने की सम्भावना रहती है तथा इसके द्वारा कथा में चमत्कार उत्पन्न होता है।

कथाभिप्रायों के अध्ययन में एक शब्द 'अलौकिक' आता है, जो मानव की रहस्यमयी वस्तुओं को समझने की जिज्ञासा एवं उसके चमत्कार के रूप में हुई सृष्टि के कारण उत्पन्न होता है। लोककथाओं में आने वाले देवी-देवता अलौकिक एवं अतीन्द्रिय शक्ति के मूर्तरूप हैं; इनके साथ ही एक विशेषता इनका प्रतीकात्मक होना भी है। उदाहरण स्वरूप 'भगवान विष्णु की चार भुजाएं पराक्रम एवं शंख, चक्र, गदा व पद्म धर्म एवं शक्ति के एक रूप होने का प्रतीक हैं। घर-घर में व्याप्त चर्तुभुजी भगवान विष्णु मृत्यु-लोक के रक्षक हैं, जो भक्तों के कष्टों का निवारण क्षण-भर में कर देते हैं और कष्ट की घड़ियाँ सुख में परिवर्तित हो जाती हैं।' इसी प्रकार कथाभिप्रायों के अनेक ऐसे उदाहरण देखे जा सकते हैं, जिनमें उसके अलौकिक होने का पक्ष उजागर होता है। लोककथाओं में शिव-पार्वती अक्सर संकट में फँसे नायक-नायिका के कष्टों का निवारण करते दिखलायी पड़ते हैं, जिससे उनकी अलौकिकता सिद्ध होती है।

संक्षेप में 'कथाभिप्रायों' की अन्य विशेषताएं निम्न हैं:-

(1) लोक कथाओं में 'कथाभिप्राय' का प्रयोग परम्परागत रूप में होता है, इसी को 'रूढ़ि' भी कहते हैं, लेकिन गतिशीलता इनका प्रमुख लक्षण है।

(2) लोककथाओं में 'कथाभिप्राय' की आवृत्ति बार-बार होती है अर्थात ये लोक कथाओं में बारम्बार प्रयुक्त किए जाते हैं। प्रायः यह देखा जाता है कि एक

ही लोककथा में कई अभिप्राय प्रयुक्त होते हैं या एक ही अभिप्राय कई लोककथाओं में विभिन्न रूपों में प्रयुक्त होता है।

(3) लोककथाओं के ये 'मूल-तत्व' हैं। इनके निर्माण में यह आवश्यक है कि कुछ असाधारणता तथा अपूर्वता हो, जिससे वह आकर्षक बन सके। शुष्क सार्वसामान्यतया की अपेक्षा उसमें कुछ वैशिष्ट्य की निहिति भी परमावश्यक है।

(4) कथाभिप्राय प्रायः सार्वभौम होते हैं तथा वे लोककथाओं के मर्म का उद्घाटन करते हैं। प्रायः उसी रूप में तथा कभी-कभी थोड़े अन्तर के साथ इनका प्रयोग सर्वत्र मिलता है, जिससे कथा को गति एवं रोचकता प्राप्त होती है।

(5) लोककथाओं में कथाभिप्रायों का प्रयोग उन्हें शाश्वतता प्रदान करता है। कथाभिप्रायों का यह अपरिहार्य गुण है, जिससे वे सामान्य से अलग हटकर होते हैं तथा अपने इसी गुण के कारण ही वे परम्परा में जीवित रहते हैं।

(6) कथाभिप्राय सीमाबद्ध नही होते हैं, वरन् वे एक स्थान से दूसरे स्थान तक यात्रा किया करते हैं; उदाहरणार्थ- पशु-पक्षियों की भाषा समझने का अभिप्राय भारतीय लोककथाओं में प्रचलित है, यही अभिप्राय कुछ अन्तर के साथ इटली आदि यूरोपीय देशों की लोककथाओं में भी प्राप्त होता है।

कथाभिप्रायों के प्रयोग में कथक्कड़ी-प्रवृत्ति का कौशल विद्यमान रहता है। ये कथक्कड़ (कथा कहने वाले) अपने अनुभव, अपनी ज्ञानराशि, अपनी क्षेत्रीयता तथा कथक्कड़ी शैली की विशेषता से लोककथा में विभिन्न अभिप्रायों को समाहित कर देते हैं। ये प्रवीण कथक्कड़ लोककथाओं में कथा के विलक्षण पात्रों को नवीन अभिप्रायों से मण्डित कर अपने श्रोताओं के समक्ष इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं कि उनकी जिज्ञासा-वृत्ति जाग्रत हो उठती है; साथ ही, कथा भी नवीन अभिप्रायमण्डित होकर असामान्य और नवीन रूप धारण करके आगे बढ़ने लगती है। इस तरह कथक्कड़ अभिप्रायों को कथा-संरचना की सौन्दर्य-वृद्धि के उपकरण के रूप में प्रयोग करने में पूर्णतः सफल रहते हैं। इस सन्दर्भ में मारिस ब्लूमफील्ड का यह कथन उल्लेखनीय है- 'सर्वत्र प्रत्येक कथक्कड़ और संग्रहकर्ता मानो ऐसा लगता है कि इन अभिप्रायों की समूची मात्रा को उठाता है, जिसकी तुलना हम मनके की माला से कर सकते हैं, उसे छिन्न-भिन्न कर देता है जिससे मनके चर्तुदिक बिखर जाते हैं और फिर प्रारम्भ से वह इन मनकों को पिरोता है।'[1] इस प्रकार कथाभिप्राय एक से होने पर भी कई प्रकार की लोककथाओं का जन्म सम्भाव्य हो जाता है।

1- लोकसाहित्य विज्ञान, डॉ0 सत्येन्द्र , पृ0-275 से उद्धृत

(ग) लोककथाओं में कथाभिप्रायों का महत्व

'कथाभिप्राय' लोककथा का एक विशिष्ट तत्व है जो कथा में अलौकिकता उत्पन्न करता है तथा कथानक में अनायास ऐसे कई परिवर्तनों को समाविष्ट कर देता है जो समाज-विशेष की ओर संकेत करते हैं। लोककथा का कथात्मक कलेवर कई प्रकार से इन्हीं के द्वारा निर्मित होता है और ये ही कथा की एकरूपता को स्थापित करने में सहायक होते हैं। लोककथाओं के निर्माण में इनकी अत्यंत महतवपूर्ण भूमिका रहती है। प्रायः यह देखा जाता है कि एक ही कथाभिप्राय अनेक लोककथाओं में प्रयुक्त होकर उसे गति या घुमाव प्रदान करता है, चमत्कार उत्पन्न करता है तथा उसमें रोचकता की सृष्टि करता है। लोककथाओं के विवेचन में इसका विशेष महत्व होता है।

कथाभिप्रायों का प्रमुख महत्व यह है कि ये लोककथाओं को नवीन मोड़ अथवा गति प्रदान करते हैं। कोई कथा प्रारम्भ होकर जब किसी ऐसे बिन्दु पर पहुँचती है, जहाँ उसे आगे बढ़ने का अवकाश नही होता, तब कथक्कड़ कोई ऐसी आश्चर्यजनक घटना उपस्थित कर देता है कि कथा फिर तीव्र गति से आगे बढ़ने लगती है। एक प्रकार से यह कहा जा सकता है कि जब लोककथा की बाती का प्रकाश मन्दिम होने लगता है तो इसमें कथाभिप्राय रूपी घृत उड़ेल दिया जाता है और लोककथा पुनः प्रज्वलित हो उठती है। उदाहरणार्थ लोककथाओं में जब नायक किसी दुर्बल कार्य को सम्पन्न करके लौट रहा होता है तो उसका प्रतिद्वन्द्वी नायक की निन्द्रावस्था में उस कार्य से सम्बंधित वस्तु को चुरा लेता है। लेकिन नायक उस वस्तु के मुख्य भाग को पहले ही निकाल चुका होता है और जब भरे दरबार में प्रतिद्वन्द्वी उस वस्तु को प्रस्तुत करके पुरस्कार का अधिकारी बनने वाला होता है तभी नायक वहाँ पहुँचकर रहस्योद्घाटन करके पुरस्कार प्राप्त कर लेता है। इसी प्रकार नायक व नायिका को प्रत्येक कठिनाई से बचाने वाला मित्र नायक के मन में उत्पन्न शंका को मिटाने के लिए उस सत्य को प्रकट करता है तथा शर्तानुसार जिसे उद्घाटित करने के कारण पाषाण बन जाता है। परन्तु नायक के प्रथम पुत्र के रक्त को छिड़कने पर मित्र पुनः मानव रूप धारण कर लेता है तथा इस कथाभिप्राय से कथानक को गति प्राप्त होती है।

लोककथाओं में अक्सर देखने में आता है कि कथा जब अपनी सहजगति से चल रही होती है और श्रोता वर्तमान घटना के अनुसार अच्छा अथवा बुरा परिणाम सोच लेते हैं; ऐसे में कथाभिप्राय द्वारा अचानक ही उसे कोई नया मोड़ प्रदान करा दिया जाता है, जिससे कथानक को गति मिल जाती है। उदाहरणस्वरूप नायक को मृत्यु के घाट उतारने के उद्देश्य से नायक को कोई कार्य सौंपकर 'मृत्यु-पत्र' उसके साथ संलग्न कर दिया जाता है। श्रोता यही सोचते हैं कि उस मृत्यु-पत्र को पढ़कर दानव के सगे सम्बंधी नायक का प्राणान्त कर देंगे। लेकिन परिणाम इसके विपरीत होता है, क्योंकि मार्ग में थकने के कारण नायक को निद्रा आ जाती है, उसी अन्तराल में कोई दयालु पुरुष (बहुधा साधु) उसके गले में लटके मृत्यु-पत्र को पढ़कर उसके स्थान पर दूसरा पत्र लिखकर लटका देता है, जिसके द्वारा नायक को लाभ होता है। गन्तव्य तक पहुँचने पर नायक को प्राण-दण्ड के स्थान पर यथोचित स्वागत-सत्कार मिलता है। कहीं- कहीं पर उसका रूपवती राजकुमारी से विवाह भी हो जाता है। इस घटना या क्रिया से, जो प्रायः किसी न किसी कथाभिप्राय के रूप में होती है, श्रोता की कुतूहल-वृत्ति फिर जाग्रत हो उठती है और वह कथा के साथ-साथ तीव्र गति से बहने लगता है।

कथाभिप्रायों के विषय में कहा जाता है कि ये एक समान परिस्थितियों में बार-बार प्रयुक्त होते हैं; कथा के निर्माण एवं विस्तार हेतु सापेक्ष योगदान देते हैं तथा कथानक के विकासक्रम में चमत्कार, जिज्ञासा, रहस्य, रोमांच, कौतूहल, आश्चर्य, भय, आशंका आदि संचारी भावों का उद्रेक करते हैं। कथक्कड़ कथा में अपने चरम लक्ष्य तक पहुँचने के लिए सम्भव-असम्भव सभी प्रकार की घटनाओं और क्रियाओं को या तो पूर्वप्रचलित कथाभिप्राय के प्रयोग द्वारा या अपनी निजी कल्पनाशक्ति की सहायता से नियोजित करता है। इस तरह निर्मित कथा चाहे ख्यातवृत्त पर आधारित हो या कल्पित-वृत्त पर, कथाभिप्रायों के प्रयोग द्वारा चमत्कार एवं कौतूहल उत्पन्न करने वाली अवश्य होती है। कौतूहल-वृत्ति को जाग्रत रखना कथानक का प्रमुख तत्व होता है, कथाभिप्रायों के प्रयोग द्वारा यह तत्व सहज नियोजित हो जाता है, कथक्कड़ को सचेष्ट रूप से उसकी कल्पना नही करनी पड़ती

है। यथा- किसी राज-वैद्य द्वारा असाध्य व्याधि के निवारण हेतु 'जीवन-जल' औषधि के रूप में बताया जाता है। इस जल को प्राप्त करने के लिए शक्तिशाली दानवों, अग्नि निष्कासित करने वाले सर्पो को नष्ट करना होता है। यदि जल किसी प्रकार प्राप्त हो जाता है तो एक शर्त जल ग्रहण करने के पश्चात् पीछे पलटकर नही देखने की होती है। राजा के सभी बड़े पुत्र पीछे पलटकर देखने से पाषाण बन जाते हैं। अन्त में छोटा पुत्र जल लाने के लिए निकलता है। जो सभी के साथ स्थिति व्यतीत हो चुकी होती है उसे सोचकर श्रोता को छोटे राजकुमार से सहानुभूति हो जाती है। साथ ही हृदय में एक अप्रत्याशित भय भी बना रहता है कि वह भी पीछे पलटकर न देख ले अन्यथा वह भी पाषाण में परिवर्तित हो जायेगा। लेकिन चतुर छोटा राजकुमार अपने पर नियंत्रण रखता है और सकुशल वापस आ जाता है। उस जीवन-जल के द्वारा न केवल अपने पिता की व्याधि दूर करता है वरन् पाषाण बने अपने भाइयों को पुनः मानव-रूप में रूपान्तरित कर लेता है। इस कथाभिप्राय के द्वारा कथानक में चमत्कार एवं कौतूहल उत्पन्न होता है।

कथाभिप्रायों का महत्व लोककथाओं में रोमांचकता उत्पन्न करने की दृष्टि सें भी है। लोंककथाओं में अक्सर नायक एक वृद्धवेश धारिणी जादूगरनी के राज्य में पहुँचता है। वहाँ बन्दिनी नायिका उससे अपनी मुक्ति का आग्रह करती है तथा उसे मार्ग-निर्दिष्ट करते हुए, वृद्वा द्वारा दिए गये भोजन एवं पेय को ग्रहण न करने के लिए सावधान भी करती है। प्रातः काल वृद्धा सत्कार हेतु नायक को पेय देती है। नायिका के वचनों को भूल कर वह पेय ग्रहण कर लेता है तथा गहन-निद्रा में सो जाता है। नायिका वाटिका में उसकी प्रतीक्षा करके वापस लौट जाती है। दूसरे दिन भी वही घटना घटती है। तीसरे दिन जब नायक पेय-पदार्थ ग्रहण न करने के लिए दृढ़ होता है तब वृद्धा उसे खाने के लिए भोज्य-पदार्थ देती है, जिसकी सुगन्ध से वशीभूत होकर वह उसे ग्रहण करने का लोभ नहीं छोड़ पाता एवं पुनः गहन-निद्रा में चला जाता है। इस बार नायिका उसके लिए पेय पदार्थ एवं एक पत्र लिखकर रख जाती है कि वह उसे यहाँ से तो मुक्त नही करा पाया, लेकिन यदि वह अब भी उसकी मुक्ति का इच्छुक है तो उसे स्वर्ण-किले में आकर मुक्त करा ले। आगे नायक को कठिन परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है; मार्ग

में अनेक दानवों एवं शक्तिशाली जीवों से उसकी मुठभेड़ होती है, जिनको खत्म करके नायक स्वर्ण-किले में बन्द नायिका को मुक्त करवाने में सफल होता है। यहाँ कथानक में रोमांचकता उत्पन्न होती है, क्योंकि स्वर्ण-किले तक पहुँचना अत्यंत दुष्कर कार्य सिद्ध होता है।

लोककथाओं में कथाभिप्रायों का महत्व उनमें रोचकता लाने की दृष्टि से भी है। इनसे ही लोककथाओं में अलौकिकता आती है एवं सौन्दर्य की अभिवृद्धि होती है। श्रोता भी इनसे इतने अधिक प्रभावित होते हैं कि समय समय पर इनका स्मरण दिलाकर कथक्कड़ से विशिष्ट कथा कहने को प्रेरित करतें हैं। लोककथाओं में इनका बाहुल्य कथा की सबलता एवं आकर्षण को असाधारण रूप से बढ़ाता है। कोई भी सहज एवं सामान्य-सी-घटना कथाभिप्रायों के सहयोग से आकर्षक व मनोरंजक बन जाती है। यथा- लोककथाओं में अक्सर एक निर्धन नायक अपनी सेवा एवं परोपकारी भावना के फलस्वरूप सुस्वाद भोज्य-पदार्थों को देने वाला पात्र (कड़ाही आदि), धन प्रदान करने वाला बटुआ या स्वर्ण गिराने वाला कोई पात्र (हंडा आदि) किसी वृद्ध से प्राप्त करता है। अपने घर को वापस लौटते समय वह एक सराय या धर्मशाला में रात्रि-विश्राम के लिए ठहरता है। वहाँ का स्वामी उन अद्‌भुत वस्तुओं को चुराकर उनके स्थान समय उसी के जैसी सामान्य वस्तुएं रख देता है। इससे अनभिज्ञ निर्धन नायक घर पहुँचकर जब अपनी पत्नी के समक्ष उन वस्तुओं का चमत्कार दिखाने के लिए मन पसन्द भोज्य-पदार्थ अथवा धन की आज्ञा करता है तो उनमें से कुछ भी नही निकलता। क्रोधवश उसकी पत्नी उसे और जली-कटी सुनाती है। एक बार पुनः उसी वृद्ध के सेवा में उपस्थित होकर नायक उसके समक्ष सारी स्थिति रखता है। इस बार वह वृद्ध उसको एक रस्सी और डंडा देता है । नायक उसी सराय में पहुँचकर रस्सी को धर्मशाला के स्वामी एवं उसके परिवार को बाँधने की तथा डंडा को उन सब की पिटाई करने की आज्ञा देता है। मार खाने के पश्चात विवश धर्मशाला का स्वामी नायक से रक्षा की याचना करके उसकी चुराई हुए वस्तुएं वापस कर देता है। इस तरह निर्धन नायक धनवान बनकर सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करने लगता है। इस रोचक घटना के स्थान

पर नायक को यदि सामान्य रूप से धन मिल जाता तो मनोरंजन की वैसी स्थिति उत्पन्न नही हो सकती थी। इससे कथा में रोचकता पैदा होती है।

कथाभिप्रायों के द्वारा पात्रों के चरित्र का उद्घाटन भी होता है। लोककथाओं में पात्रों द्वारा किए गये कार्य, परिस्थिति के प्रति उनकी मानसिक प्रतिक्रिया तथा भावाभिव्यंजना से उनके व्यक्तित्व और चरित्र का पता चलता है। चूंकि कथाभिप्राय घटनाओं, कार्यों और परिस्थितियों से सम्बंध रखते हैं, अतः उनका उपयोग वस्तु-योजना के साथ ही साथ चरित्र-चित्रण के लिए भी किया जाता है। इसका परिणाम यह हुआ कि कुछ विशेष कथाभिप्रायों के प्रयोग से कुछ विशेष प्रकार के चरित्र बन गये, जिन्हें हम वर्गीय या 'टाइप' चरित्र कहते हैं। उदाहरण के लिए - कुछ विशेष प्रेम-मूलक अभिप्रायों के प्रयोग से प्रेमी नायक-नायिकाओं के चरित्रों का एक विशेष वर्ग बन गया, यथा- ढोला-मारू, सोहनी-महिवाल, हीर-रांझा जैसे प्रेमी पात्र। इसी तरह रोमांचक तथा साहसिक कार्यों वाले अभिप्रायों के प्रयोग से साहसिक वीर चरित्रों का एक वर्ग बन गया, यथा- लखटकिया से सम्बंधित कथाओं में वर्णित नायक का चरित्र। नायक-नायिकाओं के अतिरिक्त लोककथाओं में अन्य पात्रों के वर्ग भी निश्चित हो गये, जैसे- साधु की दया, विप्र की स्वादप्रियता, ठगों की ठगाई, बनिए का कंजूसीपन, नाऊ की चतुरता, कोरी की मूर्खता, सियार की धूर्तता, ठाकुर की ठसक आदि। इससे हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि जिन लोककथाओं में कथाभिप्रायों का प्रयोग अधिक होता है उनके पात्र विशिष्टवर्गों के प्रतिनिधि चरित्र होते हैं तथा उनमें चरित्र-वैविध्य नहीं आ पाता है। इस तरह मानव-स्वभाव के विभिन्न पहलुओं का विश्लेषण कथाभिप्रायों के द्वारा ही व्याख्यायित होता है।

लोककथाओं में प्रयुक्त कथाभिप्रायों का उपयोग नैतिक-शिक्षा की दृष्टि से भी किया जाता है। प्रायः 'अच्छे का फल अच्छा तथा बुरे का फल बुरा' इस धारणा को लेकर कथाभिप्राय लोककथाओं को आगे बढ़ाते हैं। मानव स्वभाव की अच्छाइयों एवं बुराइयों का सूक्ष्म विश्लेषण इनके द्वारा किया जाता है। लोककथाओं में अक्सर एक पिता की संतानों

में से एक (प्रायः छोटा पुत्र) अपने धैर्य, परोपकार, सदाचार एवं ईमानदारी आदि गुणों के कारण अपने गन्तव्य स्थान तक पहुँचने, पुरस्कार प्राप्त करने अथवा सर्वसुन्दरी नायिक को प्राप्त करने के साथ राजसिंहासन भी प्राप्त करता है, जबकि अन्य सन्तानें उसके विपरीत शुष्क स्वभाव के कारण दण्ड के भागी होते हैं अथवा उनको देश-निकाला कर दिया जाता है । लोककथाओं के अन्य पात्रों में कुटनियों का वर्णन प्राप्त होता है जो बादल में ठेगरी लगाने जैसे असम्भव कार्य को पूर्ण करने का भार तत्परता से लेती है। यद्यपि इनके द्वारा किए गये कार्य सामाजिक एवं नैतिक दृष्टि से गलत माने जाते हैं, क्योंकि लिए गये कार्यों की पूर्ति के लिए ये साम, दाम, दण्ड और भेद चारों विधियों का प्रयोग करती हैं। लेकिन इसका अन्तिम परिणाम उनके लिए दुखदायी होता है तथा नायक या उसके सहायक द्वारा अक्सर उनका प्राणान्त कर दिया जाता है। इसी तरह 'लोमड़ी की चालाकी' का अन्तिम फल उसके लिए दुखदायी ही रहता है, यही इस कथाभिप्राय के प्रयोग से इंगित होता है।

संक्षेप में , लोककथाओं में प्रयुक्त कथाभिप्रायों के निम्न वस्तुगत कार्य हैं:-

1- वे कथा को प्रारम्भ करते हैं।

2- कथा को नया और अभिलषित. मोड़ देते हैं।

3- कथा को गति प्रदान करते हैं तथा उसे प्रवाहयुक्त बनाते हैं।

4- कथा के बीच-बीच में रोचकता उत्पन्न करते हैं।

5- कथा के विकासक्रम मे चमत्कार और रहस्य उत्पन्न करके जिज्ञासा, कौतूहल, आश्चर्य, भय, आशंका आदि संचारी भावों का उद्रेक करते हैं।

6- कथा के पात्रों के चरित्र-निरूपण में सहायक बनते हैं।

7- समकालीन जन-जीवन का चित्रण करते हैं।

8- 'यथा कर्मः तथा भोग्यम्', इस नैतिक-शिक्षा को इंगित करते हैं

9- ये कथा में संकेत से ही अधिक (बहुत कुछ) कह देते हैं।

10- कथा को अलंकृत करते हैं।

11- कथा को सुखान्त बनाते हैं।

12- कथा को रोचक व मनोरंजक बनाते हैं।

13- श्रोताओं की कुतुहल-वृत्ति को संतुष्ट करते हैं।

14- कथा में अभिप्सित प्रभाव उत्पन्न करते हैं।

इस तरह कथाभिप्रायों के महत्व के विषय में समग्रत: यही कहा जा सकता है कि ये लोककथाओं की मूल-भूत इकाई होते हैं। यदि लोककथा मानव है तो कथाभिप्राय उसकी आत्मा है। जिस प्रकार प्राण के बिना मानव का अस्तित्व मिट्टी से अधिक कुछ नहीं होता उसी प्रकार कथाभिप्राय के बिना कथा का अस्तित्व कुछ नहीं है।

(घ) कथाभिप्रायों के अध्ययन का महत्व

कथाभिप्रायों का अध्ययन मूलतः नृतत्वशास्त्रियों द्वारा आदिम मानव के जीवन सम्बंधी तथ्यों का पता लगाने के उद्‌देश्य से प्रारम्भ किया गया था; किन्तु बाद में देखा गया कि विभिन्न संस्कृतियों के सम्पर्क, संघर्ष तथा परस्पर आदान-प्रदान द्वारा विश्व में एक सामान्य मानव-संस्कृति विकसित हुई है। इस महत्वपूर्ण सत्य की उपलब्धि में भी कथाभिप्रायों के अध्ययन का बहुत अधिक योगदान रहा है।

विश्व के विभिन्न देशों की लोककथाओं के तुलनात्मक अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि इनमें से अधिकांश कथाभिप्राय विभिन्न देशों में थोड़े-बहुत , रूप-भेद के साथ समान रूप से पाये जाते हैं। उदाहरणार्थ 'प्राणों की अन्यत्र स्थिति' नामक कथाभिप्राय में 'प्रायः एक दानव, चुड़ैल अथवा परी देश का कोई जीव अविजेय एवं अमर रहता है, क्योंकि वह अपनी आत्मा (प्राण, जीव) को किसी गुप्त स्थान में रखता है। लेकिन एक सुन्दर राजकुमारी, जिसे वह अपने जादू के महल में फाँस रखता है, उससे उसका भेद पूछकर कथा के नायक को बतला देती है। नायक अपनी बुद्धिमत्ता से अनेक कष्टों के बावजूद उसकी आत्मा को खोज लाता है। अन्त में नायक उसकी आत्मा को नष्ट करके दुष्ट पात्र को खत्म कर देता है।' यह अभिप्राय थोड़े-बहुत अन्तर के साथ यूरोप, एशिया एवं अमेरिका की लोककथाओं में प्राप्त होता है। लेकिन देश और परिस्थिति भेद के कारण विभिन्न देशों में एक ही कथाभिप्राय के भिन्न-भिन्न रूपान्तर अवश्य हो गये हैं। उदाहरणार्थ- यूरोप की लोककथाओं में भारतीय लोककथाओं में प्राप्त दानव जैसे असाधारण पात्रों का अभाव है। यहाँ दानव के दुष्ट कार्यो को जादूगरनी ही सम्पन्न करती है। ये जादूगरनियाँ भारतीय कथाओं में प्राप्त जादूगरनियों के समान मोहनी-वेश धारण करके नायक को नही फुसलाती;वे प्रायः वृद्धा के वेश में होती हैं। कथाभिप्रायों में यह अन्तर क्षेत्र-विशेष की सामाजिक, भौगोलिक परिस्थितियों तथा सामाजिक, नैतिक एवं धार्मिक मूल्यों के कारण पैदा होता है।

विश्व की लोककथाओं में प्राप्त कथाभिप्रायों के अध्ययन से यह सहज ही जाना जा सकता है कि मानसिक भावभूमि के धरातल पर मानव-जाति के विभिन्न समुदायों में कितनी आश्चर्यजनक समता है। इस समानता के विषय में यह कहा जा सकता है कि सभी देशों में मानव-मन एक ही प्रकार का होता है और उसकी क्रियात्मक शक्तियाँ भी एक जैसी होती हैं। इस कारण विभिन्न देशों के आदिम मानव के विश्वास और रीति-रिवाज भी एक ही से थे, जिनके आधार पर निर्मित कथाभिप्राय भी एक समान विकसित हुए। जे0ए0 मैक्यूलाश ने अपनी पुस्तक - 'द चाइल्डहुड ऑव फिक्शन' में आदिम मानव के लोकविश्वासों पर अनेक कथाभिप्रायों , यथा- परकाय-प्रवेश, जीवन- निमित्त वस्तु निषिद्ध-कक्ष आदि की विश्वव्यापकता पर प्रामाणिक ढंग से विचार किया है तथा सिद्ध किया है कि 'विकास के समान धरातल पर तथा समान वाह्य परिस्थितियों में सुदूरवर्ती मानव-मण्डलियों के सोचने-विचारने की पद्धति भी एक सी ही होती है, चाहे उनमें प्रत्यक्ष सम्बंध हो या न हो।''[1] यह समान सोचने-विचारने की पद्धति मानव-समाज के विश्वासों, रीति-रिवाजों एवं कल्पनाओं (जिसका प्रतिफलन तत्कालीन पूजा-अभिचारों में होता था) के रूप में विकसित हुई; जिनसे निर्मित कथाभिप्राय सभी जगह लगभग एक से ही रहे। विद्वानों का मानना है कि मानव-समाज में नये कथाभिप्राय निर्मित करने की क्षमता सीमित है; प्रायः थोड़े से ही कथाभिप्राय नित्य नये रूपों में प्रयोग में आते हैं। इस विषय में श्यामाचरण दूबे का मत द्रष्टव्य है- 'अभिप्राय के आधार पर सम्पूर्ण विश्व के लोक-कथा-साहित्य का विश्लेषण हमें बतलाता है कि मानव में नये अभिप्राय निर्मित करने की शक्ति आश्चर्यजनक रूप से सीमित है। थोड़े-से ही अभिप्राय नये-नये रूपों में हमें मानव-जाति की लोककथाओं में मिलते हैं।'[2] इस प्रकार कथाभिप्रायों के अध्ययन से सांस्कृतिक धरातल पर विश्व की एकता व सार्वजनीनता सिद्ध होती है।

1- मध्यकालीन हिन्दी प्रबंध काव्यों में कथानक रूढ़ियाँ, डॉ0 ब्रजविलास श्रीवास्तव से उद्धृत, पृ0-35

2- मानव और संस्कृति, श्यामाचरण दूबे, पृ0 - 182

कथाभिप्रायों के उद्‌भव में हमारे सामान्य विश्वास, व्यावहारिक जीवन, तत्वदर्शन एवं मनोविज्ञान का योगदान रहा है । मनोविज्ञानवादी फाइड ने लोककथाओं के अभिप्रायों के निर्माण में 'दमित-काम-वासना' को स्वीकारा है। अर्थात् जो कार्य हम किसी कारण-वश सम्पन्न नही कर पाते उसको कथाभिप्रायों द्वारा अभिव्यक्त करते हैं। जबकि कार्लयुंग ने अपनी पुस्तक 'द स्ट्रक्चर ऑव द साइकी' में व्यक्तिगत अवचेतन की अपेक्षा 'सामूहिक-अवचेतन' को इनके निर्माण के लिए अधिक उत्तरदायी माना है । उनका विचार है कि 'सामूहिक अवचेतन को मानव अपने जीवन काल में अर्जित नही करता वरन् सम्पूर्ण मानव-जाति की मनोवृत्तियों की उपज होता है; जिन्हें मानव अपने पूर्वजों से पैतृक दाय के रूप में प्राप्त करता है।'[1] इस तरह विभिन्न युगों की वाह्य परिस्थितियों में परिवर्तन हो जाने पर भी लोककथाओं में आदिम विश्वासों , प्रथाओं आदि पर आधारित अभिप्रायों का प्रयोग उसी सामूहिक अवचेतना की देन है।

विश्व के विभिन्न देशों के कथाभिप्रायें की समानता की उत्पत्ति मानव की कल्पना और इच्छापूर्ति की प्रवृत्ति के कारण हुई। इन्हीं प्रवृत्तियों के कारण आदिम मानव ने सभी देशों में ऐसी कथायें और अवदान निर्मित किए जिनमें आश्चर्यतत्व और असम्भव प्रतीत होने वाले अतिप्राकृत और अलौकिक कार्यो की अधिकता रहती है। अपनी कल्पना के द्वारा उसने मानवेत्तर वस्तुओं और प्राणियों में मानवीय-चेतना का आरोप किया। आदिम लोक-मानस बच्चों जैसा था। बालक किसी भी हिलती-डुलती वस्तु में मानवीय इच्छा-शक्ति और भावना का आरोप कर लेता है या खेलते समय निर्जीव वस्तुओं को भी सजीव मान लेता है। ठीक उसी प्रकार आदिम मानव भी मानवेत्तर वस्तुओं और जीवों का मानवीकरण करके उनमें अलौकिक शक्तियों की कल्पना करता था। उस अविकसित मानसिक अवस्था में आदिम मानव के लिए प्रकृति रहस्यमय थी। अतः वह प्रकृति को पालतू बनाकर उसके

1- ब्रज लोक-कथाओं में कथानक अभिप्राय, डा0 वीना गोस्वामी, अप्रकाशित शोध प्रबंध, पृ0-44 से उद्‌धृत।

रहस्यों को अपने ढंग से सुलझाता था। फलस्वरूप प्राकृतिक शक्तियाँ उसके लिए देवी-देवता, राक्षस आदि बन गयी। पेड़-पौधों में भूत-प्रेत का निवास माना गया; जीव-जन्तु उसके जातीय पूर्व-पुरुष बन गये; मंत्र-तंत्र और पूजा-अभिचार ही उसके शास्त्र और विज्ञान बने तथा अवदान व लोककथाएं उसकी क्रियाशीलता की उपलब्धि बन गयी।

इस तरह आदिम मानव ने, चाहे वह किसी भी देश का निवासी था, जो कथाभिप्राय निर्मित किए वे कल्पना और इच्छा-पूर्ति की प्रवृत्ति की देन होने के कारण परस्पर समानता रखते हैं। उनमें अन्तर तभी दिखलाई पड़ता है जब विशिष्ट जातीय विश्वासों, रीतिरिवाजों और भौगोलिक परिस्थितियों का उनमें समावेश हुआ है। पर कथाभिप्रायों के अध्ययन में इस अन्तर का उतना महत्व नही है, जितना उस धारणा अथवा घटना का जिनके चलते कथाभिप्रायों में समानता प्राप्त होती है। मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से सम्पूर्ण विश्व के मानवों में कुछ समान तत्व पाये जाते हैं अर्थात् अनेक स्तरों पर मानव समान है। इसके अतिरिक्त मानव स्वभाव की एक विशेषता का पता चलता है कि वह अपनी इच्छाओं को कल्पना जगत में पूर्ण करता है। सुखमय वातावरण में रहने की अतृप्त इच्छाओं की पूर्ति कथाभिप्रायों के समावेश के द्वारा ही होती है। इससे विशेष लाभ यह होता है इनके द्वारा अपनी अपूर्ण व अतृप्त इच्छाओं की पूर्ति करके, मानव अपनी कुण्ठा व तनाव पर एक सीमा तक विजय प्राप्त कर लेता है। अतः कथाभिप्रायों के अध्ययन के मनोवैज्ञानिक महत्व के प्रकाश में कथाभिप्रायों का सांस्कृतिक महत्व सहज ही स्पष्ट हो जाता है।

कथाभिप्रायों के अध्ययन द्वारा उनके मूल स्रोतों तक पहुँचकर आदिम-मानव के विश्वासों, प्रथाओं, आचार-विचारों आदि का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। यद्यपि आदिम-युग में जीवन्त सत्य के रूप में मान्य इन धारणाओं को सभ्य-युग के मानव-मन ने वाह्यतः भुला दिया है किन्तु उसकी अन्तश्चेतना में वे अभी विद्यमान है। उदाहरणार्थ- आदिम युग की प्रारम्भिक अवस्था में मनुष्य सर्वचेतनावादी था, अर्थात वह सृष्टि की सभी वस्तुओं को मानवीकृत रूप में देखता था और उनमें अपने ही समान चेतना, इच्छाशक्ति

और क्रियाशक्ति का आरोप करता था। इसी कारण वह भयंकर बाढ़,आँधी, वर्षा, मेघ-गर्जन, वज्रपात, प्रस्तर-स्खलन आदि प्राकृतिक क्रियाओं में अदृश्य शक्तियों की इच्छा का आरोप करता था। आदिम मानव ने नदियों, वृक्षों, शिलाखण्डों, सूर्य, चन्द्रमा और नक्षत्रों में मानवीय-चेतना का आरोप किया, जो बाद में दैवी-शक्तियों के रूप में मान्य हो गये। इस प्रकार आदिम मानव ने अनेक प्राकृतिक वस्तुओं में अतिप्राकृत शक्तियों वाले देवी-देवताओं, राक्षसों आदि की कल्पना कर ली। इसी तरह लोककथाओं में प्रयुक्त 'जीवन निमित्त वस्तु' के अभिप्राय द्वारा 'आत्मा की अन्यत्र स्थिति' तथा 'टोटम' सम्बंधी आदिम विश्वासों का पता चलता है। आदिम-मानव में यह विश्वास था कि उसके प्राण आत्मा या जीवन शरीर से बाहर भी सुरक्षित रह सकते हैं जबकि आदिम जातियाँ किसी विशेष पशु, पक्षी या वृक्ष को अपने आदिम पुरुष के रूप में मानती थीं; इसी को 'टोटम' सम्बंधी विश्वास कहा जाता है जो आज की वनवासी जातियों में अभी भी विद्यमान है। इन सभी धारणाओं व विश्वासों से लोककथाओं में अनेक लोकाश्रित कथाभिप्रायों का जन्म हुआ। इस तरह नृतत्वशास्त्र ने कथाभिप्रायों के माध्यम से मानव-संस्कृति के अनेक अभेद्य रहस्यों को समझने का द्वार खोल दिया है।

नृतत्वशास्त्रियों के अनुसार विश्व के विभिन्न मानव-समुदाय एक दूसरे के विश्वासों, रीतिरिवाजों, अवदानों एवं लोककथाओं को आदि काल से उसी तरह ग्रहण करते रहे हैं, जैसे आज एक देश में विकसित ज्ञान-विज्ञान के सिद्धान्तों और साधनों को दूसरे देश के लोग ग्रहण करते हैं। पुरातत्व और विश्व का प्राचीन इतिहास इसके साक्षी हैं। लोककथाओं के अभिप्राय भी उसी तरह से एक जाति से दूसरे जाति के लोगों द्वारा गृहीत किए जाते रहने से सारे विश्व में फैलते रहे हैं। विभिन्न देशों के प्राचीन साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन करने से यह पता चलता है कि व्यापार, युद्ध तथा यात्रा आदि के कारण विभिन्न देशों के मानव-समुदायों में सम्पर्क तथा अनेक क्षेत्रों में परस्पर आदान-प्रदान होता रहा है। अतः लोककथाओं और उनमें प्रयुक्त कथाभिप्रायों का एक देश से दूसरे देश में पहुँचना स्वाभाविक था। इससे कथाभिप्रायों की विश्व-व्यापकता सिद्ध होती है।

कथाभिप्रायों के निर्माण में मुख्यतः सामाजिक अभिव्यक्ति और कल्पना का विशेष महत्व माना जाता है। आदिम समाज की मनोवृत्ति और इतिवृत्त को जानने का

आज एक प्रधान साधन लोककथाओं में प्रयुक्त कथाभिप्राय ही है। लोककथाओं की एक प्रमुख प्रवृत्ति है कि उनमें नायक प्रायः राजा या राजकुमार और नायिका रानी या राजकुमारी होती हैं। प्राचीन काल में किसी ग्राम-विशेष या कई ग्रामों में बसी एक जाति का जो सरदार होता था, उसे राजा माना जाता था। हांलाकि उसकी आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति अन्य लोगों से अधिक भिन्न नही होती थी। लोककथाओं के राजा या राजकुमार भी ऐसे ही हैं जो कभी नौकरी के लिए विदेश भी जाते हैं तथा उनकी रानियाँ या राजकुमारियाँ सामान्य से सामान्य कार्य करती दिखलाई पड़ती हैं। वे मध्यकालीन राजाओं की तरह वैभव और लाव-लश्कर के अधिकारी नही हैं। लोककथाओं में राजाओं की इस स्थिति का वर्णन आदिम समाज के सरदारों की स्थिति की अवशिष्ट स्मृति-मात्र है। वस्तुतः प्रारम्भ में ये लोककथाएं उस समाज की स्थिति का चित्रण करती हैं, जिसका संघटन जटिलतापूर्ण नही था। इसी तरह अनेक लोककथाओं में ऐसी सामाजिक-प्रथाओं का वर्णन मिलता है, जो आज के सभ्य-समाज में तो प्रचलित नही है पर समाज के विकास की किसी न किसी अवस्था में वे अवश्य विद्यमान रही होगी और कई आदिम-जातियों में आज भी विद्यमान है; यथा- विवाह के लिए असामान्य कार्य की शर्त, सत्य-परीक्षा, सांकेतिक-भाषा तथा मृत्यु -पत्र जैसी प्रथायें, जो कथाभिप्रायों के रूप में मिलती हैं।

इस प्रकार कथाभिप्रायों का समाज-शास्त्रीय दृष्टि से अध्ययन बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ है। विभिन्न युगों के सामाजिक सम्बंध, लोकविश्वास, प्रथायें, इन कथाभिप्रायों में निहित रहती हैं। जो कथाभिप्राय जिस युग में निर्मित होता है, उसमें उस युग के लोकजीवन की अभिव्यक्ति रहती है और परम्परा या रूढ़ि के रूप में परवर्ती युगों में भी मान्य रहती है। ये कथाभिप्राय आदिम-युग से लेकर मध्ययुग के सामाजिक विकास को रूपायित करते हैं, जिससे इनका क्षेत्र अत्यंत व्यापक हो जाता है। इनका आदान-प्रदान व्यापारिक एवं धार्मिक यात्राओं तथा युद्धों के द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान पर हुआ है। किसी भी देश में जाकर लोककथायें एवं उनमें प्राप्त कथाभिप्राय वहाँ के सामाजिक, नैतिक एवं धार्मिक परिवेश के साथ एकाकार हो जाते हैं। विश्व भर के कथाभिप्रायों में समानता प्राप्त होने का इसे प्रमुख कारण माना जाता है।

जैसा कि विदित है, कथाभिप्रायों का अध्ययन मूलतः नृतत्वशास्त्रियों द्वारा आरम्भ किया गया था। कालान्तर में यह अध्ययन केवल नृतत्वशास्त्र के लिए ही नहीं, बल्कि लोककथा के विकास को समझने की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है। अतः लोककथाओं में प्रयुक्त कथाभिप्रायों का महत्व न केवल उनकी समानता व व्यापक अभिव्यक्ति में निहित है, वरन् उसके दृष्टिकोण को सामने रखकर लोकसाहित्य तथा लोक संस्कृति का अध्ययन भी सरलता से किया जा सकता है। वस्तुतः लोककथाओं में जो सजीवता और मौलिकता है, वह सब कथाभिप्रायों में ही निहित है। xxxxxxxxxxxxxx लोक मानस को अभिव्यक्त करने की क्षमता तथा श्रोताओं पर गहरी छाप अंकित करने की शक्ति कथाभिप्रायों में ही निहित है।

(ड.) लोककथा: परिभाषा , विभिन्न तत्व

'लोककथा' शब्द सामान्यतः उन लोकप्रचलित कथानकों के लिए व्यवहृत होता रहा है जो मौखिक या लिखित परम्परा में एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को प्राप्त होते रहे हैं। यह एक सर्वविदित सत्य है कि लोककथा या कहानी का प्राचीनतम रूप मौखिक ही रहा है, यद्यपि बाद में इसको लिखित रूप में भी प्रस्तुत किया गया। लोकथा की एक विशिष्ट पहचान यह है कि वह परम्परागत होती है। वह एक व्यक्ति के द्वारा दूसरे व्यक्ति को उत्तराधिकार में प्राप्त होती है।

'स्टैण्डर्ड डिक्शनरी आफ फोकलोर' में लोककथा के सम्बंध में इस प्रकार लिखा है- 'लोककथा की विशिष्टता यह है कि यह परम्परागत होती है । क्रमागत होने के कारण लोककथा क्रमशः एक मानव से दूसरे मानव को उपलब्ध होती है, फलतः इसमें मौलिकता का अभाव रहता है। यह परम्परा (अनुश्रुति) विशुद्ध रूप से मौखिक भी हो सकती है। लोककथा सुनी जाती है, तथा बार-बार दुहराई जाती है। कभी-कभी कंठस्थ की गयी लोककथा में नूतन कथक्कड़ के द्वारा कुछ परिवर्द्धन एवं परिवर्तन भी कर दिए जाते हैं।'[1] लोककथा की इस व्याख्या में उसकी सहज एवं मूलभूत प्रवृत्तियों को दर्शाया गया है।

'हिन्दी साहित्य कोश' के अनुसार- 'लोक में प्रचलित और परम्परा से चली आने वाली मूलतः मौखिक रूप में प्रचलित कहानियाँ लोक-कहानियाँ कहलाती हैं। आज ऐसी कहानियाँ भी हैं जो लिखी जा चुकी हैं पर इतने से ही वे लोक-कहानी का स्वरूप नही छोड़ देतीं। लिखी हुई लोक-कहानियों से यह विदित हो जाता है कि वे मूलतः मौखिक थीं।[2] लोक-कहानी शब्द का कभी-कभी प्रयोग अंग्रेजी शब्द फोकटेल (Folk Tale)

1- लोककथा विज्ञान, श्रीचन्द्र जैन, संस्करण 1977ई0, पृ0-19 से उद्धृत

2- हिन्दी साहित्य कोश (भाग एक), धीरेन्द्र वर्मा, पृ0-748

के पर्यायवाची के रूप में भी होता है। अंग्रेजी में यह शब्द बहुत व्यापक अर्थ रखता है और इसमें अवदान, लोककथा, धर्मगाथा, पशुपक्षियों की कहानियाँ, नीतिकथायें आदि लोकप्रचलित वार्त्ताएं सम्मिलित हो जाती हैं।[1] आजकल लोक-कहानी के लिए 'लोककथा' शब्द प्रचलन में है तथा प्रस्तुत शोध प्रबंध में इसी को प्रयोग में लाया गया है।

'लोककथा' की परिभाषा अन्य विद्वानों ने भी अपने अपने ढंग से प्रस्तुत की है। श्री सत्यव्रत अवस्थी के अनुसार- "लोककथाएं नाना रूप से लोकजीवन में समायी हुई हैं। मानसशास्त्र के तत्वज्ञों का कहना है कि 'मानव मन में जो शाश्वत बालभाव समाया रहता है, उसकी भाषा, उसका साहित्य, उसकी भावाभिव्यक्ति कथा ही है।' यदि यह कहें कि सारा संसार कहानी में ही समाया हुआ है अथवा संसार का चित्र-विचित्र रूप ही कहानी है तो अत्युक्ति न होगी।"[2]

श्री राम नारायण उपाध्याय के अनुसार- 'लोककथाओं में मानव-मन का सुकोमल इतिहास अंकित रहता है। आदमी ने जो कुछ किया, उसका लेखा-जोखा तो इतिहास में आ जाता है, लेकिन अपने मनोजगत् में उसने जो कुछ भी सोचा-विचारा रंगीन कल्पनाएं बुनी, सुन्दर सपने सजाये, उन सबका विवरण इन कथाओं में सुरक्षित है।'[3]

डॉ0 वासुदेव शरण अग्रवाल ने लोककथा के महत्व को दर्शाते हुए लिखा है- 'कहानी मानवी-मन की अति निकट की वस्तु है। कहानी के लिए मनुष्य सदा बालक बना रहता है। किसी कारण से यदि मानवी मस्तिष्क अपना चिर-संचित ज्ञान भूलने भी

1- हिन्दी साहित्य कोश (भाग एक), धीरेन्द्र वर्मा, पृ0-748

2- लोक साहित्य की भूमिका, सत्यव्रत अवस्थी, पृ0-71

3- हमारी लोककथाएं: शैली और स्वरूप, 'मरूभारती', वर्ष-10, अंक-3, अक्टूबर 1962 ई0, पृ0-60

लग जाय , तो भी कहानी अंत तक उसका साथ न छोड़ेगी। कहानी मानवी मन का सबसे सुपच आहार है। कहानी के नाम से मन की खोई हुई ग्राहक-शक्ति का भूख फिर जाग उठती है। कहानी विश्व के सनातन बालरूप की चिरसाथी है।'[1]

इस तरह, लोकसाहित्य की विविध विधाओं में सर्वाधिक प्राचीन विधा लोककथा है। फलस्वरूप लोककथाओं के जन्म की कथा मानव जन्म के साथ सम्बद्ध है। इन लोककथाओं का उद्गम उस आदिम-युग में हुआ होगा, जब मनुष्य निराअसभ्य 'था, घर- द्वार बनाकर रहना उसने अभी नही सीखा था। वह स्वच्छन्द भाव से इधर-उधर घूमता रहता था। दिन को जंगलों में शिकार द्वारा अपना पेट भरता और रात को जंगली जानवरों तथा शीत से रक्षा पाने के लिए एकत्रित हो आग का 'अलाव' जलाकर उसके आस-पास बैठकर रात व्यतीत करता था। उस समय मन-बहलाने के लिए ही इन कथाओं की उपज हुई होगी। गॉव-देहातों में आज भी जाड़े की रातों में अलाव जलाकर उसके आस-पास बैठकर कथाएं कहीं-सुनीं जाती हैं।

लोक-कथाओं का मुख्य उद्देश्य मनोरंजन है। इनमें मानसिक द्वन्द्व अथवा भावों का उतार-चढाव नही होता है। तर्क की कसौटी पर भी ये नहीं कसी जा सकती है। इसमें सब कुछ अस्पष्ट और अनिश्चित होता हे, पात्र तथा स्थानों के नाम निश्चित नही रहते। देशकाल की सीमा से भी वे मुक्त रहती हैं। 'किसी समय एक राजा था' कौन था, कब था, कहॉ हुआ? यह जानने का कोई उपाय नही होता। फिर भी वे अनादि काल से मानव का मनोरंजन करती आ रही हैं और आगे भी करती चली जायेगी।

1- 'पाषाण नगरी', शिवसहाय चतुर्वेदी, भूमिका- डॉ0 वासुदेव शरण अग्रवाल से उद्धृत।

लोककथाओं का क्षेत्र इतना व्यापक और विविध है कि इनकी सारी विशेषताओं को सूचीबद्ध करके, उनकी पहचान की कोई कसौटी निर्धारित करना सम्भव नही है। फिर भी इतना कहा जा सकता है कि हर कहानी में लोककथा की पदवी की अधिकारिणी होने की विशेषतायें नही हुआ करतीं। ऐसी कहानियाँ केवल वे ही होती हैं जिनमें लोकमानस पर छा जाने वाली रसात्मकता तथा मर्मानुभूति स्पन्दित रहती है। लोककथाएं लोकमानस की सहज अभिव्यक्ति हैं। इनमें मानव-जातियों का इतिहास, सामान्य-जन की मूल भावनाएं, इच्छाएं, विचार, और अनुभवों का समावेश रहता है। लोककथाओं में ही लोक-मानस की साहसिकता, स्वच्छन्दता, धार्मिक-चेतना, विश्वास , कौतूहल और रोमांस का समावेश पाया जाता है। इन शाश्वत तत्वों के अतिरिक्त इनमें कल्पना की उड़ान होती है। सम्भाव्य तथा असम्भाव्य तत्वों की बहुलता होती है। संयोग और कल्पना के आधार पर सृष्टि के प्रत्येक घटक का महत्व होता है। इस भाँति लोककथा की सर्वप्रियता, जिस कथाओं को एक बार प्राप्त हो जाती है, वे युग-युगान्त तक यत्किंचित परिवर्तनों के साथ भी, लोकमानस में सदा सर्वदा के लिए रम जाती हैं।

लोककथाओं का तात्विक विवेचन करने पर उनमें प्रमुख तत्व 'लोकमानस' को अन्तः व्याप्त माना गया है। लोक-मानस की अन्तः व्याप्ति के कारण ही कोई कहानी 'लोककथा' कही जाती है। लोककथा एक दीर्घयात्रा करके वर्तमान तक आ पाती है, इसलिए इसमें लोकमानस के कई स्तर मिलते हैं। लोक मानस में विभिन्न युगीन संस्कृतियों का समावेश होता है, जिनके अवशेष रूप अभिप्रायों में पाये जाते हैं।

लोककथा के विभिन्न तत्वों में सामान्यतः कथानक, पात्र, चरित्र-चित्रण, कथोपकथन, देशकाल, भाषा तथा शैली, एवं उद्देश्य को शामिल किया जाता है। कुछ विद्वान कथानक के अन्तर्गत कथा-रूप , पात्र, अभिप्राय, घटना, संघटना, वातावरण तथा कथा की उपयोगी दृष्टि को समाहित कर लेते हैं।

लोककथा की कथावस्तु (कथानक) पौराणिक, ऐतिहासिक, सामाजिक एवं काल्पनिक आदि विविध रूपों में उपलब्ध होती है। लेकिन यह कथावस्तु सरल एवं सुबोध होती है, क्योंकि लोक-मानस स्वयं सरल है। अतः उसकी सृष्टि में न विषमता है और न जटिलता। कथावस्तु के वैविध्य में जीवन की उपेक्षा भी नहीं की गयी है। चूंकि लोक साहित्य, लोकजीवन पर आधारित है अतः ये कथाएं लोक-जीवन की सरस सरिताएं हैं, जिनमें लोक का राग-विराग, उत्कंठा, विषमता , उदारता, मादकता, संतोष, आत्मनिर्भरता, विश्वास, श्रद्धा, लालसा, उत्सुकता सदैव तरंगित होता रहता है। कुछ कथाएं ऐसी हैं जिनकी कथावस्तु छोटी है लेकिन ऐसी कथाएं भी बड़ी संख्या में हैं, जिनमें मूल कथाओं के साथ उपकथाओं की श्रृंखला होने के कारण विस्तृत होती है।

लोक-कथाओं के पात्र अनन्त हैं। इस विराट विश्व का कोई भी ऐसा उपकरण नही है, जो कथा का पात्र न बना हो। चेतन-अचेतन सब पात्र बनकर अपना परिचय स्वयं देते हैं। इन पात्रों की विशेषता है कि ये अपने व्यक्तित्व को अपने समाज से एकाकार कर लेते हैं। पात्रों का निजत्व समाविष्ट के साथ विलीन होकर इतना व्यापक बन जाता है कि यहाँ कल्पित भेदभाव का कुछ महत्व नही रह जाता है। शेर, खरगोश, भेड़िया, लोमड़ी , सियार, रीछ, बन्दर मानव की बोली बोलकर इंसान के साथ खाते-पीते हैं; अपना दुखड़ा रोते हैं और खेती तथा व्यापार करने को उद्यत हो जाते हैं। यहाँ पक्षी विरहिणी का संदेश लेकर जाता है,कन्या के लिए उचित वर की खोज करता है, फसलों की रखवाली करता है, विवाह की तैयारी में संलग्न होता है, संकट में फंसे राजकुमार व राजकुमारी की सहायता करता है तथा पूजाअर्चना करके देवी-देवताओं को भी मनाता है। लोककथाओं के पात्र इन्सान एवं पशु-पक्षियों के अतिरिक्त देवी देवता, दैत्य-दानव, परी-अप्सरायें, सुई, चाकू, छुरी, कुल्हाड़ी, तलवार, पहाड़, नदियाँ, सर- सरिताएं , कूप-बावड़ी, पादप-पुष्प, भी होते हैं। इन पात्रों में मानवीय भावनाएं किसी न किसी रूप में विद्यमान रहती हैं।

लोक-कथाओं में चरित्रों का निरूपण बड़ी स्वाभाविक विधि से हुआ है। जातिगत प्रवृत्तियों को चित्रित कर ये कथाएं अधिक लोकप्रिय बन गयी हैं। सिंह की उदारता, पौरुष

तथा शौर्य; सियार- लोमड़ी का कपट, ठाकुर की ठसक, बनिए की धन-लिप्सा, कोरी की मूर्खता, जाट की जड़ता, विप्र की स्वाद-प्रियता, साधु की दया, धूर्तो की धूर्तता, ठगों की ठगाई, डाकू की कठोरता, काछी का कपट, राजा की विलासिता, मंत्रियों की चालें, धूर्त-महात्मा की मायाचारिता, संतों की महानता, किसानों की सहजशीलता, व्यापारियों का छल-कपट, भगवान शंकर का भोलापन, परियों की सौन्दर्य-प्रियता तथा दैत्य-दानवों की नीचता जैसी प्रवृत्तिगत विशेषताएं लोककथाओं में सहज रूप में अभिव्यक्त होती हैं। लोककथाओं में प्राप्त पात्रों के चरित्र-चित्रण में मनोवैज्ञानिकता भी सहज ही आ जाती है। विशेषतः प्रधान पात्र का चरित्रांकन मानव मनोविज्ञान पर सहज ही आधारित होता है।

लोककथाओं में पात्रों का वार्तालाप (कथोपकथन) आकर्षक होता है। पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग लोककथाओं के संवादों की विशिष्टता है। सुदूर गाँवों में यद्यपि अशिक्षितों की संख्या अधिक होती है, फिर भी पंडितों को पढ़ा लिखा माना जाता है। काछी, चमार, धोबी, खटिक, कलार, कोरी, गड़रिया, ग्वाल आदि की भाषा में ग्रामीण शब्दों का बाहुल्य रहता है, किन्तु पंडित, महात्मा, कथावाचक, पंच, हाकिम आदि की भाषा में एक ओर बड़े-बड़े शब्दों का जाल विछा रहता है तो दूसरी ओर शास्त्रों की कतिपय सूक्तियों की आवृत्ति होती है। भक्तों की प्रार्थनाएं कम शब्दों में रहती हैं, लेकिन् भगवान और साधु-महात्माओं के कथनों में अनुभव की गहराई लम्बे-लम्बे वाक्यों में ही प्रकट होती है। कहीं वाक्य छोटे होते है तो कहीं लम्बे। इन कथनों में कहीं-कहीं पद्यों का भी प्रयोग होता है। पात्रों के वार्तालाप से उनके स्वभाव, विचार एवं प्रवृत्तियों का भी अध्ययन किया जा सकता है। उनकी आन्तरिक भावनाएं वार्तालाप के माध्यम से शीघ्र ही मुखरित हो उठती हैं।

युगीन वातावरण (देशकाल) भी लोककथाओं में यथावसर निरूपित हुआ है। राजा भोज और राजा विक्रमादित्य के समय के, अथवा इन नरेशों से सम्बंधित कथाओं में, तत्कालीन वैभव, रहन-सहन, आचार-विचार, शासन, दण्ड-विधान, न्यायप्रियता आदि का

मनोरम चित्रण मिलता है। पौराणिक एवं धार्मिक कथाएं बताती हैं कि मानव-समाज धार्मिक था, उसमें पाप-पुण्य की सुदृढ़ कल्पनाएं थीं। सब ओर सुख-समृद्धि थी। राजा प्रजा में अटूट स्नेह था। धरती पर्याप्त अन्न देकर सबको सन्तुष्ट रखती थी। पशु भी न्यायार्थ राज-दरबार में पहुँच सकता था। सामाजिक संगठन आदर्श था, सर्वत्र सहयोग की भावना विद्यमान थी। तंत्र-मंत्रादि के प्रभाव से असम्भव कार्य भी सम्भव हो जाते थे। देवी-देवता भी मानवों के बीच बैठकर अपने भक्तों की सहायता करते थे। नकली साधुओं, पीरों तथा महन्तों की कथाओं में कहीं अवर्षा से पीड़ित ग्रामवासियों की विषम-दशा चित्रित होती है तो कहीं उनके अन्धविश्वासों का। इन कथाओं में कहीं सामाजिक पतन के कुचित्र उभरे हैं, कहीं धूर्त साधुओं के द्वारा निर्मित चारित्रिक-हीनता के प्रति घोर असन्तोष भी प्रदर्शित हुआ है।

लोककथाओं की शैली सरल एवं रोचक होती है। जितना आकर्षक ढंग कथा कहने का होता है, उतनी ही मनोरम शैली कथा लिखने की भी होती है। छोटे- छोटे वाक्य, लोक प्रचलित मुहावरों एवं कहावतों तथा लोक-व्यवहृत भाषाओं के विभिन्न शब्दों के प्रयोग से कथा-शैली में रोचकता आ जाती है। रसों एवं अलंकारों ने भी शैली की मनोरमता में अभिवृद्धि की है। पात्र एवं अवसरानुकूल भाषा के प्रयोग तथा ठेठ ग्रामीण शब्दों की बहुलता के कारण शैली में विशेष आकर्षण आ जाता है। कथा का प्रारम्भ प्रायः होता है- 'एक राजा अथवा एक किसान से। वह किसी राज्य अथवा गांव का निवासी होता है। उसके दो-चार पुत्र होते हैं अथवा वह निस्संतान बताया जाता है। धीरे-धीरे वह प्रयत्नशील बनता है और अपनी मनोकामना को पूर्ण कर लेता है। कथा का सदैव 'स्वांतः सुखाय' अंत रहता है। अधिकांश लोककथाएं 'गद्यात्मक ' मिलती है किन्तु कुछ गद्य-पद्य मिश्रित 'चम्पू शैली' के रूप में मिलती है।

लोककथाएं आज भी हमारे ग्रामीण भाइयों के मनोविनोद का साधन बनी हुई हैं। गांवों में बालक-बालिकाओं को कहानी सुनाकर हमारी दादी-नानियाँ स्वयं जीवन की उदासीनता मिटाती हैं तथा इन फूलों से सुन्दर बच्चों को प्रमुदित करती हैं। कहा जाता

है कि पुरातन–काल में मानव इन लोककथाओं को अपनी दिनभर की थकान मिटाने तथा सोई मुस्कान जगाने हेतु कहता या सुनता था। शनैः-शनैः उसकी बुद्धि विकसित होती गयी और इससे कहानी के उद्देश्य भी बदलते गये हैं। मनोरंजन के साथ लोककथाओं के कतिपय अन्य उद्देश्य हैं:-

1- आनन्द की अनुभूति।

2- नैतिक शिक्षा का सहज निरूपण।

3- धार्मिक तत्वों का स्पष्टीकरण।

4- राजनीति के सिद्धान्तों को सुगम बनाना।

5- बच्चों को संस्कारित करना।

6- खाली समय को व्यतीत करना। इत्यादि।

इसके अलावा 'अभिप्राय' लोककथाओं का एक विशिष्ट तत्व है, जिसका लोककथाओं के विकास में महत्वपूर्ण स्थान है। वस्तुतः लोककथाओं का अस्तित्व इन अभिप्रायों से ही सिद्ध होता है और इनसे ही लोककथाओं में अलौकिकता आती है एवं उनके सौन्दर्य की अभिवृद्धि होती है। श्रोता भी अभिप्रायों से इतने अधिक प्रभावित होते हैं कि समय-समय पर इनका स्मरण दिलाकर कथक्कड़ से अमुक कहानी कहने के लिए अनुरोध करते हैं। लोककथाओं में मनुष्य पशु-पक्षियों की बोली समझता है और उससे कहानी के आगे बढ़ने में सहायता मिलती है, सौतेली माँ लड़के को देश निकाला देती है पर अंत में लड़का फिर घर लौटकर आ जाता है, नायक के प्राण किसी एक वस्तु में रहते हैं जिसके नष्ट होने से वह स्वयं मर जाता है। ये सब अभिप्राय लोककथाओं में बारम्बार अवतरित होते हैं । इनका बाहुल्य लोककथा की सबलता एवं आकर्षण को असाधारण रूप में बढ़ाता है। कहानी का केन्द्रबिन्दु अभिप्रायों में ही रहता है। इन अभिप्रायों से कहानी निर्मित होती है और वह इनके चारों ओर घूमती रहती है। लोककथा के निर्माण में ये अभिप्राय ही मूल-कारक माने गये हैं या अभिप्राय ही लोककथाओं के मूल तत्व हैं।

****

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

अध्याय-दो

क- बुन्देली-भाषा का क्षेत्र-विस्तार

ख- बुन्देली-भाषाः सामान्य परिचय

ग- बुन्देली लोकसंस्कृति

घ- बुन्देली लोककथाएंः सामान्य परिचय

ड.- बुन्देली लोककथाओं का वर्गीकरण ।

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

(क) बुन्देली-भाषा का क्षेत्र-विस्तार

बुन्देली भारत के जिस भू-भाग की लोकभाषा (बोली) है, उसे 'बुन्देलखण्ड' के नाम से जाना जाता है। प्राचीनकाल से यह भू-भाग विभिन्न नामों ; यथा- यजुर्होति, चेदि, दशार्ण, जुझौति, जेजाकभुक्ति, बिन्ध्येलखण्ड आदि से जाना गया, लेकिन मध्यकाल में बुन्देला (बुन्देले) राजपूतों के आगमन के पश्चात् इस भू-भाग को वर्तमान नाम- बुन्देलखण्ड- प्राप्त हुआ।

आर्य-सभ्यता के आदिकाल से बहुत पहले अनार्य-कालीन संस्कृति के परम प्राचीनतम रूपों की यह भूमि लीला-क्षेत्र रही है। प्राचीन अनार्य चित्र-कला के चित्रों से , जो मानिकपुर (जिला- बांदा, उ0प्र0) की वनस्थली में योगनियों के गुफाओं के द्वारों पर अंकित हैं, इस भूमि की पुरातन अर्द्ध-सभ्यता का प्रमाण मिलता है। वैदिक- कालीन यजुर्वेदीय कर्मकाण्ड का यहाँ ही प्रथम अभ्युदय होने के कारण यह भू-भाग 'यजुर्होति' कहा गया था, जिससे अपभ्रष्ट हो 'जीजभुक्ति' बना था।[1]

भारतीय इतिहास में प्रागैतिहासिक काल से इस भू-भाग- की स्थिति पुराणों से प्राप्त होती है। जिनके अनुसार वैवस्वत् मनु की परम्परा में महाराज ययाति के पाँच पुत्र हुए- यदु, तुर्वसु, दुह्य और पुरू। साम्राज्य विभाजन में यदु को चर्मण्यवती (चम्बल), वेत्रवती (बेतवा) तथा शुक्तिमती (केन) की धाराओं से अभिसिंचित भू-भाग प्राप्त हुआ। कालान्तर में उसी वंश में महाराज चिदि के नाम पर इस वंश का नाम 'चेदि' पड़ा।[2] जिनके ही नाम यह भू-भाग 'चेदि' कहलाया।

1- बुन्देलखण्ड, स्व0 श्रीकृष्ण बलदेव वर्मा, 'मधुकर' वर्ष-1, अंक-6, 15 दिसम्बर 1940, पृ0-33

2- बुन्देलखण्ड का भाषा-शास्त्रीय अध्ययन, डॉ0 रामेश्वर दयाल अग्रवाल, संस्करण 1963 ई0, पृ0-6

महाभारत-कालीन चेदि-नरेश शिशुपाल का नाम मिलता है, जिसकी राजधारी सुक्तिमती (वर्तमान चन्देरी) मानी जाती है। यहाँ के शासक यदुजन की शाखा के थे, यद्यपि बाद को इसके कुछ शासक कुरू-वंश से सम्बंध रखने वाले हुए।[1] बौद्ध-ग्रंथ 'अंगुत्तरनिकाय' से प्राप्त सोलह महाजनपदों की सूची में 'चेदि' का नाम मिलता है। जिसमें इस भूभाग के पूर्वी तथा उसके समीपवर्ती क्षेत्र सम्मिलित थे। आजकल का दमोह जिला और उसके उत्तर के राजवाड़ों का प्रान्त (दर्शाण नदी का पश्चिमी भाग) चेदि-देश में ही था। इसका विस्तार पश्चिम में वेतवा और उत्तर में यमुना नदी तक था।[2]

इस भू-भाग का एक नाम 'दशार्ण' देश भी मिलता है। कौटिल्य के 'अर्थशास्त्र' से ज्ञात होता है कि चौथी शताब्दी ईसा पूर्व में धसान की उपत्यिका में एक नवीन राजनैतिक इकाई 'दशार्ण' का विकास हआ। मौर्य-सम्राट अशोक की ससुराल इसी भूमि (दशार्ण देश) में विदिशा (प्राचीन नाम भिलसा) मे थी। कालिदास अपने 'मेघदूत' नामक खण्ड-काव्य में दशार्ण की राजधानी विदिशा का उल्लेख करते हैं जो उसके राजनैतिक महत्त्व को सूचित करता है।[3] पतंजलि कृत 'महाभाष्य' के टीकाकार वैम्यट के अनुसार- 'नदी-विशेष तथा देश-विशेष का नाम दशार्ण है।' नदी-विशेष के अर्थ में, यह इस भूभाग में प्रवाहित होने वाली 'धसान' नदी का पूर्व नाम दशार्ण जान पड़ता है । देश-विशेष के अर्थ में यह-वह देश है, जिसमें दस नदियाँ-चम्बल, पहूज, काली-सिन्ध, कुँवारी, यमुना, वेतवा, मन्दाकिनी , केन, तमसा तथा धसान प्रवाहित होती हैं। इस प्रकार उस भूभाग के दस नदियों के देश अथवा 'दशार्ण देश' नाम की सार्थकता सिद्ध है।[4]

1- मध्यदेश, धीरेन्द्र वर्मा, संस्करण- 1955ई0, पृ0-19

2- बुन्देलखण्ड का सक्षिप्त इतिहास, गोरे लाल तिवारी, संस्करण 1933, ई0 प्र04

3- बुन्देलखण्ड की पौराणिक नदिया, एस0के0 पारिख, 'ईसुरी', अंक-1 (1983-84 ई0), पृष्ठ - 9

4- बुन्देली और उसके क्षेत्रीय रूप, डा0 कृष्णलाल हंस, संस्करण-1976 ई0, पृ02

गुप्त शासकों की पतनावस्था के दौरान इस भू-भाग में जुझौतिया- ब्राह्मणों का राज्य स्थापित होने के कारण इसको 'जुझौति' नाम से भी जाना गया। इसकी प्रारम्भिक राजधानी ऐरण (सागर जिले में) थी; बाद में खजुराहो को सांस्कृतिक नगरी एवं राजधानी के रूप में विकसित किया गया। चीनी यात्री ह्वेनसांग ने जुझौति (ची-ची-टू) राज्य की यात्रा की आँखो देखी स्थिति का विवरण अपने यात्रा वृत्तांत में दिया है।[1]

बुन्देलखण्ड के पहले 'जेजाकभुक्ति' ही एक ऐसा नाम था, जो कभी इस पूरे भू-भाग का द्योतक रहा। इन साइक्लोपीडिया ब्रिटानिका (वाल्यूम चार, पेज-409) में इस भू-भाग का 'जेजाकभुक्ति' के रूप में उल्लेख हुआ है। 'जेजा' कन्नौज के गुर्जर-प्रतिहार साम्राज्य के अन्तर्गत एक चन्देल सामन्त था, जिसकी सुव्यवस्था की ऐसी धूम मची कि जब इस वंश ने अपने को स्वतंत्र घोषित किया, तब इसके नाम पर ही उस भू-भाग का नाम जेजाकभुक्ति (> जेजाहुति > जुझौति) चल पड़ा[2] इस प्रकार चन्देलों द्वारा शासित इस भू-भाग को 'जेजा' (जयशक्ति) के नाम पर जेजाकभुक्ति या जेजाभुक्ति कहा गया। जो भू-भाग चन्देलों के अधिकार में रहा, वह धसान नदी के पूर्व में और विन्ध्याचल पर्वत के उत्तर और पश्चिम में था। उत्तर में यह यमुना नदी तक और दक्षिण में केन नदी के उद्गम स्थान (दमोह-जिला) तक फैला हुआ था। केन नदी इस भू-भाग के बीचो-बीच बहती थी, जिसके पश्चिम में महोबा व खजुराहो नगर तथा पूर्व में कालिंजर व अजयगढ़ नगर थे।[3]

1- बुन्देलखण्ड का वृहद इतिहास, डॉ0 काशी प्रसाद त्रिपाठी, संस्करण- 1991ई0, पृ0-12

2- बुन्देली का भाषा-शास्त्रीय अध्ययन, डॉ0 रामेश्वर दयाल अग्रवाल, संस्करण-1963, पृ0-13

3- बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास, गोरेलाल तिवारी, संस्करण- 1933ई0, पृ0-41, 42

बुन्देलखण्ड से स्पष्ट तात्पर्य भारत के उस भू-भाग से है, जो प्रमुख रूप से बुन्देले- राजपूतों की निवासभूमि अथवा उनके द्वारा शासित भूमि रही है। इस नामकरण के सम्बंध में अनेक मान्यताएं प्रचलित हैं। प्रथम मान्यता के अनुसार, विन्ध्य-पर्वत की उपत्यका में स्थित होने के कारण यह भू-भाग 'बुन्देलखण्ड' कहलाया, जैसा कि हिमालय की क्रोड़ में स्थित आज का हिमांचल प्रदेश है। गोरेलाल तिवारी के अनुसार- 'ऐसा प्रतीत होता है कि विंध्याटवी में स्थित होने के कारण इस प्रदेश (भूभाग) का नाम विंध्येलखण्ड पड़ा, बाद में अपभ्रष्ट हो यह बुन्देलखण्ड कहलाया।[1] स्व0 श्रीकृष्ण बल्देव वर्मा भी इसी मत का समर्थन करते हैं, उनके अनुसार- 'विशेषतः विन्ध्याटवी में स्थित होने के कारण यह भाग 'विन्ध्येलखण्ड' नाम से सम्बोधित हुआ था, जो आगे चलकर 'बुन्देलखण्ड' नाम में परिवर्तित हो गया।[2] विन्ध्य की उपत्यका में स्थित होने के कारण इस भू-भाग का नाम 'बुन्देलखण्ड' पड़ना मानने वाले, विन्ध्य से 'बिन्ध्य' का विकास मानकर बिन्ध्य से 'भिन्येल' (विन्ध्य के अन्तर्गत भूमि) शब्द का निर्माण मानकर 'बिन्ध्येलखण्ड' नाम होना बताते हैं। जो कालान्तर में 'बुन्देलखण्ड' नाम में परिवर्तित हो गया।

द्वितीय मान्यता के अनुसार, 'बुन्देले' इस भू-भाग के मूल निवासी नही हैं। विन्ध्य की उपत्यका में आकर बसने के कारण ही वे 'बुन्देला' कहलाये और उन्हीं के नाम पर इस भू-भाग का नाम 'बुन्देलखण्ड' पड़ा। जनश्रुति तो यह है, गहरवारवंशीय काशीश्वर विन्ध्यराज की वंश-परम्परा में उत्पन्न हुए महाराज हेमकरन ने (जिनको इतिहासकारों ने वीर पंचम के नाम से अभिहित किया है) भाइयों द्वारा छीने हुए अपने राज्य की प्राप्ति के लिए विन्ध्यवासिनीदेवी (अनार्यो की प्रसिद्ध देवी, जिनका विन्ध्य के उत्तर पूर्व अंचल, वर्तमान मिर्जापुर जिले में प्रसिद्ध मन्दिर है) को प्रसन्न किया। आत्मोसर्ग के लिए उठी

1- बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास, गोरेलाल तिवारी, संस्करण- 1933 ई0, पृ0।

2- बुन्देलखण्ड, स्व0 श्रीकृष्ण बलदेव वर्मा, 'मधुकर', वर्ष-1, अंक-6, 15 दिसम्बर, 1940 पृष्ठ-33

हुई तलवार की एक खरोंच मस्तक में लग गयी और रुधिर का एक सबल बिन्दु धरती पर जा गिरा; फलस्वरूप वीर पंचम की संतति 'बुन्देला' क्षत्रिय (बूँद < सं0 बिन्दु के प्रभाव से राज्य प्राप्ति) के नाम से प्रसिद्ध हुई।[1] बूँद से बुन्देला हो जाने की कल्पना चारणों द्वारा हुई प्रतीत होती है; लेकिन बुन्देला नाम का सम्बंध किसी न किसी रूप से विन्ध्य पर्वत मालाओं से अवश्य रहा है। भौगोलिक रूप से भी विन्ध्य परिक्षेत्र विन्ध्येला (विन्ध्यइला) कहलाता था, जो एक प्रथक इकाई के कारण विन्ध्येल-खण्ड नाम से जाना जाता था। कालान्तर में मुख-सुख के कारण विन्ध्येला अपभ्रंश में बुन्देला और विन्ध्येलखण्ड बुन्देलखण्ड हो गया।[2]

इस प्रकार 'इस भूभाग को विन्ध्याचल (विन्ध्य के अंचल) में स्थित होने के कारण विन्ध्येलखण्ड > बुन्देलखण्ड कहा गया हो अथवा विन्ध्य के अंचल में आकर गहरवार क्षत्रिय बुन्देले कहलाये और उसकी निवास-भूमि होने के कारण इसे बुन्देलखण्ड कहा गया हो पर यह नाम चार सौ वर्षो से अधिक प्राचीन नही जान पड़ता।'[3] अधिकांश विद्वानों ने इस भू-भाग को उत्तर में यमुना, दक्षिण मे नर्मदा, पश्चिम में चम्बल व पूर्व में टोन्स नदी तक विस्तृत माना है अथवा इन चारों नदियों के मध्य-स्थित भू-भाग ही 'बुन्देलखण्ड' कहलाता है।

1- बुन्देली का भाषा शास्त्रीय अध्ययन, डॉ0 रामेश्वर दयाल अग्रवाल, संस्करण-1963 ई0, पृ0-2

2- बुन्देलखण्ड का वृहद इतिहास, डॉ0 काशी प्रसाद त्रिपाठी, संस्करण 1991 ई0, पृष्ठ-1

3- बुन्देली और उसके क्षेत्रीय रूप, डॉ0 कृष्ण लाल हंस, संस्करण - 1976 ई0, पृष्ठ-3

डॉ0 कृष्णलाल हंस के मतानुसार बुन्देलखण्ड की सीमाएं इस प्रकार हैं-' उत्तर में यमुना नदी तथा एक ओर आगरा और दूसरी ओर कानपुर जिले की दक्षिणी सीमाएं; दक्षिण में नर्मदा नदी; पूर्व में टोंस नदी तथा बघेलखण्ड की पश्चिमी सीमा; और पश्चिम के पश्चिमोत्तर भाग में चम्बल नदी एवं शेष पश्चिमी भाग में मालव प्रदेश की पूर्वी सीमा।'[1] इस तरह आधुनिक राजनीतिक विभाजन के आधार पर 'बुन्देलखण्ड' की सीमाएं उत्तर-प्रदेश व मध्यप्रदेश के भू-भागों में विस्तृत है। जिसके अन्तर्गत आने वाले जिलों की परिगणना इस प्रकार है:-

उत्तर-प्रदेश में - जालौन, झाँसी, ललितपुर (झाँसी मण्डल); हमीरपुर, महोबा, बाँदा, छत्रपति-शाहूजी महाराज नगर (चित्रकूट मण्डल);

मध्य-प्रदेश में-सागर, दमोह, पन्ना, टीकमगढ़, छतरपुर (सागर संभाग); ग्वालियर, शिवपुरी, गुना, दतिया (ग्वालियर संभाग); भिण्ड, मुरैना (चम्बल संभाग); सिहोर, रायसेन, विदिशा (भोपाल संभाग); जबलपुर, नरसिंहपुर (जबलपुर संभाग) तथा होशंगाबाद (होशंगाबाद संभाग)।

इस प्रकार , उत्तर-प्रदेश व मध्यप्रदेश में फैले कुल चौबीस जिलों को बुन्देलखण्ड का भू-भाग माना जाता है।

बुन्देलखण्ड की लोकभाषा होने के कारण ही यहाँ की बोली बुन्देली अथवा बुंदेलखण्डी नाम से अभिहित हुई। लेकिन बुन्देलखण्ड भू-भाग की जो सीमाएं निर्धारित है, बुन्देली-भाषा की सीमाएं उससे सर्वथा अनुरूप नही है। जार्ज ग्रियर्सन के अनुसार- 'सर्वप्रथम बाँदा जिले में जो बोलियाँ प्रयुक्त होती हैं वे बुन्देली नही है; वहाँ पूर्वी-हिन्दी की बघेली बोली के विकृत रूप का प्रयोग मिलता है। दूसरे चम्बल नदी से ग्वालियर राज्य की उत्तरी

---

1. बुन्देली और उसके क्षेत्रीय रूप, डॉ0 कृष्ण लाल 'हंस', संस्करण - 1976 ई0, पृष्ठ-7

और पश्चिमी सीमा बनती है। उत्तर में बुन्देली न केवल चम्बल नदी तक बोली जाती है बल्कि उस पार आगरा, मैनपुरी और इटावा जिलों तक इसका विस्तार है, और प्रत्येक जिले दक्षिणी भागों में यह बोली जाती है। पश्चिम में यह चम्बल नदी तक नही फैली है। ग्वालियर के पश्चिमी भाग में जो भाषाएं प्रचलित हैं, उनमें ब्रजभाषा तथा राजस्थानी के विभिन्न रूप आते हैं। तीसरे, दक्षिण में यह नर्मदा नदी को पार कर आगे बढ़ गयी है। यह सागर एवं दमोह जिलों तथा भोपाल के पूर्वी भागों में ही नही बोली जाती है वरन् नर्मदा घाटी में बसे नरसिंहपुर तथा होशंगाबाद जिलों की भी स्थानीय भाषा है और आगे सिवनी जिले तक इसका क्षेत्र है। यह बालाघाट के लोधियों तथा छिंदवाड़ा जिले के मध्य में विकृत रूप में बोली जाती है तथा नागपुर जिले में भी बुन्देली मिश्रित बोली का प्रयोग होता है, जबकि यहाँ की अपनी बोली मराठी है।'[1] इस प्रकार, बुन्देली-भाषा बुन्देलखण्ड तथा उसके समीपस्थ क्षेत्रों में बोली जाती है।

इस तरह ,'बुन्देली-भाषा'का क्षेत्र-विस्तार निम्न होगा-

उत्तर-प्रदेश में- जालौन, झाँसी, ललितपुर, हमीरपुर व महोबा जिले और आगरा, मैनपुरी तथा इटावा जिलों का दक्षिणी भाग;

मध्य-प्रदेश में- सागर, दमोह, पन्ना, टीकमगढ़, छतरपुर, ग्वालियर (अधिकांश भाग), गुना, शिवपुरी, दतिया, भिण्ड, मुरैना, भोपाल (पूर्वी भाग), रायसेन, विदिशा, सिहोर, जबलपुर (कटनी तहसील के अतिरिक्त शेष भाग) नरसिंहपुर, होशंगाबाद, सिवनी तथा छिंदवाड़ा जिलों के अधिकांश भाग।

इसके अतिरिक्त, बैतूल, बालाघाट और महाराष्ट्र के चाँदा, भण्डारा, बुल्ढाना तथा नागपुर जिले में बुन्देली-भाषा का क्षेत्र-विस्तार किसी न किसी रूप में मिलता है।

1- भारत का भाषा-सर्वेक्षण (भाग-9) जार्ज ग्रियर्सन, प्राक्कथन-1914 ई0,पृ085

इस तरह, बुन्देली-भाषी क्षेत्र अत्यंत विस्तृत है। इसके उत्तर में व्रजभाषा और कन्नौजी भाषी क्षेत्र; पूर्व में अवधी और उसकी सहोदरा बघेली तथा छत्तीगढ़ी का क्षेत्र; दक्षिण में मराठी (हिन्दी- इतर भाषा) व मालवी; तथा पश्चिम में मालवी और राजस्थानी (जयपुरी) भाषी क्षेत्र पड़ते है। जार्ज ग्रियर्सन ने अपने भाषा सर्वेक्षण (भाग-नौ) में इसका क्षेत्रफल उन्नीस हजार वर्गमील बताया, जो हिन्दी की अन्य बस्तियों की अपेक्षा सबसे अधिक है। वर्तमान में 'बुन्देली' बोलने वालों की संख्या विद्वानों ने दो करोड़ के लगभग आंकी है।

(ख) बुन्देली-भाषा- सामान्य परिचय

बुन्देली -- भाषा शौरसेनी अपभ्रंश के एक रूप मध्यदेशीय (कान्यकुब्जीय) अपभ्रं से विकसित पश्चिमी हिन्दी के अन्तर्गत एक बोली है, जो ब्रजभाषा और कन्नौजी के सा पश्चिमी हिन्दी का दक्षिणी वर्ग बनाती है। अपने स्वरूप और गठन में वह ब्रजभाषा औ कन्नौजी से बहुत कुछ मिलती-जुलती है। वस्तुतः हिमालय की तराई से लेकर सतपुड़ के समीप तक कन्नौजी-ब्रज-बुन्देली के रूप में एक ही भाषा प्रवाहित है। अपभ्रंश काल (छठी से बारहवीं शताब्दी तक) में यहीं की शिष्ट भाषा सारे उत्तर भारत की विशेषत और सारे भारत की सामान्यतः अन्तर्प्रान्तीय या राष्ट्रीय भाषा रही।[1] तेरहवीं शताब्दी के शुरूआत में दिल्ली-सल्तनत की स्थापना के साथ तुर्कों ने दिल्ली को अपनी राजधानी बनाय जिससे दिल्ली के आस-पास की भाषा (कौरवी) को विकास व प्रोत्साहन मिला। लेकिन चौदहवीं शताब्दी के अनन्तर तुगलकों के शासन के अन्त में, दिल्ली-सल्तनत के कमजोर पड़ जाने पर ब्रज-बुंदेल भाषा के क्षेत्र में जो राज्य कायम हुआ, उसका केन्द्र ग्वालियर था, इसलिए ब्रज-बुन्देली का नाम 'ग्वालियरी-भाषा' भी कहा जाने लगा।[2] ग्वालियरी - भाषा नाम के पीछे उस व्यापक काव्य - भाषा की कल्पना है, जो मध्य - काल की काव्यभाषा थी। उसका काव्यभाषा रूप ग्वालियर, अजमेर, जयपुर, महोबा, कालिंजर, गढ़कुड़ार तथा ओरछा में संवारा गया। वह मध्यदेश की व्यापक काव्यभाषा थी।[3]

ग्वालियर के तोमर राजाओं ने ग्वालियरी - भाषा के लिए विशेष कार्य किया। संगीत आदि के साथ शिष्ट - साहित्य निर्माण वहाँ प्रारम्भ हुआ, जिसको ग्वालियरी - भाषा

1- हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास (षोडश भाग), महापंडित राहुल सांकृत्यायन व डॉ0 कृष्णदेव उपाध्याय , संस्करण-1950ई0, पृ0-322

2- राहुल सांकृत्यायन का मत, मध्यदेशीय भाषा (ग्वालियरी), हरिहर निवास द्विवेदी, संस्करण- 1955 ई0, पृ0-4

3- मध्यदेशीय भाषा (ग्वालियरी) , हरिहर निवास द्विवेदी, संस्करण-1955ई0, पृ066

के साहित्य के नाम से जाना गया। ग्वालियर से मानसिंह तोमर (शासनकाल- 1486 से 1516 ई0 तक) की सत्ता समाप्त होने के पश्चात इस केन्द्र का पतन होने लगा। फलतः इसके आश्रित पण्डित, साहित्यकार, कलाकार,चित्रकार और शिल्पी ,दिल्ली , आगरा , ओड़छा और रींवा आदि केन्द्रों में फैल गये।[1] इसी ग्वालियरी भाषा को लेकर केशवदास के पूर्वज व अन्य कवि-कलाकार तत्कालीन बुन्देलखण्ड की राजधानी ओरछा आये, जहाँ बुन्देला शासक महाराज रुद्रप्रताप (1501-31 ई0) व उनके वंशजों, विशेषकर मधुकर शाह व छत्रसाल का उन्हें आश्रय मिला। बुन्देलखण्डी-भाषा अपने स्थानीय रूपों के साथ ग्यारहवीं – बारहवीं शताब्दी से ही विकसित हो रही थी। अतः बुन्देलखण्ड के इन स्थानीय भाषा-रूपों का ग्वालियरी-भाषा से सम्मिश्रण हुआ, जिससे उसको वर्तमान 'बुन्देली-भाषारूप' प्राप्त हुआ।

'बुन्देली-भाषा' के साहित्य का श्रीगणेश लगभग बारहवीं शताब्दी ईसवी से माना जाता है। क्योंकि 'आल्हा-खण्ड' की रचना मूलतः बुन्देली में हुई होगी, कालान्तर में स्थानीयता के कारण उसमें बुन्देली और बघेली लोकभाषा का मिश्रण हो गया, जिसे ग्रियर्सन ने 'बनाफरी' बोली नाम दिया है। आल्हा-खण्ड के रचयिता जगनिक महोबा के चन्देल राजा परमर्दिदेव (समय-1162 से 1202 ई0) के आश्रित कवि थे। इसके बाद गोस्वामी विष्णुदास (महाभारत-कथा), मानिककवि (वैताल-पच्चीसी), थेघनाथ (भगवतगीता-भाषा), तथा एक अज्ञात गद्य लेखक (हितोपदेश) के नाम मिलते हैं।[2] किन्तु ये सभी उस समय की व्यापक काव्य-भाषा 'ग्वालियरी' के कवि माने जाते हैं।

बुन्देली-भाषा एवं साहित्य के विकास में-बुन्देला शासकों का महत्वपूर्ण योगदान रहा। ओरछा- राज्य के महाराजा भारतीचन्द (1531 से 1554 ई0) के दरबारी कवियों

1- मध्यदेशीय भाषा (ग्वालियरी), हरिहर निवास द्विवेदी, संस्करण-1955ई0, पृ07

2- वही

में मनसाराम सिद्ध (गुप्तभेद), खेमराज (प्रताप हजारा) और आचार्य कृपाराम (हिततरंगिनी) प्रसिद्ध काव्यकार थे। महाराजा मधुकरशाह (1554 से 1592 ई0) स्वयं कवि थे तथा कृष्ण भक्त कवियों के आश्रयदाता थे। उनके समय में हरीराम व्यास (रागमाला) व मोहनदास मिश्र (रामाश्वमेध) प्रसिद्ध कवि थे।[1] बुन्देली काव्य-परम्परा का चरमोत्कर्ष आचार्य केशवदास की काव्य रचना से होता है। महाराज इन्द्रजीत सिंह के आश्रय में केशवदास को राजगुरू और राजकवि की प्रतिष्ठा मिली। उनकी शिष्या प्रवीणराय इन्द्रजीत सिंह की सभा की प्रसिद्ध नर्तकी एवं भावपूर्ण कवियित्री थी। अपने एक अन्य आश्रयदाता ओरछेश वीरसिंह देव प्रथम (1605 से 1627 ई0) के दरबार में रहकर आचार्य केशवदास ने रामचन्द्रिका, रसिक-प्रिया, कविप्रिया, वीरसिंह-चरित्र आदि प्रसिद्ध कृतियों की रचना की।

'दतिया-राज्य' अपनी स्थापना काल में ही कवि, पंडितों, कलाकारों के आश्रय का केन्द्र था। दतिया के राजा रामचन्द्र राव (1707 से 1734 ई0) साहित्यिक-अभिरुचि के व्यक्ति थे। उनके दरबार में खण्डन-कवि (सुदामा समाज), वेस -कवि (माधवानल-नाटक) तथा जोगीदास (दलपत राव-रासो) आश्रित कवि मौजूद थे।[2] अक्षर अनन्य (जन्म 1653 ई0) का जन्म यद्यपि ओरछा में हुआ था लेकिन वे दतिया के राजाओं के आश्रित कवि रहे; 'अष्टांग-योग' उनकी ठेठ बुन्देली रचना मानी जाती है।

बुन्देली भाषा व साहित्य के उत्थान में ओरछा व दतिया के साथ पन्ना-केन्द्र का भी महत्वपूर्ण योगदान रहा। पन्ना-नरेश वीर छत्रसाल (जन्म 1649 व मृत्यु 1731 ई0) अस्त्र-शस्त्र के साथ लेखनी के भी धनी थे। वे अलौकिक भावुकता से युक्त उच्चकोटि के कवि थे। प्रसिद्ध साहित्यकार वियोगी हरि ने उनकी कविताओं के संग्रह को 'छत्रसाल

1- बुन्देलखण्ड का वृहद इतिहास, डॉ0 काशी प्रसाद त्रिपाठी, संस्करण- 1991-ई0, पृ0-297

2- सम्मेलन पत्रिका, भाग-79, संख्या-2, शक-1916, पृ0-133

ग्रन्थावलि' के नाम से सम्पादन किया है। महाराज छत्रसाल के दरबारी राजाश्रित कवि गोरेलाल (लाल कवि) ने 'छत्रप्रकाश' तथा भूषण ने 'छत्रसाल-दसक' काव्य की रचना की थी। बुन्देली भाषा के विकास में छत्रसाल के गुरू प्राणनाथ विरचित 'प्रणाली-साहित्य' का भी उल्लेखनीय योगदान रहा,जिसमें प्राणनाथ के दो शिष्यों, लालदास व मुकुन्ददास की काव्य-रचनाएं भी शामिल हैं। पन्ना दरबार के आश्रित कवियों में बोधा-कवि (विरह-वारीश) तथा बख्शी हंसराज उर्फ प्रेम सखि (स्नेहसागर) का नाम भी आता है।

उन्नीसवीं सदी के आरम्भ में बुन्देली भाषा में बाँदा के पद्माकर भट्ट ओरछा के ठाकुर-कवि और पंन्ना के पजनेश मूलतः श्रृंगार-रस के कवि थे। इन्हीं के साथ उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध के लोककवियों - ईसुरी , गंगाधर व्यास व ख्याली राम की रची फागें बुन्देलखण्ड में प्रचलित हैं। बीसवीं सदी के बुन्देली भाषा के कवियों में रामचरण हयारण 'मित्र', डॉ0 दुर्गेश दीक्षित, पण्डित गुणसागर सत्यार्थी आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। इस प्रकार बुन्देली भाषा के विकास के साथ-साथ उसके साहित्य की अविच्छिन्न व समृद्ध परम्परा प्राप्त होती है।

इसके अलावा, जब से बुन्देलखण्ड में बुन्देलों का शासन आरम्भ हुआ, बुन्देली ही उनकी राजभाषा रही। बुन्देला शासकों का राज्य-कार्य , हिसाब-किताब और परस्पर का पत्र-व्यवहार सभी बुन्देली भाषा में सम्पन्न होता रहा। शिष्ट साहित्य के साथ-साथ जनसामान्य में पर्याप्त लोकसाहित्य का भी सृजन हुआ, जो अनेक प्रकार के गीतों, कथाओं, लोकोक्तियों गाथाओं व लोकनाट्यों आदि के रूप में अभिव्यक्त हुआ है, जिनमें लोक-भाषा के रूप में बुन्देली की समृद्ध परम्परा मिलती है।

(ग) बुन्देली लोक-संस्कृति

'संस्कृति' में व्यक्ति और समाज की वे क्रियायें, उत्पादन, व्यवहार, संस्कार तथा परिष्कार सम्मिलित हैं, जिनके द्वारा व्यक्ति तथा समाज के लक्षणों को पहचाना एवं परखा जा सकता है। इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि संस्कृति मानव के आदिकाल से लेकर आज तक की वह संचित निधि है जो उत्पादन और परिष्कार के द्वारा निरन्तर प्रगति करती हुई, एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को उत्तराधिकारी स्वरूप प्राप्त होती चली आई है तथा भविष्य में भी उसकी यही गति रहेगी।''[1] वस्तुतः जिसे संस्कृति की संज्ञा दी जाती है वह लोक से भिन्न है। संस्कृति लोक से प्रारम्भ होकर कुछ गुण और रूपों में विशिष्ट होकर समाज में आती है। लोक कोई ठहरी हुई वस्तु नहीं है बल्कि उसका क्रमिक विकास होता है तथा उसी के साथ उसकी संस्कृति में भी परिवर्तन होता जाता है।

'लोकसंस्कृति' शब्द रचना स्वयमेव यह प्रकट करती है कि वह लोक से जुड़ी है। चूँकि स्थान, क्षेत्र या अंचल के साथ ही लोक में भी भिन्नता दिखायी देती है। इसलिए लोक की संस्कृति में स्थानानुसार भिन्नता सहज है। इस प्रकार लोकसंस्कृति में लोक के साथ उसका परिवेश, उसकी आवश्यकताएं, समस्यायें, उनके साथ समायोजन करने की लोक की शक्ति और उपक्रम भी सम्बद्ध हैं।

प्रत्येक जनपद के पास अपनी एक परम्परागत विरासत होती है जो उस 'जनपद की संस्कृति' कहलाती है। लोकजीवन के संस्कार, उनकी मान्यतायें, लोकाचरण, लोकधर्म, लोकसाहित्य, लोकसंगीत इनका समन्वित रूप ही 'लोकसंस्कृति' कहलाती है। बुन्देली लोकसंस्कृति बहुत प्राचीन है। उसमें अनार्य तथा आर्य, दोनों ही संस्कृतियों के जीवन-मूल्यों का समन्वय हुआ है। विशेषता यही है कि उन दोनों संस्कृतियों को आत्मसात कर 'बुन्देली- संस्कृति' ने एक निजता बना ली है।

1- प्राचीन भारतीय संस्कृति, कला, राजनीति, धर्म तथा दर्शन, डॉ0 ईश्वरी प्रसाद, संस्करण-1980 ई0, पृ0।

बुन्देलखण्ड एक धर्म प्रधान क्षेत्र है। खजुराहो के देवमन्दिर; देवगढ़ का दशावतार मन्दिर; सनक-सनन्दन-सनतकुमार का सनुकुआ; चित्रकूट में भगवान राम के वनवास काल से सम्बंधित शैल-शिखर; कुण्डेश्वर का शिवलिंग; उनाव में बालाजी का मन्दिर; ओरछा का रामराजा मन्दिर; सोनगिरि के जैन मन्दिर; कालिंजर में नीलकंठेश्वर भगवान शिव का स्थान; विन्ध्याचल की विन्ध्यवासिनी देवी तथा शारदा की मैहर देवी आदि सब उसी के प्रतीक हैं। यहाँ पर विष्णु शिव, दुर्गा, गणेश, हनुमान आदि पौराणिक देवताओं के साथ अनेक लोकप्रचलित देवताओं- मैकासुर या भैसासुर, भैरो बाबा, खाकी बाबा, सिद्ध बाबा, घटोई बाबा, खैरादेव या खेरापति ,ब्रह्मदेव, कारसदेव, दूल्हादेव, लाला हरदौल तथा उजवासा बाबा आदि की पूजा की जाती है तथा उनकी लोकदेवता के रूप में मान्यता है।

इन लोकदेवताओं में मैकासुर की मनौती दूध देने वाले जानवरों की भलाई के लिए की जाती है। घटोई बाबा नदी के घाट के देवता हैं; नदी के प्रकोप से तथा आवागमन में ये लोगों की रक्षा करते हैं। खेरापति या खेरादेव एक प्रकार के ग्रामदेवता हैं जो गाँव वालों की आपत्तियों से रक्षा करते हैं। भैरो बाबा, खाकी बाबा, सिद्ध बाबा, उजवासा बाबा पूर्व में पहुँचे हुए कोई साधु-पुरुष हैं जो लोक द्वारा कल्याण की कामना से पूजे जाते हैं। ब्रह्मदेव पीपल में निवास करने वाला देवता हैं जिसके नाराज होने पर अनिष्ट की सम्भावना रहती है।

बुन्देली जन-जीवन में कारसदेव व हरदौल ऐतिहासिक महत्व के लोक-देवता हैं। इन दोनों के साथ उनके सहयोगी देवता हैं- कारसदेव के सहयोगी हीरामन तथा हरदौल के सहयोगी दूल्हादेव। 'कारसदेव' बुन्देलखण्ड में पशुपालक जातियों - अहीर, गूजर आदि के देवता हैं, जिनके प्रकोप से पालतू पशुओं में बीमारियाँ फैलती हैं; अतः पशुओं को बीमारी से बचाने के लिए इनकी पूजा करते हैं। इस देवता के चबूतरे के पास ब्राह्मण और नाई का जाना वर्जित होता है। लाल हरदौल को बुन्देलखण्ड में विवाह आदि शुभ-कार्यो के अवसर पर सबसे पहले न्योता दिया जाता है; ये बुन्देलखण्ड में एक तरह से गणेश-देवता

की तरह मान्य होकर पूजे जाते हैं। बुन्देली लोकसंस्कृति के प्रतीक ये लोकदेवता जनसामान्य के लोकविश्वास पर टिके हुए हैं।

बुन्देलखण्ड क्षेत्र में धर्म का स्थान विश्वास, परम्परागत रूढ़िवाद आदि ने भी ले लिया है। सूर्यग्रहण या चन्द्रग्रहण को यहाँ लोग बहुत भयंकर आपद मानते हैं; इस अवसर पर वर्तनों को ढंक देते हैं, जल में कुश तथा अनाजों में तुलसी डालते हैं और ग्रहण की समाप्ति तक भोजन नही करते । लोगों का ऐसा विश्वास है कि गहन (ग्रहण) के अवसर पर बसोर, महतर अपना 'बाँका' लेकर भगवान सूर्यदेव व चन्द्रदेव को अपवित्र करने के लिए डराते हैं, जिससे उनकी कान्ति फीकी पड़ जाती है। अतः उनको खुश करने के लिए ग्रहण समाप्ति के बाद अन्न आदि का दान स्वेच्छा से किया जाता है।

अक्षर-तृतीया को चमेली की पतली डाल से मनुष्य और स्त्रियाँ अपने साथियों को मार कर उनके पत्नी या पति के नाम पूछते हैं।[1] नागपंचमी को नाग देखे जाते हैं, जबकि दशहरा को मछली तथा नीलकण्ठ को देखना शुभ माना जाता है। शकुन-अपशकुन की अनेक मान्यताएं हैं- बिल्ली द्वारा रास्ता काटना, सियार बोलना, छींक होना, खाली घड़े मिलना आदि अशुभ माने जाते हैं, जबकि दूध पिलाती गाय व पानी भरे हुए घड़े मिलना शुभ माना जाता है।

लोकजीवन को सहूलियत देने में जो चलन मदद करते हैं, उन्हें 'रीतिरिवाज' कहते हैं। इनके अन्तर्गत जन्म से लेकर मृत्यु-पर्यन्त के आचार-व्यवहार आते हैं; जिनमें महत्वपूर्ण जीवन-संस्कारों का विकास और उत्कर्ष देखा जा सकता है। जनपदीय-संस्कृति के जीवन-मूल्यों की रक्षा और उसका व्यक्तित्व बुन्देलखण्ड के रीतिरिवाजों में समाया हुआ

1- ज्ञातव्य हो कि बुन्देलखण्ड में स्त्रियाँ अपने पति का नाम कभी नही लेती।

है। संस्कारों में भी कहीं-कहीं उसका निजीपन है। पुत्र-जन्म पर भूतप्रेत भगाने के लिए कांसे या फूल की थाली बजायी जाती है, नजर लगने से बचाने के लिए 'राइ-नोन' उतारा जाता है, उछाह में बंदूकें छूटती हैं और लड्डू-गुड़ बँटता है। इस अवसर पर 'सोहर' गीत गाया जाता है। बुन्देलखण्ड की अपनी पारम्परिक विवाह पद्धति है, जिसमें कई आनुष्ठानिक रस्में- सगाई, लगुन, द्वारचार, कन्यादान,भावरें, पाँव-पखराई, कुंवरकलेऊ,विदाई मौंचायनों आदि निभाई जाती है और उनसे सम्बंधित गीत गाये जाते हैं। बुन्देलखण्ड में लड़की को विशेष पूज्यनीया माना गया है, इसी से उसके विवाह के बाद ससुराल-पक्ष के सभी लोग पूज्यनीय हो जाते हैं। यहाँ पर सास-ससुर अपने जमाता (दामाद) के पैर छूते हैं। तीसरा प्रमुख संस्कार मृत्यु सम्बंधी है, जिसमें शवदाह से लेकर तेरहवीं - वर्षी तक कई संस्कार सम्पन्न होते हैं। मृत्यु एक अटल सत्य है किन्तु पुर्नजन्म की मान्यता के कारण तज्जन्य करुण दुख में भी आशा के चिह्न दिखायी देने लगते हैं।

बुन्देलखण्ड की लोकसंस्कृति की रक्षा और उसके संपोषण में महिलाओं का विशेष योगदान है। यहाँ के लोकाचारों (रीति-रिवाजों) में सुहागिन नारियों के सम्मान और उनके पूजन की रीति है। यहाँ 'गौरइंयाँ' नामक लोकाचार जो कि लड़के के विवाह में बरात जाने के बाद होता है, में सुहागिन महिलाएं आमंत्रित होंती है तथाविवाह के बाद लड़की जब ससुराल से लौट आती है, तब 'सुहागिलें' लोकाचार होता है, जिसमें भी केवल सुहागिन स्त्रियाँ आमंत्रित की जाती हैं। इन दोनों ही लोकाचारों में चौक पूर कर, पूजन करके सुहागिन स्त्रियाँ दूध-भात, मिठाई आदि के भोजन करती हैं। यहाँ पर कई जगह 'मंशादेवी' की प्रतिमाएं लक्ष्मी के रूप में प्रतिष्ठित हैं, जिन्हें महिलाएं अपनी मनोकामना पूरी करने के लिए 'दशारानी' के रूप में पूजती हैं तथा इस अवसर पर कथाएं भी कही जाती हैं।

बुन्देली लोकाचरण (रीति-रिवाज) में लोक-उत्सवों का अपना स्थान है, जिनमें नौरता या सुअटा, झिझिया, मामुलिया, अकती, जवारे, भुजरियाँ अथवा कजलियाँ आदि को उल्लास-पूर्वक मनाया जाता है। इन लोक-उत्सवों में बालिकाओं की विशेष भागीदारी रहती है। 'नौरता या सुअटा' आश्विन मास के शुक्ल पक्ष की परवा से नवमी तक मनाया जाने वाला पर्व है,

जिसमें कुवांरी (अविवाहित) कन्यायें भाग लेती हैं। वे सात दिनों तक प्रातः काल के समय गीत-गाकर सुअटा खेलती हैं, तब आठवें दिन रात्रि में 'झिझिया' का खेल होता है, जो अगले दिन समाप्त होता है। आश्विन मास के शुक्ल पक्ष में ही अष्टमी के दिन बालक 'टीसू' या 'टेसू' खेलोत्सव मनाते हैं; इसी समय एक ओर जहाँ कन्यायें झिझिया गीत गाती हुई अपनी सरस स्वर लहरियों द्वारा मानस के मन को मोहती हैं, तो दूसरी ओर ये किशोर बालक टेसू गीत गाकर द्वार-द्वार घूमते हुए जनमानस का मनोरंजन करते हैं। शरद-पूर्णिमा के दिन वीर-टेसू और सुअटा-सुन्दरी के विवाह के उपलक्ष्य में प्रीतिभोज होता है। इस तरह ये लोक-उत्सव बच्चों के भावी जीवन की तैयारी के पर्व हैं।

मामुलिया (महबुलिया) भी कुंवारी लड़कियों का खेल उत्सव है जो आश्विन कृष्ण पक्ष (कहीं-कहीं भादों शुक्ल पक्ष) में मनाया जाता है, जिसमें लड़कियाँ काँटेदार डाल पर रंग-बिरंगे मौसमी फूल सजाकर नाचते-गाते अपने पुरा-पड़ोस में प्रदर्शन करती हैं तथा बाद में तालाब पहुँचकर उसको सिरा (विसर्जित) देती हैं। प्रदर्शन के समय मिले अनाज व पैसे को वे आपस में मिलबाँटकर खा लेती हैं। अकती या अक्षय-तृतीया को बालिकाएं पुतलियों से खेलती, गीत गाती हैं। इस दिन पतंगे उड़ाने में बालक बढ़-चढ़कर भाग लेते हैं।

बुन्देलखण्ड में भुजरियाँ अथवा कजलियाँ का त्योहार श्रावण मास की पूर्णिमा को मनाया जाता है लेकिन महोबा व उसके आस-पास के क्षेत्रों में यह त्योहार अगलेदिन भादों मास की प्रथम प्रतिपदा को सम्पन्न होता है। लोकमान्यता है कि आल्हा-ऊदल के समय महोबा पर पृथ्वीराज चौहान के आक्रमण के कारण कजलियाँ श्रावण मास की पूर्णिमा को नहीं सिराई जा सकी थी। इसके अगले दिन आल्हा-ऊदल द्वारा पृथ्वीराज को मार भगाये जाने के साथ भाद्रपद की प्रतिपदा को कजलियाँ सिराई गयी, तभी से यह परम्परा चली आ रही है। इसी तरह 'जवारे' का उत्सव चैत्र तथा आश्विन महीनों में शुक्ल पक्ष की नवदेवियों में साल में दो बार मनाया जाता है, जिसमें 'महामाई' की पूजा होती है। इस

अवसर पर पुरुषों के सिर पर देवी माता भी आती है। इस तरह, बुन्देलखण्ड में सामूहिक उत्सव मनाने की एक विशिष्ट लोक परम्परा मिलती है।

बुन्देलखण्ड में 'खान-पान' की अपनी विशेषता है। यहाँ की कच्ची समूँदी रसोई तो प्रसिद्ध रही है; जिसमें भात (चावल), चने की दाल, कढ़ी, पापर, कोंच-कचरिया, बरा-मंगौरी, चीनी, घी सब मिलाकर अद्वितीय स्वाद वाली कालोनी (मिश्रण) बनती है। यहाँ महुआ और गुलगुच (महुए का पका फल) मेवा और मिठाई है। 'महुआ' बुन्देलखण्ड का जनपदीय वृक्ष है; यहाँ पर पड़ने वाले अकालों से बचने के लिए महुआ और बेर-मकोरा ही लोगों का सहारा रहे हैं। बुन्देलखण्ड में पान-सुपाड़ी का प्रयोग पुरुष व स्त्रियाँ दोनों बहुतायत से करते हैं। महोबा का देशी पान खाने में बहुत अच्छा होता है, जिसकी चर्चा दूर-दूर तक फैली हुई है।

बुन्देलखण्ड का जनमानस अक्खड़ और साहसी प्रवृत्ति का रहा है। किसी भी विपरीत परिस्थिति में बागी, विद्रोही और अराजक हो जाना यहाँ की भूमि, वन और जलवायु की अद्भुत देन है । इसी कारण यहाँ एक कहावत प्रचलित है- 'सौ डंडी एक बुन्देलखण्डी'।

बुन्देलखण्डी में अतिथि को पूजनीय एवं उसके आगमन को शुभ माना जाता है। अतिथि-सत्कार को यहाँ के निवासी अपना परमधर्म समझते हैं; जिससे यहाँ का जन-जीवन प्रेम, सौहार्द्र और पवित्रता से परिपूर्ण है। इन सबके साथ 'बुन्देली लोकसंस्कृति की अपनी एक खास पहचान है। विश्वास की दृढ़ता और टेक रखने की ओजमयता, गाली देने में भी शिष्टता और अतिथि के सम्मान में स्वयं को विसर्जित करने वाली विनम्रता, तथा स्नेह की सरलता और ममता की शीतलता, सबको मिलाकर बोल की मीठी चासनी में ढाल देने में बुन्देलखण्ड की आत्मा साकार हो उठती है। वह चाहे भूखी रहे, चाहे प्यासी पर इस जनपद के विशेष व्यक्तित्व को आज तक अमर किए हुए है।[1]

1- बुन्देलखण्ड की लोकसंस्कृति, नर्मदा प्रसाद गुप्त, 'मामुलिया' (मध्यदेशीय लोकसंस्कृति विशेषांक), वर्ष-4, अंक-15-16, पृ0,6।

(घ) बुन्देली लोककथाएँ: सामान्य परिचय

बुन्देली लोकसाहित्य का एक प्रमुख अंग वहाँ पर पायी जाने वाली लोककथाएँ हैं। प्राचीन काल से ही गाँवों में मनोरंजन के लिए, आधुनिक साधनों के अभाव में, लोककथाएं ही ऐसी साधन हैं, जिनसे लोक का अनुरंजन होता है। रात्रि में छोटे बच्चों को माताएं ऐसी कथाएँ सुनाती हैं जिस्से उन्हें नींद आ जाये। दिन भर की थकान मिटाने के लिए कृषक-समाज अलाव पर अथवा चौपाल पर इकट्ठे होकर अनेक प्रकार की कथाओं को सुनते और सुनाते हैं। इन कथाओं में लोकमानस की कल्पनाशीलता तो देखने को मिलती ही है साथ ही, श्रम, पराक्रम और आचरण से सम्बंधित उपदेश का विधान भी होता है।

बुन्देली लोककथाओं में कथा कहने की एक विशिष्ट शैली होती है, जिससे एक ओर जनमानस का कौतूहल जाग्रत किया जाता है, दूसरी ओर कथा के माध्यम से श्रोताओं के ध्यान को एकाग्रचित्त बनाने के लिए ऐसी बातें कही जाती हैं जिनका तारतम्य कुछ नही दिखता। उदाहरण स्वरूप एक कथा की भूमिका दृष्टव्य है- 'किस्सा सी झूठी न बातें सी मीठी। घड़ी घड़ी कौ विश्राम, को जाने सीताराम। ने कैबे बारे को दोष, न सुनने बारे कौं दोष। दोष तो उसी को जीने किस्सा बनाकर खड़ी करी। और दोष उसी को भी नहीं। काय से ऊने रैन काटवे के लाने बना के खड़ी करी। शक्कर को घोड़ा सकल पारे की लगाम। छोड़ दो दरिया के बीच, चला जाय छमाछम छमाछम। इस पार घोड़ा, उस पार घास। न घास घोड़ा को खाय, घोड़ा घास को खाय।.... जों इन बातन को झूठी जाने तो राजा को डाँड़ और जातकौं रोटी देय।..... कहता तो ठीक पै सुनता सावधान चाहिए।.....' इत्यादि।[1]

1- बुन्देलखण्ड की ग्राम कहानियाँ, पं० शिव सहाय चतुर्वेदी, संस्करण- 1947- ई0, पृष्ठ- 11 (लेखक का वक्तव्य)।

अपनी इस परम रोचक और विलक्षण भूमिका के साथ कथा कहने वाला अपने श्रोताओं को कहानी जगत के उस अद्‌भुत और अलौकिक वातावरण में खींच ले जाता है, जहाँ भौतिक जगत की कोई चिन्ता नहीं व्यापती। कल्पना के घोड़े पर बैठकर वे न जाने कहाँ-कहाँ की सैर करने लगते हैं। भूमिका के उपरांत बीच-बीच में आने वाले सौन्दर्य के स्थलों में एक विशिष्ट काव्यात्मकता का दर्शन होता है; चाहे नायिका का सौन्दर्य वर्णन किया जाय अथवा नायक का, दोनों में कथावाचक की प्रतिभा का परिचय मिलता है। उदाहरण- नायिका के सौन्दर्य वर्णन में घरेलू उपमाओं की छटा देखते ही बनती है-

'कैसी है वह? बार-बार मोती गुहें, सोला सिंगार कियें, बारा आभूषन पहरैं, सेंदुर-सुरमा लगाएँ, लायचिन को बटुवा करहाई में खोंसें। ऊ को रूप कैसो है? सोने कैसी मूरत, चम्पै कैसो रंग, पूनो कैसो चंदा, दिवारी कैसो दिया, कनहर कैसी डार की लफ लफ कर दूनर हो जाय। पान खाय तो गरे सें पीक दिखाय। कंकरी मारो तो रकत झलक आय। फूँक मारो तो आकाश में उड़ जाय। बीच में उमेठ दो तो गाँठ पर जाय। लकरिया से घुमा दो तो उसें साँप सी लिपट जाय। पलका पै हिरा जाय तो बारह बरस लौं ढूँढ़ न मिले'।[1] उक्त वर्णन को मध्ययुग के किसी श्रृंगारी कवि के नायिका वर्णन से कम नही ठहराया जा सकता।

अब नायक का रूप वर्णन भी दृष्टव्य है-

'कैसा है वह? गुलाब कैसे फूल, शेर कैसो बच्चा, सूरज कैसी जोत, भौंरा कैसे बाल, सोने कैसो रंग, सिर पै जरी का मंडील बाँधे, ऊपर से कीमखाव का अंगा और मिशरू का पैजामा पहिने, कमर में रेशमी फेंटा बाँधे, जीमें चाँदी की मूठ कों नक्काशीदार पेशकब्ज खुसो भओ, कान में मोतियन के बड़े-बड़े बाला, गरे में सूबेदारी कंठा, हाथ की अंगुरियन में जड़ाऊ अँगूठी- शोभा देरई, मुँह में पान को बीड़ा दाबें, पावन में लड़ाको चर्राटेदार जोड़ा पहिने, छैल-छबीला गबड्डू ज्वान.... देखते भूख भगे...।'[2]

1- गौने की विदा (बुन्देलखण्ड की लोक कथाएं) , शिव सहाय चतुर्वेदी, प्रकाशन- 1953 ई0, लेखक का वक्तव्य, पृ0-7

2- बुंदेलखण्ड की ग्राम कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, 1947 ई0, पृ012 व 13

इसी प्रकार जब कभी कथा के बीच में 'बरात' का वर्णन किया जाता है तो उसका एक सजीव चित्र सामने खिंच जाता है। बरात में चल रही नाना प्रकार की सवारियों, , घोड़ों तथा उनकी किस्मों, जलती मशालों, आतसबाजी, बेड़नियों (नाचने वाली वेश्याओं) के करतब, बरातियों की पेशाकों आदि का सुन्दर विवेचन मिलता है। निःसन्देह इन लोककथाओं पर लोकगाथाओं की वर्णन-पद्धति का प्रभाव है। बहुत सी कथाओं में बीच-बीच में दोहा, चौबोला, या गीत भी कहे जाते हैं। कथा कहने वाले उन्हें हाव-भाव के साथ गाकर कहते हैं। उससे कथा की रोचकता और भी बढ़ जाती है।

बुन्देली लोक-कथाएँ नीति, व्रत, प्रेम , मनोरंजन, किम्बदन्ती और पुराण आदि पर आधारित होती है। इनमें कल्पना के माध्यम से पशु-पक्षियों और मनुष्यों के सम्बंध में नैतिक-शिक्षा दी जाती है। परियों और अप्सराओं के माध्यम से अमानवीय व्यक्तियों की कथायें कही जाती हैं। दन्त कथाओं में सन्तों की जीवनियाँ होती हैं और पुराण के आधार पर धार्मिक देवी-देवताओं के जीवन-वृत्त प्रस्तुत किए जाते हैं। इन लोककथाओं में प्रधानतः प्रेम, शिष्टश्रृंगार, मंगल- भावना, रहस्यमयता, अलौकिकता एवं औत्सुक्य आदि के साथ वर्णन की स्वाभाविकता और सुखान्त परणति होती है। कथा कहने वाला 'जैसे उसके दिन फिरे, वैसे सबके फिरे' कहकर कथा समाप्त करता है।

बुन्देली लोककथाओं का मुख्य उद्देश्य मनोरंजन है, उपदेश देना नहीं। मानवीय भावों के घात-प्रतिघात और उनके उतार-चढ़ाव के चित्रण से उन्हें कोई मतलब नहीं और न बुद्धि और तर्क के उहापोह के लिए वहाँ कोई स्थान है। उनकी तो अपनी एक अलग दुनियाँ है, जहाँ सभी असम्भव सम्भव है, सभी कुछ वहाँ आसानी से बिना किसी प्रयास के घटित हो सकता है। इनमें जिस परिवेश का ज्ञान होता है वह सुख-समृद्धि का द्योतक है। यह समृद्धि आर्थिक तो है ही साथ ही सांस्कृतिक भी है। उनमें आजकल की सामाजिक जटिलताओं का प्रवेश नहीं है। इसीलिए इन लोककथाओं का स्तर आजकल के कथासाहित्य के समान यथार्थवादी न होकर आदर्शवादी, नैतिक, व्यावहारिक और जीवन को दिशा देने वाला है।

बुन्देलखण्ड विन्ध्य की शैलमालाओं से घिरा हुआ भारत का केन्द्र-स्थल है। यहाँ पर जो प्राचीन शैलाश्रम उपलब्ध हुए हैं, उनके आधार पर यह निष्कर्ष सहज ही निकाला जा सकता है कि बुन्देलखण्ड आदिम-मानव की लीला-भूमि रहा है। यहाँ के आम-आदमी ने जीवन-संघर्ष के भयद क्षणों का साक्षात्कार प्राकृतिक आपदाओं के रूप में अधिक किया है। मध्यकाल में यहाँ अनेक राजे-रजवाड़े का शासन रहा, जो कि आपस में ही लड़ते-झगड़ते रहे। मालगुजारों, जमीदारों और राजा-सामन्तों के अतुलित प्रभाव ने यहाँ के आम-आदमी को दब्बू और निर्गुनियाँ बना दिया है। अशिक्षा और सत्संग के अभाव ने व्यक्ति-चेतना को अंधविश्वासी एवं भीरू बनाया है। सभ्यता के विकास की गति यहाँ पर ठिठकी-ठिठकी रही है। अपनी एकांतिकता में यह क्षेत्र लोक-कथाओं में आदिम-वृत्तियों से लेकर धुर मध्यकालीन बोध को समेटे है। यहाँ का पराक्रम , यहाँ की शूरवीरता, यहाँ की आन-वान तथा यहाँ की सिधाई की अपनी कहानियाँ हैं बुन्देलखण्ड के इस सामूहिक स्वभाव को हम इसकी लोककथाओं में खोज सकते हैं।

बुन्देलखण्ड की लोककथाओं में आदिम मनुष्य के जीवन की 'फेन्टेसी' अभी भी स्पष्ट दिखायी देती है। प्रकृति के प्रति व्यक्ति की राग-चेतना ने इन कथाओं में प्रकृति और व्यक्ति को एकाकार किया है। 'चिड़िया की सेना' कहानी में राजा चिड़िया की चोंच से गिरा हीरा पा जाता है । चिड़िया के अनुनय से राजा नही पिघलता, तब चिड़िया अपनी गाड़ी में आग, नदी, और वायु को बैठाती है, ये सभी मिलकर राजा पर हमला करते हैं। राजा भयभीत होकर चिड़िया को हीरा वापस कर देता है। यह कहानी प्रतीकात्मक है जिसमें अन्योक्ति के माध्यम से कमजोर को दबाने वाले राजा का प्रतिकार संगठन के आधार पर किया गया है। यदि इस कहानी के उद्देश्य को एक ओर रखकर इसकी संरचना पर विचार करें तो प्रकृति और मनुष्य के बीच की दूरी इसके रचना-विधान में पाट दी गयी है। गाड़ी पर बूँद बनकर नदी का बैठ जाना शिशु चेतना में डूबी कल्पना-वृत्ति का परिचय है। यही आदिम मस्तिष्क की भी अन्यतम धरोहर है।

बुन्देलखण्ड की लोककथाओं में कहीं-कहीं पुनर्जन्म की विश्वास-चेतना इस रूप में प्राप्त होती है कि कोई अभागिन या गरीब स्त्री अपने दैवीय गुण या दैवीय कृपा से आगे बढ़ जाती है। तब उसकी बहिन या जेठानी या उसकी सौत उसे एकान्त में मार डालती है, किन्तु वह घूरे पर फूल बनकर उगती या बाँस बनकर जन्म लेती या कमल बनकर जलाशय में प्रकट होती है। ये प्राकृतिक उपादान किसी न किसी रूप में उस पूर्व जन्मवाली नारी की दुखकथा का वर्णन करने वाले उपादान बनते हैं। निश्चित ही इन रूपान्तरों में हमारी मानवीय चेतना के आस्था और विश्वास सक्रिय हैं। अपराधी को अपराध की सजा देने के लिए ये पुनर्जन्म चुने गये या सताई गयी नारी के प्रति सामाजिक करूणा का ज्वलंत भाव इन प्रतीकों में निहित है। 'कुमारी अनारमती' [1] कहानी में व्यक्ति और प्रकृति के दरम्यानी रिश्तों का परिचय इसी रूप में मिलता है। 'संत-बसंत'[2] कहानी में यही टोटेम पुरुषों के साथ है। संत व बसंत, दो भाइयों का हरे बाँसों से पैदा होना, भाई-भाई का विछोह, एक भाई का राजा बन जाना तथा दूसरे का साधु बनकर आप बीती सुनाना, जिससे दोनों बिछुरे भाईयों का मिल जाना इस कथा का सार है। निश्चित ही इस प्रकार की कथाओं की संरचना में मानवीय ज्ञान-चेतना के साथ उसकी स्वप्न-शीलता की भी बुनावट है।

बुन्देलखण्ड का आम-आदमी जंगल के सानिध्य में रहा है। पहाड़ों की ढ़लानों और ऊँचाइयों पर बसा है। उसने अपने परिवेश से जो जीवन्त सम्पर्क बनाया था, वही इन लोककथाओं की बुनावट में झाँकता है। आदिम वृत्तियों के सहजात संस्कार एक अन्य

1- संकलित - 'गौने की विदा' (लोककथा संग्रह), शिव सहाय चतुर्वेदी, पृ0-68

2- संकलित- 'बुन्देलखण्ड की ग्राम-कहानियाँ', शिव सहाय चतुर्वेदी, पृष्ठ-227

तरह की कथा-सृष्टि में भी परिलक्षित होते हैं; इन लोककथाओं में राक्षस-चुड़ैल, भूत-प्रेत आदि की हिस्सेदारी समाई रहती है। धुर देहातों में इस तरह की लोककथाएँ पर्याप्त संख्या में प्राप्त होती हैं। यहाँ के जंगलों में निवास करने वाले गोंडों की कथाओं में इन आधिदैविक शक्तियों की उपस्थिति बहुत अधिक है। जादू-टोना और तंत्र-मंत्र ने भी बुन्देली लोककथाओं में अपना आसन जमा रखा है। मूठमारना, जादू की पुड़िया का प्रयोग, जादुई गलीचा की प्राप्ति आदि के माध्यम से रहस्य-रोमांच और चमत्कार की सृष्टि तो की ही गयी है साथ ही कल्पना-विस्तार का मनोवैज्ञानिक आनन्द भी इन सन्दर्भो में निहित है।

बुन्देलखण्ड में डाकू और ठगों का बाहुल्य रहा है। पिंडारियों की कारगुजारियाँ तो इतिहास की विषयवस्तु बन चुकी हैं। अतः यहाँ की लोककथाओं में डकैतों और ठगों की वारदातें भी प्रमुख हैं। डाकू के साथ जो भयंकरता और नृशंसता का भाव जुड़ा है उसे तो ये कथायें उभारती ही हैं किन्तु इनके भीतर के मानवीय आचरण को वे असल महत्त्व देती हैं। कथाओं में कोई स्त्री डाकू को भाई बना लेती है और वह डाकू उसकी रक्षा का बीड़ा उठा लेता है। कन्या के विवाह के लिए लूट का धन दे देने वाले डाकू भी कथाओं में है। डाकू-वृत्ति से सम्बंधित लोककथाओं में वह अत्यन्त विकसित मानव मस्तिष्क सक्रिय है, जिसमें भाव को उच्च बिन्दु पर अनुभव किया गया है। ठगों की कारगुजारियों को आधार बनाकर रची गयी लोककथाओं में बौद्धिक चातुर्य पर बल दिया गया है। बुन्देलखण्ड का आम-आदमी अपनी ऐकान्तिकता में इस चतुराई का लुत्फ उठाता है, अपनी आनन्दवृत्ति को तृप्त करता है। इन कथाओं में सामान्य-जन की बौद्धिक चतुराई कभी परितृप्त करता है। इन कथाओं में सामान्य-जन की बौद्धिक चतुराई कभी परिस्थितिजन्य होती है तो कभी अनायास। भोंदूभाई, जो प्रायः बड़ा होता है, ठगा जाता है तो छोटा भाई अपनी बुद्धि के बल पर ठगों से अपने भाई का बदला लेता है । इस तरह की कथाओं

में सेठ साहूकार भी ठगों की तरह प्रस्तुत होते हैं। 'जहॉन खॉ चोर'[1], कोरी कौ भाग[2], तीसमार खॉ[3] आदि लोककथाओं में इस तरह के वर्णन दृष्टव्य हैं।

प्रेम को केन्द्र बनाकर कही गयी कथाओं में अक्सर राजकुमार और राजकुमारियों को सम्मिलित किया गया है । राजकुमार किसी निर्धन या अपने से हीन जाति की लड़की पर रीझ जाता है और उसे अनेक विरोधों के बावजूद पाने की चेष्टा करता है। कभी अपने तीर कमान के माध्यम से कभी किसी योगी गुरू द्वारा दी गयी किसी ऐन्द्रजालिक वस्तु या फिर कभी घर में बड़ी भाभी के सामने सिरदर्द का बहाना बनाकर। राजकुमारियॉ भी अपने से निर्धन व्यक्ति पर रीझती हैं और उन्हें पाने का प्रयत्न करती हैं, यद्यपि वह बाद में किसी देश का राजा निकलता है। ऐसी लोककथाओं में अन्ततोगत्वा प्रेम की विजय ही होती है। राजकुमार और राजकुमारियॉ सामान्य जनों की तरह संघर्ष झेलते हुए जीवन-यापन करते हैं। उन पर 'अबारी-बेरा' (बुरा वक्त) अपना असर डालती है किन्तु बाद में सब ठीक हो जाता है। सबका अच्छा समय आ जाता है।

बुन्देली लोककथाओं में 'प्रेम' केवल दाम्पत्य-भाव प्रधान बनकर ही नही आया है वरन् भाई-बहन, माता-पुत्र, पिता-पुत्र, भाई-भाई आदि के सम्बंधों का चित्रण भी मिलता है। बुन्देलखण्ड में सम्बंधों की अवधारणा को केन्द्र बनाकर लिखी गयी कथाओं में मामा-भांजा, स्वामी-सेवक, पति-पत्नी आदि के सम्बंधों को व्याख्यायित किया गया है। जीजा-साली, देवर-भौजाई आदि के सम्बंधों में प्रेम के हास्य-विनोद-पक्ष भी सम्मिलित हैं। सम्बंध परक लोककथाओं में सम्बंधों की गरिमा, पवित्रता और प्रेम की तेजस्विता को महत्वपूर्ण

1- संकलित- निजी संग्रह, कथक्कड़- देवीदीन, संग्रह क्रमांक-18 (अप्रकाशित)

2- संकलित- हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास (षोडश भाग), बुन्देली लोक साहित्य, पृष्ठ 323

3- बुन्देलखण्ड की ग्राम कहानियॉ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-22।

माना गया है। सम्बंधों की रक्षा के लिए किए जाने वाले व्रतों- उपवासों में भी लोककथाएं सुनाने का प्रचलन बुन्देलखण्ड की स्त्रियों में है, जिसमें करवा-चौथ, महालक्ष्मी, दसारानी आदि व्रतों उपवासों से सम्बंधित कथाएं सम्मिलित हैं। सुहागनों के पर्व पर कार्तिक-स्नान के समय भी स्त्रियाँ ऐसी कथाएं आपस में सुनाती हैं। सौभाग्य-रक्षा और संतान-प्राप्ति के निमित्त ऐसी कथाएं कही-सुनी जाती हैं। इन कथाओं में धार्मिकता का पुट है, दैवीय-शक्ति का आह्वान है। वे प्रकट होती हैं और दुख के दिन सुख में तब्दील हो जाते हैं।

इस प्रकार जन-जीवन के बहुविध पक्षों को बुन्देलखण्ड की लोककथाएं अपने में समेटे हुए हैं। इनमें धर्म, प्रेम, सत् की रक्षा, चतुराई आदि को सर्वाधिक महत्व प्रदान किया गया है। लोक ने अनेक सम्बंधों का साधारणीकरण किया है, राजा-रानियाँ सामान्य जन बनकर लोककथाओं में आते हैं। यहाँ की सांस्कृतिक पहचान इसकी लोककथाओं में सुरक्षित है। वेश-भूषा , खान-पान, रहन-सहन, घर-मकान आदि का वर्णन बिल्कुल बुन्देली परिवेश का है। अधिकतर लोककथाएं निर्धन, गरीब, सताये गये आम-आदमी के प्रति करुणा का उद्रेक करती हैं तथा उस प्रतिकार का बदला लेने के लिए समायोजन अपने ढंग से करती हैं।

उपलब्ध बुन्देली लोककथाओं में अधिकांशतः मध्यकालीन भाव-बोध को अभिव्यक्त करती हैं। इन कथाओं के चरित्र सामान्यतया मध्यकालीन समाज के हैं। अभिजात्यवर्गीय चरित्रों में राजा-रानी, राजकुमार, सेनापति, मंत्री आदि हैं, तो सामान्य जनों में कोरी, नाई, अहीर, बढ़ई, राजगीर, माली, फसिया (बहेलिया) आदि को अधिसंख्य लोककथाओं में प्रस्तुत किया गया है। व्यापारी-वर्ग की अहम् भूमिका इन कथाओं में विद्यमान है। बंजारों के व्यापारिक काफिलों का उल्लेख लोककथाओं में मिलता है। लोककथाओं में इन पात्रों की जीवन-प्रणाली को सूक्ष्मतापूर्वक ढ़ाला गया है। सभी लोककथाओं में बुन्देली-भाषा की अभिव्यक्ति का सुन्दर समाहार है। खाँटी बुन्देली-भाषा का स्वरूप इन लोककथाओं में सुरक्षित है। कहावतों और मुहावरों का समावेश भाषा को जीवन्त बना देता है। बुन्देलखण्ड की लोककथाओं

में बुन्देली-भाषा की सृजनशीलता को सुरक्षित रखा गया है।

बुन्देलखण्ड में कुछ ऐसी लोककथायें प्रचलित हैं, जिनका फलक अत्यंत विस्तृत है। जिनकी लम्बाई रातों में मापी जाती है। खजाना, राजकन्या आदि की प्राप्ति इन कथाओं का चरम लक्ष्य होता है। कुछ लोककथायें ऐसी होती हैं जिन्हें गा-गाकर कहा जाता है । इन कथाओं के कहने में कथक्कड़ (कथा कहने वाला व्यक्ति) का कौशल विशेष रूप से दृष्टव्य होता है। किस्सा (कथा) कहने वाले ये लोग भाषा के नाटकीय प्रयोगों से परिचित होते हैं। उनकी हाव-भावपूर्ण मुद्रायें होती हैं। वे अपनी किस्सा कथन-शैली में पारंगत होते हैं। कथक्कड़ों से किस्सा सुनने के दौरान मुझे अनुभव हुआ कि ये लोग स्थानीय परिवेश के प्रति अत्यधिक संवेदनशील होते हैं। किस्सा कहने वाली जगह की भौगोलिक संरचना, वहाँ के देवी-देवता, हाट-बाजार, स्थानीय नामों आदि को तुरन्त आत्मसात करके ये लोग कथा कहते समय इनका प्रयोग कर लेते हैं, जिससे कथा में सजीवता आ जाती है। किस्सा कहने वाले के साथ एक व्यक्ति हूँका देने वाला भी होता है। हूँका देने वाला मानो यह जताता रहता है कि सभी सावधान होकर किस्सा सुन रहे हैं। कथा कहने की एक निश्चित बेला होती है। दिन में कथा नही सुनायी जाती, क्योंकि ऐसा लोक विश्वास है कि दिन में किस्सा सुनाने से सुनने वाले का मामा गुम हो जाता है। इस धारणा से यह स्पष्ट है कि लोक कथायें दिन-भर की थकान को दूर करने के लिए रात में सुनी -सुनाई जाती हैं। लोक-साहित्य की अन्य विधाओं की तरह लोककथाओं का भी कोई रचनाकार नही होता है। उनमें बदलते युग के प्रभावों का अंश बहुत कम है। यह एक ऐसी विधा है जो अपनी आदिम स्थितियों को अभी भी सुरक्षित रखे हुए है।

(ड.) बुन्देली लोककथाओं का वर्गीकरण

लोककथाएँ लोकजीवन की मर्मस्पर्शी अभिव्यक्ति हैं। लोककथाएं जीवन के सम्पूर्ण क्षेत्र को आच्छादित करती विविध रूप में सामने आती हैं। रूप की विविधता तथा क्षेत्र की व्यापकता के कारण लोककथाओं को वर्गीकृत करना कठिन हो जाता है। कदाचित् इसीलिए विद्वानों ने लोककथाओं का वर्गीकरण विभिन्न रूपों में किया है।

श्री कृष्णानन्द गुप्त ने लोककथाओं को अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से तीन मुख्य भागों में बाँटा है- (1) गाथा (2) कहानी (3) दृष्टांत।[1] इनमें 'गाथा' अलौकिक पुरुषों और वीरों का चरित्र गान है। जिनमें अतिरंजित रूप से उनके जीवन की घटनाओं का वर्णन होता है। जिनके विषय में यह विश्वास किया जाता है कि वे प्रायः कभी जीवित थे। पंजाब के राजा रसालु और बुन्देलखण्ड के कारसदेव दोनों ही इसके उदाहरण हैं। 'कहानी' साधारणतः गाथा से छोटी होती है। जिसमें सब कुछ अस्पष्ट और अनिश्चित होता है। उसे सच्चे अर्थ में 'हवाई' कह सकते हैं। कहानी मानव-मन की सृष्टि है, उससे अकसर कुछ न कुछ उपदेश मिलता है, परन्तु वह प्रच्छन्न होता है। जीव जन्तुओं और जड़-पदार्थों को लेकर कही गयी उपदेशमूलक कहानियों को 'दृष्टांत' कहते हैं। 'ईसप की फेबल' व 'पंचतंत्र की कथाएँ' जगत प्रसिद्ध हैं।

डॉ0 श्यामाचरण दुबे ने लोककथाओं को इस प्रकार वर्गीकृत किया है- (1) उत्पत्ति कथाएं, (2) पौराणिक कथाएँ, (3) लोक-विश्वास मूलक कथाएँ, (4) वीर गाथाएं, (5) सामान्य लोककथाएँ।[2] इनमें से पहले तीन प्रकार की कथाओं के पात्र सामान्य जगत के

1- 'बुन्देलखण्ड की ग्राम-कहानियाँ, प्रस्तावना - श्री कृष्णानन्द गुप्त, पृ0-17

2- 'बुंदेलखंड की लोककथाएँ', भूमिका-डॉ0 श्यामाचरण जी दुबे, पृ0-1

नर-नारी नहीं होते, उनमें अदृश्य जगत की शक्तियाँ और उनके अद्भुत एवं चमत्कारिक कार्यों का चित्रण होता है। वीर-गाथाओं में लौकिक तथा अलौकिक-दोनों प्रकार के तत्वों का समावेश होता है, इनके पात्र सामान्यता हमारी दुनियाँ के ही प्राणी होते हैं, किन्तु उनके कथानकों में यदा-कदा अदृश्य जगत की शक्तियाँ भी आ जाती हैं। 'सामान्य लोककथाओं' में मानव कल्पना के पंखों पर बैठकर एक अभिनव स्वप्न-लोक की सृष्टि करता है। इन कथाओं में कहीं-कहीं सामाजिक यथार्थ के दर्शन होते हैं, परन्तु कल्पना के इन्द्रधनुषी रंगों के कारण अधिकांश लोक-कथाओं में प्रतिबिम्बित यथार्थ वास्तविक जगत के यथार्थ की अपेक्षा एक सर्वथा भिन्न धरातल का होता है।

अनेक विद्वानों ने लोककथाओं का वर्गीकरण क्षेत्र-विशेष में उपलब्ध कथाओं के आधार पर भी किया है। डॉ० सत्येन्द्र ने अवसरों की उपयोगिता की दृष्टि से ब्रज में प्राप्त समस्त लोककथाओं को सात वर्गों में बाँटा है- (1) देवकथा (2) चमत्कारों की कहानी (3) कौशल की कहानी (4) जान-जोखिम की कहानी (5) पशु-पक्षी की कहानी (6) बुझौवल की कहानी (7) जीवट की कहानी।[1]

डॉ० शंकर लाल यादव ने हरियाना-प्रदेश से प्राप्त लोक-कहानियों को अध्ययन एवं विस्तृत विश्लेषण की दृष्टि से निम्नलिखित वर्गों में बाँटा है- (1) मनोरंजनात्मक (2) उपदेशात्मक (3) व्रतात्मक (4) देव-विषयक (5) पौराणिक (6) साहस एवं शौर्यपूर्ण (7) ऐतिहासिक (8) कौशलपूर्ण (9) अलौकिकतापूर्ण (10) सामाजिक (11) बुझौवल (12) चुटकुले (13) लघुछंदकहानी।[2] यादव जी का यह विभाजन इसलिए महत्वपूर्ण है कि यह लोककथाओं के सम्पूर्ण क्षेत्र को आच्छादित करता है।

1- हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास (षोडश भाग), ब्रजलोकसाहित्य, डॉ० सत्येन्द्र, पृ०-353

2- हरियाना प्रदेश का लोकसाहित्य, डॉ० शंकरलाल यादव, पृ०-352

डॉ0 बलभद्र तिवारी के अनुसार- बुन्देली लोककथाओं में इतिहास, किम्बदन्ती, नीति, चतुराई, धर्म, व्यवहार कुशलता और अध्यात्म का वर्णन विशेष होता है। लोक में प्रचलित अंधविश्वास, व्रत और आमोद-प्रमोदों को आधार बनाकर भी लोककथायें मिलती हैं। कहावतों के निर्माण के पीछे कोई न कोई उदाहरण या कथा होती है। इसलिए इन लोककथाओं को इस प्रकार विभाजित किया जा सकता है- (1) नीतिकथा (2) व्रतकथा (3) दंतकथा (4) हास्य या मनोरंजन कथा (5) पौराणिक कथा (6) इतिहास कथा (7) कहावत या बुझौवल कथा।[1]

डॉ0 रामस्वरूप श्रीवास्तव 'स्नेही' ने अपने 'बुन्देली लोकसाहित्य' नाम शोध-प्रबंध में बुन्देली लोककथाओं का वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया है- (1) व्रत-त्योहार से सम्बंधित कथाएं (2) वीर-चरित विषयक (3) कहावतों की व्यंजक कथाएँ (4) नीति एवं उपदेश परक कथाएं (5) कारण-निर्देशक कथाएं (6) प्रेम एवं श्रृंगार विषयक (7) अंधविश्वास मूलक कथाएं।[2]

इन सभी वर्गीकरणों को आधार मानते हुए उलब्ध बुन्देली लोककथाओं का वर्ण्य-विषय की दृष्टि से इस प्रकार विभाजन हो सकता है-

1- धार्मिक कथाएं

2- नीति एवं उपदेशात्मक कथाएं

3- वीरचरित्र विषयक कथाएं

4- प्रेम एवं श्रृंगारपरक कथाए

1- 'बुन्देली लोक-काव्य' (भाग-एक), डॉ0 बलभद्र तिवारी, पृ0-41

2- 'बुन्देली लोक साहित्य' , डॉ0 रामस्वरूप श्रीवास्तव 'स्नेही', पृ0-182

5- हास्य एवं व्यंग परक कथाएं

6- लोकविश्वासों पर आधारित कथाएं

7- कहावतों से सम्बंधित कथाएं

8- विविध कथाएं।

लोककथाओं की उत्पत्ति के मूल में मनुष्य की धार्मिक प्रवृत्तियाँ ही अधिकतर कार्य करती रही हैं। हमारे धार्मिक क्रिया-कलापों में 'व्रतों-त्योहारों' का महत्वपूर्ण स्थान है। बुन्देलखण्ड में स्त्रियाँ विभिन्न अवसरों पर व्रत रखकर पूजा के समय कुछ कथाएं कहती-सुनती हैं। इन व्रतकथाओं में हरितालिका व्रत कथाएं, गणेश चतुर्थी व्रत कथाएं, महालक्ष्मी व्रत कथाएं, करवा चौथ व्रत कथाएं, हरछठ व्रत कथाएं, नागपंचमी की कथाएं, दसारानी की कथाएं, संकटचौथ की कथाएं , गनगौर की कथाएं ,जगन्नाथ व्रत कथाएं आदि का प्रमुख स्थान है। इन व्रतों की अनेक कथाएं पण्डित लोग चढौती और भोगप्रसाद लेकर सुनाते हैं। कुछ व्रतों की कथाएं गाँव की स्त्रियाँ एक स्थान पर एकत्रित होकर पूजा के पश्चात् बड़ी-बूढ़ी पुरखिन स्त्री के मुँह से सुनती हैं। इन व्रत-कथाओं में से अधिकांश का पौराणिक आख्यानों से कोई सम्बंध नही होता तथा वे कल्पित कहानी मात्र होती है। मनुष्य के गृहस्थ जीवन में जो अभाव या आवश्यकताएं होती हैं, उनके पूरे हो जाने की कामना इन व्रतकथाओं में रहती है। 'करवा-चौथ' की कथा में उपासी बहन को क्षुधार्थ जानकर भाइयों ने बरगद के पेड़ पर चढ़कर दिया (दीपक) के सामने चलनी करके उसे चन्द्र किरणों का आभास करा दिया, जिसने बहन ने अर्घ्यादि देकर पूजा कर ली और भोजन किया। व्रत खण्डित होने से उसका पति मूर्च्छित हो गया। विलाप करती स्त्री को देखकर पार्वती जी ने आग्रह किया ,जिससे महादेव जी ने करवा-चौथ व्रत करने को कहा। व्रत करने से पति पुनः जीवित हो उठा।

बुन्देलखण्ड में होली-दिवाली आदि त्योहारों से सम्बंधित अनेक कथाएं प्रचलित हैं, जिनमें उन त्योहारों की उत्पत्ति एवं उनसे होने वाले लाभों का उल्लेख रहता है।

'घर की लक्ष्मी'[1] नामक दिवाली की कथा में 'नदी में नहाते समय राजकुमारी का नौलखा हार एक चील उठाकर सेठ दम्पत्ति के घर डालता है, जिसे उसकी बहू उठाकर रख लेती है। राजा राजकुमारी के नौलखा हार ढूँढने के बदले इनाम की घोषणा करवाता है। बहू अपने ससुर द्वारा हार अपने पास होने की सूचना राजा के पास पहुँचाती है। राजा के बुलावे पर राजदरबार में पहुँचकर नौलखा हार दे देती है। इनाम के बदले सेठ की बहू राजा से कहती है कि महाराज दिवाली के दिन राज्य भर में कहीं भी रोशनी न हो, कोई भी अपने घर में दीपक न जलावे और राज्य भर का कपास, तेल व मिट्टी के दीपक मेरे घर भेज दिए जाये। राजा के आदेशानुसार ऐसी ही हुआ। दिवाली की रात को सेठ का घर असंख्य दीपकों से जगमगा उठता है, जबकि राज्य-भर में अन्धेरा रहता है। रात को जब लक्ष्मी जी निकलती है तो सारे नगर में अन्धेरा देखकर सेठ के उजाले से भरे घर में प्रवेश कर जाती है। सेठ अपनी बहू को घर की लक्ष्मी कहता है जिसकी बुद्धि से सेठ का घर धन-धान्य से पूर्ण हो जाता है।'

बुन्देलखण्ड में कुछ कथाएं ऐसी भी मिलती हैं जिनमें धर्म-भाव विद्यमान रहता है। इन कथाओं को 'धर्म-पुण्य की कथाएं' कह सकते हैं। इन कथाओं में देवी-देवता अथवा उनके प्रतीकों का उल्लेख रहता है, कर्तव्याकर्तव्य, धर्म-अधर्म,सदाचार, शील, सुमति आदि का वर्णन रहता है। पाप-पुण्य की व्याख्या इस तरह की कथाओं का मूल उद्देश्य है। 'सबसे बड़ा पुण्य कौन'[2] कथा में 'राजकुमार के पूछने पर उसकी पत्नी तीर्थयात्रा को सबसे बड़ा पुण्य बतलाती है। लेकिन राजकुमार सबसे बड़ा धर्म-पुण्य परोपकार को मानता है तथा वह दीन-गरीब लड़कियों का विवाह सम्पन्न कराके प्राप्त किया जा सकता है। परीक्षा के लिए राजकुमार व उसकी पत्नी तीर्थयात्रा का बहाने लेकर राज्य से बाहर निकलते हैं। अनेक तरह के उतार-चढ़ावों के बाद अंत में राजकुमार इसको अपने जीवन में चरितार्थ करके दिखाता है तथा उसकी स्त्री को मानना पड़ता है कि गरीब लोगों की

1- बुन्देलखण्ड की ग्राम कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, क्रमांक-23, पृ0-203
2- गौने की विदा' (बुन्देलखण्ड की लोककथाएं) , शिवसहाय चतुर्वेदी, क्रमांक-15, पृ0-121

लड़कियों का विवाह कराना सबसे बड़ा पुण्य है, जिसके प्रभाव से बैकुण्ठ की प्राप्ति होती है। इसे हम धार्मिक विश्वास भी कह सकते हैं। बुन्देलखण्ड में लड़कियों के विवाह के समय 'कन्यादान' को सबसे बड़ा दान व धर्म-पुण्य का कार्य माना जाता है। इसके बाद लड़की के 'पैर पूजना' भी बड़े पुण्य का कार्य होता है।

नीति एवं उपदेशात्मक कथाओं में अवसरोपयोगी कोई शिक्षा निहित होती है। जो विशेष अवसर के लिए बनाई जाती है। पंचतंत्र व हितोपदेश की कथाएं इसी कोटि में आती हैं। 'पसीने की कमाई'[1] लोककथा में 'एक गरीब ब्राह्मण राजा से उसकी मेहनत की कमाई के चार पैसे दान में मांगता है । राजा व रानी लोहार के यहाँ एक दिन मजदूरी करके चार पैसे ब्राह्मण को दे देते हैं। ब्राह्मण सन्तोषपूर्वक पैसे ले जाकर ब्राह्मणी को देता है, जो उन पैसों को अनिच्छापूर्वक आंगन के तुलसीघर पर रख देती है। आगे चलकर उन चार पैसों से मोती के चार पेड़ उगते हैं। राजहंसों द्वारा मोतियों की पहचान होने पर मेहनत की कमाई की असली कीमत मालुम होती है तथा राजा जनता की कमाई का एक-एक पैसा उनके ही भले में लगाने का फैसला करता है।' इसी तरह 'तीन लाख की तीन बातें[2] कथा में 'एक उदारशील राजकुमार को राजा देश निकाला देता है। चलते समय उसकी माँ तीन लड्डुओं में तीन लाख कीमत के हीरे-जवाहरात भरकर पहुँचाती है, जिनसे वह तीन बातें मालूम करता है- (1) हजार काम छोड़कर समय पर भोजन करो (2) किसी का व्यभिचार देखकर उस पर परदा डाल दो (3) जो आदमी कान का कच्चा हो उसकी नौकरी न करो। राजकुमार एक सेठ के यहाँ मुनीमी करता है, जिसके दौरान उसे इन बातों की आजमाइश करने का मौका प्राप्त होता है। सेठ की स्त्री का व्यभिचार देखकर कंधे का दुशाला उस पर डाल देता है, जो त्रिया-चरित्र दिखाकर उल्टा राजकुमार को फंसाती है। सेठ राजकुमार को कोतवाल के पास सर कलम कराने के उद्देश्य से बंद लिफाफा देकर

1- बुन्देलखण्ड की ग्राम कहानियाँ,शिव सहाय चतुर्वेदी, क्रमांक3, पृ0-37

2- वही, क्रमांक-22, पृ0-193,

भेजता है, लेकिन रास्ते में एक जगह भोज में लोगों के आग्रह करने पर वह शामिल हो जाता है तथा पत्र वही व्यभिचारी लेकर जाता है,जिसका सर कलम करके कोतवाल सेठ के पास भेजता है। रहस्य प्रकट होने पर राजकुमार सेठ की नौकरी छोड़ देता है, क्योंकि वह कान का कच्चा है।' इस तरह तीनों बातें सच निकलती हैं।

उपदेशात्मक कथाओं में वे कथाएं भी आती हैं जिनमें भाग्य की प्रधानता दिखायी गयी है। अपना-अपना भाग्य'[1] कथा में 'छोटे राजकुमार को यह कहने पर कि वह अपने भाग्य से खाता है, राजा देश निकाला देता है। राजकुमार उज्जैन नगरी पहुँचकर एक गुरुकुल में भरती होता है, इसी समय विजयनगर की राजकुमारी का स्वयंवर होता है जिसमें दैवी-कृपा से संयोगवश राजकुमार विवाह की शर्त पूरी करके राजकुमारी के साथ सारा राज्य प्राप्त कर लेता है। अंत में राजकुमार के पिता राजा भी यह मानता है कि सभी अपने-अपने भाग्य से जीते हैं।'

वीरचरित्र विषयक कथाओं में अलौकिक पुरुषों और वीरों का चरितगान मिलता है। इन कथाओं के पात्र ऐतिहासिक तथा पौराणिक दोनो ही होते हैं, जिनमें उनके जीवन की विविध घटनाओं का वर्णन किया जाता है। इन लोककथाओं- में वर्णित पात्रों के नाम निश्चित होते हैं और स्थानों के नाम भी दिए रहते हैं। बुन्देलखण्ड में ऐतिहासिक चरित्रों में राजा विक्रमादित्य , राजा भोज, आल्हा, ऊदल, हरदौल , छत्रसाल, रानी लक्ष्मीबाई आदि से सम्बंधित कथाएं मिलती हैं तो पौराणिक चरित्रों में राजा जालन्धर, राजा रघु, राजा हरिश्चन्द्र, राजा कर्ण आदि को लेकर कथाएं कही गयी हैं। इस तरह की लोककथाओं मे वर्णित पात्रों की दानवीरता, शूरवीरता, साहसिकता, न्यायप्रियता, परोपकारिता एवं त्यागशीलता का उल्लेख होता है तथा वे जनहित के कल्याण के लिए सदैव तत्पर दिखलाई पड़ते

1- बुन्देलखण्ड की ग्राम कहानियाँ, शिव सहाय चतुर्वेदी, क्रमांक-16, पृ0-44

हैं। 'राजावीर विक्रमादित्य'[1] नामक लोककथा में एक पात्र राजा विक्रमादित्य ऐतिहासिक हैं तो दूसरे पात्र राजा कर्ण पौराणिक। दोनों पात्रों को मिलाकर कथा-सृष्टि की गयी है, जो कालगणना के विपरीत है लेकिन भारतीय जनमानस के निकट है उसे तो बस इतने से ही मतलब है कि राजा विक्रमादित्य व राजा कर्ण दोनो ही दानी व परोपकारी थे।

बुन्देलखण्ड में 'लखटकिया' से सम्बंधित अनेक कथाएं प्रचलित हैं,जिनमें उसकी साहसिकता एवं परोपकारिता आदि गुणों का वर्णन विशेष रूप से मिलता है। लखटकिया की एक कथा में, 'वह एक राजा के यहाँ लाख टका रोज पर नौकरी करता है तथा जो काम किसी से न हो, वह करने को कहता है। एक दिन रात के समय गाँव के बाहर एक बुढ़िया के रोने की आवाज सुनाई दी, लखटकिया ने उसका पीछा किया, जो गाँव से दूर जंगल में बने देवी मन्दिर में जाकर अन्तर्धान हो गयी। वहाँ पहुँचकर लखटकिया ने देवी से प्रातः काल होते ही राजा के मर जाने की बात सुनी तथा उपाय के रूप में उसने अपने नवजात शिशु व स्त्री का बलिदान कर दिया। अंत में वह स्वयं अपना बलिदान देने को उद्यत हुआ तो देवी ने प्रकट होकर उसे रोका तथा वरदान स्वरूप उसके पुत्र व पत्नी को पुनः जीवित कर दिया। राजा जो यह सब छुपकर देख रहा था, लखटकिया से अत्यंन्त प्रभावित होकर अपनी लड़की का विवाह उसके लड़के के साथ करके, साथ में अपना राज्य देकर जंगल को तपस्या करने चला गया।'[2]

बुन्देलखण्ड में प्राप्त अधिकांश लोककथाएं प्रेम और विवाह की कथाएं हैं। प्रेम को केन्द्र बनाकर कही गयी कथाओं में अक्सर राजकुमार और राजकुमारियों को सम्मिलित

1- पाषाण नगरी, शिव सहाय चतुर्वेदी, क्रमांक-4, पृ0-44

2- अपना-अपना भाग्य, रघुवीर सिंह, निजी संग्रह क्रमांक-5 (अप्रकाशित)

किया गया है, लेकिन वे सामान्य जनों के रूप में ही चित्रित हैं। इनमें नायिका के रूप सौन्दर्य का वर्णन, पशु-पक्षियों द्वारा सुनकर या नायिका को स्वप्न, मूर्ति, चित्र में देखकर नायक के हृदय में उसके प्रति प्रेम-भाव उत्पन्न होना तथा उसे पाने हेतु अदम्य साहस एवं अटूट धैर्यशीलता का वर्णन रहता है। 'जैसी करनी वैसी भरनी'[1] लोककथा में निर्वासित तीन राजकुमार भाग्यवश तथा अपनी बुद्धिमत्ता के कारण राजकुमारियों के साथ अपने-अपने लिए राज्य भी प्राप्त कर लेते हैं। इसी तरह 'रतन पारखी'[2] लोककथा में राजकुमार सिंहलद्वीप की पद्मिनी, राजा की बेटी और पटवा की बेटी, तीनों के साथ विवाह रचाता है।

बुन्देली लोककथाओं में प्रेम केवल दाम्पत्य-भाव-प्रधान बनकर ही नही आया वरन् भाई-बहन, माता-पुत्र, पिता-पुत्र, भाई-भाई के सम्बंधों की पड़ताल भी प्रेमकथाओं के अन्तर्गत मिलती हैं। सम्बंधों की अवधारणा को लेकर कही गयी कथाएं भी मिलती हैं, जिनमें मामा-भांजा, स्वामी-सेवक, पति-पत्नी आदि के सम्बंधों को व्याख्यायित किया गया है। जीजा-साली, देवर-भाभी आदि के सम्बंधों में प्रेम के हास्य-विनोद पक्ष भी मिलते हैं। इन लोककथाओं में सम्बंधों की गरिमा, पवित्रता और प्रेम की तेजस्विता को महत्व दिया गया है। स्वयं संग्रहीत 'गऊ का सत्'[3] नामक लोककथा में मामा-भांजा-बहन के सम्बंधों का मर्मस्पर्शी वर्णन मिलता है।

हास्य एवं व्यंग परक लोककथाओं में कौतूहल की प्रधानता होती है। ठगों एवं डाकुओं से सम्बंधित कथाओं में बौद्धिक-चातुर्य पर बल दिया गया है। बुन्देलखण्ड का आम आदमी अपनी एकान्तिकता में इस चतुराई का लुत्फ उठाता है और अपनी आनन्दवृत्ति

1- जैसी करनी वैसी भरनी, शिव सहाय चतुर्वेदी, क्रमांक 1, पृ0-9

2- वही, क्रमांक 7, पृ0 - 53

3- 'गऊ का सत्', देवी दीन, निजी संग्रह क्रमांक- 24 (अप्रकाशित)

को तृप्त करता है। 'जहाँन खाँ चोर'[1] लोककथा में जहाँन खाँ शर्त के अनुसार दिल्ली के बादशाह के यहाँ मियाँ का सोथना (पैजामा) और बीबी की चोली, चोरी करने जाता है। बादशाह उसे पकड़ने के लिए जिन व्यक्तियों को नियुक्त करता है उन्हें बेवकूफ बनाकर उनकी दुर्दशा करता है, जिससे हास्य पैदा होता है। अंत में, वह चोरी करने में सफल हो जाता है।

हास्य-व्यंग कथाओं के अन्तर्गत वे कथायें भी आती हैं जो जातिगत विशेषताओं पर आधारित हैं। इन कथाओं में ठाकुर को वीर तथा साहसी; बनियाँ को धनी, लोभी, कंजूस व डरपोक दिखाया जाता है। कोरी सदा मूर्ख रहता है, यही बात अहीर की भी होती है पर वह मूर्ख होने के साथ बात-बात पर झगड़ने वाला भी होता है। 'मुठ्टाढेल'[2] लोककथा में 'एक ब्राह्मण विवाह कराने का झाँसा देकर अहीर से कई भैंसे हड़प लेता है। बाद में अहीर द्वारा तहकीकात करने पर वह अहीर को एक गाँव में ले जाकर नवव्याही औरत को उसकी पत्नी बता देता है। अहीर उसके घर विदा कराने पहुँचता है तथा उसके पति को मार भगाता है। पंचायत में अहीर यह कहकर कि यदि मैंने ब्राह्मण को विवाह कराने के एवज में भैंसे न दी हो तो मेरे हाथ जल जाय, गर्म तेल में अपने हाथ डालकर ईमान पूरा करता है तथा औरत को अपने घर ले आता है।' लोककथाओं में सबसे अधिक स्वार्थी और चतुर नाई को चित्रित किया गया है। नाई की अत्यधिक चतुरता के कारण उसे छत्तीसा अर्थात् छत्तीस बुद्धिवाला कहा जाता है; लेकिन इसी के चलते कभी-कभी व संकट में पड़कर अपने प्राण भी गंवा बैठता है।

1- 'जहाँन खाँ चोर', देवीदीन, निजी संग्रह क्रमांक-18 (अप्रकाशित)

2- बुन्देली लोक कहानियाँ, शिव सहाय चतुर्वेदी, क्रमांक-17, पृ0-100

बुन्देलखण्ड में भाँड़ों की भड़ैती से सम्बन्धित लोककथाएं भी प्राप्त होती हैं। जो हास्य एवं व्यंग का कारण बनती हैं। 'वेश्या एवं भाँड़'[1] से सम्बंधित एक कथा में 'एक दिन वेश्या अपने यहाँ किसी ब्राह्मण को भोजन कराने का संकल्प करती है, लेकिन कोई भी ब्राह्मण इसके लिए तैयार नही होता। निराश होकर जब वह खिड़की के पास बैठ जाती है उसी समय टीका चन्दन लगाये एक ब्रह्मण सड़क पर चलता आता है, वेश्या उसके पास जाकर उससे अपनी इच्छा व्यक्त करती है। वह व्यक्ति वेश्या के यहाँ आकर भोजन करता है, दक्षिणा देने के समय वेश्या उससे कहती है कि महाराज बुरा न मानना मैं वेश्या हूँ, तो जबाब में वह व्यक्ति कहता है कि मैं भी कौन असली ब्रह्मण हूँ मैं तो भाँड़ हूँ। इसलिए हम दोनों को ही कोई आपत्ति नही होनी चाहिए।' 'अकबर-बीरबल' से सम्बन्धित किस्सों को भी इसी में शामिल किया जाता है, जिनमें बीरबल की बेटी विशेष चतुर दिखलाई पड़ती है। वह बादशाह के द्वारा बीरबल को दी गयी प्रत्येक समस्या का समाधान करती है।

लोक-विश्वास मानव के कल्पनाशील मस्तिष्क की वैचित्र्यपूर्ण स्वप्नसृष्टि होने के साथ , यथार्थ जीवन के अनिवार्य अंग भी होते हैं। संकट की अनिश्चित घड़ियों में मानव किसी आधार की खोज करता है; उसके परम्परागत लोकविश्वास युगों से उसे मानसिक दृढ़ता देते आये हैं। बुन्देलखण्ड में लोकविश्वासों को आधार बनाकर तीन तरह की कथाएं मिलती हैं- (1) देवी-देवता, परी-अप्सराओं सम्बंधी, (2) कार्य-कारण सम्बंधी (3) अन्धविश्वास सम्बंधी।

लोककथाओं में संकट में पड़े नायक-नायिका की देवी-देवता (जिनमें शंकर-पार्वती प्रमुख हैं) अक्सर सहायता करते हैं जिससे वे संकटपूर्ण स्थितियों को पार करते

1- पूर्व में सुनी गयी कहावतों की व्यंजक एक लोककथा।

हुए अपने लक्ष्य को प्राप्त करते हैं। परी-अप्सरायें बहुत ही सुन्दर, आकाश में उड़ने वाली तथा नृत्य-कला में प्रवीण होती हैं, जिनका विवाह नायक के साथ सम्पन्न होता है।

कुछ लोककथायें इस प्रकार की मिलती हैं जिनमें किसी वस्तु की उत्पत्ति, घटना-व्यापार-कार्य के काल्पनिक सम्बंधों की उद्भावना कर ली जाती है तथा कार्य-कारण का समुचित तालमेल बिठा लिया जाता है। 'झाई'[1] अर्थात् प्रतिध्वनि की कथा में, कहानी कहने में चतुर झाई की पहुँच देवलोक तक हो गयी थी, जिसकी सिफारिश से पापी लोग भी इन्द्रलोक में जा बसे। इस पर इन्द्र ने नाराज होकर उसके बोलने की शक्ति छीन ली। तब से झाई पागल बनी ऊजड़ स्थान, खण्डहर, कुआ-बावड़ियों में जाकर रहने लगी।

अन्ध-श्रृद्धा के कारण लोक विश्वास ही आगे चलकर अंधविश्वास में तब्दील हो जाते हैं। इससे सम्बंधित लोककथाओं में तंत्र-मंत्र, जादू-टोना, भूत-प्रेत, राक्षस-चुड़ैल आदि के वर्णन मिलते हैं। 'देर है अन्धेर नहीं'[2] लोककथा में निपुत्री सेठानी ज्योतिषी के कहने से पड़ोसी के बालक को मारकर उसके खून से स्नान करती है। अंधश्रृद्धा के चलते उसके पुत्र होता अवश्य है लेकिर क्रूरधर्मी सेठानी को उसका कुफल भी मिलता है, जब मकान में आग लगने से माँ-बेटे दोनों जलकर मर जाते हैं।

लोकविश्वास से सम्बंधित कथाओं के अन्तर्गत 'पुर्नजन्म सम्बंधी' लोककथाएं भी मिलती हैं। इन कथाओं में कोई अभागिन या गरीब स्त्री अपने दैवीय गुण या कृपा से जब आगे बढ़ जाती है तब उसकी बहन, या बाग की मालिन या नीच जाति की कोई स्त्री सौत बनकर उसे एकान्त में मार डालती है। किन्तु वह घूरे पर फूल बनकर उगती है या कमल बनकर जलाशय में प्रकट होती है। ये प्राकृतिक उपादान किसी न किसी रूप

1- जैसी करनी वैसी भरनी, शिवसहाय चतुर्वेदी, क्रमांक-09, पृ0-72

2- वही, क्रमांक-13, पृ0-99

में उसे पूर्व जन्म की घटना का वर्णन करने वाले बनते हैं। अपराधी को अपराध की सजा देने के लिए ये पुर्नकल्प चुने गये हैं, जिनमें हमारी मानवीय चेतना के आस्था और विश्वास सक्रिय हैं। 'कुमारी अनारमती'[1] लोककथा में इस तरह का वर्णन मिलता है।

बुन्देलखण्ड में कुछ कथाएं ऐसी मिलती हैं जो कहावतों के रूप में प्रसिद्ध चली आ रही हैं। इनमें वर्णित घटनाएं तो वास्तविक हैं, पर अधिकांश कहानियाँ काल्पनिक हैं। बुन्देलखण्ड में एक कहावत 'धुन्धपाल का राज'[2] प्रसिद्ध 'है, जिसमें राजा धुन्धपाल के राज्य की अंधेरगर्दी इतनी प्रसिद्ध हुई कि आगे जब भी शासन में अंधेरगर्दी व्याप्त हुई तो उसे धुन्धपाल का राज कहा जाने लगा। 'अपनी टेक भंजाई'[3] कहावत की कथा में नर व नारी के बीच श्रेष्ठता हेतु हुए द्वन्द्व का रोचक वर्णन मिलता है।

कहावतों के अलावा पहेली-बुझाना या अटका-पटका सम्बंधी कथाएं भी इसी के अन्तर्गत आती हैं। बुन्देलखण्ड में 'बुलाखी नाऊ की गा' अत्यंत प्रसिद्ध है, इसमें कथा के आरम्भ में कोई गा (अटका) छोड़ दी जाती है तथा उसी का समाधान पूरी कथा में दिया जाता है। ऐसी कथाओं का स्रोत 'बेताल पच्चीसी' जैसी कथाओं में खोजा जा सकता है। स्वयं संग्रहीत 'सधारी काका व ठाकुर साहेब'[4] की कथा में पहला अटका दीवार में चुने हुए बकरे के सिर द्वारा एक साथ हंसने व रोने के कारण से है जिसके समाधान में राजा के परकाय-प्रवेश विद्या सीखने से सम्बंधित कथा कही गयी है।

1- गौने की विदा, शिवसहाय चतुर्वेदी, क्रमांक 9, पृ0-68

2- जैसी करनी वैसी भरनी, शिव सहाय चतुर्वेदी, क्रमांक-14, पृ0-103

3- बुन्देली कहावत कोश, श्री कृष्णानन्द गुप्त, पृ0-11

4- सधारी काका व ठाकुर साहेब, रघुबीर सिंह, निजी संग्रह क्रमांक-6 (अप्रकाशित)

विविध कथाओं के अन्तर्गत सन्तों एवं महापुरुषों के जीवन से सम्बंधित 'दन्तकथाएं' तथा बुन्देलखण्ड में पाई जाने वाली विशेष पकार की 'गप्पों' को शामिल किया जा सकता है। बुन्देलखण्ड में हमीरपुर जिले के अन्तर्गत ग्राम अरतरा में 'उजबासा-बाबा' निवास करते थे। वे बहुत ही दयालु, परोपकारी एवं गुनिया प्रकृति के व्यक्ति थे। कहते हैं कि एक बार वे अपने साथियों के साथ कामदगिरि भगवान के दर्शन करने चित्रकूट गये, इसी समय जोर का बादल चढ़ा, जिससे ओला पड़ने पर तैयार फसल के नष्ट होने की आशंका थी। बाबा जी ने अपने साथियों से सलाह मशविरा करके बादलों का सारा प्रकोप (ओला) अपने खेत की ओर उन्मुख कर दिया, जिससे उनके खेत की सारी सफल नष्ट हो गयी, जबकि उनके अगल-बगल के सभी खेतों की फसल सुरक्षित खड़ी रही।[1]

बुन्देलखण्ड में एक विशेष प्रकार की अतिशयोक्तिपूर्ण कथाएं मिलती हैं जिन्हें 'गप या गप्प' कहते हैं। ये भौतिक जगत से सम्बंध रखती हैं, सांसारिक बातों और घटनाओं को अतिरंजित रूप से चित्रित कर हल्के व मीठे विनोद की सृष्टि करती हैं। 'बंगाले का ऊँट[2] गप्प में 'बंगाले के राजा ऊँट अपनी गर्दन फैलाकर कश्मीर, आसाम, कजली वन के बाग-बगीचे चर आता है। एक बार कश्मीर का माली ऊँट की गर्दन पकड़कर बंगाल पहुँच जाता है, जहाँ उसे ऐसी ककड़ी मिलती है जिसमें वहाँ से गुजर रही हैदराबाद के नबाप की नौलाख सेना मय लाव-लश्कर के विश्राम करती है। इसी समय मूसलाधार वर्षा होने से ककड़ी बहकर समुद्र में जा पहुँचती है, जहाँ उसे एक मछली निगल जाती है, जिसे एक बगुला निगल जाता है। अब उस बगुले को एक पठान मारकर लाता है तथा अपनी बीबी से उसका गोश्त पकाने को कहता है। बगुले को चाकू से काटने पर उसके अन्दर मछली निकली जिसका पेट चीरने पर ककड़ी निकल पड़ी। मारे खुशी के पठान की बीबी उस ककड़ी को खाने के लिए ज्यों ही काटती है कि उसमें से नवाव का दल निकल पड़ता है, जिससे रेल-पेल मच जाती है तथा बेचारे पठान की टपरिया धूल में मिल जाती है। इस तरह किस्सा समाप्त हो जाती है।' 'गप्प' मनोरंजन की दृष्टि से उपादेय होती है। लोग इन्हें सुनकर हंसी से लोट-पोट हो जाते हैं।

1- दिनाँक 26.4.97 को उजवासा बाबा की पुत्री से स्वयं सुनी घटना।

2- बुन्देली लोककहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, क्रमांक-12, पृ0-72

****

****

अध्याय-तीन

'परकाय-प्रवेश'-

1- एककाय-प्रवेश- जीवित मानव में प्रवेश, मृत-मानव में प्रवेश, पशु-पक्षियों में प्रवेश, जड़-पदार्थों में प्रवेश

2- बहुकाय-प्रवेश ।

****

योगशास्त्र में वर्णित अनेक सिद्धियों में 'परकाय-प्रवेश' भी एक सिद्धि है, जिसे बाद में विद्या के अन्तर्गत मान लिया गया। इस सिद्धि या विद्या के द्वारा कोई व्यक्ति अपने शरीर को छोड़कर किसी दूसरे जीवित या मृत प्राणी के शरीर में प्रवेश कर सकता है अथवा विशेष सिद्धि प्राप्त करके कोई व्यक्ति अपनी आत्मा को अन्य व्यक्ति या प्राणी के शरीर में प्रवेश करा सकता है। योगशास्त्र में वर्णित यौगिक क्रियाओं के अनुसार विभिन्न प्रकार के संयमों, साधनाओं द्वारा योगी अपने शरीर को छोड़कर सूक्ष्म शरीर से आकाश में उड़ सकता है, स्थूल शरीर को मृतवत स्थिर बना सकता है, दूसरों के चित्त की बातें जान सकता है, दूसरों की दृष्टि से अदृश्य या अन्तर्धान हो सकता है और अन्य व्यक्तियों के शरीर में प्रवेश कर सकता है।

यौगिक कियाओं की एक घटना , जिला हमीरपुर गजेटियर (1909) के अनुसार पीर मुबारक शाह (जिनकी दरगाह महोबा के मदन सागर बाँध में स्थित है) को अरब से इस्लाम धर्म के प्रचार हेतु 13वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में आमंत्रित किया गया। पीर साहब अपने साथ चार अद्भुत चीजें- भरई का अण्डा, नगड़िया, मृगछाल व समुद्री खर-मोहरा लाये थे। उसी काल में गुरू गोरखनाथ के नौवें सिद्ध दीपकनाथ महोबा के समीप स्थित गोरखगिरि की पश्चिमी कन्दराओं में तपस्यारत् थे। उन्होंने अपनी सिद्धि का प्रदर्शन करने हेतु पीर मुबारक शाह को चुनौती दी। इस प्रतिद्वन्द्विता की निश्चित तिथि पर दीपकनाथ अपने चरणों में लकड़ी की खड़ाऊँ धारण कर मदन-सरोवर के जल के ऊपर बिना भीगे चलते हुए मध्य में आकर खड़े हो गये; पीर मुबारक शाह भी अपनी मृगछाल के ऊपर चढ़कर तालाब में सिद्ध के सामने आ पहुँचे। इस द्वन्द्व में सिद्ध ने स्वर्गीय दाणिमफल (अनार) पीर से मांगा, जिसे पीर ने अल्लाह को याद कर तत्काल मृगछाल के नीचे से निकाल कर सिद्ध को प्रस्तुत कर दिया। सिद्ध ने इस फल को दैविक समझकर प्रत्युत्तर में अपनी मुट्ठी से एक चमकती दैविकमणि पीर के ऊपर डाली जिसे पीर ने गौर से देखा और वही फेंककर जलमग्न कर दिया। जिस पर सिद्ध ने आपत्तिस्वरूप कहा 'यह क्यों कर दिया? इस मणि में तो रंक से लेकर राजा तक को पागल करने की महान क्षमता है।' इस पर पीर ने उत्तर दिया-

सिद्ध में यदि कूबत है तो इस गहरे पानी में डूबकर उस चमकीली मणि को निकाल लें।' सिद्ध ने तत्पश्चात् पानी में डुबकी लगायी और पाया कि उस धरातल में इस प्रकार की असंख्य मणियाँ चमचमा रही है, जिनकी चकाचौंध से सिद्ध आश्चर्यचकित रह गये और पानी के ऊपर आकर पीर की श्रेष्ठता स्वीकार कर ली।[1]

योगशास्त्र में वर्णित इन सिद्धियों के सांगोपांग विवेचन साथ ही भारतीय कथाओं में मंत्र-तंत्र पर आधारित अनेक चमत्कारपूर्ण और अलौकिक कार्यो के उदाहरण प्राप्त होते हैं। 'कथासरित्सागर' में वर्णित राजा विक्रमादित्य और मदनमाला वेश्या की कथा के प्रसंग में, राजा विक्रमादित्य को एक दुष्ट कापालिक का बध करने के फलस्वरूप इस तरह की सिद्धियाँ स्वतः ही प्राप्त हो गयी थी। कथा के अनुसार 'प्राचीन समय में पाटलिपुत्र नगर में प्रपंच-बुद्धि नाम का भिक्षु (तपस्वी) प्रतिदिन राजा विक्रमादित्य के दरबार में आकर उन्हें एक बंद डिब्बा देता था, जिसे राजा बिना खोले ही भण्डार के अधिकारी को सौंप दिता था। यह क्रम एक वर्ष तक चलता रहा; एक बार उस भिक्षु द्वारा दिया गया डिब्बा गिरकर टूट गया, जिससे आग के समान जलता हुआ चमकीला रत्न निकलता है। पुराने डिब्बे मगाने पर उनमें भी ऐसे ही चमकीले रत्न निकले तब राजा ने आश्चर्यपूर्वक उस भिक्षु से पूछा कि ऐसे अमूल्य रत्न तुम मुझे क्यों दे रहे हो? इस पर एकान्त में वह भिक्षुक बोला कि इसी आने वाली कृष्ण चर्तुदशी को मैं रात के समय एक विद्या की सिद्धि करूँगा, जिसमें आपके जैसे वीर व्यक्ति की सहायता की आवश्यकता है। भिक्षुक के ऐसा कहने पर राजा उसकी सहायता करना स्वीकार कर लेता है। रात्रि के समय, निद्रा आते ही, स्वप्न में गरुड़ पर बैठे भगवान ने राजा को आदेश दिया यह भिक्षुक मण्डल की पूजा में ले जाकर तुम्हारा बलिदान करेगा, इसलिए उसके कहने के अनुसार तुम पहले उसी से वह क्रिया करने को कहना, जब वह ऐसा करने लगे, तब तुम उसकी युक्ति से उसी क्षण उसे मार देना। इस

1- चन्देल कालीन महोबा और हमीरपुर जनपद के पुरावशेष, वासुदेव चौरसिया, पृ0-34 व 35 से उदधृत

प्रकार वह जिस सिद्धि को चाहता है , वह तुम्हें मिल जायेगी। राजा ने ऐसा ही करके उस मूर्ख श्रमण का सिर काट डाला, जिससे उन्हें कुबेर के वरदान से सभी सिद्धियाँ अनायास ही प्राप्त हो गयीं।[1] भारतीय कथाओं में बारम्बार आने वाले विद्याधर तो जन्मना इस तरह की विद्याओं के ज्ञाता माने गये हैं इसीलिए उन्हें विद्याधर कहा गया है। उन्हें इन विद्याओं को जानने के लिए योगशास्त्र की शिक्षा और अभ्यास की आवश्यकता नही थी।

'परकार्य प्रवेश' की धारणा का प्रारम्भिक रूप आदिम मानव का यह विश्वास है कि मनुष्य की आत्मा सुषुप्तावस्था में कुछ देर के लिए शरीर को छोड़कर बाहर चली जाती है। आज भी, आदिम जातियों में यह धारणा वर्तमान है कि मनुष्य के शरीर के भीतर प्राण (आत्मा) और जीव या छायाशरीर (सूक्ष्म शरीर) ये दो तत्व होते हैं। सोते समय या बेहोशी की दशा में प्राण तत्व तो शरीर में रहता है पर छाया शरीर बाहर चला जाता है; मृत्यु के बाद ये दोनों ही शरीर को छोड़ देते हैं। छत्तीसगढ़ के कमारों एवं भुईयाँ जनजातियों में यह धारणा है कि जब मनुष्य स्पप्न देखता है तो उसके शरीर का अन्तःजीव (सूक्ष्म शरीर) इधर-उधर भटकता रहता है। जब किसी मनुष्य की मृत्यु हो जाती है तो उसका शरीर माटी हो जाता है एवं जीव बाहर निकलकर भगवान में मिल जाता है। दक्षिण भारत में, यह विश्वास किया जाता है कि सोते समय किसी व्यक्ति के चेहरे को विकृत नही करना चाहिए अन्यथा उसकी आत्मा लौटकर उसे नही पहचानेगी और भटकती रह जायेगी, जिससे उस व्यक्ति की मृत्यु हो जायेगी।

इस तरह सूक्ष्म शरीर या वैयक्तिक आत्मा के संचरण का सिद्धान्त आदि-काल से ही माना जाता रहा है। जीव या सूक्ष्म शरीर व्यक्ति के व्यक्तित्व की छाप होता है, जो शरीर को छोड़कर अन्यत्र भ्रमण कर सकता है। वह अदृश्य और अरूप होता है पर उसमें शारीरिक शक्ति निहित होती है। वह सम्बद्ध व्यक्ति की मृत्यु के बाद भी जीवित (प्रेत रूप में) बना रहता है और दूसरे जीवित या मृत व्यक्तियों तथा प्राणियों के शरीर

1- कथासरित्सागर, द्वितीय भाग, सप्तम् लम्बक, चतुर्थ तरंग, पृ0-85 व 87

में या किसी जड़ वस्तु में प्रवेश करके क्रियाशील हो सकता है।

इसी तरह, 'बहुकाय-प्रवेश' की मान्यता के अनुसार एक व्यक्ति की आत्मा कई व्यक्तियों या प्राणियों के शरीर में एक साथ रह सकती है। इस मान्यता का जन्म कुछ आदिम जातियों के इस विश्वास के कारण हुआ कि मनुष्य की कई- दो, तीन या चार आत्माएं होती हैं। मध्य भारत में निवास करने वाली खोण्ड जाति में मनुष्य की चार आत्माएं मानी जाती हैं, जिनमें व्यक्ति के मरने के बाद एक आत्मा (जीव) शव के भीतर, और दूसरी गाँव में रह जाती है, तीसरी हवा में उड़ जाती है और चौथी प्रेत-लोक में चली जाती है। इस प्रकार, परकाय प्रवेश का कथाभिप्राय आदिम मानव समाज में प्रचलित आत्मा के स्थानान्तरण सम्बंधी मान्यताओं विश्वासों के साथ योगशास्त्र में वर्णित सिद्धियों द्वारा भी समर्थन प्राप्त कर भारतीय-कथाओं का प्रिय अभिप्राय बन गया।

भारतीय कथाओं में 'परकाय-प्रवेश' कथाभिप्राय दो रूपों में मिलता है - (1) एककाय-प्रवेश व (2) बहुकाय-प्रवेश। इनमें से 'एककाय-प्रवेश' के निम्न रूप मिलते हैं:-

1- जीवित-मानव में प्रवेश
2- मृत-मानव में प्रवेश
3- पशु-पक्षियों में प्रवेश
4- जड़-पदार्थों में प्रवेश

लोककथाओं में, मुख्यतः मृत प्राणियों के शरीर में प्रवेश को ही ग्रहण किया गया है। वस्तुतः मृत व्यक्ति के शरीर में अथवा ऐसे व्यक्ति के शरीर में , जो स्वयं अपने शरीर को छोड़कर अन्यत्र कहीं चला गया हो, प्रवेश करना ही सही अर्थ में 'परकाय-प्रवेश' की कला या विद्या है। 'बहुकाय-प्रवेश' के अनुसार एक व्यक्ति की आत्मा कई व्यक्तियों या प्राणियों के शरीर में एक साथ रह सकती हैं या एक ही व्यक्ति के शरीर मे कई आत्माओं का वास एक साथ हो सकता है।

'परकाय-प्रवेश' से सम्बंधित कथाओं की परम्परा अत्यंत प्राचीन है। महाभारत, कथासरित्सागर, भक्तमाल आदि में इसके उदाहरण मिलते हैं। 'एककाय-प्रवेश' के अन्तर्गत जीवित परकाय-प्रवेश के उदाहरण के रूप में 'महाभारत' में, देवशर्मा का आख्यान मिलता है, जिसके अनुसार 'महर्षि देवशर्मा की पत्नी रूचि अत्यंत सुन्दरी थी। देवता, गन्धर्व, राक्षस सभी उसके सौन्दर्य से प्रभावित थे। देवताओं में इन्द्र रूचि के सौन्दर्य से से विशेष अभिभूत थे। इन्द्र द्वारा अहिल्या के साथ किये गये आचरण को ध्यान में रखकर महर्षि इन्द्र से बहुत शंकित रहते थे और स्त्रियों की प्रकृति से अच्छी तरह परिचित रहने के कारण वे अपनी पत्नी की बड़ी सावधानी से देखभाल करते थे। एक दिन जब उन्हें एक यज्ञ के लिए बाहर जाना था, तो उन्होंने अपने शिष्य विपुल को बुलाकर कहा कि इन्द्र रूचि पर बहुत आसक्त है, अतः मेरी अनुपस्थिति में उसकी देखभाल तुम्हारे ऊपर है। तुम अपनी पूरी शक्ति से सतत् इन्द्र से सावधान रहना क्योंकि इस कार्य के लिए वह अनेक रूप धारण कर सकता है। ब्रह्मचारी व तपस्वी विपुल ने दायित्व ले लिया और ऋषि से उसके जाने के पूर्व ही यह भी जान लिया कि इन्द्र किस आकृति के कितने रूप धारण करता है। ऋषि के जाते ही इन्द्र रूचि के सम्मुख उपस्थित हुआ। विपुल ने देखा गुरूपत्नी स्वयं ही विचलित हो रही है। अतः दायित्व-निर्वाह कठिन देखकर विपुल ने योगशक्ति के द्वारा अपने चित्त को रूचि के शरीर में प्रवेश करा दिया और उसका नियंत्रण करने लगा। वह रूचि के शरीर के प्रत्येक अंग में छाया की तरह स्थित हो गया जैसे कोई पथिक मार्ग में किसी रिक्त गृह में थोड़ी देर के लिए ठहर जाता है । दर्पण में प्रतिबिम्ब की तरह विपुल रूचि के भीतर स्थिर रहा तथा रूचि इस प्रभाव से अनभिज्ञ रही। इन्द्र के प्रवेश करने पर रूचि विनम्रतापूर्वक उसका परिचय पूछना चाहती है, किन्तु आत्मा में विपुल के स्थित होने के कारण उसके मुख से न तो वाणी निकल पाती है और न वह अपने स्थान से तनिक भी हिल पाती है। इन्द्र रूचि से प्रेम निवेदन करता है, किन्तु वह तब भी जड़वत बनी रहती है। अन्त में, विपुल अपने शरीर में लौट आता है और इन्द्र उसके द्वारा धिक्कारे जाने पर लज्जित होकर वहाँ से चले जाते हैं।'[1] इसी प्रकार महाभारत में ही, तपस्वी विदुर मरणासन्न होने पर अपने शरीर को एक वृक्ष के सहारे स्थित करके चित्त से युधिष्ठिर के शरीर में प्रवेश

1- महाभारत, (छठा खण्ड), अनुशासन पर्व, पृ0-5601 से 5607 तक

कर जाते हैं, जिससे युधिष्ठिर विदुर के अनेक गुणों से युक्त हो जाते हैं।[1]

एककाय-प्रवेश के अन्तर्गत मृत-परकाय-प्रवेश के उदाहरण के रूप में 'कथासरित्सागर' में, व्याकरणाचार्य वररूचि की कथा मिलती है, जिसके अनुसार 'वररूचि अपने दो मित्रों- व्याडि और इन्द्रदत्त के साथ वर्ष के पास नव्य व्याकरण-शास्त्र की शिक्षा लेने के लिए जाते हैं। वर्ष कार्तिकेय द्वारा उद्घाटित इस नवीन व्याकरण-शास्त्र का रहस्य बतलाने के एवज में एक करोड़ स्वर्ण मुद्रायें, गुरू-दक्षिणा के रूप में मांगता है। इस धनराशि को प्राप्त करने के लिए वररूचि अपने मित्रों के साथ मगध के राजा नन्द के पास जाते हैं किन्तु जिस दिन वे वहाँ पहुँचते हैं, उसी दिन कुछ ही समय पूर्व राजा नन्द की मृत्यु हो गयी रहती है। उन्हें एक युक्ति सूझती है , वे तय करते हैं कि इन्द्र-दत्त नन्द के शरीर में प्रवेश करके इस धनराशि को दान-रूप में देने के बाद पुनः अपने शरीर में आ जाय। योजनानुसार इन्द्रदत्त राजा नन्द के मृत शरीर में प्रवेश कर जाता है और व्याडि उसके व्यक्त शरीर की रक्षा करता है। वररूचि जीवित हुए छद्म नन्द से उक्त धन देने के लिए प्रार्थना करता है और वह धन उसे प्राप्त हो जाता है।[2]

हिन्दी के 'भक्तमाल' नामक ग्रन्थ में , शंकराचार्य के सम्बंध में यह आख्यान मिलता है कि 'एक समय शंकराचार्य जी से सेवरा आदिक प्रबल नास्तिक समूह शास्त्रार्थ में पराजित हो के, उनको बाल ब्रह्मचारी जान कामशास्त्र विषयक चर्चा करने लगे। शंकराचार्य जी ने इसके लिए कुछ समय मांगा और किसी राजा के मृतक शरीर में परकाय-सिद्धि के बल से प्रवेश कर गए तथा अपने शरीर की रक्षा करने को शिष्यों से कह गये। अवधि बीत जाने पर शिष्यों ने जाकर उन्हें प्रणाम किया, तब पर शरीर से कामशास्त्रीय अनुभव

1- महाभारत (छठा खण्ड), आश्रमवासिक (15वाँ पर्व), पृ0-6434

2- कथासरित्सागर (प्रथम खण्ड), प्रथम लम्बक, चतुर्थ तरंग, पृ0-49

प्राप्त करने के बाद, उन्होंने राजा के शरीर को छोड़कर पुनः अपने शरीर में प्राण प्रवेश कर लिए।'[1] ये दोनों ही वर्णन मृत व्यक्ति के शरीर में प्रवेश करने के उदाहरण हैं। इनमें कथासरित्सागर की वररूचि की कथा में नन्द का मंत्री शकटाल सन्देह होने पर राज्य के सभी शवों को जलवा देता है, जिससे इन्द्रदन्त को बाध्य होकर नन्द के शरीर में ही रहना पड़ता है, लेकिन भक्तमाल के वर्णन में शंकराचार्य को अपना पूर्व शरीर पुनः प्राप्त हो जाता है।

'वेताल-पच्चीसी' की तेईसवीं कथा में 'कलिंग देश में शोभावती नगर निवासी एक ब्राह्मण पुत्र देवसोम बहुत ही योग्य था। उसने सोलह वर्ष की अवस्था में ही सारी विद्याएं सीख ली थीं, लेकिन एक दिन दुर्भाग्य से वह मर गया। जब लोग उसे लेकर श्मशान में पहुँचे तो रोने-पीटने की आवाज सुनकर एक योगी अपनी कुटिया में से निकला जो पहले तो खूब जोर से रोया, फिर खूब हंसा। इसके बाद योग-बल से अपना शरीर छोड़कर उस देवसोम के मृत शरीर में प्रवेश कर गया, जिससे वह उठ खड़ा हुआ। उसे जीता देखकर सब बड़े खुश हुए।'[2] यहाँ पर परकाय-प्रवेश का प्रयोग एक ही साथ रोने व हँसने की गुत्थी सुलझाने के अभिप्राय के साथ हुआ है। कथासरित्सागर में 'परकाय प्रवेश के पूर्व रोने वाले तपस्वी की कथा' इसी कथा से मिलती है।[3]

'बहुकाय-प्रवेश' का उदाहरण कथासरित्सागर में वर्णित सूर्यप्रभ की कथा है, जिसमें राजा सूर्यप्रभ एक ही समय में अनेक शरीरों से, कई पत्नियों के साथ रमण करता है। कथा में, 'युवराज सूर्यप्रभ मयासुर के साथ पाताल-लोक में जाकर विद्याधर चक्रवर्ती

1- भक्तमाल, नाभाजी, टीका-प्रियादास जी, पृ0-318 से 320 तक

2- बेताल पच्चीसी , यशपाल जैन, पृ0-45 व 46

3- कथासरित्सागर (तृतीय खण्ड) , द्वादश लम्बक, तीसवीं तरंग, पृ0-545

के पद को प्राप्त करने वाली अनेक विद्याओं की सिद्धि प्राप्त करने के साथ विमान साधना की सिद्धि भी प्राप्त करता है तथा भूतासन नामक विमान का निर्माण करता है। तदनन्तर विमान द्वारा भिन्न-भिन्न देशों में जाकर सात राजकुमारियों - मदनसेना, चन्द्रिकावती, वरुणसेना, सुलोचना, विद्युन्माता, कान्तिमती एवं परपुष्टा को वरण करता है। तब सूर्यप्रभ ने उन उन कन्याओं को भी विद्याओं का उपदेश देकर और स्वयं विद्या के प्रभाव से अनेक देह धारण करके एक ही साथ सबके साथ रमण करता है पर अपने शरीर से अपनी मुख्य प्रिया ताम्रलिप्ती के राजा वीरभट की अद्वितीय सुन्दरीपुत्री मदनसेना के साथ रमण (विहार) करता है।[1]

'परकाय-प्रवेश' कथाभिप्राय से सम्बंधित लोककथाओं में, प्राय: नायक अथवा राजा परकाय-प्रवेश की विद्या को सीखता है तथा उसी के साथ उसका सेवक भी अनजाने में इस विद्या को सीखता जाता है। जब राजा मृत पक्षी में अपने प्राण की प्रतिष्ठा करता है, तब सेवक दुर्भाग्य के वशीभूत होकर अपने प्राण राजा के खाली पड़े शरीर में प्रविष्ट करा देता है। यह बात सर्वविदित नही होती, केवल रानी अथवा नायिका ही इसे जानती है तथा राजा को पुनः पूर्वरूप में लाने का प्रयत्न वह जारी रखती है। राजा के प्राण निहित पक्षियों को एकत्रित करने के दौरान रानी उस विशेष पक्षी को ढूँढ निकालती है, जिसमें राजा के प्राण निहित होते हैं। एक पक्षी के मर जाने पर वह छद्मवेशी राजा से उसमें प्राण डालने के लिए कहती है, जैसे ही सेवक अपने प्राण निकालकर उस जीवन में डालता है, राजा अपने प्राण पक्षी में से निकालकर पुनः अपनी काया में डाल लेता है तथा सेवक के प्राण निहित तोते की गर्दन मरोड़कर उसे मार डालता है। इस तरह राजा को अपना पूर्वरूप प्राप्त हो जाता है।

'बेताल-पच्चीसी' की कथा के समान लोककथाओं में भी इस अभिप्राय का प्रयोग 'हँसने व रोने' के कथाभिप्राय के साथ होता है। बुन्देली लोककथाओं के कहने में 'बुलाकी नाऊ की गा' प्रसिद्ध है जिसमें प्रायः एक ही साथ हँसने व रोने का अटका (कारण)

1- कथासरित्सागर (द्वितीय खण्ड), अष्ठम लम्बक, प्रथम तरंग, पृ0-237

पूछा जाता है , जिसके समाधान के लिए ही 'परकाय-प्रवेश' कथाभिप्राय से सम्बंधित कथा कही जाती है। लोककथाओं में इस कथाभिप्राय के दो प्रमुख उद्देश्य मिलते हैं। प्रथम उद्देश्य के अन्तर्गत नायक दयावश किसी मृतजीव को देख कर अपने प्राणों को मृतक की निर्जीव काया में डालता है; दूसरा उद्देश्य स्वार्थपूर्ति का है, जिसमें धूर्त व्यक्ति अपने व्यक्तिगत लाभ के लिए नायक के निर्जीव शरीर में प्रवेश कर जाता है। संयोग से, ये दोनों ही उद्देश्य प्रायः एक ही साथ घटित होते हैं।

'परकाय-प्रवेश ' बुन्देली लोककथाओं का एक महत्वपूर्ण अभिप्राय है। बुन्देली में प्रचलित राजा विक्रमादित्य व भोज से सम्बन्धित लोककथाओं में इस कथाभिप्राय का का प्रयोग अधिक मिलता है, जहाँ इसे 'पन्द्रहवीं विद्या' के सीखने के अभिप्राय के नाम से भी जाना जाता है। 'परकाय-प्रवेश'[1] नाम की ही एक बुन्देली लोककथा में ,'चौदह विद्या और चौसठ कलाओं के ज्ञाता राजा वीर विक्रमादित्य 'परकाय-प्रवेश' की विद्या से अनभिज्ञ है तथा इसे सीखने अपने ससुर जी के यहाँ जाते हैं। एकान्त में विद्या सीखने के दौरान ससुर जी के मना करने के बावजूद वे अपने साथ सेवा-टहल के लिए नाई को रखते हैं; विद्या सीखने के दौरान उसे दूर रखते हैं, फिर भी चोरी-छिपे नाई भी इस विद्या को सीखता जाता है। विद्या सीखने के बाद विक्रमादित्य अपने ससुर से विदा लेते हैं। ससुर उन्हें रास्ते में कहीं न ठहरकर सीधे महल पहुँचकर विश्राम करने की सलाह देते हैं। लेकिन आधी दूर तक आने के बाद राजा आम की छाया में विश्राम करते हैं। मौका पाकर नाई एक सुआ मारकर सोते हुए राजा के शरीर से प्राण निकालकर सूआ के शरीर में और अपने प्राण निकालकर राजा के शरीर में डाल देता है। राजधानी पहुँचकर छद्मवेशी राजा सीधे रनवास में प्रवेश करता है। चतुर रानी उसके अटपटे व्यवहार को ताड़ लेती है तथा राजा में उन्हें कोई छल नजर आता है। रानी एक वर्ष के लिए महादेव का व्रत लेकर राजा से दूर रहती है। एक दिन छद्मवेशी राजा विक्रम सुआ को समाप्त करने के उद्देश्य से डोड़ी पिटवाकर ऐलान करता है कि जो लोग सुआ पकड़ कर लावेंगे, उन्हें प्रत्येक सुआ एक

1- गौने की विदा, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-104-113 तक

रूपया ईनाम मिलेगा। इधर विक्रम सुआ उड़कर अपनी ससुराल के समीप पहुँचकर सुओं के झुण्ड में जा मिलता है। यह सुओं का झुण्ड एक किसान के खेत को काफी नुकसान पहुँचाता है, जिससे परेशान होकर किसान खेत के समीप वृक्षों पर चिपचिपा पदार्थ लगा देता है, जिसमें सभी सुए चिपक जाते हैं लेकिन विक्रम सुआ की चतुराई से सभी सौ सुअे बच जाते हैं। केवल विक्रम सुआ पकड़ा जाता है,जिसे वह किसान भूनकर खाना चाहता है, लेकिन विक्रम सुआ द्वारा घर की मालकिन को दो हजार मुहरें दिलवाने का वादा करने पर किसान उसे बाजार ले जाता है, जहाँ विक्रम सूआ द्वारा स्वयं अपनी कीमत बताने पर ससुर राजा उसे खरीद लेता है। एक प्रेत द्वारा बनिये की पत्नी को बनिये जैसा वेष बनाकर हड़पने की चाल को विक्रम सुआ अपनी बुद्धि से असफल करता है, जिससे उसकी धाक जम जाती है। कुछ दिन बाद, ससुर राजा अपनी दूसरी लड़की का विवाह छद्‌मवेशी राजा को राजा विक्रमादित्य समझकर तय करता है। नियत समय पर दरवाजे पर बरात आती है। विक्रम सुआ दूल्हा बने छद्‌मवेशी राजा की 'परकाय-प्रवेश' विद्या की परीक्षा लेने को कहता है। ससुर राजा के कहने पर छद्‌मवेशी राजा अपने शरीर से प्राण को निकालकर बकरे के मृतशरीर में डाल देता है। उसी समय विक्रम सुआ अपने प्राण दूल्हा बने राजा के शरीर में प्रवेश कराके कमर से तलवार निकाल के बकरे की गर्दन काट डालता है। जिससे छद्‌मवेशी राजा (नाई) की मृत्यु हो जाती है। ससुर राजा को सच्चाई मालूम पड़ने पर खुशी-खुशी अपनी छोटी लड़की का व्याह राजा वीर विक्रमादित्य से कर देता है।' इस तरह यह पूरी लोककथा 'परकाय-प्रवेश' के कथाभिप्राय को लेकर चलती है। इसमें खाली पड़े मानव के शरीर में प्राण-प्रवेश , पक्षी (तोता) एवं पशु (बकरा) के मृत शरीर में प्रवेश करने के उदाहरण मिलते हैं। इस कथा में राजा विक्रमादित्य 'परकाय-प्रवेश' की विद्या सीखने अपने ससुर के यहाँ जाते हैं तथा अपने शरीर को पुनः स्वयं के प्रयासों से प्राप्त करते हैं।

स्वयं संग्रहीत 'राजा जीत विकरमा'[1] की कथा में, 'राजा जीत विकरमा विद्या पढ़ने को काशी जाते हैं, साथ में अपनी सेवा के लिए नऊवा को भी लिए जाते हैं। राजा

1- राजा जीत विकरमा की कथा, कथक्कड़- अर्जुन सिंह, क्रमांक-3,स्वयं संग्रहीत कथा।

लकड़ी की पट्टी में लिखकर विद्या सीखते हैं, जिसको साफ करते समय नाऊ भी विद्या सीखता जाता है। विद्या सीखकर वापस आने पर रास्ते में नाऊ राजा को विद्या प्रदर्शन करने को उकसाता है। राजामृत पड़े तोते के शरीर में अपने प्राण प्रवेश कराता है। उसी समय धूर्त नाऊ अपने प्राण को खाड़ी पड़े राजा के शरीर में प्रवेश कराके स्वयं राजा बन जाता है। राजधानी पहुँचने पर रनिवास में भोजन करते समय छप्पन प्रकार के व्यंजनों को सामने देखकर वह सबको एक साथ मिलाकर खाता है, जिससे रानी को सन्देह हो जाता है । रानी सवा महीने का शंकर जी का व्रत रखकर छद्मवेशी राजा से दूर रहने का बहाना करती है। छद्मवेशी राजा सूआ पकड़कर लाने वाले को पाँच रूपए प्रति सुआ ईनाम की घोषणा करता है। सूआ बना राजा सौ सूओं के साथ बहेलिया द्वारा पेड़ में चिपचिपा पदार्थ लगाने पर चिपक जाते हैं, जिसमें राजा सुआ की बताई युक्ति से सौ सुअे तो बच निकलते हैं , लेकिन राजा सुआ बहेलिया के हाथों पड़ जाता है। राजा सुआ बहेलियाँ से राजा भोज की बाजार ले चलने को कहता है, जहाँ सुआ द्वारा अपनी कीमत स्वयं बताने पर राजा भोज उसे लाख टका देकर खरीद लेता है, लेकिन शर्त यह है कि जो काम किसी से न होगा वह मैं करूँगा। इधर, एक जैसी सूरत वाले दो व्यक्ति एक सुन्दर स्त्री के पति होने का दावा करते हैं, जिसका न्याय कराने के लिए राजा भोज के यहाँ पहुँचते हैं, जहाँ राजा सुआ अपनी बुद्धि-चातुर्य से निपटारा करता है। स्त्री उसके असली पति को प्राप्त होती है। राजा जीत विकरमा की रानी को यह सब मालूम होने पर नटों के द्वारा वह राजा सुआ को अपने पास मंगा लेती है। रानी बहेलिए के द्वारा एक बकरे को मरवा डालती है तथा छद्मवेशी राजा को अपने महल में बुलाकर अपनी विद्या का प्रदर्शन करने को कहती है । ज्यों ही छद्मवेशी राजा मृत बकरे के शरीर में प्रवेश करता है, उसी समय राजा जीत विकरमा अपने प्राण सूअे से निकालकर खाली पड़े शरीर में पुनः प्रवेश करा लेते हैं तथा तलवार निकाल बकरे का सिर काटकर दीवार में चुनवा देते हैं।'

इस कथा में राजा जीत विकरमा विद्या सीखने काशी जाते हैं तथा अपनी रानी के प्रयासों से अपना शरीर पुनः प्राप्त करते हैं। ध्यान देने योग्य बात यह है कि जहाँ 'परकाय-प्रवेश' की कथा में नाऊ राजा के सोये पड़े शरीर से प्राण निकालकर सूआ (तोता)

में प्रवेश कराके, तब अपने प्राण राजा के शरीर में प्रवेश करता है। वही इस कथा में, राजा स्वयं अपने प्राण सुआ के शरीर में प्रवेश कराते हैं, तब राजा के खाली पड़े शरीर में नाऊ अपने प्राण प्रवेश करा देता है। 'जलकन्या'[1] नामक बुन्देली लोककथा में 'परकाय-प्रवेश' की विद्या सीखने की जगह 'संजीवन गुटका' का उल्लेख मिलता है। लेकिन उसका कार्य पन्द्रहवीं-विद्या की तरह परकाय-प्रवेश ही है। इसमें नाऊ की जगह बुढ़िया का बेटा लेता है, जिसे राजा अपने स्पप्न को सच कर दिखाने के एवज में राज्य का मंत्री बना देता है। रास्ते में रानी के साथ यात्रा करने के दौरान एक सुआ मर जाता है, जिसे जिलाने के लिए राजा मंत्री से संजीवनी गुटका मंगाता है, रास्ते में मंत्री भी विद्या पढ़ लेता है तथा जब राजा अपने प्राण तोते में प्रवेश कराता है उसी समय वह राजा के खाली पड़े शरीर में प्रवेश कर जाता है। आगे की कथा उसी तरह से चलती है।

परकाय-प्रवेश से सम्बन्धित ब्रज की लोककथा 'राजा-भोज और चौदई विद्या'[2] में 'राजा भोज नट-नटिनी से चौदह-विद्याएं सीखने जाते समय रानी को, लौटकर तुरन्त जल न मांगने की पहचान बताकर अपने सेवक को साथ लेकर नटों के डेरे पर पहुँचते हैं। नटों के मना करने पर भी सेवक गुप्त रूप से सारी विद्याएं सीख लेता है। वापस लौटते समय मार्ग में मृत तोते को देखकर राजा परीक्षण हेतु अपने प्राण काया से निकालकर तोते के शरीर में डाल देते हैं। इसी समय, सेवक अपने शरीर में से प्राण निकालकर राजा की निर्जीव काया में डालकर महल पहुँचकर रानी से तुरन्त जल पीने को मांगता है। रानी समझ जाती है कि राजा के साथ छल हो गया है, परन्तु वह इस बात को गुप्त रखती है। एक सेठ के यहाँ राजा के प्राण-निहित तोते को क्रय कर लिया जाता है। अपनी अनेक लाभप्रद सलाहों से सेठ को लाभान्वित करवाकर तोता राजा सेठ को उसकी पुत्री का विवाह राजा भोज से करने की सलाह देता है। जब बरात राजा के यहाँ पहुँचती है तब सेठ तोते के कहने पर दूल्हे से सीखी गयी चौदह विद्याओं का प्रदर्शन करने के लिए

1- जलकन्या, हमारी लोककथाएं, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-8 से 41 तक

2- ब्रज की लोककहानियाँ, डा0 सत्येन्द्र, पृ0-34

कहता है। छद्मवेशी राजा एक बकरा मंगवाकर उसे मारकर अपने प्राण राजा भोज की काया से निकालकर बकरे में डालता है। इसी समय राजा तुरन्त तोते में से अपने प्राण निकालकर खाली पड़ी काया में डालकर अपना शरीर पुनः प्राप्त कर लेते हैं। सेवक को उसके किए की सजा मृत्यु का वरण करके मिलती है। ब्रज की यह लोककथा 'परकाय-प्रवेश' नामक बुन्देली लोककथा से मिलती-जुलती है। बुन्देली लोककथा में जहाँ राजा विक्रमादित्य जो चौदह विद्या एवं चौसठ कलाओं के ज्ञाता है, पन्द्रहवीं विद्या सीखने जाते हैं, वही ब्रज की लोककथा में राजा भोज क्रमशः चौदह विद्यायें ही सीखने नटों के पास जाते हैं, जिनमें से एक विद्या परकाय-प्रवेश की भी है। स्वयं संग्रहीत 'सधारी काका व ठाकुर'[1] की कथा में भी राजा विक्रमादित्य परकाय-प्रवेश की विद्या सीखने काशी जाते हैं तथा साथ में नाऊ को ले जाते हैं जो वापस आते समय छल से उनके शरीर में प्रवेश कर जाता है। आगे की कथा 'राजा जीत विकरमा' की कथा के समान है।

बुन्देली की प्रसिद्ध लोककथा'चतुर-चेला' [2] में 'हाथी बने चेले को पकड़ने के लिए साधु महावत बनकर अंकुश लेकर उसे बहुत कष्ट देता है। चेला आत्म-रक्षा के लिए अपने प्राण हाथी के शरीर से निकालकर मृत पड़ी गाय की देह में डाल देता है। साधु कसाई बनकर उसका पीछा करता है। चेला मृत पड़े सुअे में अपने प्राण डालकर उड़ जाता है तथा नगर में पहुँचकर राजकुमारी की बाँह में बैठता है, जिसे राजकुमारी पिंजरे में रख लेती है। साधु खेल दिखाने वाला बाजीगर बनकर राजा के दरबार में जाकर जादू का खेल दिखाता है तथा इनाम में बेटी के महल का सूआ मांगता है। बाजीगर के हाथमें पहुँचते ही सुए की गर्दन लटक जाती है तथा चेला अनार बनकर बेटी के फलों की टोकरी में जा बैठता है। दूसरे दिन बाजीगर फिर खेल दिखाता है तथा इनाम में बेटी के फलों के टोकरे में रखे उसी प्राण-निहित अनार को मांगता है। बेटी गुस्से में अनार बाजीगर के सामने फेंक देती है, जो जमीन पर गिरते ही दाने-दाने होकर बिखर जाता है। साधु

1- सधारी काका व ठाकुर की कथा (प्रथम), रघुवीर सिंह,-क्रमांक-6 (अप्रकाशित)

2- चतुर-चेला, पाषाण-नगरी, शिव सहाय चतुर्वेदी, पृ0-137

मुर्गा बनकर अनार के दाने चुगने लगता है। उसी समय अनारदाना उचटता है और पास में सो रही बिल्ली जागकर मुर्गे की गर्दन झपट लेती है, तुरन्त ही सभी को फर्श पर साधु की लाश पड़ी दिखती है।'

इस लोककथा में, परकाय-प्रवेश के कई रूप एक साथ मिलते हैं। जैसे- पशु (मृतगाय) , पक्षी (मृत तोता), फल (अनार) के शरीर में प्रवेश तथा सोई हुई बिल्ली के शरीर में प्रवेश करना। इन सबसे कथानक के घटनाक्रम में रोमांचकता एवं कौतूहल का समावेश होता है।

'परकाय-प्रवेश' की विद्या के द्वारा जड़पदार्थो में प्रवेश करने के भी वर्णन मिलते हैं। 'कथासरित्सागर' में निश्चयदत्त एवं विद्याधरी अनुरागपरा की कथा के अन्तर्गत, 'विद्याधरी अनुरागपरा महाकाल की पूजा करने जाती है तथा रास्ते में खम्भे पर खुदी हुई पार्वती की मूर्ति देखती है। उस मूर्ति में पार्वती का वास समझकर विद्याधरी उसी खम्भे में अदृश्य रूप से प्रवेश कर जाती है। इतने में ही निश्चयदत्त वहाँ पहुँचकर प्रतिदिन की तरह शरीर पर चन्दन का लेप करके खम्भे की दूसरी ओर पीठ रगड़ना आरम्भ कर देता है,जिससे मोहित होकर खम्भे में स्थित विद्याधरी अन्दर से ही हाथ फैलाकर स्नेह से उसकी पीठ मलने लगती है। निश्चयदत्त द्वारा उसका हाथ पकड़कर बाहर आने के लिए कहने पर वह खम्भे से निकलकर उसके सामने प्रत्यक्ष आकर खड़ी हो जाती है।'[1]

इसी तरह 'कथासरित्सागर' में 'राजा विक्रमादित्य बेताल के साथ विश्वकर्मा द्वारा निर्मित अलौकिक एवं कुतूहल जनक देवालय में पहुँचते हैं, जहाँ एक विशाल शिवलिंग की जगमगाते दीपों से आरती व पूजा की जा रही थी। वहाँ गाने के साथ चारों प्रकार के बाजों पर स्वर्गीय श्रेष्ठ रमणियाँ देर तक नाचती रही। आरती के अन्त में वे नर्तकियाँ

1- कथासरित्सागर (द्वितीय खण्ड), सप्तम लम्बक, तृतीय तरंग, पृ0-45

मन्दिर के स्तम्भों में बनी हुई मूर्तियों के भीतर घुसकर लीन हो गयी और गाने बजाने वाले पुरुष भी भित्ति चित्रों में अंकित पुरुषों में लीन हो गये।'[1] ये दोनों उदाहरण जड़-पदार्थो में प्रवेश से सम्बन्धित है जिनमें प्रवेश करने वाले का शरीर अदृश्य रहता है।

स्वयं संग्रहीत 'प्रेत की सच्ची कथा'[2] में 'ग्राम कपसा, जिला-हमीरपुर (उ0प्र0) निवासी भरोसी तेली, जो कि तंत्र-मंत्र का जानकार भी था, की मृत्यु के बाद उसे मरघट में ले जाकर पड़ोसी लोग जला देते हैं। रात को खपटिया, जिला बाँदा (उ0प्र0) के कुछ ओझा लोग उसे जगाकर ले गये; वह बहुत चिल्लाया पर उसके परिवार का कोई सदस्य वहाँ मौजूद नही था, अतः वह छूट न सका। लेकिन वह पूर्व में तंत्र-मंत्र का जानकार होने के कारण कुछ दिनों बाद वहाँ से अपने को छुड़ाकर भाग आया और अपने घर के बगल में रह रहे व्यक्ति की औरत के ऊपर सवार होकर उसे परेशान करने लगा तथा कहा कि मेरा रूपया वापस कर दो, जिसे तुमने मेरे सूने मकान से निकाल लिया है। मृत भरोसी के भूत ने पड़ोसी व्यक्ति के कोल्हू पर सवार होकर उससे तेल का निकलना भी बन्द कर दिया। बहुत ज्यादा परेशान होने पर पड़ोसी व्यक्ति ने रूपया वापस करना स्वीकार कर लिया तथा रात में उसके मकान में जाकर रूपया रख आया। अब भरोसी का भूत अपने भानजे के लड़के के ऊपर सवार होकर उससे कहा कि तुम मेरी 'गया' कर दो। उसने कहा कि मेरे पास रूपया नही है तो भूत ने रूपया देने को कहा तथा उसे अपने मकान में लाकर जमीन में गड़ा रूपया बता दिया। जमीन खोदने पर एक घड़ा दिखलाई दिया, जिस पर पक्षी की बलि देने पर वह बाहर निकल आया। भरोसी भूत ने भानजे के लड़के से कहा कि इससे जितना रूपया खर्च हो निकालते जाना, गया करके वापस आने पर नदी में फेंक देना ; ऐसा ही होने पर वह प्रेत-योनि से मुक्त हो गया।' इस कथा में प्रेत जीवित मानव तथा जड़पदार्थ (कोल्हू) में प्रवेश करता है।

1- कथासरित्सागर (तृतीय खण्ड), अष्टादश लम्बक, चतुर्थ तरंग, पृ0-1147

2- 'प्रेत की सच्ची कथा', कथक्कड़-देवीदीन, संग्रह क्रमांक-25 (अप्रकाशित)

जहाँ इस कथा में 'गया-धाम' में पिण्डदान होने से भरोसी तेली को प्रेतयोनि से मुक्ति मिलती है; वही 'श्रीमद्भागवत-कथा' का श्रवणमात्र करने से धुंधुकारी को प्रेत-योनि की पीड़ा से मुक्ति मिल गयी थी। कथा के अनुसार 'तीर्थाटन से लौटकर पूर्व की भाँति यज्ञ-पूजन आदि में व्यस्त गोकर्ण के समक्ष रात्रि के समय प्रेत-योनि में भटक रहा उसका भाई धुंधकारी उपस्थित होता है तथा उनसे इस योनि से मुक्ति दिलवाने की प्रार्थना करता है। धुंधकारी अपने कुकर्मो के कारण ही मारा गया था और भयंकर प्रेत बन गया था। गोकर्ण भगवान सूर्य का आवाहन करते हैं, जो उनसे श्रीमद्भागवत कथा का सप्ताह-परायण करने को कहते हैं, जिसको सुनने से प्रेत योनि से मुक्ति मिलेगी। तुंगभद्रा नदी के तट पर गोकर्ण कथा-वाचक के आसन पर आसीन होते हैं। धुंधुकारी का प्रेत भी वहाँ आ पहुँचा लेकिन भक्तों की भीड़ में अपना कोई स्थान न पाकर पास पड़े हुए सात गांठों वाले बांस के नीचे एक छिद्र में वायुरूप धारण कर छुपकर बैठ गया और एकाग्र होकर कथा सुनी। सांझ घिर आयी, कथा को विश्राम देने का क्षण आ चुका तभी अचानक तड़-तड़ की आवाज हुई सभी ने चौंककर देखा कि बाँस की गाँठ फट गयी है। यह क्रम निरन्तर सात दिन , कथा समाप्ति तक चलता रहा तथा प्रतिदिन सायंकाल कथा समाप्ति के समय उसी बाँस से एक गाँठ टूट जाती है और क्रम से सातों गाँठें चटककर टूट गयीं। अन्तिम दिन, सातवीं गाँठ के टूटते ही साक्षात् प्रेत पुरुष प्रकट हुआ तथा भ्राता गोकर्ण के चरणों में प्राण-भाव से झुक गया।'[2] इस पुराण कथा में जड़ पदार्थ (बाँस) में प्राण-प्रवेश दिखलाया गया है। भूत-प्रेत आदि के द्वारा जीवित व्यक्ति की काया में प्रवेश मुख्यत: लोक-विश्वास पर आधारित है। लोक-जीवन में ऐसा माना जाता है कि जिन व्यक्तियों की अकाल या अपमृत्यु हो जाती है उनकी आत्मा प्रेत बनकर भटकती रहती है तथा कभी-कभी किसी जीवित व्यक्ति में ही प्रवेश कर जाती है। इस स्थिति की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि जिसका प्रेत किसी व्यक्ति पर चढ़ता है, उस क्षण उस व्यक्ति का अपना व्यक्तित्व समाप्त हो

1- भागवत कथा , सूरजमज मेहता, पृ0 22 से 26 तक

हो जाता है तथा उसमें भूत के व्यक्तित्व का आधिपत्य रहता है। कभी-कभी प्रेत की आत्मा मृत व्यक्ति की काया में भी प्रवेश कर जाती है इसीलिए मृत व्यक्ति के शरीर को अकेला नही छोड़ा जाता। उसकी अन्त्येष्टि भी यथासम्भव शीघ्र करने का प्रयत्न किया जाता है। 'बेताल-पच्चीसी' की कथा में 'राजा विक्रम योगी के कहने पर श्मसान में मुर्दा लेने जाते हैं, वहाँ जाकर देखते हैं कि सिरस के पेड़ पर रस्सी से बँधा मुर्दा लटक रहा है। राजा पेड़ पर चढ़कर तलवार से रस्सी काट देते हैं जिससे मुर्दा नीचे गिर पड़ा। और दहाड़ मार-मार कर रोने लगा। राजा के पूछने पर वह हँसा, इस पर राजा को बड़ा आश्चर्य हुआ। तभी वह मुर्दा फिर पेड़ पर जा लटका। राजा पुनः पेड़ पर चढ़कर रस्सी काट दी तथा मुर्दा को बगल में दबाकर नीचे आया और पूछा कि तू कौन है? मुर्दा चुप रहा। राजा उसे कंधे पर रखकर योगी के पास ले चला। रास्ते में मुर्दा बोला कि मैं बेताल हूँ, राजा द्वारा भी अपना परिचय देने पर उसने शर्त रखी कि अगर तुम रास्ते में बोले तो मैं लौटकर पेड़ से जा लटकूँगा।'[1] इस तरह 'परकाय-प्रवेश' कथाभिप्राय का प्रयोग अत्यंत रुचिकर रूप में हुआ है।

लोककथाओं की संरचना में 'परकाय-प्रवेश' कथाभिप्राय की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। कभी-कभी इससे एक पूरी कथा ही निर्मित हो जाती है। यथा 'एक ही साथ हँसने व रोने' के अभिप्राय की गुत्थी सुलझाने के लिए इस कथाभिप्राय से एक पूरी कथा ही निर्मित कर ली जाती है। मंत्र-तंत्र की लड़ाई से सम्बन्धित कथाओं में यह कथाभिप्राय रूप परिवर्तन के अभिप्राय के साथ-साथ कथा के निर्माण में सहायक होता है। इस कथाभिप्राय का प्रयोग कथा को आगे बढ़ाने के लिए भी होता है। राजा विक्रमादित्य व राजा भोज की इस कथाभिप्राय से सम्बन्धित कथाओं में जब राजा सकुशल इस विद्या को सीखकर वापस आ रहा होता है, तभी मार्ग में परकाय-प्रवेश की घटना घटित होती है, इससे कथा क्रमशः आगे बढ़ने लगती है। राजा के साथ छल होता है और उसका सेवक छद्मवेशी राजा बन

1- बेताल-पच्चीसी, यशपाल जैन, पृ0-7 व 8

बैठता है। यहाँ सेवक को दुष्ट एवं स्वार्थी प्रवृत्ति का दिखाया जाता है जो अपने निजी लाभ के लिए राजा के साथ छल करता है। लेकिन अंत में उसे मृत्यु का वरण करना पड़ता है जो उसके बुरे कर्मों का फल है।

'परकाय-प्रवेश' कथाभिप्राय से सम्बन्धित लोककथाओं के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि इस विद्या को सम्पन्न करने में प्रायः पुरुष पात्रों को ही प्रयोग में लाया गया है। इस विद्या को महिला पात्रो द्वारा सम्पन्न करते हुए नही दिखाया गया बल्कि वे इस विद्या के द्वारा नायक के अपने शरीर को पुनः प्राप्त करने में सहायता करती है। इसके पीछे यह मान्यता हो सकती है कि शारीरिक संरचना में कोमल होने के कारण वे इस साधना के कठिन उपायों और क्रियाओं को करने में समर्थ नही हो सकती है। इसके मूल में नैतिक वर्जना भी होगी। भारतीय नैतिक मर्यादाओं के अनुसार स्त्री का पुरुष शरीर में प्रवेश अथवा पुरुष का स्त्री शरीर में प्रवेश नारी पवित्रता की दृष्टि से मान्य नही हो सकता था। अतः इसके लिए पुरुष पात्रों को ही उपयुक्त माना गया।

'परकाय-प्रवेश' करने के माध्यमों के रूप में तोते और बकरे का प्रयोग लोककथाओं में अधिक मिलता है। इनमें से तोते में सकल शास्त्रार्थवेत्ता होने की सम्भावना के रहते उसे इस कार्य के लिए सर्वथा उपयुक्त माना गया है। इसके अतिरिक्त तोता मनुष्य को बोली बड़ी आसानी से बोल व समझ सकता है, जिसके चलते उससे संवाद स्थापित करके कथा को अपनी निष्पत्ति में पहुँचाने में सहायता मिलती है। बकरे का प्रयोग कथा के अंत में नायक को अपना शरीर पुनः प्राप्त कराने के उद्देश्य से होता है। इसके मूल में जन सामान्य में प्रचलित बकरे की बलि की प्रथा निहित है। आत्मकल्याण के लिए बकरे की गर्दन काटकर उसकी किसी देवी-देवता के समक्ष बलि चढ़ाई जाती है। लेकिन लोककथाओं में बकरे की बलि का प्रयोग दुष्ट पात्र को उसके किए की सजा देने के उद्देश्य से होती है।

****ररर

****

अध्याय-चार

'प्राणों की अन्यत्र स्थिति'-

1- **शरीर के बाहर प्राणों की स्थिति**

(जीवन-निमित्त या प्राण-प्रतीक)

(क) चेतन प्राणियों में- पक्षी (तोता-मैना, मुर्गी, बुलबुल), कीट (मेढ़क)

(ख) जड़ पदार्थों में- पर्वत, यंत्र, सिन्दूर - की डिब्बी, पौधा, फूल, तेगा, तलवार

2- **शरीर में प्राणों की स्थिति (प्राणमय-अंग)**

हाथ में स्थित छिद्र, नाभि, जाँघ।

****

इस कथाभिप्राय के अनुसार, किसी व्यक्ति के प्राण या जीव उसके शरीर के बाहर की किसी वस्तु या प्राणी में अथवा उसके शरीर के भीतर किसी अंग में बस सकते हैं और वह व्यक्ति तभी मर सकता है जब उसके प्राणों या जीवन का आधार वह वस्तु नष्ट हो जाय। प्राण या जीव शरीर को छोड़कर जिस किसी वस्तु या प्राणी में निवास करता है उसे 'जीवन-निमित्त-वस्तु' अथवा 'प्राण-प्रतीक' (Life Index) कहा जाता है, इसीलिए इस कथाभिप्राय को जीवन-निमित्त-वस्तु या प्राण-प्रतीक के नाम से भी जाना जाता है। पेंजर ने इसे 'बाहरी-आत्मा' (External Soul) का अभिप्राय नाम दिया है।[1]

शरीर के किसी विशेष भाग में प्राण या जीव के निवास करने के अभिप्राय को भी इसी के अर्न्तगत लिया जाता है ; जिसके अनुसार प्राणों की स्थिति शरीर के किसी विशेष अंग में भी हो सकती है, जिसमें व्यक्ति के शरीर का वह अंग 'प्राणमय-अंग' माना जाता है, जिसका तात्पर्य यह है कि जब तक उस अंग का नाश नही किया जाय तब तक वह व्यक्ति अमर बना रहता है। इसे प्राणमय-अंग का अभिप्राय नाम दिया जा सकता है, जहाँ प्राण शरीर के किसी विशेष अंग में सुरक्षित रहते हैं।

'प्राणों की अन्यत्र स्थिति' कथाभिप्राय आदिम मानव के इस विश्वास पर आधारित है कि मानव आत्मा अथवा प्राण (जीव व चेतना प्रदान करने वाली संज्ञा) शरीर से बाहर रहते हुए भी मृत्यु का कारण नही बन सकता, वरन् जीवन की सुरक्षा के लिए ही किसी सुरक्षित स्थान पर प्राण रखे जा सकते हैं। शरीर से प्राणों को बाहर रखने में खतरा भी रहता था, क्योंकि विरोधीजन इसे नुकसान पहुँचा सकते थे, इसलिए इस रहस्य को गुप्त रखा जाता था। लेकिन इस विश्वास का एक दूसरा रूप भी है कि यदि एकमात्र प्राणों की सुरक्षा से ही जीवन की अवधि बढ़ायी जा सकती है, तो क्यों न उन्हें किसी सुरक्षित

1- The Ocean of Story, Penzer, Vol.I, Page- 129.

स्थान पर शरीर से बाहर रख दिया जाय, क्योंकि मानव मन में जीवन के प्रति विशेष मोह होता है। यही कारण है कि आदिम युग में प्राणों को शरीर से बाहर सुरक्षित रखने की कल्पना दृढ़ विश्वास के रूप में विकसित हुई।

आदिम मानव का यह भी विश्वास था कि जब तक प्राण शरीर से अलग रहकर या शरीर के ही किसी विशेष अंग में सुरक्षित है, तब तक मनुष्य अच्छी तरह से रह सकता है। प्राण को चोट पहुँचाने से ही शरीर को चोट पहुँच सकती थी अथवा प्राण नष्ट होने पर ही मृत्यु संभाव्य थी। दूसरे शब्दों में इसे यो कहा जा सकता है कि जब प्राण दुखी होता था तभी मनुष्य भी दुखीं होता था और उसके नष्ट होते ही मृत्यु हो जाती थी। इसीलिए आदिम मानव विपत्तियों के समय, अपने प्राणों को एक सुरक्षित स्थान में रखने में ही अपनी कुशल समझता था। विपत्तियों के समाप्त होने पर पुनः शरीर में प्राण लौटा लाना कोई बड़ी बात नहीं थी। इससे यह लाभ होता था कि जब तक आत्मा (प्राण) सुरक्षित रहती थी, वह व्यक्ति अमर बनकर जीता था। लेकिन यह बात यथार्थ पर आधारित न होकर एक मात्र आदिम-विश्वासों की है।

इस कथाभिप्राय से सम्बन्धित कथाओं की परम्परा महाभारत, कथासरित्सागर, रामचरितमानस में प्राप्त होती है। 'महाभारत' में वर्णित एक कथा के अनुसार- 'प्राचीन काल में बालधि नाम के एक शक्तिशाली मुनि थे। उन्होंने पुत्र शोक से संतप्त होकर अत्यंत कठोर तपस्या की, जिसका उद्देश्य देवोपम पुत्र प्राप्त करना था। अपनी इस अभिलाषा के अनुसार बालधि को देवताओं की कृपा अवश्य प्राप्त हुई परन्तु देवों ने उनके पुत्र को देव-तुल्य नहीं बनाया और वरदान देते हुए कहा कि मरणधर्मा मनुष्य कभी देवता के समान अमर नहीं हो सकता। अतः उसकी आयु निमित्त (कारण के) अधीन होगी। इस पर बालधि बोले कि हे देववरों जैसे ये पर्वत सदा अक्षय भाव से खड़े रहते हैं, वैसे ही मेरा पुत्र भी सदा अक्षय बना रहे। ये पर्वत ही उसकी आयु के निमित्त हो अर्थात जब तक ये पर्वत यहाँ बना रहे तब तक मेरा पुत्र भी जीवित रहे। तदनन्तर बालधि के यहाँ पुत्र का जन्म हुआ जो मेधायुक्त होने के कारण मेधावी नाम से विख्यात था। वह स्वभाव का बड़ा क्रोधी

था। अपनी आयु के विषय में देवताओं के वरदान की बात सुनकर मेधावी घमण्ड में भर गया और ऋषियों का अपमान करने लगा। इतना ही नहीं, वह ऋषि-मुनियों को सताने के उद्देश्य से ही इस पृथ्वी पर सब ओर विचरा करता था। एक दिन मेधावी महान् शक्तिशाली एवं मनीषी धनुषाक्ष के पास जा पहुँचा और उनका तिरस्कार करने लगा। तब तपो-बल सम्पन्न ऋषि धनुषाक्ष ने उसे शाप देते हुए कहा कि तू जलकर भस्म हो जा। परन्तु इस शाप का मेधावी पर कोई असर नही पड़ा। शक्तिशाली धनुषाक्ष ने ध्यान में देखा कि मेधावी रोग एवं मृत्यु से रहित है, तब उन्होंने उसकी आयु के निमित्त-भूत पर्वतों को भैंसों द्वारा विदीर्ण करा दिया। निमित्त-रूपी पर्वतों का नाश होते ही उस मुनिकुमार मेधावी की सहसा मृत्यु हो गयी।'[1] यह कथा जीवन-निमित्त के शरीर के बाहर जड़-पदार्थों में स्थित होने का उदाहरण है।

'कथासरित्सागर' की एक कथा के अनुसार, 'उज्जयिनी में महेन्द्रवर्मन का प्रपौत्र महासेन नाम का एक राजा था, जो दुर्गा की प्रचण्ड तपस्या करने के कारण चण्डमहासेन के नाम से जाना जाता था। एक दिन राजा चण्डमहासेन शिकार के लिए जंगल गया, जहाँ उसने एक शूकर पर वाण चलाये किन्तु उनके वाणों का शूकर पर कोई प्रभाव नही पड़ा। शूकर दौड़कर एक गुफा में प्रविष्ट हो गया; राजा ने उसका पीछा किया, चलते-चलते एक शहर में पहुँचा और एक झील के किनारे बैठ गया। वहाँ उसने एक सुन्दरी को देखा, जिसने उसे बतलाया कि वह शूकर वास्तव में एक राक्षस है, अब वह अपनी गुफा में विश्राम कर रहा है, किन्तु नींद से जागते ही वह तुम्हें खा जायेगा। इस सुन्दरी का नाम अंगारवती था, जो उसी राक्षस की पुत्री थी। वह चण्डमहासेन से प्रेम करने लगी। चण्डमहासेन के कहने पर उसने अपने पिता से उसकी मृत्यु का रहस्य पूछा। उस असुर ने उत्तर दिया कि मेरा सारा शरीर वज्र का है, केवल मेरे बायें हाथ में एक छिद्र सुरक्षित नहीं है, किन्तु उसे मैं धनुष से सुरक्षित रखता हूँ। चण्डमहासेन ने राक्षस के बायें हाथ पर स्थित उस छिद्र

1- महाभारत (द्वितीय खण्ड), वन पर्व, पृष्ठ- 1329

पर प्रहार किया जिससे उसकी मृत्यु हो गयी। असुर की मृत्यु के बाद उसने अंगारवती से विवाह कर लिया'।[1] यहाँ पर राक्षस के बायें हाथ में स्थित एक छिद्र को 'प्राणमय-अंग' माना गया है।

इसी तरह 'रामचरित-मानस' में रावण के प्राण का निवास उसकी नाभि में स्थित था। उसकी नाभि में अमृत था और जब तक विभीषण की सूचना पर राम अपने वाणों द्वारा उस अमृत का शोषण नही कर लेते, तब तक रावण की मृत्यु नही होती है।[2] महाभारत में, दुर्योधन की मृत्यु उसकी जाँघ में गदा-प्रहार के उपरान्त ही होती है। क्योंकि माता गान्धारी के वरदार के कारण दुर्योधन का पूरा शरीर वज्र का हो गया था, जिस पर भीम की गदा प्रहार का कोई असर नही हो रहा था।

लोककथाओं में , इस कथाभिप्राय का प्रयोग प्रायः 'उजाड़ नगर में राक्षस और सुन्दरी' की रूढ़ि के साथ कथा को आगे बढ़ाने वाले अभिप्राय के रूप में प्रयुक्त होता है। जिसमें एक जादूगर, दानव अथवा परीदेश का कोई जीव अविजेय और अमर होता है, क्योंकि वह अपनी आत्मा (प्राण या जीव) को किसी गुप्त स्थान में सुरक्षित रखता है। लेकिन एक सुन्दर राजकुमारी जिसे वह अपने महल में कैद रखता है, उससे गुप्त स्थान का पता पूछकर नायक को बलता देती है। नायक अनेक कठिनाइयों को पार करते हुए उस गुप्त स्थान से प्राण-प्रतीक वस्तु, जिसमें उस अविजेय जीव की आत्मा रखी होती है, को प्राप्त कर लेता है, जिसको नष्ट करके उस अमर जीवन को समाप्त कर देता है और राजकुमारी को प्राप्त कर लेता है।

1- कथासरित्सागर (प्रथम खण्ड) , द्वितीय लम्बक, तृतीय तरंग, पृ0-167 व 169

2- 'नाभि कुंड पियूष बस याके। नाथ जियत रावन बल ताके।

सुनत विभीषन बचन कृपाला। हरषि गहे कर बान कृपाला।

सायक एक नाभि सर सोखा। - रामचरित-मानस (लंकाकाण्ड)

'जैसी करनी वैसी भरनी'[1] बुन्देली लोककथा में 'दो राजकुमार एक ऐसे सुनसान उजाड नगर में पहुँचते हैं, जिसके राजा-रानी को एक डायन खा गयी होती है। उनकी सोलह वर्ष की सुन्दर राजकुमारी को डायन ने कैद में रखा है। राजकुमारी इन दोनों राजकुमारों को सावधान करके पीपल के पत्तों के ढेर में छिपा देती है। डायन वापस आकर पूछती है कि मुझे यहाँ पर मानुष की गंध आ रही है, क्या कोई आदमी आया था? राजकुमारी कहती है कि तेरे कारण तो बारह कोस तक का कोई मनुष्य नही बचता, मेरे शरीर से गंध निकलती होगी, मुझे ही खा ले। डायन राजकुमारी से खाना-खाने को कहती है, तो राजकुमारी कहती है कि 'मुझी भूख नही है। तू रोज मुझे अकेली छोड़कर चली जाती है। किसी दिन, अगर तुझे कुछ हो गया तो मैं क्या करूँगी। तेरा मुँह भी न देख पाऊँगी'। इतना कहकर राजकुमारी रोने लगती है; इस पर डायन उसे समझाती है कि 'तू चिन्ता न कर, मुझे कोई नही मार सकता है। कोई मेरे शरीर के टुकड़े-टुकड़े भी कर दे तो भी मैं नहीं मर सकती हूँ। मेरा जी उस बीच के कोठे में, जिसमें बजर-किवाड़ लगे हैं। एक बड़ा सन्दूक है, सन्दूक के भीतर दूसरा चाँदी का सन्दूक है, उसके भीतर लोहे का एक बड़ा यंत्र है। कोई मनुष्य उस यंत्र को तोड़ डाले तभी मैं मर सकती हूँ। वह यंत्र ऐसा है कि संदूक खोलते ही उसे चपेटकर चटनी बना देता है।' सुबह होने पर जब डाइन उड़न खटोले में बैठकर बाहर चली गयी तब राजकुमारी से डाइन के मरने की कुंजी जानकर दोनों भाई उस बीच के कोठे के सामने पहुँचे। एक भाई ने तलवार से ताला काटा, दूसरे ने घनों की चोट से बजर-किवाड़ फाड़ डाले, कोठा खुल गया। फिर इसी तरह संदूकों को तोड़ा, संदूक टूटते ही दोनों भाइयों ने बड़ी सावधानी से यंत्र के दोनों डंडों को जोर से पकड़ लिया, जिससे यंत्र घूमने न पावे, राजकुमारी ने उसकी कील खोल दी, फिर क्या था हथौड़ों की चोट से यंत्र तोड़-फोड़कर फेंक दिया गया। इसी समय उड़न-खटोले के आने की घरघराहट सुनाई दी, डाइन खटोले से उतरकर गिरती-पड़ती, चीखती-चिल्लाती आयी और कोठे की देहली के पास आकर धड़ाम से गिर पड़ी, उसके प्राण-पखेरू उड़ गये।'

1- जैसी करनी वैसी भरनी, शिव सहाय चतुर्वेदी, पृ0-9 से 17 तक

इसी तरह 'हंसता रोता मोर'[1] नामक ब्रज की लोककथा में, 'प्राण-निहित' वस्तु का ज्ञान नायक को दैत्यराज की राजकुमारी के द्वारा होता है। राजकुमारी नायक के प्रति आकृष्ट होकर, दैत्यराज के आने पर उसे खूब शराब पिलाकर फिर बड़े प्यार से पूछती है कि पिताजी आप बुढ्ढे होते जा रहे हैं, अगर आपको कुछ हो गया तो अकेली मैं यहाँ कैसे रहूँगी। इस पर दैत्य हँसते हुए कहता है कि 'पगली मेरी जिन्दगी को कोई खत्म नही कर सकता है। अपने पीछे वाले बगीचे में जो फुब्बारा है, उस पर एक सफेद मोर बैठा है, उस मोर को वहाँ से हटाने पर एक टोटी दिखायी देती है, उस टोटी के अन्दर एक मेढ़क बैठा है, बस उसी मेढ़क में मेरी जान है। दूसरे दिन सुबह राजकुमार दैत्य के बाहर जाते ही बगीचे में पहुँचाता है, पहले तो वह फुब्बारे पर बैठकर सफेद मोर को प्यार से नीचे उतारता है, उसके नीचे की टोटी खोलने पर मेढ़क उछलता हुआ बाहर निकल जाता है, जिससे बड़े जोर की आँधी शुरू हो जाती है व दैत्य राजकुमार की ओर दौड़ता हुआ आता है। राजकुमार मेढ़क की एक टाँग तोड़ देता है, जिससे दैत्य लुढ़कता हुआ राजकुमार की ओर बढ़ता है। राजकुमार तुरन्त मेढ़क की गर्दन मरोड़ देता है, जिससे दैत्यराज कराहता हुआ जमीन पर गिरकर खत्म हो जाता है। जैसी करनी वैसी भरनी लोककथा में जहाँ जड़-पदार्थ (यंत्र) को प्राण प्रतीक के रूप में प्रयोग किया गया है, वही इस लोककथा में चेतन-पदार्थ (मेढ़क) को लिया गया है, लेकिन दोनों का उद्देश्य एक ही है।

'बेताल रानी'[2] नामक राजस्थानी लोककथा में, 'राजा पृथ्वी सिंह की बेतालिन रानी अपने सौत के लड़के को मरवा डालने के उद्देश्य से मृत्युघाटी में उगने वाला फूल लेने भेजती है, साथ में अपनी माँ को देने के लिए बेताल भाषा में लिखा हुआ मृत्यु-पत्र

1- पुष्प की जड़ हरी, आदर्श कुमारी, पृ0-66 से 68 तक

2- भाग्य की बलिहारी, लक्ष्मी निवास बिड़ला, पृ0-56 से 65 तक

भी भिजवाती है। लेकिन राजकुमार की दैत्यराज की पुत्री-पत्नी उस पत्र को पढ़कर उसकी भाषा बदल देती है। राजकुमार मृत्युघाटी में पहुँचकर दैत्यों की माता को बेताल रानी का पत्र देता है, जिससे उसने राजकुमार को अपना नाती समझकर बड़े प्रेम से रखा। एक दिन राजकुमार के पूछने पर उसने बताया कि इस दरवाजे के पीछे एक बड़ा तालाब है, उसके बीच में एक पेड़ है, उस पर कई पिंजड़े हैं, जिनमें तोते और मैना है। प्रत्येक तोते में एक-एक दैत्य के और प्रत्येक मैना में एक-एक दानवी के प्राण हैं तथा सबसे छोटी मैना में उसकी माता यानि बैतालिन रानी के प्राण है। दूसरे दिन सभी के चले जाने पर राजकुमार ने वह दरवाजा खोला, जहाँ बड़ा तालाब था, जिसके बीचों-बीच बरगद का पेड़ था, उस पर कई पिंजड़े लटक रहे थे। राजकुमार ने पेड़ पर से सबसे छोटी मैना का पिंजड़ा उतार लिया फिर कुल्हाड़ी लेकर पेड़ की डाल काट डाली, जिससे डाल पानी में गिर पड़ी व सारे पिंजड़े डूब गये तथा तोते-मैना सभी मर गये। इसके बाद राजकुमार छोटी मैना का पिंजड़ा लिए सीधे दरबार में पहुँचा तथा राजा को चमत्कार दिखाने को कहते हुए पिंजड़े में से मैना को बाहर निकाल लिया। उसी समय बेताल रानी दौड़ती हुई वहाँ आयी, राजकुमार ने मैना की गर्दन मरोड़ दी, जिससे बेताल रानी निर्जीव होकर जमीन पर गिर पडी'।

इसी तरह , स्वयं संग्रहीत 'डाइन की कथा'[1] में 'एक डाइन मोहिनी वेश धारण करके राजा की आठवीं रानी बनकर महल में आती है और षडयंत्र करके राज की सातों रानियों को निष्कासित करवा देती है। इन्हीं रानियों में से छोटी रानी का पुत्र दरबार में पहुँचता है। डाइन उसको पहचान देती है और मारने के लिए मृत्यु-पत्र के साथ उसको अपने देश में भेजती है। लेकिन रास्ते में साधु द्वारा मृत्यु-पत्र बदल देने के कारण वहाँ डाइन की माता और भाई राजकुमार को डाइन का पुत्र समझकर स्नेह से रखते हैं। एक दिन डायन के भाई से पूछने पर वह बताता है कि सात समुद्र पार एक बरगद के वृक्ष पर दो पिंजड़े टंगे हुए हैं, जिनमें से एक में तोता है जिसमें उसके प्राण है तथा दूसरे में मुर्गी है जिसमें डाइन के प्राण हैं। राजकुमार तोते को मारकर तथा मुर्गी का पिंजड़ा लेकर साधु के पास पहुँचता है। साधु को साथ लेकर राजकुमार दरबार में जाकर राजा के समक्ष मुर्गी को मारकर डाइन की वास्तविकता प्रकट कर देता है।

1- डाइन की कथा, कथक्कड़- देवीदीन, संग्रह क्रमांक-33 (अप्रकाशित)

स्वयं संग्रहीत 'अंधरी का बेटा'[1] बुन्देली लोककथा में 'राजा बाजार से राक्षसी की मूर्ति खरीदता है, जो राजा की तीनों रानियों की आँखें निकलवाकर उन्हें कुअे में फिकवा देती है। छोटी रानी गर्भवती थी, जिसके एक पुत्र पैदा हुआ। बड़ा होने पर जब उसे वास्तविकता मालूम हुई तो वह राजा के दरबार में पहुँचा। राक्षसी उसे देखकर डर गयी तथा उसे मार डालने के उद्देश्य से अपनी माँ के पास भेजा। लेकिन राजकुमार ने अपनी चतुराई से राक्षसी की माँ को नानी बनाकर, उससे अपनी माताओं की आँखें प्राप्त कर ली। एक बार राजकुमार ने राक्षसी की माँ से सिन्दूर की दो डिब्बियों को देखकर उनके बारे में पूछा। राक्षसी की माँ बोली कि बेटा इन्हें छूना मत। इन डिब्बियों में मेरे तथा तेरी माँ (राक्षसी रानी) का प्राण है। एक दिन चुपचाप राजकुमार ने उन दोनों डिब्बियों को लेकर , उन्हें खोला। जिसमें माँ बेटी दोनों मर गयी।' इस लोककथा में जड़-पदार्थो (सिन्दूर की डिब्बी) को प्राण-प्रतीक के रूप में इस्तेमाल किया गया है।

सिंहलद्वीप की पद्मिनी'[2] नामक ब्रज की लोककथा में 'एक जादूगरनी राजकुमार को ही मक्खी बनाकर कैद कर लेती है, जिसे ढूढ़ते-ढूढ़ते वजीर का लड़का परी रानी के बगीचे में पहुँचता है। आधीरात को वहाँ परीरानी आती है तथा वजीर के लड़के की विपदा समझकर उसे बतलाती है कि यहाँ से सौ योजन की दूरी पर एक जंगल है, उसमें तरह-तरह के हिंसक पशु रहते हैं। जहाँ ताड़ के पेड़ पर एक पिंजड़ा टंगा हुआ है, उसमें एक तोता बैठा है। उस तोते में जादूगरी की जान है,जिसने राजकुमार को मक्खी बनाकर कैद कर रखा है। वजीर का लड़का परी रानी की सहायता से जंगल में पेड़ के पास पहुँचता है तथा पिंजड़ा उतारकर तोते की गर्दन मरोड़ देता है। इधर तोते का मरना था कि जादूगरी का भी अन्त हो जाता है वजीर का लड़का जादूगरनी के घर पहुँचकर राजकुमार को पुनः मक्खी से आदमी बनाकर मुक्त करता है।' इस लोककथा में तोते को प्राण-प्रतीक के रूप में प्रयोग किया गया है।

1- अंधरी का बेटा, श्रीमती गिरिजा देवी, संग्रह क्रमांक- 34 (अप्रकाशित)

2- पुण्य की जड़ हरी, आदर्श कुमारी, पृ0-53 व 54

'राजा की उदारता'[1] नामक राजस्थानी लोककथा में 'एक बुढ़िया की बड़ी बहू का जादूगर अपहरण कर लेता है। अपनी पत्नी को खोजने के लिए बुढ़िया का बड़ा बेटा घर से निकलता है तथा घर के आंगन में एक पौधा लगाकर अपनी माँ से कहता जाता है कि जब तक यह पौधा हरा रहे, समझना मैं जीवित हूँ, जब यह मुरझा जाय तो समझना मेरी मृत्यु हो गयी है। इसके बाद वह एक साधु की सहायता से अनेक कठिनाइयों को पार कर जादूगर की कैदी बनी अपनी पत्नी के पास पहुँचता है। लेकिन जादूगर की उस पर नजर पड़ते ही वह पत्थर का हो जाता है जिससे घर में लगा पौधा मुरझा जाता है। यही हाल बुढ़िया के छोटे पुत्र का भी होता है। अब बुढ़िया के विलाप को सुनकर उस नगर का राजा उसके दोनों पुत्रों व बड़ी बहू को ढूँढने का निश्चय करता है तथा साधू से मिलकर बुढ़िया की बहू के पास पहुँचता है। राजा बहू से जादूगर को बहलाकर उसकी मृत्यु का रहस्य पूछने को कहता है। शाम को बुढ़िया की बहू खूब श्रृंगार करके जादूगर से प्रेम का ढोंग करती है और उसे शराब पिलाकर नशे में धुत्त करके पूछती है कि तुम्हारा यदि कुछ हो गया तो मैं क्या करूँगी? इस पर जादूगर कहता है कि तू डर मत, मैंने अपने प्राण एक बुलबुल पक्षी में रख दिए हैं। वह बुलबुल एक पेड़ की टहनी पर लटके पिंजड़े में बंद है। एक कुएं में बनी ग्यारह सौ सीढ़िया पार करके ही उस पेड़ तक पहुँचा जा सकता है पर कुएं के मुंह में एक बड़ा पत्थर रखा हुआ है, उसे मुश्किल से हटाने पर कुंए के भीतर भूत बैठा मिलेगा, जिसे यदि पाँच बकरे न दिए जाय तो वह पत्थर हटाने वाले को जिन्दा नही छोड़ेगा। दूसरे दिन बहू ने राजा से यह सब बातें बताईं, राजा एक हाथी पर बैठकर भूत के लिए पाँच बकरे लेकर कुएं के पास पहुँचा। हाथी ने कुएं पर लगे पत्थर को हटाया, भूत के लपकने पर राजा ने पाँचों बकरे आगे कर दिए, तत्पश्चात् राजा ने दौड़कर ग्यारह सौ सीढ़िया पार की और कुएं में एक बरतन में रखा अमृतघट तथा बुलबुल का पिंजड़ा उठाकर बाहर आ गया। पिंजड़े के उठाते ही जादूगर का दम घुटने लगा। वह राजा की ओर उड़ने लगा, राजा तुरन्त बुलबुल का दाहिना डैना नोच डाला, जिससे

1- चौबोली रानी, लक्ष्मी निवास बिड़ला, पृ0-93 से 99 तक

जादूगर की दाहिनी भुजा टूट गयी तथा वह जमीन पर गिर पड़ा। अब वह राजा की ओर दौड़ने लगा, राजा ने बुलबुल की एक टांग तोड़ दी, जिससे जादूगर की एक टाँग टूट गयी। वह एक ही पैर से उचकता हुआ राजा की ओर आने लगा राजा ने बुलबुल की गर्दन मरोड़ दी, जिससे जादूगर मर कर जमीन पर गिर पड़ा। राजा ने पत्थर बने बुढ़िया के उन दोनों पुत्रों पर अमृत छिड़ककर उन्हें पुनः जीवित कर लिया, जिससे उनके घर के दोनों सूखे पेड़ फिर से हरे हो गये, जिन्हें देखकर बुढ़िया खुसी के मारे नाचने लगी। सभी लोग सकुशल अपने-अपने घर को आ गये।'[1]

ऊपर की लोककथा में बुलबुल के साथ पौधे को भी प्राण प्रतीक बनाया गया है। बुन्देली लोककथाओं में इसे 'आस का बिरवा' कहा गया है जिसके सूखने व हरे होने से सम्बद्ध व्यक्ति की जन्म-मृत्यु का पता चल जाता है। स्वयं संग्रहीत 'निपूता राजा'[1] बुन्देली लोककथा में, 'एक निपूते राजा के साधु द्वारा दिए गये फल से चार पुत्र पैदा होते हैं। इन पुत्रों में से साधु जेठे पुत्र को अपने पास रखने की शर्त रखता है। बड़ा पुत्र अपने घर के आँगन में आस का बिरवा लगाकर अपनी माँ से कहता है कि जब तक यह हरा रहे समझना मैं जीवित हूँ। जब यह मुरझा जाय तो समझना मैं मर गया। यह कहकर बड़ा पुत्र साधु के साथ जगल में उसकी कुटिया में चला आता है। वह साधु नरभक्षी था, जिसने अनेक राजकुमारों को तेल से खौलते कड़ाह में पकाकर खा डाला था। लेकिन कुटिया के पास पड़े उन नर कंकालों द्वारा सावधान करने पर वह साधु को ही कड़ाह में फेंककर मार डालता है तथा वही तेल छिड़ककर सभी राजकुमारों को जिलाकर, अपने घर को चल देता है। रास्ते में एक बुढ़िया के साथ जुआ खेलते हुए वह अपने को भी हार जाता है, जिससे बुढ़िया उसे अपनी कोठरी में बंदी बना लेती है। कोठरी में बन्द कई दिनों भूखे प्यासे रहने पर बड़ा पुत्र काफी दुबला हो जाता है, जिससे उसके घर के आँगन में लगा आस का बिरवा सूखने लगता है। अब छोटा पुत्र अपने बड़े भाई को ढूँढ़ने निकलता है। रास्ते में वही बुढ़िया जुला खेलने को आमंत्रित करती है। चतुर छोटा राजकुमार बुढ़िया से पासे बदलकर, उससे सब कुछ जीत

1- निपुता राजा, श्रीमती गिरिजा देवी, संग्रह क्रमांक-10 (अप्रकाशित)

लेता है। जिसमें उसका बड़ा भाई भी निकलता है, उसे नहला-धुलाकर उत्तम वस्त्र पहनाकर भोजन कराता है। जिससे घर में लगा आस का बिरवा पुनः हरा होने लगता है। फिर दोनों भाई सकुशल घर वापस आ जाते हैं। इस लोककथा में आस का बिरवा नायक के सुख-दुख की सूचना देने का काम करता है।

इस तरह की लोककथाओं में प्रायः परदेश जा रहे नायक के सुख-दुख , जीवन-मृत्यु की सूचना उसके घर वालों (विशेषकर माँ को) मिलते रहने के उद्देश्य से घर के आँगन में पौधा रोपा जाता है। माँ का अपने पुत्र के प्रति अत्यधिक ममत्वशील रहने के कारण उसकी भलाई के लिए आशान्वित रहना स्वाभाविक है, जिसके प्रतीकस्वरूप लोककथाओं में प्राण-प्रतीक के रूप में आस के बिरवा (पौधा) की कल्पना की गयी होगी।

'माता की विरासत'[1] नामक राजस्थानी लोककथा में पहले राजकुमार की कथा में अपने पिता द्वारा देश निकाला दिए जाने पर राजकुमार की मुलाकात अपनी माँ द्वारा उपकृत एक शक्तिशाली गाड़ीवान से होती है, जो अपने पास से दो फूल निकालकर, उनमें से एक फूल राजकुमार को देते हुए कहता है कि इसमें रोज सुबह फूँक मारना, जिससे तुम्हारे प्राण फूल में बस जायेंगे। जब तक कोई इस फूल को जला न डाले, तब तक तुम्हारे प्राण सुरक्षित रहेंगे। यदि कुछ अनहोनी बात हो भी जायेगी तो गाड़ीवाले के पास का दूसरा फूल मुरझा जायेगा और उसे इसकापता चल जायेगा। आगे, राजकुमार एक राक्षस को मारकर उसके द्वारा बन्दी बनायी गयी सुन्दरी राजकुमारी के साथ विवाह कर लेता है। लेकिन उस राजकुमारी को पड़ोस का राजकुमार भी पाना चाहता है, जिसके लिए वह अपनी एक दासी को दूती के रूप में भेजता है। दासी अपने को राक्षस की बहन बताकर राजकुमारी के पास रहने लगती है। दूती राजकुमारी को फुसलाकर उसके द्वारा राजकुमार के प्राण निहित फूल रहस्य जान लेती है। राजकुमार के बाहर जाने पर दूती सैनिकों को बुलाकर राजकुमारी

1- चौबोली रानी, लक्ष्मी निवास बिड़ला, पृ0 56 से 60 तक

को बाँधकर तथा फूल को आग में झोंककर चल देती है। पर जल्दबाजी में फूल आग के बाहर ही गिरता है, तो भी उस पर आँच लगने से राजकुमार बेहोश होकर घोड़े से गिर जाता है। उधर गाड़ीवाले ने देखा कि उसके फूल का रंग उड़ रहा है, वह दौड़कर वहाँ पहुँचा, तब तक फूल मुरझाने लगा था, गाड़ीवाले ने उसे पानी में डाल दिया, फूल हरा हो उठा और राजकुमार भी होश में आ गया। वह घोड़े पर सवार होकर तुरन्त महल पहुँच गया। आगे गाड़ीवान की सहायता से राजकुमार राजकुमारी को पुनः प्राप्त कर लेता है। इस लोककथा में प्रथम फूल को प्राण प्रतीक के रूप में तथा दूसरे फूल को आस का बिरवा (पौधा) की तरह प्रयोग किया गया है। इस तरह , इस लोककथा में नायक के दो प्राण प्रतीक हैं।

बुन्देली लोककथा 'स्वर्णकेशी'[1] में, राजकुमार के प्राण उसके तेगे में स्थित है। कथा इस प्रकार है- 'एक शरारती राजकुमार को देश निकाला मिलता है। वह अपने तीन अन्य मित्रों के साथ दूसरे राज्य में पहुँचता है। वहाँ वह दूकानदार से एक विशेष तेगा व उसके बनाने की विधि को दो हजार रूपये में लेता है। इस तेगा की विशेषता है कि यह अपने मालिक की रक्षा करने के साथ जब तक इसमें पानी (चमक) रहेगा , तब तक इसका मालिक जीवित रहेगा। लुहारमित्र को विशेष तेगा बनाने की विधि सीखने के लिए वहीं छोड़कर राजकुमार आगे बढ़ जाता है तथा विशेष तेगे की सहायता से वह एक दानव को परास्त कर उसकी सोने के बालों वाली सुन्दरी बेटी से विवाह करता है। दूसरे राज्य से भेजी गयी दूती के बहकाने पर बेटी राजकुमार से उसके प्राणों का पता पूछती है। दूती पर सन्देह होने पर राजकुमार इस हिदायत के साथ कि मेरे करने के बाद मेरी लाश सुरक्षित रखी जाय, अपने प्राणों का भेद बता देता है। अगले दिन जब राजकुमार शिकार को जाता है , दूती उस तेगे को आग में रख देती है, ज्यों-ज्यों तेगे का पानी उतरता है, राजकुमार की बेचैनी बढ़ने लगती है। वह शिकार खेलना छोड़कर तेजी से घर की तरफ आता है

1- बुन्देलखण्ड की ग्राम्य कहानियाँ, शिव सहाय चतुर्वेदी, पृ0-76 से 84 तक

लेकिन महल के पास आकर घोड़े से उतरते ही उसके प्राण पखेरू उड़ जाते हैं। राजकुमार का लुहार-मित्र , जो विशेष तेगा बनाना सीख लिया होता है, वहाँ आकर उस विशेष तेगे पर पानी चढ़ाना शुरू कर देता है। जैसे-जैसे पानी चढ़ता है, राजकुमार के शव में प्राण आने लगता है। जब पानी पूरी तौर पर चढ़ जाता है तो राजकुमार पुनः जीवित हो उठता है। अन्त में अपने तीनों मित्रों की सहायता से स्वणकेशी को प्राप्त कर राजकुमार अपनी राजधानी सकुशल वापस लौट जाता है।

इसी तरह 'नथनीवाला वीर'[1] बुन्देली लोककथा में धनुष वाण चलाने में प्रवीण राजा अपनी रानी के ताना देने पर राज्य से बाहर निकल पड़ता है । रास्ते में उसे तीन अन्य दोस्त भी मिल जाते हैं । चारों मित्र एक ऐसे वीरान शहर में पहुँचते हैं जिसे एक दानव व राक्षसी ने बरबाद कर डाला है तथा महल में राजा की बेटी को कैद कर रखा है। राजा अपने तीर कमठा से दानव को मार डालता है तथा डाइन को अपनी स्त्री बनाने का लालच देकर राजा की बेटी से मालूम करता है कि डाइन की मृत्यु उसे कंडों से जलाने पर होगी। राजा डाइन से विवाह कर लेता है तथा उसे पर्दे में रहने की कसम खिलाकर कंडों के एक ढेर के बीच में पोल करके बिठा देता है। एक दिन अवसर देखकर वह उसमें आग लगा देता है, जिससे डाइन जलकर भस्म हो जाती है। इस लोककथा में भी बेटी के बाल सोनें के हैं, जिससे पड़ोसी राजा उस पर मोहित हो जाता है तथा दूती भेजकर उसे पाने की कोशिश करता है। दूती के बहकाने पर बेटी राजा से उसकी मौत के बारे में पूछती है; राजा एक-दो बार तो बहाना करता है, लेकिन अन्त में यह बता देता है कि मेरी मौत तलवार में है। मौसी बनी दूती उस पर तलवार को पानी गरम करके चूल्हें में चढ़ा देती है। राजा घोड़े पर सवार दौड़ा आता है तथा आकर अपनी तलवार मांगता है। तलवार मिलने पर यह कहकर कि मरने पर मेरी लाश न जलाई जाय, उसकी मृत्यु हो जाती है। यहाँ भी मित्रों के द्वारा तलवार में पानी चढ़ाने से राजा पुनः जीवित हो उठता है, तथा उसे मित्रों की सहायता से राजकुमारी भी पुनः प्राप्त हो जाती है।

1- बुन्देली लोककथाएं, शिव सहाय चतुर्वेदी, पृ0-77 से 86 तक

इसमें तलवार को प्राण-प्रतीक के रूप में प्रयोग में लाया गया है।

'नथनीवाला वीर' उक्त बुन्देली लोककथा में, डाइन को मारने के लिए एक विशेष प्रक्रिया को आवश्यक माना गया है, अर्थात उसकी मृत्यु कंडों में जलाये जाने से ही होती है। 'तीन भाई'[1] बुन्देली लोककथा में , 'जादूगरनी की मृत्यु दुर्ग में रखी तलवार से बताई जाती है। यह तलवार इतनी भारी है कि किसी में भी शक्ति नहीं कि उसे उठा सके। लेकिन तीन घूँट विशेष पेय पदार्थ पीने से नायक में तलवार उठाकर घुमारे की शक्ति आ जाती है, जिससे वह जादूगरनी को मार देता है।' 'महाभारत' में , जरासंध बध के लिए भी एक विशेष प्रक्रिया अपनायी गयी थी। भीम जब जरासंध से सत्ताइस दिनों तक लगातार युद्ध के बाद भी उसे परास्त नही कर सके, तो निराश होकर उन्होंने कृष्ण की ओर देखा। कृष्ण ने भीम की ओर देखते हुए नरकट हाथ में लिया और दातून की भाँति उसे दो टुकड़ों में चीरकर उन्हें विपरीत दिशाओं में फेंक दिया। भीम ने संकेत पाकर ऐसा ही किया तथा जरासंध को दो टुकड़ों में चीरकर विपरीत दिशाओं में उनको फेंक दिया, जिससे जरासंध की मृत्यु हो गयी।[2]

इस कथाभिप्राय से सम्बन्धित लोककथाओं के अध्ययन से यह बात स्पष्ट होती है कि जीवन-निमित्तों (प्राण-प्रतीक) का प्रयोग राक्षस, जादूगर, डायन आदि दुष्ट पात्रों के साथ राजकुमार आदि सज्जन पात्रों के लिए भी किया गया है। जीवन-निमित्त-वस्तुओं का अध्ययन करने पर पता चलता है कि जड़ या चेतन कोई भी वस्तु जीवन-निमित्त हो सकती है। इनके चुनाव के सम्बंध में प्रायः इस बात का ध्यान रखा जाता है कि वह अविनाशी या दीर्घकाल तक बना रहने वाला हो। अपेक्षाकृत लम्बी आयु वाले पक्षियों तथा कीट आदि का चुनाव इसी आधार पर किया जाता है । साथ ही निमित्त की लघुता को

1- तीन भाई, श्रीदेव, मधुकर, वर्ष-1, अंक-6, 15 दिसम्बर, 1940, पृ0-9

2- महाभारत (प्रथम खण्ड), सभापर्व, पृ0-736 व 737

भी ध्यान में रखा जाता है, क्योंकि अत्यंत लघु होने पर ही उसे कई वस्तुओं के भीतर छिपाकर रखा जा सकता है और अपनी छुटाई के कारण ही उसे आसानी से प्राप्त भी नही किया जा सकता। पक्षी और कीट लोक-कथाओं के सबसे प्रिय 'जीवन-निमित्त' है, जिनका प्रयोग प्रायः दुष्ट पात्रों के प्राण-प्रतीक के रूप में मिलता है। दुष्ट पात्रों को दण्ड देने के उद्देश्य से पक्षियों, यथा-तोता, बुलबुल आदि को सरलता से गर्दन मरोड़कर मारा जा सकता है और उनके अंग-भंग द्वारा अधिकारी पात्र का अंग-भंग करके कौतूहल, हास्य और चमत्कार भी उत्पन्न किया जा सकता है। पुष्प, पौधे आदि नाशवान और क्षणभंगुर जीवन-निमित्तों का चुनाव प्रायः राजकुमार आदि कथा के नायक पात्रों के लिए मिलता है। इन पुष्प पौधों की चेतनता को बनाये रखकर नायक के प्राणों की रक्षा की जा सकती है। इसी तरह तेगा, तलवार आदि जड़ वस्तुओं की इसलिए जीवन-निमित्त के रूप में रखा जाता है ताकि नायक को पुनः जीवित किया जा सके।

जीवन-निमित्त (प्राण-प्रतीक) वस्तु को छिपाकर रखे गुप्त स्थान की जानकारी नायक को दो तरह से होती है - (1) कुछ कथाओं में प्रत्यक्ष रूप से उस स्थान को दिखला दिया जाता है। नायक को उस निमित्त की सूचना देने वाला पहले से ही किसी प्रकार इस रहस्य से परिचित होता है, जो (प्रायः राक्षस की कैद में सुन्दरी नायिका) नायक से सहानुभूति रखने के कारण उसे इस रहस्य को बतला देती है।
(2) कुछ कथाओं में छलपूर्वक उस निमित्त के अधिकारी से ही सभी प्रकार की सूचनाएं प्राप्त कर ली जाती हैं, प्रायः अधिकारी व्यक्ति के प्रति अधिक महत्व और स्नेह का प्रदर्शन करके उस गुप्त निमित्त की जानकारी प्राप्त कर ली जाती है।

इस तरह, 'प्राणों की अन्यत्र स्थिति' लोककथाओं का बहुत ही प्रिय व प्रचलित अभिप्राय है। अनेक लोककथाओं का तो यह केन्द्रीय - अभिप्राय (सेन्ट्रल मोटिफ) होता है। लोककथाओं में नायक के साहसिक एवं चमत्कारपूर्ण कार्यो द्वारा कथानक को रोमांचक

बनाने, कौतूहल तथा आश्चर्य की प्रतिष्ठा के लिए इस अभिप्राय पर आधारित वर्णनों की योजना बराबर होती रही है। सच तो यह है कि लोककथाओं में इस अभिप्राय का अध्ययन बहुत ही मनोरंजक और ज्ञानवर्द्धक है।

****

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

अध्याय-पाँच

'रूप परिवर्तन'-

1- किसी अलौकिक शक्ति या विद्या द्वारा रूपपरिवर्तन

2- किसी मंत्रविद्, तांत्रिक, जादूगर आदि के द्वारा रूपपरिवर्तन

3- किसी सरोवर में स्नान करने, किसी वस्तु के खाने व किसी वस्त्र-विशेष के धारण करने से रूप-परिवर्तन।

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

मनुष्य से पशु-पक्षी बन जाने अथवा पशु-पक्षी से मनुष्य बन जाने को समान्यतः 'रूप-परिवर्तन' कहा जाता है। रूप-परिवर्तन की धारणा के अनुसार,मनुष्य या मनुष्येत्तर प्राणी, यथा- देवता, विद्याधर, राक्षस, डाइन आदि अपना रूप बदल सकते हैं अथवा उनके द्वारा अन्य व्यक्तियों का रूप-परिवर्तित किया जा सकता है। जहाँ कोई मनुष्य अपनी योनि छोड़कर पशु या किसी दूसरी योनि में परिवर्तित हो जाता है अथवा कोई पशु या दूसरी योनि का प्राणी मनुष्य रूप धारण कर लेता है, वहाँ भी रूप-परिवर्तन होता है। लेकिन यह रूप-परिवर्तन यदि अल्पकालिक न होकर स्थायित्व ग्रहण कर ले तो उसे 'योनि-परिवर्तन' कहते हैं। इसी प्रकार पुरुष का स्त्री बन जाना अथवा स्त्री का पुरुष बन जाना यदि स्थायित्व ग्रहण कर ले तो उसे 'लिंग-परिवर्तन' कहा जाता है।

पौराणिक कथाओं में देवी-देवताओं , ऋषि-मुनियों तथा सिद्ध व्यक्तियों के रूप-परिवर्तन, योनि-परिवर्तन तथा लिंग परिवर्तन के विस्तृत उदाहरण मिलते हैं। मिथकीय संसार चूँकि दिव्य शक्तियों का होता है, अतः इस तरह के रूपपरिवर्तन की घटनाएं सहज लगती हैं। लोककथाएं तथा मिथक प्राचीनकाल में बहुत दूर तक साथ-साथ चलते रहे हैं। लोककथाओं ने इन घटनाओं को मिथकों से लिया है, इसमें सन्देह नही कि ये अलौकिक घटनाएं लोककथाओं में विशेष चमत्कार की सृष्टि करती हैं।

'रामचरितमानस' में शिव के कथन पर विश्वास न होने पर सती सीता का रूप धारण करके वन में राम की परीक्षा लेती हैं।[1] इसी प्रकार 'महाभारत' में दमयंती स्वयंवर के अवसर पर इन्द्र, अग्नि, यम और वरण के हूबहू नल का वेश धारण कर लिया था, जिससे नल को पहचानने में दमयंती को बड़ी दुविधा हुई। तत्पश्चात् उसने सत्यक्रिया के

1- पुनि-पुनि हृदयँ विचारु करि धरि सीता का रूप।
आगे होई चलि पंथ तेहि जेहि आवत नरभूप।।

(रामचरितमानस- बालकाण्ड)

द्वारा देवता एवं नर में पहचानने की शक्ति प्राप्त कर नल के गले में वरमाला डाली।[1] ये दोनों ही 'रूपपरिवर्तन' के उदाहरण हैं।

योनि-परिवर्तन के उदाहरण के रूप में 'महाभारत' में राजर्षि नहुष के सर्प बन जाने की कथा मिलती है। जिसमें राजर्षि नहुष द्वारा ब्राह्मणों का अनादर करने के परिणामस्वरूप महर्षि अगस्त उन्हें सर्प की अवस्था प्राप्त हो जाने का शाप देते हैं। नहुष द्वारा प्रार्थना करने पर वे पुनः कहते हैं कि जो तुम्हारे पूछे हुए प्रश्नों का विभाग-पूर्वक उत्तर दे दे, वही तुम्हें इस योनि से मुक्ति दिला सकता है।[2] आगे युधिष्ठिर उसके प्रश्नों का उत्तर देकर नहुष को सर्प-योनि से मुक्ति दिलाते हैं।

'माता की विरासत'[3] नामक राजस्थान की लोककथा में, एक सर्प को मेढ़ का पीछा करते देखकर दयावश राजकुमार अपनी कटार से सर्प का सिर काट देता है, जिससे सर्प अदृश्य होकर उसके स्थान पर राक्षस का शरीर धरती पर पड़ा मिलता है। इसी लोककथा में एक परी को मैना पक्षी का रूप धारण किए हुए दिखलाया जाता है, जो राजकुमार पर मोहित होकर पुनः परीरूप धारण कर लेती है।

लिंग-परिवर्तन' के उदाहरण के रूप 'इला का आख्यान' मिलता है, जिसमें भगवान शंकर के प्रभाववश राजा इल स्त्री के रूप में परिवर्तित हो जाते हैं तथा चन्द्रमा के पुत्र बुध के साथ दाम्पत्य जीवन का इला के रूप में उपभोग करते हैं, जिससे उनके पुरूरवा नामक एक पुत्र पैदा होता है, जो चन्द्रवंश का संस्थापक होता है, जिसकी राजधानी प्रतिष्ठानपुर

1- महाभारत (द्वितीय खण्ड), अनु0-पं0 रामनारायण दत्त शास्त्री पाण्डेय 'राम', वन-पर्व, पृ0-1105

2- महाभारत (द्वितीय खण्ड), अनु0-पं0 रामनारायण दत्त शास्त्री पाण्डेय 'राम', वन-पर्व, पृ0-1449 व 1450

3- चौबोलीरानी, लक्ष्मीनिवास बिड़ला, पृ0-56 व 57

(झूँसी) थी।[1] 'शाप बना वरदान' नामक टर्की की लोककथा में, राजकुमारी का बुढ़िया के शाप से राजकुमार के रूप में लिंग-परिवर्तन होता है जो कि उसके लिए वरदान सिद्ध होता है।[2] महाभारत में, राजर्षि भंगास्वन इन्द्रजाल से भ्रमित जंगल में स्थित एक सरोवर में प्रवेश करते हैं, जिससे वे स्त्री रूप में परिवर्तित हो जाते हैं।[3]

'रूप-परिवर्तन' कथाभिप्राय आदिम मनोविज्ञान से निःसृत विचारों एवं धारणाओं पर आधारित है। आदिम मानव रूप-परिवर्तन को एक सहज वस्तु समझता था। आदिम युग से ही मानव समाज में यह विश्वास चला आ रहा है कि मनुष्य एवं मनुष्येत्तर प्राणी सभी अपना रूप छोड़कर किसी अन्य वस्तु, प्राणी या मानव का रूप धारण कर सकते हैं। आज भी आदिम जन-जातियों में रूप-परिवर्तन का यह विश्वास प्रचलित है। उड़ीसा राज्य में पायी जाने वाली 'खोड़' जनजाति एवं बिहार राज्य के सिंहभूमि क्षेत्र में पायी जाने वाली 'हो' जनजाति में यह धारणा प्रचलित है कि कोई व्यक्ति शत्रुओं को मारने के लिए दैवी सहायता से चीता बन जाता है। आदिम मानव मन रूप-परिवर्तन को अन्धविश्वास या असम्भव कल्पना नही बल्कि जीवन-सत्य मानता था। इसी विश्वास के कारण आदिम मानव किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व को स्थिर नही, बल्कि परिवर्तनशील मानता था। उसकी धारणा थी कि एक व्यक्ति का व्यक्तित्व सैकड़ों रूपों में बदल सकता है। व्यक्तित्व की परिवर्तनशीलता में विश्वास होने के कारण ही यह मान्यता बनी कि मानव, पशु, प्रेत, देवता आदि समय-समय पर अपना निजी रूप त्यागकर अन्य रूप धारण कर सकते हैं। इस तरह रूप-परिवर्तन सम्बंधी अभिप्राय कल्पना पर नही बल्कि विश्वास जनित जीवन सत्यों पर आधारित है।

1- 'कादम्बिनी' जनवरी 1998 अंक, पौराणिक कथाएं, डॉ0 सुधा पाण्डेय, पृ0-73

2- 'बालहंस', दिसम्बर (द्वितीय), 1993 अंक, शान्ता ग्रोवर, पृ0-17

3- महाभारत (छठा भाग), अनुशासनपर्व, पृ0-5464

आदिम लोकविश्वासों के साथ मध्यकाल में प्रचलित तंत्र-मंत्र पर आधारित यौगिक क्रियाओं में भी इस कथाभिप्राय की अवधारणा का समावेश मिलता है। 'कथासरित्सागर' की कथा में 'वाराणसी निवासी सोमस्वामी पर बन्धुदत्ता नामक वैश्य कन्या आसक्त हो जाती है। जबकि उसका विवाह मथुरा के प्रधान वैश्य वराहदत्त के साथ हो चुका था। बन्धुदत्ता अपनी सहेली के घर जाकर, उसके द्वारा सोमस्वामी को वहाँ बुलवाकर, अपनी काम-वासना शान्त करती है। जब उसका पति लेने आता है , तो वन्धुदत्ता अपनी सुखराजा नाम की योगिनी सखी से दो मंत्री सीखती है, जिनमें से प्रथम के प्रभाव से मनुष्य के गले में डोरा बाँधने पर तुरन्त बन्दर बन जाता है तथा दूसरे मंत्र के प्रभाव से डोरा खोल देने से फिर वह मनुष्य के रूप में आ जाता है। इस प्रकार पहले मंत्र के द्वारा बन्धुदत्ता सोमस्वामी को बन्दर बनाकर अपने पति के साथ जाते समय मन बहलाव के बहाने उसे लेती जाती है।'[1]

'रूप-परिवर्तन' कथाभिप्रायों का प्रयोग भारतीय कथाओं में व्यापक रूप में मिलता है। अध्ययन की सुविधा के लिए रूप-परिवर्तन के साधनों के आधार पर इस कथाभिप्राय को निम्नलिखित भागों में विभाजित किया जा सकता है-

(1) किसी अलौकिक शक्ति या विद्या द्वारा रूप-परिवर्तन
(2) किसी मंत्रविद, तांत्रिक, जादूगर आदि के द्वारा रूप-परिवर्तन
(3) किसी सरोवर में स्नान करने , किसी वस्तु के खाने व किसी वस्त्र-विशेष के धारण करने से रूप-परिवर्तन।

अलौकिक शक्ति सम्पन्न देवी-देवता, विद्याधर, दानव, डाइन आदि के द्वारा रूप परिवर्तन करने के अनेक उदाहरण कथाओं में मिलते हैं। ये अलौकिक और अतिमानव

1- कथासरित्सागर (भाग द्वितीय), सप्तम लम्बक, तृतीय तरंग, पृ0-59

प्राणी स्वेच्छा से जब जो रूप चाहे धारण कर सकते हैं। भारतीय देवताओं में इन्द्र के रूप-परिवर्तन की अनेक कथाएं प्रचलित है। 'महाभारत' में, दानी कर्ण को छलने के लिए इन्द्र ब्राह्मण रूप धारण करके आते है तथा उनके शरीर के साथ ही उत्पन्न हुए कवच व कुण्डल मागकर ले जाते है।[1] 'कथासरित्सागर' में, गौतम ऋषि की पत्नी अहिल्या के सौन्दर्य पर मुग्ध होकर उसके पति का रूप धारण करके उसका सतीत्व नष्ट करते हैं।[2] इसी तरह भगवान विष्णु बावन का रूप धारण करके दैत्यराज बलि को छलते हैं। स्वय संग्रहीत बुन्देली लोककथा 'राजा जालन्धर की कथा'[3] में, राजा जालन्धर की पत्नी वृन्दा पतिव्रता स्त्री थी, जिसके प्रभाव से राजा जालन्धर को कोई हरा नही पाता था। राजा जालन्धर द्वारा अयोध्या मे जाकर भगवान विष्णु को युद्ध के लिए ललकारने पर भगवान विष्णु पहले जालन्धर का रूप धरके उसकी पत्नी वृन्दा के पास जाकर उसका पतिव्रत धर्म नष्ट करते है, तब राजा जालन्धर को युद्ध में हरा पाते हैं।

'कथासरित्सागर' मे , मदनवेग नाम का विद्याधरों का राजा राजकुमारी कलिंगसेना पर आसक्त हो, उसे प्राप्त करने के लिए शिव जी की तपस्या करके संतुष्ट होने पर एक बार रात के समय अपनी विद्या के बल से वत्सराज उदयन का, जिसे कलिंगसेना चाहती है, रूप और वेष बनाकर द्वारपाल से प्रणाम किया जाता हुआ कलिंगसेना के पास जाता है। रूप-परिवर्तन के कारण उसे वत्सराज समझकर कम्पन से व्याकुल कलिंगसेना स्वागत के लिए उठ खड़ी होती है, जिससे उसके आभूषण झनझना उठते हैं। तदनन्तर वत्सराज का रूप धारण किए हुए उस विद्याधर राजा ने धीरे-धीरे उसे विश्वास दिलाकर गान्धर्व विधान से अपनी पत्नी बना लिया।[4]

1- महाभारत (द्वितीय खण्ड) वन पर्व, पृ0-1817

2- कथासरित्सागर (प्रथम खण्ड), तृतीय लम्बक, चतुर्थ तरंग, पृ0-295

3- राजा जालन्धर की कथा, देवीदीन, संग्रह क्रमाक- 19 (अप्रकाशित)

4- कथासरित्सागर (प्रथम खण्ड), षष्ठ लम्बक, सप्तम तरंग, पृ0-769

देवताओं, विद्याधरो आदि अतिमानवीय शक्तियो के साथ राक्षस, डाइन आदि दुष्ट प्राणी प्रायः पशु-पक्षी अथवा सुन्दरी का रूप धारण करके नायक को संकट मे डालते है। 'रामचरितमानस' मे सीताहरण के लिए एक ओर तो मारीच कंचन मृग बनकर राम को वन में दूर ले जाता है और दूसरी ओर रावण ब्राह्मण-रूप धारण कर छलपूर्वक सीता का हरण करता है।[1] 'रामचरितमानस' मे राक्षस तो रूप-परिवर्तन की शक्ति रखते ही हैं, हनुमान भी जब जो रूप चाहते है, धारण कर लेते हैं। कभी तो वे लघु बंदर रूप मे ही रहते है और कभी 'भूधराकार' शरीर धारण कर लेते हैं। सुरसा के साथ हनुमान का रूप-परिवर्तन करके युद्ध करना इस अभिप्राय का लोकप्रिय उदाहरण है।[2]

कथाओं में , देवी-देवता , ऋषि-मुनि आदि अलौकिक शक्ति सम्पन्न व्यक्ति स्वयं रूप-परिवर्तन तो करते हैं; साथ में, इनके शाप या वरदान के प्रभाव से भी मनुष्य आदि प्राणियों का रूप-परिवर्तन हो जाता है। 'कथासरित्सागर' में, राजा सातवाहन की कथा में वर्णन मिलता है कि 'जंगल में भ्रमण करते हुए राजा दीपकर्ण ने मध्यान्ह के समय एक पद्म-सरोवर के किनारे शेर पर चढ़े हुए सूर्य के समान तेजस्वी बालक को देखा। इसके अनन्तर बालक को उतारकर पानी-पीते हुए सिंह को एक बाण मारा, बाण लगते ही सिंह अपना शरीर छोड़कर तुरन्त पुरुष बन गया। दरअसल-वह कुबेर का मित्र सात नामक यक्ष था, जो एक बार स्नान करती हुई ऋषि कन्या पर आसक्त हो गया, जिससे ऋषि कन्या के बन्धुओं ने उसे स्वेच्छाचारी सिंह हो जाने का शाप दिया था।[3]

1- तेहि बन निकट दसानन गयऊ। तब मारीच कपट मृग भयऊ।।...
सून बीच दसकंधर देखा। आवत निकट जती के वेषा।। (अरण्यकाण्ड : 'रामचरितमानस')

2- जस-जस सुरसा बदनु बढ़ावा। तासु दून कपि रूप देखावा।।
सत जोजन तेहिं आनन कीन्हा। अति लघु रूप पवन सुत कीन्हा।। (सुन्दरकाण्ड)
-'रामचरितमानस'

3- कथासरित्सागर (प्रथम खण्ड), प्रथम लम्बक, छठीं तरंग, पृ0-87

'रूप-परिवर्तन' कथाभिप्राय के उदाहरण बुन्देली लोककथाओं में भी प्राप्त होते हैं। 'निपुत्री की पुत्री'[1] बुन्देली लोककथा में, 'एक राजकुमारी की शादी चिड़िया के साथ सम्पन्न होती है, लेकिन यह भेद सार्वजनिक नहीं होता है। राजकुमार उस चिड़िया को अपने कोठे में बंद रखता है तथा स्वयं ताला खोलकर उसे दाना-पानी देता है। कुछ समय पश्चात् राजकुमार के छोटे भाई की शादी होती है जिसकी बरात में, चिड़िया के लिए आठ दिन का खाने-पीने का प्रबंध करके, राजकुमार भी जाता है। संयोग से चिड़िया के लिए रखी पानी की कटोरी लुढ़क जाती है, जिससे प्यास से व्याकुल चिड़िया अपनी चोंच में कटोरी को दबाकर नदी पर पानी लेने पहुँचती है । जीभर कर पानी पीकर व कटोरी को पानी से भरकर, ज्यों ही कटोरी चोंच में दबाकर उड़ती है, उसका पानी गिर जाता है। इसी तरह खीझते-खीझते बहुत समय हो जाता है; इसी समय पार्वती महादेव वहाँ से निकलते हैं, पार्वती के आग्रह करने पर महादेव जी उसे सोलह वर्ष की सुन्दर लड़की बना देते हैं तथा उसके आग्रह करने पर उसके शरीर में चिड़िया का एक चिह्न भी रख छोड़ते हैं। जिससे कि राजकुमार इसे पहचान सके।'

इसी तरह 'निपुता राजा'[2] बुन्देली लोककथा में भी, राजकुमार की शादी चिड़िया के साथ सम्पन्न होती है यह भेद राजकुमार को ही मालूम होता है। वह चिड़िया को अपने कोठे में बंद रखता है, अपने छोटे भाई की बरात में जाने के समय राजकुमार चिड़िया के खाने पीने का प्रबंध करता जाता है। लेकिन पानी लुढ़क जाने से प्यास से व्याकुल चिड़िया पानी के लिए नदी पर जाती है, जहाँ उसे परेशान देखकर महादेव व पार्वती को दया आती है। लेकिन यहाँ महादेव के बजाय स्वयं पार्वती ही वरदान देकर चिड़िया को पन्द्रह बरस की अत्यंत रूपवती कन्या बना देती है तथा राजकुमार द्वारा पहचाने जाने के लिए उसके शरीर में चिड़िया का निशान रख छोड़ती है।' इन दोनों ही लोक-कथाओं

1- केतकी के फूल, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-15 से 18 तक

2- मधुकर, बनारसीदास चतुर्वेदी, वर्ष-2, अंक-11,मार्च 1942, पृ0-9 से 11 तक

में राजकुमार बहुत ही सन्तोषी प्रवृत्ति का निकलता है, जिसका सुमधुर फल उसे सुन्दरी राजकुमारी को प्राप्त करने के रूप में मिलता है।

बुन्देली लोककथा 'पतिव्रता'[1] में 'एक ब्राह्मण का लड़का पूर्वजन्म में सती के शाप के कारण अपनी स्त्री के प्रथम दर्शन करते ही गधे के रूप में परिवर्तित हो जाता है। लेकिन उसकी स्त्री अत्यंत साध्वी व पति की सेवा करने वाली है। जिसके प्रभाव से राजा द्वारा खुदवाया तालाब पानी से भर जाता है। जिससे प्रसन्न होकर राजा अपनी प्रजा सहित भगवान सूर्य की पूजा करते हैं तथा उस प्रतिव्रता स्त्री को दुर्भाग्य से मुक्त करने की प्रार्थना करते हैं। प्रार्थना समाप्त होते ही गधा बना ब्राह्मण का लड़का पुनः मनुष्य का रूप धारण कर लेता है।'

'रूपपरिवर्तन' कथाभिप्राय के अर्न्तगत दूसरे वर्ग में वे कथायें आती हैं, जिनमें कोई मंत्रविद, तांत्रिक या जादूगर अपने मंत्र-तंत्र के द्वारा नायक-नायिका या कथा के किसी पात्र का रूप परिवर्तन करता है। इसके उदाहरण के रूप में 'कथासरित्सागर' में वर्णित सोमस्वामी व बन्धुदत्ता की कथा का उल्लेख किया जा चुका है, जिसमें बन्धुदत्ता अपने पति के जाते समय मंत्र के द्वारा सोमस्वामी को बन्दर बनाकर साथ में लिए जाती है। जिससे कि गुप्त रूप से वह अपने प्रेमी को अपने पास रख सके। लेकिन रास्ते में जंगल से गुजरते समय बन्दरों को झुण्ड उन पर आक्रमण करता है जिससे भयभीत होकर वे लोग बन्दर बने सोमस्वामी को वही छोड़कर भाग जाते हैं। आगे बन्दर बने सोमस्वामी की मुलाकात निश्चयदत्त के साथ होने पर वह उसे बताता है कि जब कोई योगिनी मंत्र द्वारा मेरे गले के डोरे को खोलेगी, तभी मैं मुनष्य बन पाऊँगा। तदनन्तर 'वन में उस बन्दर के साथ रहते हुए निश्चयदत्त के पास एक बार दैवयोग से मोक्षदा नाम की तपस्विनी आई। उसने

1- बुन्देलखण्ड की ग्राम्य कहानियाँ, शिव सहाय चतुर्वेदी, पृ0-52 से 54 तक

प्रमाण करते हुए निश्चयदत्त से पूछा तुम्हारे मनुष्य होते हुए भी यह तुम्हारा मित्र बन्दर कैसे हुआ? तब निश्चयदत्त ने बन्दर बने सोमस्वामी का सारा वृतान्त सुनाकर उससे कहा कि यदि आप कोई प्रयोग या मंत्र जानती हैं तो मेरे मित्र को पशुता से बचाइए। निश्चयदत्त की प्रार्थना स्वीकार करके मोक्षदा योगिनी ने मंत्र की युक्ति से बन्दर के गले का डोरा खोल दिया, उसके खोलते ही सोमस्वामी बन्दर रूप छोड़कर उसी क्षण यथार्थ मनुष्य-रूप में पुनः आ गया।'[1]

लोककथाओं में मंत्र-तंत्र द्वारा नायक-नायिका को पशु-पक्षी बना देने के अनेक उदाहरण मिलते हैं। 'जीजी'[2] बुन्देली लोककथा में, 'गडरिया की बड़ी लड़की के रूप-गुण पर मोहित होकर राजकुमार उसके साथ विवाह करने का निश्चय करता है, लेकिन विवाह के समय लड़की की सौतेली माँ बाल संभालने के बहाने उसके सिर में जादूगर की बनाई एक लोहे की कील ठोक देती है, जिससे वह लड़की चिड़िया बनकर उड़ जाती है। सौतेली माँ अपनी लड़की को राजकुमार के साथ व्याहकर बिदा कर देती है। आगे जब राजकुमार उस चिड़िया को पकड़कर उसके सिर से कील निकालता है , वह तुरन्त लड़की के रूप में परिवर्तित हो जाती है। गडेरिया की बड़ी लड़की अपनी छोटी बहिन के साथ महल में हिलमिल कर रहने लगती है।' इसी तरह की 'राष्ट्रीय सहारा' में प्रकाशित एक लोककथा[3] के अनुसार 'एक लड़की खंडहर में बंद राजकुमार के पास पहुँचती है, जिसका सारा शरीर सुइयों से बिंधा पड़ा है, वह बेसुध है, लेकिन अभी सांस चल रही है। लड़की रोज राजकुमार के शरीर से सुइयाँ निकालती है, जब राजकुमार की देह में आखिरी सुई बची, तब वह

1- कथासरित्सागर (द्वितीय खंड) सप्तम लम्बक, तृतीय तरंग, पृ0-77

2- गौने की बिदा, शिव सहाय चतुर्वेदी; पृ0-91 से 98 तक

3- एक किस्सा, टिल्लन जी, राष्ट्रीय सहारा, 2 फरवरी, 1994 अंक

नहाने चली जाती है। इसी समय जमादारिन आकर आखिरी सुई निकालती है, जिससे राजकुमार होश में आ जाता है। परिस्थितिवश अब जमादारित रानी बनती है तथा वह लड़की जमादारिन; एक दिन जमादारिन बनी पटरानी ने उस लड़की के सिर में कील ठोकवाकर उसे मरवा दिया और देहरी के नीचे गढ़वा दिया। वह लड़की चिड़िया हुई, दोपहर को जब राजा खाने खाने आते, तब चिड़िया मुंडेर पर बैठकर आप बीती सुनाती। एक दिन जब जमादारिन पटरानी किन्हीं और कामों में व्यस्त थी, चिड़िया राजा की गोद में जा बैठी। राजा ने उसके सिर पर हाथ फेरा तो कील अटाई, जिसे खींचते ही चिड़िया लड़की बन गयी। अब राजा को सच्चाई मालूम हुई, उसने जमादारिन को प्राणदण्ड दिया।

बुन्देली लोककथा 'दो बैनें'[1] में, 'बड़ी बहन तिलमती का विवाह राजकुमार के साथ हो जाता है, लेकिन छोटी बहन को कोई सुन्दर वर नही मिलता । एक दिन गॉव में एक जादूगर आया,जिसने पिंजड़ा में बंद चिड़िया के सिर से कील निकालकर उसे रूपवती कन्या में परिवर्तित कर दिया। छोटी बहन ने जादूगर से वह कील मॉग ली और मंत्र भी सीख लिया। एक बार जब तिलमती मायके आयी तो छोटी बहन ने उसके गहना-गुरिया (सोने-चॉदी के आभूषण) पहनकर तथा उसे बाल संवारने के बहाने सिर में जादू की कील ठॉक दी, जिससे वह चिड़िया बनकर उड़ गयी। इधर तिलमती को न देखकर उसके मॉ-बाप ने छोटी बहन को ही ससुराल भेज दिया। उधर चिड़िया बनी तिलमती रोज अपनी ससुराल के पास पेड़ पर बैठकर आप बीती गाती। उसके हॅसने से फूल बरसते तथा रोने से मोती। राजा ने माली से कहकर उस चिड़िया को पकड़वाया तथा उसे एक पिंजरे में बंद करके महल में टंगवा दिया। आधी रात को चिड़िया फिर बोलने लगी, राजा व छोटी बहन दोनो जग गये। असलियत मालूम होने पर राजा को बहुत गुस्सा आया तथा छोटी बहन के कहने पर उसने चिड़िया के सिर से जादुई कील निकाल दी जिससे वह पुनः तिलमती बन गयी। अब तिलमती के कहने पर राजा दोनों बहनों के साथ खुशी-खुशी रहने लगा।'

1- 'चौमासा' बुन्देली लोककथाएं, नर्मदा प्रसाद गुप्त, पृष्ठ- 143 से 146 तक

स्वयं संग्रहीत एक बुन्देली लोककथा तिलमती-चावलमती'[1] में, इसी तरह तिलमती का जन्म तिल के बर्तन से तथा चावलमती का जन्म चावल के वर्तन से होता है, लेकिन इस कथा में चावलमती अपनी छोटी बहन तिलमती से बारह वर्ष बडी है। चावलमती का विवाह एक राजकुमार के साथ होता है,जिसके हँसने से चावल गिरते हैं तथा रोने से फूल। एक बार जब चावलमती अपने माँ के यहाँ आती है तो उसकी माँ उसे तालाब में नहलाने ले जाती है तथा लोहार के यहाँ से लाई एक कील उसके सिर में ठोंक देती है जिससे वह चिड़िया बनकर उड़ जाती है। अब वह अपनी छोटी लड़की तिलमती को राजकुमार के साथ भेज देती है। बाग में चिड़िया बनी चावलमती के हँसने से मोती बरसते हैं, जिसे जानकर राजकुमार उसे पकड़वाता है। एक दिन चिड़िया को नहलाते समय, राजकुमार के हाथ कील अटकी, जिसे सिर से निकालने पर वह पुन. बारह वर्ष की लड़की बन गयी। असल बात मालूम होने पर राजकुमार ने दोनों बहनों को रख लिया। इस तरह की लोककथाओं मे यह बात स्पष्ट है कि राजकुमार को सच्चाई मालूम होने पर वह राजकुमारी के कहने पर उसकी छोटी बहन को भी अपनी रानी बना देता है; लेकिन दासी या जमादारिन को उसके किए का फल प्राणदण्ड के रूप में मिलता है।

'सपने की खोज'[2] बुन्देली लोककथा मे 'छोटा राजकुमार' अपने पिता के सपने का सच खोजने निकलता है तथा बावड़ी के अन्दर सोने के महल में सोलह वर्ष की अपूर्व सुन्दरी के पास पहुँच जाता है। दोनों एक-दूसरे पर मोहित हो जाते हैं। वह अपूर्व सुन्दरी दाने की बेटी है। जिसके आने की आहट पाते ही दाने की बेटी ने राजकुमार को भौंरा बनाकर गुलाब के फूल पर छोड़ दिया। दाने के आने पर बेटी उससे किसी मनुष्य के साथ विवाह करने को कहती है तथा उससे आश्वासन पाकर उसे भौंरा से मनुष्य बनाकर दाने के समय पेश करती है। अब दाने अपनी बेटी के साथ राजकुमार का विवाह कर देता है। इस लोककथा में राजकुमार को तंत्र-मंत्र से भौंरा बनाये जाने का वर्णन है।

1- तिलमती-चावलमती, गीता उर्फ गुड्डन, संग्रह क्रमांक-3। (अप्रकाशित)

2- गौने की बिदा, शिव सहाय चतुर्वेदी, पृ0-27 से 30 तक

लोककथाओं में, नायक को मक्खी के रूप में परिवर्तित करने का भी वर्णन मिलता है। 'लखटकिया'[1] नामक ब्रज की लोककथा में 'डायन व राक्षस से संरक्षित एक लड़की लखटकिया के वहाँ पहुँचने पर उस पर मोहित हो जाती है तथा उसके प्राणों की रक्षा करने के उद्देश्य से उसे मक्खी बनाकर दीवार में चिपका देती है। सुबह डायन व राक्षस जब शिकार को बाहर चले जाते हैं तब लड़की ने लखटकिया को पुनः आदमी बना दिया।' इसी तरह 'सिंहलद्वीप की पद्मिनी'[2] नामक लोककथा में एक जादूगरनी छल से राजकुमार को मक्खी बनाकर दीवार में चिपका देती है, यहाँ वजीर का लड़का जादूगरनी को मारकर मक्खी को पुनः राजकुमार के रूप में परिवर्तित करता है।'

बुन्देली की एक अन्य लोककथा 'भाग्य और पुरुषार्थ'[3] में भी 'लखटकिया सोने की पायल की खोज में एक ऐसे सुनसान मकान में पहुँचता है , जिसमें अपूर्व सुन्दरी सोलह वर्ष की लड़की मिलती है। वह अपूर्व सुन्दरी लड़की सात डाइनों द्वारा रक्षित थी, जिनके मारे बारह कोस तक का मनुष्य नही बचता था। लड़की लखटकिया की सुन्दरता पर मोहित हो जाती तथा अपनी डाइन माताओं को आती देख उसे मोम की मक्खी बनाकर अपनी कोठरी की दीवार पर चिपका देती है। इस तरह, रात में जब माताएं घर में रहती हैं तब बेटी लखटकिया को मक्खी बनाये रखती है तथा दिन में जैसे ही वे चली जाती है, उसे मनुष्य बनाकर उसके साथ पंसासार खेलती है।' इस तरह तंत्र-मंत्र के द्वारा नायक को पशु-पक्षी, भौरा व मक्खी बनाकर रखने के पीछे मुख्य उद्देश्य किसी स्त्री द्वारा उससे गुप्त प्रेम करने के उद्देश्य से , नायक को अपने पास बंदी बनाये रखने का होता है; लेकिन अधिकांशतः यह नायक की सहमति से ही होता है।

1- पुष्प की जड़ हरी, आदर्श कुमारी, पृ0•42 व 43

2- पुष्प की जड़ हरी, आदर्श कुमारी, पृ0 53 व 54

3- पाषाण नगरी, शिव सहाय चतुर्वेदी, पृ0-177

दो प्रतिद्वन्द्वी व्यक्तियों के मध्य तंत्र-मंत्र पर आधारित रूप-परिवर्तन की लड़ाई से सम्बन्धित अनेक कथायें मिलती हैं। 'कथासरित्सागर' में, 'भवशर्मा को उसकी प्रेमिका गुप्तयोगिनी सोमदा मंत्र-सूत्र बाँधकर बैल बना देती है। पहले तो दोनों एकान्त में मिलते और आनन्दापभोग करते हैं, किन्तु एक दिन ईर्ष्यावश भवशर्मा उसे पीटता है। उस समय तो वह कुछ नही बोलती, किन्तु दूसरे दिन प्रेम-प्रदर्शन के बहाने उसके गले में एक सूत्र बाँध देती है, जिससे तत्क्षण भवशर्मा बैल हो जाता है। बैल रूप में उसे सोमदा ने ऊँटों का व्यापार करने वाले व्यापारी को बेच दिया। अत्यधिक बोझ से लदे हुए इस बैल को बन्धन मोचनी नाम की एक योगिनी देखती है तथा अपने योग ग्यान से रहस्य समझ जाती है। दयापूर्वक वह बैल के गले से मंत्र-सूत्र खोल देती है, जिससे भवशर्मा उसी क्षण मनुष्य रूप में आ जाता है। बैल का मालिक परेशान होकर उसे चारों ओर ढूँढता फिरता है। बंधन-मोचनी के साथ जाते हुए भवशर्मा को दैवयोग से सोमदा देख लेती है। वह बंधनमोचनी पर बहुत क्रुद्ध होती है और अगले दिन प्रातः काल इसका फल देने की धमकी देकर चली जाती है। दूसरे दिन वह काली घोड़ी बनकर आती है, बंधनमोचनी तुरन्त लालघोड़ी का रूप धारण करती है और दोनों एक दूसरे पर खुर-दन्त प्रहार करते हुए लड़ने लगती है। इसी बीच भवशर्मा पूर्व योजना के अनुसार तलवार से सोमदा पर प्रहार करके उसे घायल कर देता है, जिससे बंधनमोचनी उसे मार डालती है।'[1] इस कथा में मंत्र-युद्ध बहुत थोड़े समय के लिए होता है।

बुन्देली लोककथाओं में भी इस प्रकार का अभिप्राय प्राप्त होता है। 'चतुर-चेला' लोककथा में ' एक साधु ब्राह्मण के दो लड़कों को इस शर्त के साथ पढ़ाता है कि एक को एक अपने पास रखेगा। दोनों लड़कों में से बड़े को वह खूब खिलाकर मोटा-ताजा होने देता है तथा छोटे को अपनी जादू सम्बंधी सभी विद्याएं सिखाता है। असल में वह छोटे लड़के को अपना उत्तराधिकारी बनाना चाहता था। लेकिन छोटे लड़के के द्वारा एकान्त में समझाने पर ब्राह्मण उसे ही लेकर घर जाने का निश्चय करता है, जिससे साधु ब्राह्मण

1- कथासरित्सागर (द्वितीय खण्ड), सप्तम लम्बक, तृतीय तरंग, पृ0-63 से 67 तक।

व उसके छोटे बेटे का पीछा करता है। साधु द्वारा पीछा करते देखकर छोटा लड़का बकरी बन जाता है तथा अपने पिता से कहता जाता है कि तुम बकरी बेच देना, लेकिन उसकी रस्सी अपने पास रखना। पिता ऐसा ही करता है, आगे लड़का पुनः पिता के साथ आकर घर को चल देता है। साधु द्वारा पुनः पीछा किए जाने पर वह हाथी बन जाता है, लेकिन इस बार लोभवश ब्राह्मण उसका अंकुश साधु को बेच दिया, जिसे लेकर वह हाथी बने लड़के को बहुत परेशान करने लगा। एक दिन साधु हाथी को तालाब में नहलाने ले जाता है जहाँ उसे अंकुश मार-मार कर बहुत हैरान करता है। हाथी दुखी मन से तालाब के किनारे पड़ी एक मृत गाय को देखता है तथा अवसर देख तुरन्त अपने प्राण उसकी देह में डाल देता है, जिससे गाय जिन्दा होकर भागती है; उधर हाथी निर्जीव होकर तालाब में गिर पडता है, जिससे महावत बना साधु पानी में भीग जाता है; लेकिन वह कसाई बनकर गाय का पीछा करता है। लड़का पेड़ के नीचे मृत सूए को देखकर गाय से उसमें अपने प्राण-प्रवेश कराकर उड़ जाता है तथा नगर में पहुँचकर राजकुमारी की बाँह पर बैठता है, जिसे राजकुमारी पिंजरे में रख लेती है। अब साधु जादू के खेल दिखाने वाला बाजीगर बनकर राजा के दरबार में खेल दिखाता है तथा इनाम में पिंजरे में बंद उसी सूअे को मांगता है। राजा के समझाने पर राजकुमारी सूअे को देने के लिए राजी होती है लेकिन बाजीगर के हाथ में पहुँचकर सूअे की गर्दन लुढक जाती है तथा ब्राह्मण कुमार तत्काल राजकुमारी के फलों के टोकरे में रखे सबसे बड़े अनार में जा बैठता है। दूसरे दिन बाजीगर फिर खेल दिखाता है तथा इनाम में वही अनारफल मांगता है। राजा द्वारा पुनः कहने पर राजकुमारी गुस्से में अनार को बाजीगर के सामने फेंक देती है, जमीन पर गिरते ही अनार दाने-दाने होकर बिखर जाता है। साधु झट मुर्गा बनकर अनार के दाने को चुगने लगता है। इसी समय बड़ा दाना उचटता है तथा पास में पड़ी बिल्ली तड़पड़ाकर जाग उठती है तथा झपट कर मुर्गे की गर्दन दबा देती है; आगे बिल्ली मुर्गे के पंख नोचकर फेंक देती है तथा तुरन्त ही सबको फर्श पर साधु की लाश दिखाई पड़ती है।'[1]

1- पाषाण नगरी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-139 से 146 तक

'राजा विक्रमादित्य और जंगला जोगी'[1] बुन्देली लोककथा में, 'जंगला जोगी राजा को काला कुत्ता बना देता है, जो भागकर जादूगरनी खुनका मेहतरानी के यहाँ छिप जाते हैं। संकट समझकर खुनका राजा की पटरानी से खपरिया लेकर पीछे न देखते हुए दूसरे राज्य में चली जाने को कहती है। रानी ऐसा ही करती है तथा दूसरे राज्य की सीमा में पहुँचकर जब वह पीछे देखती है तो उसका पीछा करता हुआ वह काला कुत्ता पुनः मनुष्य रूप में आ जाता है। अब राजा विक्रमादित्य उस राज्य में लखटकिया बनकर नौकरी करते है, जिसके गुणों को देखकर इस राज्य का राजा अपनी लड़की का विवाह राजा विक्रमदित्य से कर देता है। लडकी उनके ही समान चौदह विद्या और चौंसठ कलाएं जानती थीं। उसने अपने पिता से कहकर नगर मे यह ऐलान करवा दिया कि जो मनुष्य चौदह विद्या जानता हो वही इस नगर मे तमाशा करे। इधर जगला जोगी को इसका पता चलने पर वह जादूगर नट बनकर उस नगर मे आया और दरबार मे तमाशा किया। राजा ने अपनी लड़की व दामाद को भी बुलाया ; लेकिन लड़की जान गयी, कि यह जंगला जोगी है, जो मेरे पति को मारने आया है। उसने अपने पति को मोती बनाकर हार में गूँथ लिया, तमाशा शुरू हुआ। नटनी ने ढोलक बजाई, नट नाना प्रकार के अचंभे-भरे-खेल दिखाने लगा। सब लोग 'वाह-वाह' करने लगे। राजा भी खेल देखकर खुश हुआ तथा नट से इनाम मांगने को कहा। नट ने बेटी के गले का मोतियों का हार मांगा, जिसे देने से बेटी ने इंकार कर दिया। राजा के बहुत आग्रह करने पर उसने हार-उतारकर उससे नया पिरोया बड़ा मोती निकालकर सामने मैदान में फेंक दिया। हार टूटने से मोती बिखर गये और जंगला जोगी तुरन्त हंस बनकर मोती चुगने लगा। लडकी अपने पति से बोली कि यही समय है, हंस को खत्म कर दो। मोती रानी के हाथ से उचटा और बिल्ली बनकर हँस पर जा झपटा तथा उसकी गर्दन दबा दी। हंस टे-टे-टे- करके मर गया, खेल खत्म हो गया।'

'माता-की विरासत' नामक राजस्थानी लोककथा के अन्तर्गत तीसरे राजकुमार की कथा मे, 'राजकुमार इन्द्र के यहाँ से परी के पंख लाकर उसे जादूगर से मुक्त कराता

1- जैसी करनी वैसी भरनी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-79 से 85 तक

है। जब वे दोनों बाग में खड़े बातचीत कर रहे थे तभी जादूगर हाथी बनकर उन पर झपटता है, परी ने तुरन्त सिंह का रूप धारण कर हाथी का मुकाबला किया। तब जादूगर कबूतर बनकर आकाश में उड़ा, परी ने बाज के रूप में उस पर झपट्टा मारा। अब जादूगर मोतियों का माला बनकर राजकुमार का गला घोटने के उद्देश्य से लिपट गया, परी ने माला तोड़कर मोती बिखरे दिए तथा हंस बनकर मोती चुगने लगी। इस पर जादूगर सांप बन गया, परी नेवला बनकर झपटी और उसका सिर कुचल दिया।'[1]

इसी तरह 'सती'[2] नामक ब्रज की लोककथा में, 'राजा इन्द्र घात चलाने वाले एक गुरू के कारनामों का पता चलने पर उसे यमदूतों से पकड़ बुलवाते है। यमदूत उसे मार-मारकर उसकी चमड़ी उधेड़ देते हैं तथा खून से लथपथ उसे पानी में बहा देते हैं। पानी में पड़ते ही वह कांतर बन जाता है, जिसे पीकर एक बैल मर जाता है, जिसका सारा मांस गिद्ध नोच खाते हैं तथा कांतर पड़ी रहती है। इतने में सती लड़की वहाँ पहुँचकर कांतर के ऊपर नमक छिड़कती है, जिसे चील अपनी चोंच में दबाकर राजा के आंगन में गिरा देता है, जहाँ वह सुन्दर हार बन जाता है। वह सुन्दर हार दिन में तो हार बना रहता है लेकिन रात को आदमी बनकर राजकुमारी के साथ चौपड़ खेलता है। संयोग की बात कि सती लड़की जोगी का भेष बनाकर वहाँ भीख मांगने आती है तथा वही हार मांगती है। हार न मिलने पर वह सात-दिन भूखे-प्यासे वही धरना दिए बैठी रहती है, जिससे राजकुमारी ने वह हार ओखली में डाल दिया। हार की जगह ओखली में चारों ओर सरसों के दाने बिखर जाते हैं, जोगी कबूतर बनकर सरसों चुगने लगा। एक सरसों के शेष रहते वह बिलाव बनकर कबूतर पर झपटा। कबूतर इन्द्रलोक को उड़ गया। बिलाव बाज बनकर कबूतर के पीछे पीछे उड़ा। कबूतर को राजा इन्द्र ने अपने अंक में छिपा लिया। तथा बाज बने साधु को नरक में सड़ने के लिए डाल दिया। तब राजा इन्द्र ने प्रसन्न होकर सती लड़की को सदा सौभाग्यवती होने का आर्शीवाद दिया।' इस तरह रूप-परिवर्तन

1- चौबोली रानी, लक्ष्मी निवास बिड़ला, पृ0-72
2- पुष्प की जड़ हरी, आदर्श कुमारी, पृ0-24 व 25

द्वारा लड़ाई की घटना लोककथाओं में मंत्र-प्रयोक्ता के रोष के परिणामस्वरूप घटित होती जिसमें वह अपनी इच्छानुसार अनेक रूप धारण करता चला जाता है।

रूपपरिवर्तन सम्बंधी कथाभिप्रायों के रूप में सबसे अधिक रोचक और कथा-शिल्प व दृष्टि से सबसे अधिक महत्वपूर्ण तीसरे वर्ग के अन्तर्गत आने वाली वे कथायें हैं, जिनमें किर जलाशय में स्नान करने, किसी वस्तु के खाने-पीने अथवा किसी वस्त्र-विशेष के धारण कर से रूप-परिवर्तन हो जाता है। 'महाभारत' में 'महर्षि च्यवन अश्विनी कुमारों के कहने पर सुन्दर रूप की अभिलाशा लेकर सरोवर के जल में प्रवेश करते हैं। दो घड़ी पश्चात वे दिव्य-रूप धारण किए सरोवर से बाहर निकलते हैं, उनकी युवावस्था थी। तदनन्तर, महर्षि च्यवन मुनि ने अनुकूल पत्नी, तरुण अवस्था और मनोवांछित रूप पाकर बड़े हर्ष का अनुभव किया और देववैद्यों से प्रसन्न होकर उन्हें यज्ञ में देवराज इन्द्र के समान ही सोमपान का अधिकारी बना देने का वादा किया।'[1]

कथासरित्सागर में 'भीमपराक्रम को पशु बनाने के लिए एक डायन स्त्री मंत्राभिषिक्त जव के दाने तैयार करती है। रात को वह मंत्र पढ़कर जव के दानों को जमीन पर फेंकती है, तत्क्षण वे पौधे व फल के रूप में तैयार हो जाते हैं तथा दाने- तोड़कर, उन्हें पीसकर सत्तू तैयार करती है। भीमपराक्रम लेटे-लेटे यह आश्चर्यजनक दृश्य देख लेता है और समझ जाता है कि यह कोई भयंकर योगिनी है। उसके स्नान करने के लिए जाते ही वह झटपट बर्तन के सत्तू बदलकर हंडिया में सत्तू रख देता है। वापस आने पर वह डायन स्त्री बरतन के सत्तू उसे खाने को देती है तथा हंडिया में से मंत्रसिद्ध सत्तू निकालकर स्वयं खाती है। उसे इस बात का पता नही चलता कि सत्तू बदल गये हैं तथा वह स्त्री मंत्र-सिद्ध सत्तू खाते ही बकरी बन जाती है।[2] इस तरह की कथाओं में प्रायः बदले की

1- महाभारत (द्वितीय खण्ड), वन पर्व, पृष्ठ- 1296 व 1297

2- कथासरित्सागर (तृतीय खण्ड), द्वादश लम्बक, चतुर्थ तरंग, पृष्ठ-93

बदले की भावना से छलपूर्वक किसी को कुछ खिलाकर पशु आदि बनाकर रूपपरिवर्त कराया जाता है।

'महाभारत' में,'राजा नल दावानल से घिरे कर्कोटक नाग की प्राण रक्षा करते हैं, जिससे वह राजा नल को दंश के द्वारा गौरवर्ण से श्यामवर्ण रूप में परिवर्तित कर देता है, जिससे कि लोग उन्हें पहचान न सके। साथ ही कर्कोटक नाग राजा नल को दो दिव्य वस्त्र देते हुए कहता है कि जब आप अपने पहले वाले रूप को देखना चाहे तो इन वस्त्रों को ओढ़ ले, जिनसे आच्छादित होते ही आप अपना पहले जैसा रूप प्राप्त कर लेंगे।'[1] आगे दमयंती से पुनर्मिलन के समय उसके द्वारा विलाप करने पर राजा नल के कर्कोटक नाग द्वारा दिए हुए दिव्य वस्त्रों को उसको स्मरण करते हुए ओढ़ लिया, जिससे उन्हें अपने पूर्व रूप की प्राप्ति हो जाती है।[2]

बुन्देली लोककथाओं में भी यह अभिप्राय व्यापक रूप में प्राप्त होता है। 'राजा रघु और ब्राह्मण'[3] बुन्देली लोककथा में 'राजा रघु अपनी साठ रानियों समेत सारा राज्य एक काना ब्राह्मण को दान में दे देते है। साथ में राजा इन्द्र के बगीचे से सुआ-सारो (तोता-मैना) द्वारा लाया व उन्हें भेंट किया गया अमृत फल भी (जिसकी विशेषता है जो इसे खायेगा वह कंचन-काया का हो जायेगा) यह सोचकर दे देते है कि इसे खाकर यह ब्राह्मण अमर हो जायेगा और रानियों सहित राज्य का समुचित उपयोग कर सकेगा। लेकिन ब्राह्मण के मन में संदेह हो जाता है तथा वह उस फल को स्वयं न खाकर एक अधमरे कुत्ता को खिला देता है। उस फल को खाकर कुत्ता की काया कंचन की हो जाती है।

1- महाभारत (द्वितीय खण्ड), वन पर्व, पृष्ठ- 1135

2- वही, पृष्ठ- 1162

3- गौने की विदा, शिव सहाय चतुर्वेदी, पृ0 41 से 44 तक

इसी तरह, बुन्देली लोककथा 'जैसी करनी वैसी भरनी'[1] में 'राजकुमार जंगल में गुजरते समय भूख लगने पर कुछ पके सीताफल तोड़कर खाता है; लेकिन उनको खाते ही उसकी नाक सवा हाथ चढ़ जाता है। जो साधु द्वारा दिए गये आम के खाने से पुनः अपने पूर्वरूप में आ जाता है।' 'बंदरिया राजकुमारी'[2] नामक ब्रज की लोककथा में, 'राजकुमार साधुओं से छिपकर मनुष्य से बन्दर तथा बन्दर से मनुष्य बनाने की जड़ी बूटी के बारे में जानकारी प्राप्त कर लेता है। तब उड़नखटोले पर बैठकर राजकुमारी के कमरे में जा पहुँचता है तथा उसे जड़ी धुंधाकर बंदरिया के रूप में परिवर्तित कर वापस चला आता है। राजा राजकुमारी को बंदरिया के रूप में देखकर ऐलान करवाता है कि जो कोई राजकुमारी को पुनः अपने पूर्व रूप में ला देगा, उसके साथ राजकुमारी का विवाह करके उसे आधा राज्य दिया जायेगा। राजकुमार दरबार में पहुँचकर दूसरी जड़ी सुंघाकर बंदरिया को राजकुमारी के रूप में परिवर्तित कर उसे प्राप्त कर लेता है।'

'छः हंस'[3] नामक बुन्देली लोककथा में, 'जादूगरनी की बेटी व सौतेली माँ छः राजकुमारों को जादू से बने कुर्ते पहनाकर उन्हें हंस के रूप में परिवर्तित कर देती है, जो आकाश में उड़ जाते हैं। राजा बहुत परेशान होता है। लेकिन उसकी पुत्री व राजकुमारों की बहन उन्हें जंगल में एक जगह ढूँढ़ निकालती है; जहाँ हंस संध्या समय केवल पन्द्रह मिनट के लिए अपना हंस रूप त्यागते हैं। बाकी समय वे हंस का रूप धारण किए रहते थे। इससे मुक्ति का उपाय सिर्फ यह था कि कोई छः वर्षों तक मौन धारण किए हुए, बिना हंसे जूही के फूलों के छः कुर्ते बनाये, जिनको पहनने से राजकुमार हंस-रूप से मुक्त होंगे। बहन कुर्ते बनाने का निश्चय करती है तथा मौन धारण कर, जूही के फूल इकट्ठे करके कुर्ते बनाना शुरू करती है। कुछ दिनों बाद एक दूसरा राजा वहाँ शिकार

1- जैसी करनी वैसी भरनी, शिव सहाय चतुर्वेदी, पृ0-14

2- पुष्प की जड़ हरी, आदर्श कुमारी, पृष्ठ-31 से 33 तक

3- छः हंस, श्री देव, मधुकर, वर्ष-1, अंक-4, 16 नवम्बर 1940, पृ0-17 से 19

के लिए आता है तथा उस लड़की को देखकर उस पर मोहित हो जाता है। बात करने पर वह लड़की कोई जबाव नही देती, फिर भी राजा उसे अपने यहाँ ले जाकर उससे विवाह कर लेता है। एक वर्ष पश्चात जब रानी बनी लड़की से एक सन्तान होती है तो राज-माता विद्वेषवश उसे छिपा देती है। इसी तरह तीन सन्तानों के साथ होता है। लेकिन लड़की कुछ कह नही पाती तथा अदालत उसे हत्यारी समझकर जीवित जलाने का आदेश देती है। जिस दिन उसे दण्ड दिया जाना होता है, संयोग से वह छः वर्ष का अन्तिम दिन भी होता है तथा लड़की ने अपने सभी कुर्ते भी बना लिए थे। केवल छठवें कुरते की दायी बाँह बनानी रह गयी थीं। जब लड़की जलाने के लिए चिता पर ले जायी जाती है तब उसने छहों कुरते अपनी बाँह पर टाँग लिए थे। इसी समय छः हंस आकाश में उड़ते हुए लड़की के पास आते हैं, जिससे लड़की उन पर कुरते डाल देती है। वे छहों भाई पुरुष रूप होकर आ खड़े होते है, केवल सबसे छोटे भाई की दायीं भुजा पंख होकर रह गयी थी। बहिन-भाइयों के हर्ष का ठिकाना नही रहता है।'

बुन्देली लोककथा 'केतकी के फूल'[1] 'बहेलिया का पुत्र केतकी के फूल की खोज में निकलता है। जंगल में समाधि लगाये एक साधु की छः महीने तक सेवा करता है, जिसके वरदान स्वरूप साधु उसे केतकी के फूल मिलने का उपाय बतलाते हुए कहता है कि आगे तुम्हें मनोहर बाग में दो स्त्रियाँ मिलेंगी, जिनमें एक कबूल-सूरत व दूसरी मैली-कुचैली रूप में होगी। तुम उस सुन्दर स्त्री वे फेर में न पड़कर मैली-कुचैली स्त्री का हाथ पकड़ना , जिससे तेरा काम हो जावेगा। लेकिन साधु के मना करने के बावजूद वह सुन्दर-स्त्री के पास पहुँच जाता है, जो उसे तोता बनाकर पिंजरे में कैद कर लेती है। लड़के के वापस न आने पर साधु वहाँ पहुँचकर अपने कमण्डल का जल तोते पर छिड़ककर उसे पुनः मनुष्य बना देता है तथा पुनः उसी हिदायत के साथ उसे भेजता है। इस बार बहेलिया का लड़का मैली-कुचैली कुरूप स्त्री का हाथ पकड़ता है, जो पहली सुन्दर स्त्री से भी अधिक रूपवान सोलह वर्ष की युवती बन गयी।' इस लोककथा में अभिमंत्रित जल

1- केतकी के फूल, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-6 से 9 तक

के द्वारा रूपपरिवर्तन होने के साथ निषेधों के उल्लंघन से भी रूप-परिवर्तन होता दिखलाया जाता है।

'बैरी बेटे'[1] बुन्देली लोककथा में, 'भगवान विष्णु प्रायश्चित के रूप में नारद जी को बारह वर्ष तक एक पटेल किसान के यहाँ जाकर सेवा करने को कहते हैं। पटेल के यहाँ पहुँचकर नारद जी थोड़े ही दिनों में उसके विश्वासपात्र सेवक बन जाते हैं। मकरसंक्रान्ति-पर्व के अवसर पर कोढ़ से ग्रसित पटेल की स्त्री नारद जी को लेकर गंगा नहाने जाती है। लेकिन रास्ते में ही पर्व-स्नान का समय निकलते देख नारद जी उसे कीचड़ में भरे हुए कुण्ड में ढकेल देते हैं, जिससे पहले तो वह नारद जी पर बड़ी नाराज होती है। लेकिन कीचड से लथ-पथ होने के कारण मजबूरीवश जब वह उस कुंड में स्नान करती है तो उसके शरीर का सारा कोढ़ दूर हो जाता है। अब वह नारद जी पर बहुत प्रसन्न होती है तथा उनसे क्षमायाचना करती है। लेकिन नारद जी कहते हैं कि यह तो सब पर्व-स्नान का फल है।' यह पर्व-विशेष के समय किसी सरोवर में स्नान करने से हुए रूप-परिवर्तन का उदाहरण है; इसे 'कायाकल्प' का होना भी कह सकते हैं। 'महाभारत' में महर्षि च्यवन का भी इसी तरह वृद्धावस्था से यौवनावस्था में आश्विनी कुमारों के कहने पर सरोवर में प्रवेश करने पर कायाकल्प होता है।

मौदहा (जिला- हमीरपुर, उ0प्र0) में स्थित 'दीवान शहीद बाबा' के स्थान में वृहस्पतिवार की सुबह, वहाँ की मिट्टी लगाकर स्नान करने से गठिया बात सम्बंधी रोग दूर हो जाते हैं। इसी तरह, हमीरपुर जिला मुख्यालय के पास स्थित ग्राम-झलोखर में तालाब के किनारे 'भुइयाँ रानी' की पीठ स्थित है, इसके समीप की मिट्टी को शरीर में मलने से भी गठिया वात का रोग दूर हो जाता है। इस तरह, किसी सरोवर में स्नान करने या जड़ी बूटी , मिट्टी आदि रगड़ने से हुआ रूप परिवर्तन लोक-विश्वासों पर आधारित होने के साथ ही जनसामान्य के जीवन-अनुभवों से भी समर्थित रहा है।

1- 'केतकी के फूल' , शिव सहाय चतुर्वेदी, पृ0-57-60

'रूप-परिवर्तन' कथाभिप्राय से सम्बन्धित उपरोक्त कथाओं के विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि इस कथाभिप्राय का उपयोग अत्यंत व्यापक रूप में हुआ है। इसके प्रयोग के द्वारा कथा में अलौकिकता, रहस्यमयता, मनोरंजन तथा गति एवं त्वरा का विचित्र समावेश देखा जा सकता है। लोककथाओं में अनेक रूपों, साधनों एवं उद्देश्यों को लेकर इस अभिप्राय का प्रयोग हुआ है। रूप-परिवर्तन के लिए इन घटनाओं की श्रृंखला इस अभिप्राय के जटिल साहित्यिक रूप को दर्शाता है; घटनाओं की योजना के लिए कथा-शिल्प के रूप में इस कथाभिप्राय का प्रयोग बहुतायत से मिलता है।

****

****

अध्याय-छः

निषेध:-

1- कक्ष-विशेष में प्रवेश करने का निषेध

2- दिशा-विशेष में गमन का निषेध

3- पीछे लौटकर देखने का निषेध

4- भेद को प्रकट करने का निषेध

5- स्थान-विशेष में ठहरने का निषेध

6- लालचवश या आकर्षित होकर निषेधों का उल्लंघन।

****

मनुष्य में एक प्रवृत्ति प्राय: देखी जाती है कि जिस काम को करने के लिए उसे मना किया जाता है, उसे वह उत्सुकतावश किए बिना नही रहता चाहे परिणामस्वरूप उसे दुख ही क्यों न उठाना पड़े। भारतीय कथाओं में अनेक ऐसे 'निषेधों' का उल्लेख मिलता है, जिनके उल्लंघन से नायक अथवा नायिका को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। वस्तुत: लोककथाओं में इस अभिप्राय के मूल में सामाजिक रीतिरिवाजों एवं लोकविश्वासों दोनों का ही योगदान है।

सामाजिक व्यवस्था की अभिव्यक्ति समुदाय विशेष के रीति-रिवाजों के रूप में होती है। सामाजिक रीतिरिवाज दो प्रकार के होते हैं- (1) विधिमूलक और (2) निषेधमूलक। निषेध-मूलक रीतिरिवाजों में से अधिकांश का मूल-रूप आदिम समाज के धार्मिक निषेधों में देखा जा सकता है। आदिम समाज में कबीलों के अपने-अपने 'टोटम' होते थे, जिन्हें किसी प्रकार की हानि नही पहुँचाई जाती थी। धीरे-धीरे टोटमों से सम्बन्धित अनेक प्रकार के निषेध बन गये, जिनका धार्मिक महत्व था। उदाहरणार्थ - मध्यभारत में निवास करने वाले भीलों की एक कथा के अनुसार 'एक बार एक भील किसी बिल्ली का पीछा कर रहा था, अचानक वह बिल्ली रूप बदलकर प्रस्तर प्रतिमा बन गयी। तब से उस व्यक्ति के वंशजों ने उसे अपना टोटम मान लिया। वे बिल्ली को तभी पूजते हैं जब परेशानी में होते हैं एवं बिल्ली का छुआ हुआ कोई भी पदार्थ नही खाते हैं।'[1] आगे ज्यों-ज्यों सामाजिक रीति-रिवाजों मे अभिवृद्धि होती गयी, उनका उल्लंघन भी सामाजिक अपराध बनता गया और ऐसे कार्य सामाजिक निषेध बन गये। बाद में किसी प्रकार के दुष्परिणाम या अमंगल से बचने के लिए भी निषेधमूलक रीति-रिवाजों का जन्म हुआ। अत: वे सभी वर्जित कार्य 'निषेध' के अन्तर्गत आते हैं, जिनके करने से किसी प्रकार का अहित या अमंगल होने की आशंका होती है। इस प्रकार निषेधों का स्थान सामाजिक वर्जनाओं के अन्तर्गत आता है, जिनका प्रयोग लोककथाओं में अभिप्रायों के रूप में मिलता है।

1- भारत की जनजातीय संस्कृति, विजयशंकर उपाध्याय व विजय प्रकाश शर्मा, पृ0. 73

लोकविश्वासों की मानसिकता के अनुसार प्रत्येक लोकविश्वास का पालन करने अथवा न करने के दो ही परिणाम होते हैं- उनके अपनाने पर मानव को लाभ होता है तथा अवज्ञा करने पर मानव को कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। लोककथाओं में भी निषेधात्मक कार्यो का उल्लंघन करने पर कठिनाइयों से साक्षात्कार एवं पालन करने पर लाभ होता दिखलाया जाता है। अतः यह माना जा सकता है कि निषेधात्मक लोकविश्वास ही परम्परा से पुष्ट होकर कथाभिप्राय बन गये हैं। कथाभिप्रायों में भोजन ग्रहण न करना, पीछे पलट कर न देखना, मौन धारण करना, भेद न बताना, दिशा-विशेष की ओर गमन न करना, कक्ष-विशेष में प्रवेश न करना, यौन सम्बंध स्थापित न करना आदि कार्यों का समावेश मिलता है। इन सभी निषेधात्मक कथाभिप्रायों का जन्म लोकविश्वासों से ही हुआ है।

'निषेधों' के उल्लघन से सम्बन्धित कथाभिप्राय को निम्नलिखित भागों में विभक्त किया जा सकता है —

1- कक्ष-विशेष में प्रवेश करने का निषेध
2- दिशा-विशेष में गमन करने का निषेध
3- पीछे लौटकर देखने का निषेध
4- भेद को प्रकट करने का निषेध
5- स्थान-विशेष में ठहरने का निषेध
6- लालचवश या आकर्षित होकर निषेधों का उल्लंघन।

'कक्ष-निषेध' कथाभिप्राय से सम्बन्धित कथाओं में नायक को किसी कक्ष में जाने का निषेध किया जाता है। किन्तु इस निषेध के कारण उसका कौतुहल बढ़ जाता है। वह उस कक्ष में अवश्य जाता है और वहाँ उसे आश्चर्यजनक दृश्य देखने को मिलते हैं। 'कथासरित्सागर' की एक कथा में विद्याधरों की कन्या अनिन्द्यसुन्दरी चन्द्रप्रभा ने अपने प्रिय शक्तिदेव के

लिए सब प्रकार के आराम एवं सुख-सुविधाओं की व्यवस्था की। वह शक्तिदेव की ओर आकृष्ट थी और उससे विवाह करना चाहती थी। किन्तु विवाह से पहले वह अपने पिता की अनुमति लेना आवश्यक समझती थी। इसीलिए एक दिन जब वह अपने पिता से विवाह की अनुमति लेने के लिए जाने लगी तो उसने शक्ति-देव से कहा कि इस भवन में अकेले रहते हुए भी तुम बीच की मंजिल में कभी न जाना। चन्द्रप्रभा के चले जाने पर शक्तिदेव ने सोचा कि मुझे बीच की मंजिल में जाने से क्यों रोका गया है? कौतुहलवश वह उसी मंजिल में जा पहुँचा। वहाँ उसने गुप्त रूप से सुरक्षित तीन मण्डपों को देखा। प्रथम मण्डप में प्रविष्ट होकर सुन्दर विछावनों से युक्त रत्नों के पलंगपर दुपट्टा ओढ़े किसी व्यक्ति को शयन किए हुए देखा। जब उसने कपड़ा उठाकर देखा तो उसे परोपकारी राजा की मरी हुई कन्या कनक-रेखा दिखाई पड़ी। उसे देखकर शक्तिदेव आश्चर्यचकित हो सोचने लगा कि जिसके लिए मेरी इतनी लम्बी और कष्टप्रद यात्रा हुई, वह निर्जीव होकर यहाँ पड़ी है और वर्धमान में जीवित है। ऐसा सोचते-सोचते उसने दूसरे दोनों मण्डपों के अन्दर जाकर उसी प्रकार सोई हुई और दो कन्याएं देखीं। उन मण्डपों से निकलकर आश्चर्यचकित शक्तिदेव ने नीचे एक अत्यंत सुन्दर बावली देखी और उसके किनारे पर रत्नों की जीनवाले एक सुन्दर घोड़े को देखा। घोड़े के समीप आकर उस पर चढ़ने का विचार कर ज्यों ही उस पर चढ़ने का प्रयत्न किया, त्यों ही घोड़े ने लात मारकर उसे पासवाली बावली में गिरा दिया। बावली में गिरा हुआ शक्तिदेव अकस्मात् ही वर्धमान नगर-स्थित अपने घर के उद्यान की बावली में जा निकला।[1] इस कथा में जहाँ शक्तिदेव निषिद्ध-कक्ष में प्रवेश करके कनकपुरी का रहस्य जान लेता है, जिससे उसे विद्याधरों का राज्य मिलने के साथ चार अनिन्द्य सुन्दरी विद्याधर कन्याएं प्राप्त होती हैं, वहीं दूसरी ओर वहाँ पर स्थित घोड़े के माध्यम से वह वापस अपने नगर वर्धमान में आ जाता है। इस तरह निषिद्ध-कक्ष में प्रवेश करने पर शक्तिदेव को लाभ ही होता है।

1- कथासरित्सागर (प्रथम खण्ड), पंचम लम्बक, तृतीय तरंग, पृ0-565 से 569 तक

बुन्देली लोककथाओं में कक्ष-निषेध- अभिप्राय व्यापक रूप में प्राप्त होता है। 'पाषाण-नगरी'[1] बुन्देली लोककथा में, 'राजकुमार पाषाण नगरी की राजकुमारी के पास जा पहुँचता है जो इन्द्रसभा में नर्तकी थी तथा रात होते ही वह इन्द्रसभा को चली जाती थी। जाते समय उसने राजकुमार से कहा कि महल में तुम इच्छानुसार रहो, पर तुम उन चार कोठों को कभी भूलकर भी न खोलना। पर राजकुमार इस निषेध को नही मानता है। उसने तीन दिनों में क्रमशः तीन कोठे खोल डाले। पहले कोठे में एक नौका, दूसरे में श्यामकर्ण घोड़ा और तीसरे में एक सफेद हाथी बँधा पाया। अब क्या था राजकुमार नाव से समुद्र की, श्यामकर्ण घोड़ा से तीनों लोकों की और हाथी पर बैठकर इन्द्रलोक का यात्रा करने लगा। राजकुमारी को जब यह मालूम हुआ तो वह बोली कि तीन कोठे तो तुमने खोल ही डाले हैं पर अब चौथा कोठा कदापि न खोलना। पर राजकुमार नही माना, उसने राजकुमारी के जाते ही चौथा कोठा खोला जिसमें वीणा, पखावज आदि अनेक बाजे रखे थे। राजकुमार ने उनको बजाना आरम्भ कर दिया; उनकी आवाज इन्द्रलोक तक पहुँची, जिससे इन्द्रसभा के बाजों के साथ इन बाजों की आवाज मिलकर गड़बड़ी पैदा करने लगी, राजकुमारी ताल चूकने लगी। इन्द्र ने राजकुमारी को शाप दे दिया कि कल सूर्योदय होने पर तुम बारह मन का पत्थर बनकर समुद्र में जा गिरोगी।' इन लोककथा में राजकुमार द्वारा कक्ष-निषेध करने पर उसे तो कोई हानि नही होती लेकिन उसके कारण राजकुमारी अवश्य संकट में फँस जाती है।

बुन्देली लोककथा 'पण्डित की बहू' में निपूते ब्राह्मण- ब्राह्मणी यह बहाना बनाकर कि काशी में हमारा लड़का पढ़ता है, नगर पुरोहित की लड़की को कंठी -पोथी से भांवरे डालकर , बहू बनाकर घर ले आते हैं। इस छलपूर्वक विवाह की बात मालूम होने पर बहू अत्यंत दुखित हुई। एक दिन, मन्दिर जाते समय ब्राह्मण और ब्राह्मणी ने घर के भीतर के हमेशा बंद रहने वाले तीन कोठे में से दो के ताले खोलते गये, पर एक

1- पाषाण नगरी, शिव सहाय चतुर्वेदी, पृ0-16 व 17

कोठे का ताला लगा रहने दिया। जाते समय चाबियों का गुच्छा बहू को देते हुए कहा कि इस तीसरे कोठे को, जिसमें ताला पड़ा है कभी मत खोलना। बहू ने पहले कोठे में सोने-चाँदी के बर्तन और जेवर देखे, दूसरे में सब तरह की चीजें और कीमती कपड़े पड़े देखे। बहू अपने मन में संकल्प-विकल्प करने लगी कि मेरे ससुर ने हजारों-लाखों की धन-जायजाद तो मेरे सुपुर्द कर दी, लेकिन इस तीसरे कोठे में ऐसी कौन सी कीमती चीज होगी, जिसे देखने से मुझे रोक दिया है। चाबी तो उसके हाथ में थी ही, उसका मन न माना। किवाड़ खोलकर देखा तो एक सोलह वर्ष का सुन्दर कुमार संध्या-पूजन कर रहा था। उसके पास से गंगाजी की धार बह रही थी। बहू कुछ समय तक भूली-सी खड़ी उसे देखती रही। उसकी समझ में न आया कि आखिर क्या माया है? फिर साहस करके उस ब्राह्मण कुमार के सामने जा खड़ी हुई। ब्राह्मण कुमार ने पूछा कि तुम कौन हो? बहू ने कहा, मैं पंडित की बहू हूँ। मेरे ससुर कहा करते थे कि मेरा लड़का काशी में पढ़ता है। कहीं आप ही तो वह नही हैं? ब्राह्मण कुमार ने कहा कि मेरे माता-पिता सत्यनारायण का इष्ट करते हैं। कल पूर्णमासी को जब कथा होने लगेगी तब अगर वे मुझे बुलावेंगे तो मैं आ जाऊँगा। माँ-बाप की आज्ञा बिना मैं पढ़ना लिखना छोड़कर कैसे आ सकता हूँ।'[1] इस कथा में निषेध के उल्लंघन का फल सुखद होता है।

'सिंहलद्वीप की पद्मिनी' नामक ब्रज की लोककथा में, 'राजा अपनी मृत्यु के क्षणों में वजीर को अपने इकलौते पुत्र का भार सौंपते हुए उसे महल के एक विशेष-कक्ष के अन्दर जाने का निषेध करता है। एक दिन वजीर राजकुमार को महल के कमरे दिखाने ले गया। उसने सब कमरे खोल-खोलकर दिखा दिए, लेकिन एक कमरा नही दिखाया। राजकुमार के बहुत जिद करने पर अपने बेटे की सलाह पर वजीर ने उस कमरे का ताला खोला। राजकुमार , वजीर व उसका लड़का तीनों कमरे के अन्दर पहुँचे। कमरा बड़ा सुन्दर था, छत पर तरह-तरह के कीमती झाड़-फानूस लटक रहे थे और फर्श पर मखमल के

1- पाषाण नगरी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-132 से 136 तक

गलीचे बिछे हुए थे। उसकी दीवार पर सुन्दर-सुन्दर स्त्रियों की तस्वीरें लगी थीं। यकायक राजकुमार की निगाह एक बड़ी सुन्दर युवती की तस्वीर पर पड़ी। उसने वजीर से पूछा यह किसकी है। वजीर को जिसका डर था, वही हुआ। उसे बताना ही पड़ा कि वह सिंहलद्वीप की पद्मिनी की तस्वीर है। राजकुमार ने उसकी सुन्दरता पर मोहित होकर पद्मिनी से ही व्याह करने का निश्चय किया। वजीर हैरान होकर बोला कि सिंहलद्वीप पहुँचना आसान काम नही है तथा ऐसे अनहोने काम में हाथ डालने की सलाह मैं आपको कैसे दे सकता हूँ। पर राजकुमार नहीं माना, उसने वजीर के लड़के को साथ लेकर सिंहल-द्वीप की ओर प्रस्थान किया।'[1] जहाँ 'पण्डित की बहू' लोककथा में निषिद्ध-कक्ष खोलने पर बहू को उसका पति मिल जाता है, वहीं इस लोककथा में राजकुमार निषिद्ध-कक्ष में जाकर सुन्दरी का चित्र देखकर उसे प्राप्त करने के लिए निकल पड़ता है। अनेक कठिनाइयों का सामना करता हुआ राजकुमार अन्त में अपने लक्ष्य (सुन्दरी) को प्राप्त करने में सफल होता है। इस तरह दोनों की लोककथाओं में कक्ष-निषेध के परिणामस्वरूप प्रिय और प्रिया की प्राप्ति होती है। उपर्युक्त लोककथाओं में नायक या नायिका द्वारा कक्ष-निषेध का उल्लंघन कौतूहलवश जानबूझकर किया जाता है।

बुन्देली लोककथाओं में नायक को 'दिशा-विशेष में जाने का निषेध' किया जाता है, लेकिन वह इसका उल्लंघन करके निषिद्ध-दिशा में अवश्य जाता है। बुन्देली लोककथा 'बीरन पटवा की बेटी' में 'राजा का लड़का शिकार खेलने जंगल को जाने लगा। राजा ने उससे कहा कि बेटा, तुम शिकार के लिए सब दिशाओं में जाना, पर भूलकर भी दक्षिण दिशा को मत जाना। राजकुमार ने सोचा कि दक्षिण दिशा में जाने के लिए पिताजी क्यों रोकते हैं? चलकर देखना चाहिए। एक दिन वह दक्षिण की ओर चला, चलते-चलते वह एक नगर में जा पहुँचा जहाँ बीरन पटवा का राज्य था। वहाँ नदी पर धोबी बहुत

1- पुष्प की जड़ हरी, आदर्श कुमारी, पृ0-48 से 51

कीमती और सुन्दर कपड़े धो रहा था। ऐसे कपड़े राजकुमार ने पहले कभी न देखे थे उसे कौतूहल हुआ, धोबी से पूछने पर मालूम हुआ कि ये बीरन पटवा की बेटी के कपं हैं। राजकुमार मन में सोचने लगा कि जिसके कपड़े इतने सुन्दर हैं, वह न जाने कितनं सुन्दर होगी? अतः उसने निश्चय किया कि मैं अपना विवाह बीरन पटवा की बेटी रं ही करूंगा। दर असल बीरन पटवा की बेटी इन्द्र के अखाड़े की परी थी। एक दिन राजकुमार बेटी के साथ इन्द्र के दरबार में जाकर अपनी गायन-विद्या का प्रदर्शन करके इनाम में बेटी को मांग लेता है तथा अपने घर आकर आनन्दपूर्वक रहने लगता है।'[1] इस लोककथा में नायक को दक्षिण-दिशा में जाने का निषेध किया जाता है। लेकिन वह उस निषिद्ध-दिशा में जाता है। जिसके परिणामस्वरूप नायक को सुन्दरी की प्राप्ति होती है।

इसी तरह, बुन्देली लोककथा 'वनखंडी रानी' में 'एक राजा के चार लड़के शिकार खेलने गये। राजा ने उन्हें समझाया कि बेटा तुम लोग उत्तर, पश्चिम और पूर्व, तीन दिशाओं में निर्भय होकर शिकार खेलने जाना, पर कभी भूलकर भी दक्षिण-दिशा की ओर मत जाना। एक दिन चारों भाई तीन दिशाओं में खूब भटके पर उन्हें कोई शिकार नही मिला। अतः उन्होंने निषिद्ध दक्षिण दिशा की ओर जाने का निश्चय किया। अभी वे कुछ दूर ही चले कि एक हिरन का पीछा करते हुए जंगल में बहुत दूर निकल गये, वहाँ एक मैदान के बीचो-बीच दुमंजिला मकान बना था। चारो भाई मकान में पहुँचे, देखा, मकान खाली है । मकान के भीतर नरम गद्दे युक्त एक सुन्दर पलंग पड़ा है तथा मकान के बाहर एक पेड़ से ऊंटनी बंधी है। दिन-भर के थके-मांदे चारो भाई खा-पीकर सोने की तैयारी करने लगे, बड़ा भाई पलंग पर लेटा और तीनों भाई जमीन पर सो गये। मकान के बाहर बंधी ऊँटनी जो डायन थी आधी रात के समय मकान के अन्दर आयी और जमीन पर सो रहे तीन भाइयों में से एक को उठा ले गयी तथा उसे खा-पीकर पुनः ऊँटनी बनकर पेड़ से बंध गयी। सुबह एक भाई को न देखकर अन्य तीन भाइयों ने सोचा कि घर चला गया होगा। दूसरी रात, दूसरा भाई पलंग पर सोया और शेष दो धरती पर। आधी रात के

1- जैसी करनी वैसी भरनी, शिव सहाय चतुर्वेदी पृ0-30 से 32 तक

के समय ऊँटनी एक भाई को और खा गयी। तीसरी रात, छोटा भाई पलंग पर सोया और एक भाई धरती पर जिसे रात को डायन खा गयी। सबेरे जब पलंग पर से छोटा भाई उठा तो वह समझ गया कि यह ऊँटनी की करामात है। छोटा भाई घोड़े पर बैठकर वहाँ से भागा। ऊँटनी ने सुन्दर स्त्री बनकर उनका पीछा किया। भागते-भागते राजकुमार एक नगर में जा पहुँचा, वहाँ पर उसने एक मकान-मालिक से बचाव के लिए प्रार्थना की। मकान-मालिक ने उसे अपने मकान में छिपा लिया। इतने में स्त्री-वेश में डायन ने आकर कहा, मेरा पति तुम्हारे मकान में छिपा है, उसे जल्दी बाहर निकालो मकान मालिक ने यह कहकर कि यहाँ कोई नही है, डायन को भगा दिया।[1] इस लोककथा में चार राजकुमार निषिद्ध दक्षिण-दिशा की ओर शिकार खेलने जाते हैं, वहाँ वे एक डायन के जाल में फँस जाते हैं। जिसमें तीन राजकुमार अपने प्राण-गवाँ बैठते है; सिर्फ छोटा राजकुमार ही वहाँ से भागकर अपने प्राण बचा पाता है।

'सपने की खोज' बुन्देली लोककथा में, 'राजा के सपने की खोज के लिए बड़ा राजकुमार अपने पिता से आज्ञा मांगता है। राजा ने कहा, बेटा जाओ। ईश्वर तुम्हें सफलता दे। पर मैं एक नसीहत देता हूँ; तुम उत्तर , दक्षिण और पूर्व इन दिशाओं में जहाँ भी चाहों जाना, पर भूलकर भी कभी पश्चिम दिशा की ओर मत जाना। राजकुमार 'जो आज्ञा' कहकर चला गया। उसने उत्तर, दक्षिण और पूर्व दिशा में जाकर सपने की खोज की पर कोई पता न लगा। उसने सोचा, तीन दिशाओं में तो कुछ पता न चला अब एक दिशा पश्चिम और बाकी रह गयी है। संभव है पश्चिम में सपने का पता चले। स्यात् इसीलिए पिताजी ने पश्चिम की ओर जाने की मनाही कर दी है। ऐसा सोच वह पश्चिम की ओर चला। चलते-चलते कुछ दिन में वह एक शहर में जा पहुँचा। उस शहर की रानी की आज्ञा थी कि जो कोई परदेशी मुसाफिर यहाँ आये वह रानी के सामने पेश किया जाये। रानी के सिपाही आये और उसे रानी के पास ले गये। रानी ने उससे चौपड़ खेलने के लिए

1- जैसी करनी वैसी भरनी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-86 से 88 तक

कहा। राजकुमार खेल में हार गया। रानी ने उसे कैदखाने में डाल दिया। इसी तरह अन्य दो छोटे राजकुमार भी रानी के कैद-खाने में पहुँच गये। अन्त में सबसे छोटा राजकुमार रानी के बाग की मालिन के घर पहुँचा। मालिन बोली, मुसाफिर इस बाग में पुरुषों के आने की मनाही है। राजकुमार उसे मुहरों का लालच देकर उसके यहाँ रुक गया तथा मुहरें देखकर रानी से चौपड़ जीतने की युक्ति प्राप्त कर ली। जिससे रानी को हराकर उसके साथ विवाह करके अपने तीन भाइयों को भी छुड़ा लिया।'[1] इस लोककथा में पश्चिमदिशा में जाने का निषेध है लेकिन उसका परिणाम अन्ततः सुखद रहता है।

बुन्देली लोककथाओं में नायक दिशा-विशेष गमन के निषेध का उल्लंघन करता है, जिससे वह सुन्दरियों के जाल में फँस जाता है लेकिन अन्ततः वह उनको अपनी पत्नी के रूप में प्राप्त करने में सफल होता है। दिशा विशेष गमन की निषिद्धता सम्बंधी कथा-भिप्राय लोकविश्वास पर आधारित है। आज भी आसाम में स्थित कामरूपजिले की ओर गमन करने में सामान्य जनमानस भय मानता है क्योंकि वहाँ की स्त्रियों के मोहिनी-रूप एवं स्वतंत्र कामाचारिणी होने से सम्बंधित अनेक दन्तकथाएं प्रसिद्ध हैं। कक्ष-निषेध की तरह दिशा-विशेष की ओर गमन के निषेध का उल्लंघन भी कौतूहलवश जानबूझकर होता है।

बुन्देली लोककथाओं में नायक को विशेष-कार्य सम्पन्न करने के दौरान वापस आते समय 'पीछे लौटकर देखने का निषेध' किया जाता है लेकिन नायक निषेध का उल्लंघन अवश्य करता है। फलस्वरूप नायक को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। 'कुमारी अनारमती' बुन्देली लोककथा में, 'राजकुमार भौजाई द्वारा ताना देने पर अनारमती को ब्याह लाने का प्रण करके घर से निकल पड़ा तथा जंगल में छः महीने एक साधु की सेवा करके उसे प्रसन्न किया। साधु इच्छापूर्ण होने का आश्वासन देकर उसे सुआ बनाकर

1- गौने की विदा, शिव-सहाय चतुर्वेदी, पृ0-20 से 24 तक

बोला कि तुम उड़कर तीन कोस उत्तर की ओर जाओ। वहाँ तुमको एक सुन्दर बाग में अनार का पेड़ लगा मिलेगा। उसमें सबसे बड़ा फल तोड़कर तुरन्त इस आश्रम को लौट आना। इस बात का ध्यान रखना कि लौटते समय पीछे फिरकर न देखना, नही तो तुम पत्थर के हो जाओगे। सुआ बना राजकुमार उड़कर बाग में पहुँच गया। यह बाग एक प्रसिद्ध जादूगर का था। ज्योंही सुए ने अनार का फल तोड़ा, त्योंही चोर-चोर पकड़ो - पकड़ो की आवाज आने लगी। सुआ अनार लेकर भागा। वह थोड़ी ही दूर उड़ा था कि उसे अपने पीछे बहुत से लोगों के दौड़ने की आवाज सुनाई दी। 'घबड़ाकर ज्योंही उसने पीछे की ओर देखा त्योंही वह पाषाण का हो गया और उसके हाथ का अनार उछलकर पुनः पेड़ में जा लगा। इधर राजकुमार को लौटने में विलम्ब होते देखा साधु वहाँ पहुँचा तथा अपनी पेंती चीरकर पाषाण पर छिड़का, जिससे राजकुमार सजीव हो गया। साधु ने उसे डाँटकर कहा, तूने मेरा कहा न माना इस कारण तेरी यह गति हुई। याद रखना इस बार लौटते समय पीछे मुड़कर नही देखना अन्यथा जीवन से हाथ धो बैठेगा। राजकुमार पुनः सुआ बनकर बाग में जा पहुँचा। यहाँ-वहाँ देखकर उसने फल तोड़ा और उसे चोंच में दबाकर भागा। पीछे भयंकर शोरगुल सुनाई देने पर भी इस बार पीछे लौटकर न देखा तथा साधु के आश्रम में आ गया। साधु ने राजकुमार को फिर उसके अगली रूप में करके कहा, तुम इस अनार को लेकर घर जाओ तथा वहाँ अनार को फोड़ना। तुम्हारी इच्छा पूर्ण हो जायेगी।'[1]

इसी तरह, 'काग बिड़ारिन' बुन्देली लोककथा में भी, 'राजकुमार ने सुन्दरी की तलाश में घर से निकलकर अपनी सेवा से साधु को प्रसन्न कर उससे इन्द्र के दरबार की हंसनपरी मांगी। साधु ने कहा, बेटा तूने चीज तो बहुत कठिन मांगी है। मेरे आश्रम से चार योजन की दूरी पर मानसरोवर में चाँदनी रात के समय इन्द्र की परियाँ स्नान करने

1- गौने की विदा, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0. 68 से 71 तक

आती हैं। वे अपने वस्त्र किनारे रखकर नग्न स्नान करती हैं। तुम वहाँ जाकर किसी उपाय से उनके वस्त्र लेकर यहाँ भाग आना। लेकिन पीछे लौटकर न देखना और परियों के किसी लोभ में न आना। साधु के कहे अनुसार राजकुमार चार बजे रात को मानसरोवर पर जा पहुँचा। देखा कपड़े किनारे पर रखकर परियाँ स्नान कर रही हैं। राजकुमार ने अवसर देखकर उनके सब कपड़े इकट्ठे कर लिए और उन्हें पोटली में लपेटकर साधु की कुटी की ओर भागा। इधर जब परियों ने देखा तो वे चोर-चोर कहकर चिल्लाईं और उसके पीछे दौड़ी। अंत में उन्होंने अपनी माया के बल से रास्ते में एक सुन्दर बाग तैयार कर दिया, जिसकी विचित्रता देखकर राजकुमार भौचक्का सा हो गया तथा उस बगीचे की ओर देखने लगा। इतने में परियाँ आ पहुँची और उन्होंने अपने कपड़े छीन लिए। राजकुमार उसी समय जलकर भस्म हो गया। इधर राजकुमार को आने में देर होती देख साधु वहाँ पहुँचा तथा अपने कमण्डल से थोड़ा जल भस्म पर छिड़ककर राजकुमार को जिन्दा कर दिया। साधु ने राजकुमार को समझाया कि जो तुम्हें हंसनपरी की आवश्यकता है तो तुम परियों के वस्त्र लेकर तुरन्त ही मेरी कुटी में भाग आना। पीछे लौटकर न देखना और न परियों के किसी प्रलोभन में आना। राजकुमार पुनः सरोवर पर जा पहुँचा तथा साधु के कहे अनुसार कपड़े लेकर भागा। परियों ने बहुत उपाय किए परन्तु राजकुमार भागता हुआ साधु की कुटी में जा छिपा। पीछे परियाँ भी दौड़ी आयी और साधु से. अपने कपड़े वापस दिला देने को कहा। साधु ने उन्हें राजकुमार की इच्छा बतलायी; अंत में लाचार होकर परियों को बात माननी पड़ी। उन्होंने कहा, कल सबेरे हम श्रृंगार करके आवेंगी, उस समय राजकुमार जिसे चाहे उसका हाथ पकड़ ले। वह खुशी से उसके साथ चली जावेगी। दूसरे दिन प्रातः काल बहुत सी परियाँ बढ़िया - बढ़िया श्रृंगार करके आयी पर साधु के कहे अनुसार राजकुमार ने सबसे कुरूप और फटे-पुराने वस्त्र पहने परी का हाथ पकड़ा जो हंसनपरी थी। बाकी सब परियों के चले जाने पर हंसनपरी अपने असली रूप में आ गयी, जिसे देखकर राजकुमार बहुत खुश हुआ।'[1]

1- बुन्देलखण्ड की ग्राम्य कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-172 से 174 तक

'निषेध तथा उसका उल्लंघन' ही वह कथा-तन्तु है जो निषेध को पूरा नही होने देता और कथा रोचकता तथा चमत्कार के साथ आगे बढ़ती है। पिछली दोनों ही बुन्देली लोककथाओं में राजकुमार प्रथम बार निषेध के बावजूद पीछे मुड़कर देखता है जिससे वह प्राण गवाँ बैठता है। साधु वहाँ पहुँचकर राजकुमार को पुनः जीवित कर देता है लेकिन एक बार फिर निषेध लगाता है कि पीछे मुड़कर न देखना। दूसरे प्रयास में राजकुमार निषेध का उल्लंघन नही करता, जिससे वह सुन्दरी को प्राप्त करने में सफल होता है।

स्वयं संग्रहीत 'चाँदी का चबूतरा सोने का पेड़'[1] बुन्देली लोककथा में भी राजकुमार पीछे मुड़कर देखता है, जिससे वह पत्थर हो जाता है। साधु उसे पुनः जीवित करके दोबारा पीछे लौटकर देखने का निषेध करता है। इस बार राजकुमार निषेध का उल्लंघन नही करता, जिससे वह अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल हो जाता है। लेकिन इस लोककथा में राजकुमार का लक्ष्य सुन्दरी कन्या की प्राप्ति न होकर अपने पिता द्वारा देखे गये सपने को सच करके दिखाना है, जिसके साथ उसे सुन्दरियाँ भी प्राप्त होती हैं।

पीछे लौटकर देखने के निषेध-युक्त लोककथाओं में प्रायः सुन्दरी कन्या या परी को प्राप्त करने की कामना से नायक कठिन साधनायें करता है। लेकिन स्वयं संग्रहीत 'राजा और फसिया का लड़का' बुन्देली लोककथा में नायक का लक्ष्य विशिष्ट-पक्षी को प्राप्त करना है, सुन्दरियाँ तो उसे अनायास ही मिल जाती हैं। लोककथा में, 'राजा की आज्ञानुसार फसियों का लड़का एक विशेष चिड़िया का लेने निकला तथा जंगल में गुरू महाराज की छः महीने तक सेवा करके उन्हें प्रसन्न कर चिड़िया प्राप्त करने का उपाय पूछा। गुरू महाराज ने कहा, तुम यहाँ से समुद्र के किनारे जाओ, वहाँ एक पेड़ पर चढ़कर बैठ जाना, आधी रात के समय इन्द्रासन की परियाँ वहाँ स्नान करने आयेगी तुम उनके वस्त्र लेकर भाग आना। लड़के ने ऐसी ही किया, आधी रात को जब चार परियाँ आकर अपने

1- चाँदी का चबूतरा सोने का पेड़, कथक्कड़- राजाराम कुशवाहा, संग्रहक्रमांक - 35 {अप्रकाशित}

वस्त्र उतारकर समुद्र में तैरने लगी, वह वह उनके वस्त्र लेकर भागा। वे चोर-चोर कहकर उसके पीछे दौड़ी, घबड़ाकर उसने पीछे मुड़कर उन्हें देखा, जिससे वह भस्म हो गया। परियाँ अपने वस्त्र लेकर चली गयी। इधर विलम्ब होते देख गुरू महाराज वहाँ पहुँचे तथा भभूत हाथ में लेकर मंत्र पढ़कर वहाँ छिड़क दिया, जिससे लड़का पुनः जीवित हो उठा। गुरू ने पुनः पीछे लौटकर न देखने को कहकर उसे भेजा। इस बार वह कपड़े लेकर बिना पीछे मुड़कर देखे सीधे कुटी में जा घुसा। परियों ने वहाँ आकर गुरू महाराज से अपने वस्त्र मांगे तो उन्होंने चिड़िया देने को कहा। दो परियाँ अपने वस्त्र लेकर इन्द्रलोक गयी तथा वहाँ से विशेष चिड़िया को ले आयी। उन्होंने लड़के को चिड़िया देने के साथ छोटी परी की शादी भी उसके साथ कर दी।[1]

इन सभी बुन्देली लोककथाओं में नायक अपनी इच्छित वस्तु, प्रायः सुन्दरी नायिका की प्राप्ति के लिए घर से निकलकर साधु को प्रसन्न करके उससे इच्छित वस्तु की प्राप्ति का उपाय मालूम करता है। साधु नायक को उपाय बतलाने के साथ वापस आते समय पीछे लौटकर देखने का निषेध करता है लेकिन पहली बार में नायक निषेध का उल्लंघन अवश्य करता है, जिससे वह कभी तो जलकर भस्म हो जाता है, तो कभी पत्थर का हो जाता है। साधु की सहायता से नायक अपने जीवन को पुनः प्राप्त कर लेता है तथा दूसरी बार वह निषेध का उल्लंघन नही करता, जिसके परिणामस्वरूप वह अपने उद्देश्य को प्राप्त करने में सफल हो जाता है।

बुन्देली लोककथा ' राजा विक्रमादित्य और जंगला योगी' में 'जंगला जोगी राजा को अपने जादू से काला कुत्ता बना देता है, तो खुनका मेहतरानी के घर में जाकर छिप जाता है । खुनका मेहतरानी जादूगरनी भी थी, उसने महल में जाकर राजा की पटरानी से कहा कि राजा संकट में है, तुम संध्या के समय मेरे घर आओ। दिन डूबते ही रानी खुनका के घर जा पहुँची। खुनका ने एक खपटिया पर कोयला से कुछ लिखा और उसे रानी के हाथों में देते हुए कहा कि तुम किसी दूसरे राजा के राज्य में चली जाओ। पर

1- राजा और फसिया का लड़का, कथक्कड़- राजाराम कुशवाहा, संग्रह क्रमांक-16 (अप्रकाशित)

खबरदार पीछे लौटकर मत देखना। जब दूसरे राज की हद पर पहुँच जाओ तब पीछे : देखना। उसी समय तुम्हें वहाँ राजा मिल जायेंगे। रानी चली, खुनका के घर में छिपा रह वाला वह काला कुत्ता रानी के पीछे लग गया। रानी मंजिल-दर-मंजिल तीन चार दि चलकर दूसरे राज्य की सीमा पर जा पहुँची। उसे पीछे मुड़कर देखा तो वह काला कुत्त तुरन्त राजा विक्रमादित्य बन गया।"[1] इस लोककथा में निषेध तो है, लेकिन उसका उल्लंघ नही होता, फलस्वरूप कठिनाइयाँ नही आती,बल्कि निश्चित सीमा पर पहुँचकर पीछे मुड़क देखने पर काला कुत्ता पुनः राजा विक्रमादित्य के रूप में आ जाता है।

इस तरह 'पीछे लौटकर देखने के निषेध' का उल्लंघन करने पर कठिनाइये का सामना अवश्य करना पड़ता है तथा उल्लंघन न करने पर इच्छित कार्य सकुशल सम्पन्न हो जाता है। लोककथाओं में पीछे लौटकर देखने के निषेध का उल्लंघन नायक द्वारा भयवश अनायास हो जाता है। उसके उल्लंघन में नायक की कौतूहल या जिज्ञासा प्रवृत्ति का कोई योगदान नही रहता, जैसा कि 'कक्ष-निषेध' या 'दिशा-विशेष की ओर गमन का निषेध' में देखा गया है।

लोककथाओं में नायक पर आने वाली आपत्तियों की सूचना उसके सहायक को उपश्रुति के माध्यम से मिलती है लेकिन उसे यह भेद प्रकट करने का निषेध भी होता है। आगे नायक की प्राण-रक्षा के दौरान जब वह संदेह के घेरे में आ जाता है तो मजबूरी-वश उसे यह भेद बतलाना पड़ता है, जिससे वह पत्थर का हो जाता है। 'कथासरित्सागर' की एक कथा में 'राजपुत्र एवं वणिक पुत्र में गहरी मित्रता थी। बनिए का लड़का राजकुमार के साथ उसकी बारात में गया। मार्ग में एक स्थान पर बरात ने विश्राम किया। रात के समय राजकुमार सेविका से कहानी सुनते-सुनते सो गया किन्तु वणिकपुत्र जागता रहा। इसी समय आकाश में चार स्त्रियाँ बातचीत करने लगी। एक ने कहा कि यह राजकुमार

1- जैसी करनी वैसी भरनी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-79 से 81 तक

कहानी बीच में ही छोड़कर सो गया है, अतः कल इसे एक हार मिलेगा, जिसे पहिनते ही यह मर जायेगा। दूसरी स्त्री ने कहा, यदि यह हार से बच गया, तो आम के पेड़ के फल खाकर मृत्यु को प्राप्त होगा। तीसरी ने कहा कि यदि इस पर भी यह नहीं मरा, तो विवाह के समय दरवाजा गिरनेसे मर जायेगा। अंत में चौथी ने कहा कि यदि दरवाजा गिरने से भी यह नहीं मरेगा तो अपनी स्त्री के साथ महल में सोने के समय इसे सौ-बार छींक आयेगी और सौ बार ही कोई व्यक्ति 'जीओ' इस प्रकार न कहेगा तो यह मर जाएगा। साथ ही, जिसने हमारी ये बातें सुनी हो तथा जो उसकी रक्षा के लिए उससे कह देगा तो उसकी मृत्यु हो जोयगी। बनिये के लड़के ने ये सारी बातें सुनकर पहली तीन विपत्तियों से मित्र की रक्षा की। अंत में वह मित्र के महल में छिपकर बैठा जहाँ राजकुमार अपनी नववधू के साथ सोया हुआ था। राजकुमार को सौ बार छींक आयी और बनिए के लड़के ने सौ बार ही 'जीओ' शब्द कह दिया। परन्तु वह वापस जाते समय पहचान लिया गया तथा गुप्त स्थान में आने के कारण राजकुमार का कोपभाजन बना। दूसरे दिन उसे शूली पर चढ़ाने की आज्ञा हुई तब बनिए के लड़के ने सारा भेद खोल दिया और राजकुमार द्वारा परम आनन्द से सम्मानित हुआ।'[1] लगता है यहाँ राजकुमार की प्राण-रक्षा के बाद निषेध उल्लंघन का प्रभाव समाप्त हो जाता है। इसीलिए भेद खोल देने पर भी बनिए के लड़के का अहित नहीं होता।

बुन्देली लोककथा 'मित्रों की प्रीति'[2] कथासरित्सागर की उपर्युक्त कथा से बहुत साम्य रखती है। इस कथा में 'राजकुमार व उसका मित्र मंत्री-पुत्र शिकार खेलने जंगल में गये तथा रास्ता भटक जाने पर वहीं रात के समय एक पेड़ के नीचे विश्राम किया। राजकुमार तो तुरन्त सो गया पर मंत्री-पुत्र जागता रहा। एक पहर रात बीतने पर पेड़ पर बैठे तोता और मैना के बीच वार्तालाप शुरू हुआ तथा मंत्री-पुत्र ध्यान से उनकी बातें सुनने लगा। तोते ने कहा, देखो मैना, यह जो राजा का कुंवर है, इस पर बड़ी-बड़ी मुसीबतें

1- कथासरित्सागर (प्रथम खण्ड), षष्ठ लम्बक, दूसरा तरंग, पृ0-645 से 649

2- बुन्देलखण्ड की ग्राम्य कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-85 से 91 तक

आने वाली है।इसका व्याह होने पर शादी के लिए बारात जायेगी तो रास्ते में एक सूखी नदी पार करते समय यह नदी में बह जायेगा । जब बारात नगर में पहुँचेगी तो मण्डप के पास पालकी पर बना हुआ बाघ जीवित हो उठेगा और राजकुमार को खा जायगा। बरात लौटकर आने पर रास्ते में एक बरगद के पेड़ के नीचे बरात ठहरेगी, जहाँ राजकुमार के लेटते ही ऊपर की डाल टूटकर नीचे आ गिरेगी और राजकुमार मर जायेगा। सो अगर कोई सुनता हो तो राजकुमार को उस पेड़ के नीचे न ठहरने दे। अगर राजकुमार इससे बच गया तो नगर में लौटकर जब राजकुमार पहली रात राजकुमारी के पास सोवेगा तो आधी रात के समय एक काला नाग आकर उसे डस लेगा। अगले दिन रात को राजकुमारी की नाक में से नागिन निकलेगी और राजकुमार को काट लेगी। लेकिन एक बात है मैना, अगर कोई सुनता हो तो यह भेद किसी को भी न बतावे नही तो वह पत्थर का हो जायगा तथा राजकुमार के पहले पुत्र के खून से पुनः जीवित हो सकेगा। मंत्री-पुत्र ने भेद जानकर पहले चारो संकटों से राजकुमार के प्राण-रक्षा की। अन्त में रात होने पर वह राजकुमार व राजकुमारी के पलंग के पास आ खड़ा हुआ। वे दोनों गहरी नींद में सो रहे थे। आधी रात के समय राजकुमारी की नाक में से नागिन निकलती और राजकुमार की ओर बढ़ी। मंत्री पुत्र ने बड़ी होशियारी के साथ तलवार का वार करने नागिन का सिर काट डाला लेकिन खून की एक बूँद राजकुमारी के गाल पर जा गिरी, उसे पोछते समय राजकुमार जाग गया तथा मित्र को इस हालत में देखकर तलवार से उसे मारना चाहा। लाचार होकर मित्र ने कहा मैं तुम्हें कभी धोखा नही दे सकता तथा सारी कहानी सुना दी, जिससे उसका सारा शरीर पत्थर का हो गया। राजकुमार को बहुत दुख हुआ। तीन वर्ष बाद उसके पुत्र पैदा हुआ, जिसकी अंगुली के रक्त से मंत्री-पुत्र पुनः जीवित हो उठा। दोनों मित्र सुखपूर्वक रहने लगे।'

कथाभिप्रायों की दृष्टि से यह कथा महत्वपूर्ण है। इसमें कई अभिप्राय एक साथ कथा विकास, रोचकता की सृष्टि तथा चमत्कार उत्पन्न करने में अपनी भूमिका का निर्वाह करते हैं। 'उपश्रुति' द्वारा भावी संकट की सूचना, रहस्य खोलने का 'निषेध', स्थान

विशेष में ठहरने का 'निषेध' तथा 'रूपपरिवर्तन' अभिप्राय आपस में बड़ी कुशलता से ग्रथित है। अभिप्राय मानव-मूल्यों के अभियंता भी होते हैं। इस कथा में प्रयुक्त अभिप्रायों के माध्यम से 'मित्रता' के श्रेष्ठ रूप का उदाहरण भी मिलता है।

'रानी फूलवती'[1] बुन्देली लोककथा में भी स्थानविशेष में बरात ठहरने के निषेध का उल्लेख मिलता है, जिसके उल्लंघन से कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। कथा के अनुसार 'एक राजा के चार लड़कों की शादी दूसरे राजा की चार लड़कियों के साथ तय होती है। बरात जाते समय राज्य की रक्षा के लिए जेठा राजकुमार वही रूका रहता है। तथा अपनी भावी पत्नी के साथ सम्पन्न होने वाली शादी की विशेष रश्म-भावरों को कटार के साथ सम्पन्न करवा लेने का निर्देश देता है। बरात जाते समय जेठा राजकुमार अपने पिता से आते-जाते समय रास्ते में नागताल के पड़ाव पर बरात ठहराने का निषेध भी करता है, क्योंकि वहाँ ठहरने से भारी खतरे की सम्भावना है। बरात जाते समय तो राजा के कहने पर बरात नागताल पर न ठहरकर आगे के पड़ाव पर ठहरी। लेकिन लौटते समय जेठे कुमार की बात का किसी को ख्याल न रहा तथा बरात नागताल में ही ठहर गयी। बराती थके-मादे थे, खा-पीकर सो गये। रात का पहला पहर बीतने पर नागताल से वासुकी नाग ने आकर पूछा, बरात में कोई जागता है, जेठी बहू अपने प्रति की चिन्ता से जाग रही थी। वह बोली, मैं जागती हूँ। नाग लौट गया, इसी तरह अगले दो-पहर रात में नाग पुनः आया और लौट गया। चौथे पहर जेठी बहू सो गयी, जिससे नाग को कोई उत्तर नहीं मिला। अतः उसने ताल से नागों को बुलाकर बरात को चारो ओर से घेर लिया, ऊपर से वासुकी ने अपना फन फैला दिया। सवेरा होने पर सभी को घिरा देख राजा को तुरन्त अपने जेठे राजकुमार की चेतावनी याद आ गयी। वासुकी नाग ने राजा से चौथ के रूप में जेठे लड़का और जेठी बहू को मांगा। संकट देखकर लाचार राजा ने छः महीने की मुहलत लेकर हामी भर ली।' इस लोककथा में जेठा राजकुमार निषेध का उल्लंघन नही

1- पाषाण नगरी, शिव सहाय चतुर्वेदी, पृ0-67 से 72 तक

करता है, लेकिन कठिनाई उसे ही उठानी पड़ती है।

इसी तरह 'वासुकी नाग की मुदरी'[1] नामक बुन्देली लोककथा में 'साहूकार का छोटा लड़का एक नगर के राजा की लड़की की सुन्दरता की तारीफ सुनकर उससे मिलने की आशा से उसके बगीचे में जा पहुँचा। यहाँ पुरुषों के आने की मनाही थी। लड़के ने मालिन को लोभ देकर प्रसन्न कर लिया तथा उसी की मदद से एक दिन स्त्री के वेश में राजकुमारी के पास पहुँच गया। राजकुमारी नित्य फूलों से तुला करती थी। उसने अभी तक किसी पुरुष का मुँह नही देखा था। अतः वह चमेली के ढाईफूल पर तुल जाती थी। लेकिन जब उसने साहूकार के लड़के का मुँह देख लिया तो मालिन फूल चढ़ा-चढ़ाकर हार गयी, परन्तु उसका वजन पूरा न हुआ।' यहाँ स्त्री जाति की सतीत्व-रक्षा के लिए पुरुषों के देखने का निषेध मिलता है। इसीलिए उसके बाग में पुरुषों के जाने की मनाही की गयी है।

लोककथाओं में नायक लालचवश या आकर्षित होकर भी निषेधों का उल्लंघन करता है, फलतः वह कठिनाइयों में पड़ जाता है। 'केतकी के फूल' बुन्देली लोककथा में 'रानी के लिए केतकी के फूल लेने बहेलिया का लड़का घर से निकलकर सात समुन्दर पार एक टापू पर जा पहुँचा, जहाँ छः महीने एक साधु की सेवा करके उससे केतकी के फूल मिलन का उपाय पूछा। साधु बोला, मेरे आश्रम से थोड़ी दूर एक मनोहर बाग है, उसमें दो स्त्रियाँ मिलेगी। एक बहुत ही कबूल सूरत देवांगना के समान और दूसरी मैली कुचैली जिसके अंग-अंग से कोढ़ के कारण पीप चू रहा होगा। तू उस सुन्दर स्त्री के लालच में न पड़कर उस मैली कुचैली स्त्री का हाथ पकड़ लेना, बस तेरा काम बन जायेगा। पर याद रखो यदि तुम उस सुन्दर स्त्री के मोह में पड़, उसके पास गये तो सब काम बिगड़ जायेगा और तुझे जीवन भर उसकी कैद भोगनी पड़ेगी। साधु की आज्ञा पाकर बहेलिया का लड़का

1- बुन्देलखण्ड की ग्राम्य कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-130 व 131

उस मनोहर बाग में जा पहुँचा जिसके बीचोबीच एक सुन्दर बंगला बना हुआ था। बंगले के मध्य भाग में सोने के सिंहासन पर एक बहुत कबूल सूरत युवती बैठी थी। बहेलिया का लड़का इस अपूर्व सुन्दरी का रूप, यौवन और प्रभुता देख लालच गया तथा उसकी ओर एकटक देखने लगा। फिर साधु के उपदेश को भूलकर उस सुन्दर युवती के पास जा पहुँचा, जहाँ पहुँचते ही उसने लड़के को तोता बनाकर पिंजरे में कैद कर लिया। एक पखवाड़ा बीत जाने पर साधु समझ गया कि बच्चाराम मोह में फँसकर कैद हो गये। साधु ने बाग में पिंजरे के पास पहुँचकर तोते पर कमण्डल का जल छिड़का, जिससे वह तुरन्त तोते से आदमी बन गया। साधु ने उसे धिक्कारते हुए कहा कि तूने मेरा कहा नहीं माना, खैर अब सचेत किए देता हूँ तू उस सुन्दरी स्त्री के मोह में न पड़कर मैली-कुचैली स्त्री का हाथ पकड़ना। बहेलिया का लड़का फिर बाग में पहुँचा। इस बार उसने सुन्दरी स्त्री को देख झट पीठ फेर ली तथा मैली-कुचैली स्त्री को खोजने लगा। आगे कुछ दूर पर उसे एक बहुत गन्दी और कुरूप स्त्री आती दिखायी दी। पास आते ही उसने देखा, उसके अंग से कोढ़ के कारण पीप चू रहा है। जी कड़ा करके बहेलिया के लड़के ने शीघ्र ही कुरूप स्त्री के पास जाकर उसका हाथ पकड़ लिया। हाथ पकड़ते ही एकदम दृश्य बदल गया। वह कुरूप स्त्री पहली सुन्दर स्त्री से भी अधिक रूपवान सोलह वर्ष की युवती बन गयी। वह युवती इसे देखकर खूब खिलखिलाकर हँस पड़ी। उसके हँसते ही बाग में केतकी के फूलों की वर्षा होने लगी तथा सारा बाग एक अनोखी सुगन्धि से महक उठा।'[1] इस लोककथा में सुन्दर स्त्री के लालच में पड़ने का निषेध है।

बुन्देली लोककथा 'सोने की चिड़िया'[2] में 'छोटा राजकुमार सोने की चिड़िया की खोज में घर से निकला तथा एक नगर में पहुँचकर वहाँ राजा की आज्ञा से शूली पर चढ़ाये जा रहे प्रसिद्ध डाकू बलराज की राजा से प्रार्थना करके प्राण रक्षा की। उपकृत बलराज को जब यह मालूम हुआ कि राजकुमार सोने की चिड़िया की खोज में निकला है तो

1- केतकी के फूल, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-6 व 9 तक

2- बुन्देलखण्ड की ग्राम्य कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-63 से 75 तक

वह बोला कि मुझे सोने की चिड़िया का पता मालूम है। चलते-चलते दोनों सोने की चिड़िया के शहर जा पहुँचे। बलराज ने कहा, देखो कुमार तुम इस रास्ते से आगे चले जाओ, जहाँ तुम्हें राजमहल दिखलाई देगा। वहाँ पहरे वाले सिपाही सोते मिलेंगे। तुम महल में घुस जाना तथा एक कमरे में तुम्हें वहीं सोने का पक्षी बाँस के पिंजरे में बैठा हुआ दिखायी देगा। उस पिंजरे को उतारकर तुम फौरन ही मेरे पास आ जाना। उस पक्षी के पास तुमको एक सोने का खाली पिंजरा भी टंगा हुआ दिखायी देगा। परन्तु खबरदास, उस पिंजरे के लोभ में न आना नहीं तो आफत में फंस जाओगे। बलराज की बातें सुनकर राजकुमार महल के भीतर चला गया। देखा तो सचमुच सोने का पक्षी बाँस के पिंजरे में टँगा हुआ था तथा पास ही में एक खाली सोने का पिंजरा भी टँगा था। राजकुमार सोचने लगा कि सोने के पक्षी के लिए तो सोने का ही पिंजरा चाहिए । वह पक्षी को निकालकर सोने के पिंजरे में रखने लगा। लेकिन ज्योंही उसके शरीर से राजकुमार का हाथ छुआ कि पक्षी 'ची-ची' करने लगा तथा पहरे वाले जाग उठे और उन्होंने राजकुमार को पकड़ लिया। दूसरे दिन राजकुमार को राजा के सामने पेश किया गया। राजा ने कहा, चोर को मिलनी तो शूली ही चाहिए, परन्तु यदि यह मुझे सोने का घोड़ा ला दे तो मैं इसे छोड़ दूँगा और सोने का पक्षी इनाम में दूँगा। राजकुमार ने आकर बलराज से कहा। वह बोला मुझे सोने के घोड़े का भी पता है तथा वे घोड़े की खोज मे दूसरे नगर में जा पहुँचे। बलराज ने कहा, देखो कुमार, इस नगर के राजा के अस्तबल में सोने का घोड़ा बँधा है, जिसके पास ही दो जीने टँगी हैं, एक सोने की, दूसरी चमड़े की। तुम चमड़े की जीन कसकर घोड़ा ले आना और भूलकर भी सोने की जीन के लोभ में न पड़ना, नहीं तो पहले के ही तरह मुसीबत में पड़ोगे। अस्तबल में घोड़े के पास जाकर राजकुमार सोचने लगा कि सोने के घोड़े पर चमड़े की जीन क्या कसूँ? उसने सोने की जीन उठाकर घोड़े की पीठ पर रक्खी। जीन रखते ही घोड़ा जोर से हिनहिना उठा। सब पहरेवाले जाग उठे और उन्होंने चोर-चौर कहकर राजकुमार को पकड़ लिया। इस बार राजा ने राजकुमार से सोने के केश वाली कन्या लाने को कहा तथा बलराज के साथ राजकुमार उसके नगर में जा पहुँचा। बलराज ने कहा, देखो कुमार, इसी नगर के राजा के यहाँ सोने की केश वाली कन्या है, जो आधी रात के समय स्नान

करती है। तुम चुपचाप जाकर मुँह से एक शब्द कहे बिना उसके केश पकड़ लेना। ज्यों ही तुम उसके केश पकड़ लोगे वह तुम्हारे वश में हो जायेगी और तुम्हारे पीछे-पीछे चली आवेगी। तुम उसको तुरन्त मेरे पास लेकर चले आना। वह निषेध भी लगाता है कि उसकी बातों में आकर उसे माता-पिता से विदा लेने के लिए न जाने देना, नहीं तो मुसीबत में पड़े बिना न रहोगे। राजकुमार ने महल में जाकर स्नान करते समय राजकन्या के केश पकड़ लिए। राजकन्या उसी समय राजकुमार के साथ चलने को तैयार हो गयी। लेकिन चलते समय उसने कहा , कुमार , अब तो मैं तुम्हारी हो ही चुकी, परन्तु चलते समय मुझे अपने माता-पिता से बिदा ले आने दो। आज की बिछुड़ी न जाने फिर कब मिलूँगी। राजकन्या के कहने का राजकुमार पर कुछ ऐसा प्रभाव पड़ा कि उसने माता-पिता से मिलने की आज्ञा दे दी। ज्यों ही राजकन्या राजा के पास पहुँची राजा ने सिपाहियों को भेजकर राजकुमार को गिरफ्तार करा लिया। सवेरे राजकुमार को राजा के सामने लाया गया। राजा ने कहा कि तुम्हें मिलना तो प्राणदण्ड ही चाहिए लेकिन तुम यदि मेरे महल के सामने का पहाड़ खोदकर फेंक दोगे तो मैं तुम्हें क्षमा कर दूँगा और सोने के केशवाली राजकन्या भी दे दूँगा। राजकुमार ने बलराज की सहायता से पहाड़ खोदकर फेंक दिया, जिससे प्रसन्न होकर राजा ने अपनी कन्या राजकुमार के साथ बिदा कर दी।'

इस लोककथा में राजकुमार सर्वप्रथम सोने की चिड़िया को प्राप्त करते समय सोने के पिंजरे के लोभ में पड़कर निषेध का उल्लंघन करता है, जिससे वह पकड़ा जाता है। दूसरी बार, सोने के घोड़े को प्राप्त करते समय सोने की जीन के लोभ में पड़कर निषेध का उल्लंघन करता है। तीसरी बार, राजकुमार सोने के केशवाली कन्या को प्राप्त करते समय उसकी बातों में आकर निषेध का उल्लंघन करता है। इस प्रकार निषेधों के बार-बार उल्लंघन करने से कथा को रोचक मोड़ के साथ विस्तार मिला है। कथा के अंत में राजकुमार निषेधों के उल्लंघन के कारण अपनी सभी इच्छित वस्तुएं प्राप्त करने में सफल होता है।

'सोने की चिड़िया' बुन्देली लोककथा की संरचना में 'निषेध' अभिप्राय के साथ 'शर्त-रखना' तथा 'सहायक-घटक' कथाभिप्रायों का भी प्रयोग हुआ है। इस लोककथा में

'शर्त रखना' अभिप्राय के साथ 'निषेध' की स्थिति समानान्तर प्राप्त होती है। कथा में राजकुमार से निषेध के उल्लंघन के दण्ड से बचने के लिए राजा द्वारा सोने का घोड़ा , सोने की केशवाली कन्या तथा पहाड़ खोदकर फेंक देने की शर्तें रखी जाती हैं। इन शर्तों की पूर्ति के साथ निषेध भी जुड़े हुए हैं, जिसका ज्ञान राजकुमार को अपने सहायक बलराज के माध्यम से होता है। लेकिन राजकुमार इन शर्तों को पूरा करने के दौरान लालचवश निषेधों का उल्लंघन भी करता है। अंततः वह अपने लक्ष्य को बलराज की सहायता से प्राप्त करने में सफल होता है।

लोककथाओं में 'निषेध' कथाभिप्राय के अध्ययन से स्पष्ट है कि इसका क्षेत्र अत्यंत विस्तृत है। नायक द्वारा निषेधों के उल्लंघन. के कई कारण हैं। कभी नायक कौतुहलवश होकर जानबूझकर ही निषेधों का उल्लंघन करता है, जैसे कक्ष-निषेध व दिशा-विशेष गमन का निषेध। इससे नायक सुन्दरियों के जाल में फँस जाता है लेकिन अंततः वह उस सुन्दरी को प्राप्त कर लेता है। कभी नायक भयवश अनायास ही निषेधों का उल्लंघन कर बैठता है, जैसे पीछे लौटकर देखने का निषेध का उल्लंघन। इससे नायक अपने प्राण गवाँ बैठता है लेकिन किसी सिद्ध पुरुष की सहायता से वह पुनः अपना जीवन प्राप्त कर लेता है तथा दोबारा निषेध का उल्लंघन न करके अपने लक्ष्य में सफल होता है। लोककथाओं में नायक परिस्थितिवश होकर मजबूरी में भी निषेध का उल्लंघन करता है, जैसे- भेद बताने का निषेध। इसके नायक प्रायः पत्थर का हो जाता है लेकिन अपने सहायक की सहायता से वह पुनः सजीव रूप प्राप्त कर लेता है। लोककथाओं में अनजाने में ही या भूलवश भी निषेधों का उल्लंघन होता है, जैसे- स्थान-विशेष में ठहरने का निषेध। जिससे नायक को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। लेकिन अंततः वह अपने साहसिक प्रयासों से इस कठिनाइयों से निजात पा लेता है। लोककथाओं में नायक कभी किसी सुन्दर स्त्री की ओर आकर्षित होकर या कभी सोने की चीजों के लालचवश भी निषेधों का उल्लंघन करता है, जिससे वह कैद कर लिया जाता है लेकिन उसका सहायक उसे इस कैद से मुक्त कराता है। अगले प्रयास में वह निषेध का उल्लंघन न करके अपना लक्ष्य प्राप्त कर लेता है।

लोककथाओं में नायक जब किसी निषेधात्मक-कार्य का उल्लंघन करता है तो वह संकटग्रस्त अवश्य होता है। लेकिन दो बातों के कारण वह अन्त में संकट से मुक्त भी हो जाता है। प्रथम तो प्रायः लोककथाएं सुखान्त रूप में ही समाप्त होती है और दूसरे नायक को बड़ों की आज्ञा उल्लंघन के दुष्परिणाम के द्वारा शिक्षा प्रदान करने के साथ ही, ध्येय पूरा होने पर उसे संकट से मुक्त कर दिया जाता है।

लोककथाओं के विकास में इस कथाभिप्रायों का महत्वपूर्ण स्थान है। इस तरह की कथाओं में प्रायः निषेधों का उल्लंघन होता है, जिससे कथा को गति प्रदान की जाती है। साथ ही पाठक के मन में कौतूहल जागता है कि देखें निषेध का उल्लंघन होता है अथवा नहीं। उल्लंघन होने पर उसके मन में तीव्र उत्सुकता जागती है कि अब उसका परिणाम क्या होगा? इससे कथा में चमत्कार उत्पन्न करने और औत्सुक्य बनाए रखने की अद्भुत शक्ति आ जाती है।

****

****

अध्याय-सात

'शर्त-बदना' (लगाना)

(1) इच्छित वस्तु की प्राप्ति के लिए शर्त-

(क) दुर्लभ वस्तु को ले आने की शर्त

(ख) सुन्दर स्त्री को व्याह लाने की शर्त

(2) विवाह के लिए विभिन्न शर्तें-

(क) कठिन कार्यों को पूरा करना

(ख) नायिका को जुए में हारना

(ग) बोलने के लिए विवश करना

(घ) पूछे गये प्रश्नों का उत्तर देना ।

****

भारतीय कथाओं में नायक किसी इच्छित वस्तु की प्राप्ति का प्रण करके घर से निकलता है तथा अनेक रोमांचक कार्यों को सम्पन्न करते हुए उस वस्तु को प्राप्त कर लेता है। इन इच्छित वस्तुओं में प्रायः सुन्दर नायिका होती है, जिसको प्राप्त करने के लिए नायक को अनेक तरह की शर्तों को पूरा करना पड़ता है। जिनमें से नायिका से विवाह करने के लिए विभिन्न कठिन एवं दुःसाध्य शर्तें भी शामिल होती हैं। लेकिन नायक अपने साहसिक प्रयासों, बुद्धिचातुर्य तथा दैवीय-कृपा से इन असम्भव-सी लगने वाली शर्तों को पूरा करके नायिका से विवाह करने में सफल होता है। नायिका से विवाह करने के लिए नायक द्वारा कठिन शर्तों को पूरा करना उस आदिम विवाह-प्रथा का सूचक है, जिसमें विवाह के लिए प्रायः शक्ति, साहस और बुद्धि-कौशल की अपेक्षा रखने वाले गुरूतर कार्यों के सम्पादन की शर्तें रखी जाती थीं। जो व्यक्ति उस कार्य को सबसे अधिक कुशलता से सम्पन्न करता था, उसी को कन्या के योग्य समझकर कन्या व्याह दी जाती थी। इसमें कन्या की भी सहमति रहती थी तथा प्रायः कन्या की ओर से ही इस प्रकार की शर्तें रखी जाती थी, जिन्हें पूरा करने वाले व्यक्ति को वह कन्या स्वेच्छा से वरण करती थी। सम्भवतः विवाह सम्बंधी इन शर्तों के मूल में योग्यतम वर का चुनाव करने का उद्देश्य रहा होगा।

मध्यभारत में निवास करने वाले 'भील-समाज' में विवाह की एक विधि- 'भगौरिया', प्रचलित है, जिसमें विवाह करने के लिए प्रेमी द्वारा अपनी प्रेमिका का अपहरण कर, उसे भगा ले जाने की शर्त होती है। 'भगौरिया-पर्व' के अवसर पर बाजार-हाट में प्रेमिका जब कोई वस्तु खरीदने आती है तब पूर्व योजना के अनुसार भील युवक कंघी भेंट करने के बहाने उसके पास आता है और उसका अपहरण कर उसे भगा ले जाता है। इस कार्य में लड़के के साथी उसकी मदद करते हैं तथा भागने में युवती की सहेलियाँ भी सहायता करती हैं। जब ये युगल-प्रेमी पास के किसी गाँव में शरण लेते हैं तो वहाँ के लोग यजमान बनकर लड़की के पिता को उस युवक से अपनी लड़के के 'भगौरिया-विवाह' की मान्यता देने के लिए बाध्य करते हैं। थोड़ी-बहुत बातचीत के बाद, मसला तय हो जाता है तथा युवक-युवती का भगौरिया-विवाह सफल हो जाता है।

इसी तरह, चीन की 'म्याओ-जाति' में लूशंग-त्योहार के अवसर पर युवक-युवतिः संगीतमय वार्तालाप से अपना जीवनसाथी चुनते हैं। युवाओं को मनपसंद साथी की खोज व अवसर प्रदान करने वाले इस त्योहार में युवतियाँ अपने सौन्दर्य, बुद्धिमत्ता, प्रवीणता तथ समृद्धि से युवकों को अपनी ओर आकर्षित करती हैं, जिसमें युवतियों की माता और भाभी आदि सहयोगी बनती हैं। युवतियाँ जब नृत्य में मग्न होती हैं तो एक गोलाकार घेरे में युवक खड़े हो जाते हैं तथा निःसंकोच होकर बड़े ध्यान से युवतियों को निहारते हैं। युवक अपनी टोलियाँ बनाकर उन युवतियों का नखशिख वर्णन करने के साथ ही अपनी मनचाही युवती का चयन कर लेते हैं। दूसरी ओर अपनी माँ और भाभी आदि का संकेत पाते ही वह युवती अपने मनपसंद युवक के साथ समारोह से अलग होकर, रास्ते के किनारों पर बेझिझक संगीतमय वार्तालाप का क्रम आरम्भ कर देते हैं। जिसमें वे गीतों के माध्यम से एक-दूसरे के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त कर लेते हैं।[1]

आदिम समाज में प्रचलित इन विवाह-प्रथाओं ने कथाओं में महत्त्वपूर्ण अभिप्रायों का रूप ले लिया है। अभिप्रायों के रूप में इनके प्रयोग से कथाओं में अनेक रोमांचक घटनाओं कीयोजना का क्षेत्र कथाकारों के लिए खुल जाता है। लोककथा के क्षेत्र में काल्पनिकता का समावेश होने के कारण अनेक तरह की अद्भुत शर्तें विवाह के लिए रखी जाती हैं, जैसे- सात समुद्र पार से दुर्लभ वस्तु लाना, सप्तफणी सर्प से मणि लाना, रात भर में सोने का सतखण्डा महल खड़ा कर देना आदि। इन असम्भव शर्तों को पूरा न किए जाने पर मृत्युदण्ड निर्धारित होता है। कभी-कभी किसी दुर्लभ वस्तु की मांग न करके स्वर्णनगरी देखने जैसे सर्वथा भिन्न कार्य करने वाले युवक से विवाह करने की शर्त नायिका द्वारा प्रस्तुत की जाती है। कभी कुछ प्रश्नों का सही उत्तर प्राप्त हो जाने पर वह युवक से विवाह कर लेती है, तो कभी नायिका से विवाह करने के लिए युवक को उसे जुए में हराना होता है।

1- राष्ट्रीय सहारा (हिन्दी दैनिक), बुधवार 12 जनवरी, 1994 में प्रकाशित वार्ता

समग्रतः शर्त-बदना कथाभिप्राय को निम्न भागों में बॉंटा जा सकता है- (1) इच्छित वस्तु की प्राप्ति के लिए शर्त- (क) दुर्लभ वस्तु को ले आने की शर्त (ख) सुन्दर स्त्री को व्याह लाने की शर्त (2) विवाह के लिए विभिन्न शर्तें- (क) कठिन कार्यों को पूरा करना (ख) नायिका को जुए में हराना (ग) बोलने के लिए विवश करना, (घ) पूछे गये प्रश्नों का उत्तर देना।

इनमें से प्रथम वर्ग के अन्तर्गत वे शर्तें शामिल हैं, जिनके तहत नायक के समक्ष किसी दुर्लभ वस्तु को ले आने की शर्त रखी जाती है। नायक अपने साहसिक प्रयासों से उस दुर्लभ वस्तु को प्राप्त कर लेता है । साथ में उसे सुन्दर नायिका भी प्राप्त हो जाती है। दूसरे वर्ग के अन्तर्गत नायिका से विवाह करने के लिए विभिन्न शर्तें आती हैं, जो नायक के समक्ष रखी जाती हैं। नायक इन शर्तों को पूरा करके नायिका से विवाह करने में सफल होता है।

'शर्त-बदना' कथाभिप्राय की परम्परा के रूप में रामायण महाभारत, श्रीमद्भागवतपुराण, कथासरित्सागर आदि में वर्णन मिलते हैं। 'रामचरितमानस' में सीता से विवाह करने के लिए कठिन कार्य सम्पादन की शर्त इस प्रकार मिलती है-

'नृप भुजबल बिधु सिव धनु राहु। गरुअ कठोर बिदित सब काहू।।
रावनु बानु महाभट मारे। देखि सरासन गवँहि सिधारे।।
सोइ पुरारि कोदंडु कठोरा। राज समाज आजु जोइ तोरा।।
त्रिभुवन जय समेत बैदेही। बिनहिं बिचार बरइ हठि तेही।।[1]

यहाँ सीता के विवाह के लिए शर्त है- शिव के कठोर धनुष को तोड़ना। इसी क्रम में उस शिव-धनुष की विशेषता और कार्य-सम्पादन की दुष्करता का भी वर्णन

1- रामचरितमानस, गोस्वामी तुलसीदास,बालकाण्ड, दोहा क्रमांक 249 से आगे

मिलता है। इस शर्त की दूसरी महत्त्वपूर्ण विशेषता है, सीता द्वारा अन्य किसी बात व
विचार किए बिना उस व्यक्ति का वरण किया जाना। आगे इस कठिन कराल शिव-धनु
को तोड़कर भगवान राम सीता के साथ विवाह रचाते है।

'महाभारत' में द्रौपदी से विवाह करने के लिए लक्ष्य-भेद की कठिन शर्त थी।
'जिसके लिए बडे सुन्दर मण्डप का निर्माण हुआ, जिसमें एक वृहदाकार धनुष रखा हुअ
था, जिसकी डोरी फौलादी तारों से बनी थी। ऊपर काफी ऊँचाई पर एक सोने की मछली
टंगी हुई थी, उसके नीचे एक चमकदार यंत्र बड़े वेग से घूम रहा था। राजा द्रुपद ने घोषणा
की थी कि जो राजकुमार उस भारी धनुष को तानकर डोरी चढ़ायेगा और ऊपर घूमते हुए
गोल यंत्र के मध्य में से तीर चलाकर ऊॅपर टंगे निशाने को गिरा देगा, उसी को द्रौपदी
वरमाला पहनायेगी। अन्त में धनुर्विद्या में सबसे अधिक निष्णात होने के कारण अर्जुन ने
इस शर्त को पूरा करने के लिए भगवान नारायण का ध्यान करके धनुष हाथ में लिया
और उस पर डोरी चढ़ा दी। उसने धनुष पर तीर चढ़ाकर, देरी न करके तुरन्त एक के
बाद एक पॉच बाण उस घूमते हुए चक्र में मारे और हजारों लोगों के देखते-देखते निशाना
टूटकर नीचे गिर पड़ा। उस समय राजकुमारी द्रौपदी की शोभा कुछ अनूठी हो गयी। वह
आगे बढ़ी और सकुचाते हुए लेकिन प्रसन्नतापूर्वक ब्राह्मण-वेष में खड़े अर्जुन को वरमाला
पहना दी।'[1]

'श्रीमद्भागवतपुराण' में पुरूरवा-उर्वशी के आख्यान में 'उर्वशी नारद के मुख
से पुरूरवा के रूप-गुण की प्रसंशा सुनकर उस पर मोहित हो विवाह करने के लिए शर्तें
रखती है कि हे वीर, मैं केवल ताजा घी ही खाऊँगी और रतिकाल के सिवा कभी तुमको नग्न
नही देखूँगी। पुरुरवा भी उर्वशी पर मोहित हो गया था, अतः उसने ये शर्तें मान ली और
उर्वशी के साथ विहार करने लगा। एक बार गन्धर्व लोग रात के समय उर्वशी के मेष (भेड़)
के बच्चे चुराकर ले जाने लगे । पुरूरवा उर्वशी का विलाप सुनकर नग्न ही तलवार लेकर

1- महाभारतकथा, चक्रवर्ती राजगोपालचार्य, पृ0-73 से 76 तक

दौड़ा। उसी समय बिजली चमकी, जिससे उर्वशी ने पुरूरवा को नग्न देख लिया तथा शर्त भंग हो जाने के कारण वह अपने लोक को चली गयी।[1] इस आख्यान में पुरूरवा के समक्ष विवाह के लिए कठिन कार्य सम्पादन की शर्त तो नही रखी जाती, लेकिन उर्वशी उससे विवाह करने के पूर्व कुछ असामान्य शर्तें पूरी करने का वचन लेती है, जिसे पुरूरवा भरसक निभाने का प्रयत्न करता है। लेकिन अंततः शर्त का उल्लंघन हो जाता है, जिससे उर्वशी उसे छोड़कर चली जाती है। इसी तरह की असामान्य शर्तें पूरी करने का वचन 'महाभारत' में भी देवी गंगा राजा शान्तनु से विवाह करते समय लेती हैं।

'कथासरित्सागर' में 'कनकपुरी और शक्तिवेग की कथा' में गन्धर्वराज शक्तिवेग की पुत्री कनकरेखा की शर्त यह है जिसने कनकपुरी नामक नगरी देखी हो उसी के साथ मैं विवाह करूँगी, चाहे वह ब्राह्मण हो या क्षत्रिय। राजा ने भी उसे ही अपनी कन्या कनकरेखा और युवराज-पद प्रदान करने की घोषणा करवाई, जिसे शक्तिदेव नामक युवक ने भी सुना। उसने राजपुरुषों के समीप जाकर झूठा ही कह दिया कि मैंने कनकपुरी नगरी देखी है। राजा ने उसकी सत्यता जाँचने के लिए उसे राजकुमारी के पास भेजा। उस धूर्त शक्तिदेव की बनावटी बातों को सुनकर राजकन्या ने उसे दासियों से कहकर बाहर निकलवा दिया। इस प्रकार चाही हुई राजकन्या द्वारा अपमानित एवं दुखित शक्तिदेव ने राजकन्या से ही व्याह करने का प्रण करके घर से प्रस्थान किया तथा मार्ग में अनेक कठिनाइयों को पार करके समुद्र के बीच स्थित उत्स्थल द्वीप में अपने फुफेरे भाई विष्णुदत्त के पास जा पहुँचा, जहाँ एकान्त रात्रि में उसने कनकपुरी की सरस कथा सुनी। तदनन्तर नाविकों के साथ समुद्र की यात्रा करते समय नाव टूट जाने पर एक बड़े पक्षी की सहायता से कनकपुरी के उद्यान में जा उतरा। मालिन की सहायता से वह राजकुमारी चन्द्रप्रभा से जाकर मिला। दोनों ने अपने-अपने वृत्तान्त सुनाये। तदनन्तर चन्द्रप्रभा के अपने पिता से विवाह के लिए अनुमति लेने जाने के बाद, एकान्त में भवन में घूमता हुआ वह निषिद्ध बीच की मंजिल में जा पहुँचा, जहाँ उसने गुप्त रूप से सुरक्षित तीन मण्डपों को देखा, जिनमें से एक में

1- श्रीमद्भागवत (द्वितीय भाग), नवम स्कन्ध, चौदहवाँ अध्याय, पृ0- 639 से 641 तक

राजा की मरी हुई कन्या करनरेखा दिखाई पड़ी। उसे देखकर शक्तिदेव सोचने लगा कि यह क्या महान् आश्चर्य है? जो यहाँ निर्जीव होकर पड़ी है, वह वहाँ जीवित है। वहीं से नीचे एक सुन्दर बावली दिखाई दी और उसके किनारे एक सुन्दर घोड़े को देखा। उसने घोड़े के पास आकर उस पर चढ़ने को उद्यत हुआ लेकिन घोड़े ने लात मारकर उसे पास वाली बावली में गिरा दिया, जिससे अकस्मात् ही अपने नगर-स्थित अपने घर के उद्यान की बावली में जा निकला। दूसरे दिन शक्तिदेव ने राजा के पास जाकर कनकपुरी नगरी देखने की बात कही तथा बोला कि यदि इस बार मैं झूठ बोल रहा हूँ तो मुझे प्राणदण्ड दिया जाय। राजकुमारी के आने पर शक्तिदेव ने उससे कहा, मैं सच हूँ या झूठ, लेकिन तू मेरे एक कौतुक को दूर कर, मैं कहता हूँ मैंने कनकपुरी में तुझे पलंग पर मरी हुई देखा है। यहाँ यह बात नहीं देख रहा हूँ, तू कैसे जी रही है, यह रहस्य मुझे बता? शक्तिदेव द्वारा सच्ची जानकारी के साथ ऐसा कहने पर राजकन्या कनकरेखा ने अपने पिता से कहा, इसने सचमुच वह नगरी देखी है। अतः शीघ्र ही कनकपुरी में जाने पर यह मेरा पति होगा।'[1]

कथासरित्सागर मे 'वर्णित नगर विशेष के दर्शन की शर्त' की यह परम्परा बुन्देली लोककथाओं में प्राप्त होती है। 'पाषाण-नगरी' बुन्देली लोककथा में 'राजकुमार दूसरे राजा के राज्य में जा पहुँचा, जहाँ राजकुमारी के भेजे दूतों ने पाषाण नगरी की कहानी के जानने को पूछा। राजकुमार ने झूठ-मूठ ही कह दिया, हाँ मुझे मालूम है, जिससे दूतों ने उसे राजकुमारी के सामने पेश कर दिया। राजकुमारी उत्सुकता से बोली, यदि तुम पाषाण नगरी की कहानी सुना सको तो मैं तुम्हें निहाल कर दूँगी। तत्काल राजकुमार ने बहाना बनाकर कहा, मुझे जबानी याद नही है, काशी में रखी पोथी में लिखी है। राजकुमार ने चार सिपाहियों के साथ उसे काशी से पोथी लाने भेजा, लेकिन वहाँ पोथी नहीं मिली। सिपाही क्रोधित होकर बोले, तुमने झूठ बोलकर हम लोगों को व्यर्थ परेशान किया, चलो, राजकुमारी तुम्हें

1- कथासरित्सागर (प्रथम खण्ड), पंचम लम्बक, पृ0-483 से 471 तक।

शूली पर चढ़वा देगी। राजकुमार आत्महत्या करने के उद्देश्य से गंगाजी में कूद पड़ा लेवि लहरों ने उसे किनारे फेंक दिया। तथा, गंगाजी ने प्रकट होकर उससे आत्महत्या क का कारण पूछा। राजकुमार ने उससे पाषाण नगरी की कहानी पूछी। गंगाजी ने पाषा नगरी की सैर कराने को कहकर, लीला और धौरा नामक दो हंसों को बुलाकर कहा, इ पाषाण नगरी की सैर करा लाओ तथा गंगाजी अर्न्तधान हो गयी। दोनों हंसों की पीठ प बैठकर राजकुमार बीच गंगा में जा पहुँचा, जहाँ हंसों ने डुबकी लगाकर उसे पाषाण नगर के फाटक पर पहुँचा दिया। पाषाण-नगरी पाषाण की थी। इन्द्र के शाप से जिस समय वह पाषाण की हुई उस समय जो मनुष्य या जीवधारी जिस हालत मे था वह उसी हालत मे पत्थर का हो गया था। राजकुमार ने नगरी मे घुसकर देखा, सब कुछ पत्थर का है। जो पनिहारी कुऐं मे घडा डाले पानी भर रही थी, वह उसी दशा में पाषाण की हो गयी थी। दुकानदार दुकान पर चीजें तोल रहे थे, वे उसी दशा मे पत्थर के हो गये थे। पाषाण नगरी की सैर करके फिर हंसों पर सवार होकर वह गंगाजी के किनारे आ पहुँचा, जहाँ राजकुमारी के सिपाही उसे खोजते-फिरते थे। वे राजकुमार को लेकर राजकुमारी के पास जा पहुँचे, जहाँ राजकुमार के कहने पर नगर-भर के लोग इकट्ठे हुए। बीच मे दो तख्त रखे गए, जिनमें एक पर राजकुमारी बैठी और दूसरे पर राजकुमार। राजकुमार ने ज्यो ही कहानी कहना आरम्भ किया त्यो ही राजकुमारी पैरों की ओर से पाषाण की हो चली। राजकुमारी बोली आप कहानी कहते जाइए, जब मै पत्थर की हो जाऊँगी तभी मेरी नगरी सजीव हो सकेगी। राजकुमार कहानी कहता रहा, धीरे-धीरे राजकुमारी गले तक पाषाण की हो गयी। तब राजकुमारी बोली देखो कुमार, मै कहानी पूरी सुनते ही पत्थर की हो जाऊँगी और पाषाण नगरी में अपने इसी रूप में प्रकट हो जाऊँगी। आपसे मेरी प्रार्थना है कि आप एक बार पाषाण नगरी अवश्य आना। राजकुमार ने आने की शपथ लेकर कहानी पूर्ण की, जिससे राजकुमारी पूर्णत पाषाण की हो गयी। राजकुमार गंगा के किनारे पहुँचकर हंसों की सहायता से पुन. पाषाण नगरी के द्वार पर जा पहुँचा, जहाँ अब नगरी सजीव हो उठी थी। राजकुमार किसी से कुछ कहे-सुना बिना सीधा महल के अन्दर जाने लगा। पहरेदारो ने चोर-चोर कहकर हल्ला मचाया तथा उसे पकड़कर राजकुमारी के पास ले

गये। राजकुमार को देखते ही राजकुमारी की खुशी का ठिकाना न रहा। वह आदर के साथ उसे भीतर महल मे ले गयी तथा दोनो आनन्द के साथ रहने लगे।[1] इन दोनों ही कथाओ में नायिका-विवाह की शर्त के रूप में अमुक नगरी की कहानी सुनाने को कहती है। नायक प्रथम बार मे झूठ ही इस नगरी की कहानी जानने की बात कहता है लेकिन नायिका द्वारा तिरष्कृत होकर वह अपने साहसिक प्रयासों से उस नगरी मे पहुँच जाता है। वास्तविकता मालूम होने पर नायक वापस नायिका के पास जा पहुँचता है तथा अमुक नगरी की कहानी सुनाकर उसके साथ विवाह रचाता है।

लोककथाओं मे प्रायः ऐसी इच्छित वस्तुओं को ले आने का कार्य नायक को मिलता है, जो दुर्लभ होती है। लेकिन नायक अनेक कठिनाइयों को पार करते हुए उस इच्छित वस्तु को प्राप्त कर लेता है। साथ में उसे राजकुमारी के साथ आधा राज्य भी मिलता है। बुन्देली लोककथा "केतकी के फूल" में, 'बहेलिए के लड़के को केतकी के फूल ले आने का कार्य सौंपा जाता है। लड़का सात समुन्दर पार एक टापू पर साधु के पास पहुँचकर उसकी सेवा करके उसे प्रसन्न करता है और उससे केतकी के फूल मिलने का उपाय पूछता है। साधु ने कहा, यहाँ से थोड़ी दूर एक मनोहर बाग है, जहाँ दो स्त्रियाँ मिलेंगी। एक बहुत कबूल सूरत और दूसरी मैली कुचैली। तू उस सुन्दर स्त्री के फेर में न पड़कर मैली कुचैली स्त्री का हाथ पकड लेना। बस तेरा कार्य हो जायेगा। साधु की आज्ञा से लड़का बाग में पहुँचकर पहली बार मे उस अपूर्व सुन्दरी के लालच मे पड़ जाता है, जिससे वह तोता बनाकर पिजड़े मे कैद कर लेती है। साधु उसे कमण्डल का जल छिडककर पुन. आदमी बनाकर दोबारा हिदायत के साथ भेजता है । इस बार लड़का मैली कुचैली स्त्री का हाथ पकडता है, जो पहली स्त्री से भी अधिक रूपवान सोलह वर्ष की युवती बन जाती है, जिसके हँसते ही बाग में केतकी के फूलो की वर्षा होने लगी। साधु से आज्ञा ले बहेलिये का लडका उस रूपवान युवती के साथ घर के लिए चल पड़ा।[2]

1- पाषाण नगरी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0 -12 से 16 तक

2- केतकी के फूल, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-1 से 10 तक

बुन्देली की एक लोककथा 'सोने की चिड़िया'[1] मे, 'राजा ने ऐलान किया वि जो कोई सोने के पक्षी को लाकर देगा, उसे मै अपना आधा राज्य दे दूँगा। सबसे अन्त मे छोटा राजकुमार सोने की चिडिया लेने निकला। एक नगर मे पहुँचकर उसने राजा से प्रार्थना करके बलराज डाकू की प्राण रक्षा की। जिससे वह राजकुमार के साथ हो लिया। चलते-चलते वे सोने के पक्षी वाले शहर मे पहुँचे। बलराज की आज्ञानुसार राजकुमार महल के भीतर पहुँचा, जहाँ सोने का पक्षी बाँस के पिंजरे मे टगा था। लेकिन वह पास रखे सोने के पिजरे के लोभ में आ गया तथा पहरेदारों द्वारा पकड़ा गया। दूसरे दिन सबेरे राजा ने कहा, चोर को तो शूली ही चाहिए, परन्तु यदि वह मुझे सोने का घोड़ा ला देगा तो मै इसके अपराध क्षमा करके सोने का पक्षी इनाम में दे दूँगा। राजकुमार बलराज के साथ सोने के घोड़े वाले नगर में पहुँचा तथा बलराज की आज्ञानुसार अस्तबल मे जाकर देखा कि एक बहुत सुन्दर सोने का घोड़ा बंधा है। लेकिन वह चमड़े के जीन के बजाय सोने की जीन के लोभ मैं आ गया, जिससे पकड़ा गया। इस राजा ने कहा, चोर को फाँसी पर लटकाया जाना चाहिए, परन्तु यह सोने के केशवाली कन्या ला दे तो मैं इसे छोड़ दूँगा और अपना सोने का घोड़ा भी इनाम में दे दूँगा। राजकुमार बलराज के साथ सोने के केश वाली कन्या के नगर में जा पहुँचा। बलराज की आज्ञानुसार राजकुमार ने महल में जाकर स्नान करते समय राजकन्या के केश पकड़ लिए। राजकन्या उसी समय साथ चलने को राजी हो गयी लेकिन उसने माँ-बाप से मिल आने की विनती की। बलराज की बातों को भूलकर राजकुमार ने उसे जाने दिया। ज्योंही राजकन्या राजा के पास पहुँची राजा ने सिपाहियो को भेजकर राजकुमार को गिरफ्तार करा लिया। सवेरे राजा ने कहा, देखो, तुम जैसे चोरो को मिलना तो प्राणदण्ड ही चाहिए। परन्तु मेरे महल के सामने जो पहाड है, वह मेरी आँखो मे हमेशा खटका करता है। तुम इस पहाड को खोदकर फेक दोगे तो मै तुम्हारा अपराध क्षमा कर दूँगा और सोने के केशवाली राजकन्या भी तुम्हे दे दूँगा। राजकुमार ने बलराज की सहायता से उस पहाड़ को खोदकर फेक दिया, जिसे देखकर राजा बहुत प्रसन्न हुआ। उसने राजकुमार के साथ अपनी सोने के केश वाली राजकन्या विदा कर दी। आगे बलराज की बताई युक्ति से राजकुमार ने सोने का घोडा तथा सोने का पक्षी भी प्राप्त कर लिया।'

1- बुन्देलखण्ड की ग्राम्य कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0·63 से 69 तक

कथाभिप्राय की दृष्टि से यह कथा विशिष्ट है। इसमें कथाभिप्राय द्वारा कथा को मोड देने , चमत्कार तथा रोचकता उत्पन्न करने की भूमिका महत्वपूर्ण है। लोककथाओ म प्राय. एक अभिप्राय दूसरे के सहायक बन कर आते हैं। इस कथा में भी 'निषेध' तथा निषेध उल्लघन अभिप्राय हर मोड पर सहायक बनकर आता हे, जिससे कथा को विस्तार मिलता है तथा अंत में राजकुमार अपनी इच्छित वस्तुओं के साथ ही साथ राजकन्या को भी प्राप्त करता है।

इच्छित वस्तुओं की प्राप्ति की शर्त का दूसरा रूप उन लोककथाओं मे दिखलाई पडता है, जहाँ नायक को संकट मे डालने के लिए या उसकी जान लेने के लिए इस प्रकार के असम्भव कार्य करने को दिए जाते है जो राक्षसों द्वारा रक्षित होते है। लोककथाओं में नायक द्वारा इस तरह के असम्भव कार्यों के सम्पन्न करने के दौरान रोमांचक घटनाओ की पूरी श्रृखला विद्यमान रहती है। बुन्देली लोककथा "बनखण्डी रानी"[1] मे, 'एक राजा सुन्दर स्त्री का वेश धारण किए हुए डायन को अपने महल में रख लेता है। लोग उसे वनखण्डी रानी कहने लगे। वनखण्डी रानी राजा की सात रानियों को माँस खाने का इल्जाम लगाकर उनकी आँखें निकलवा लेती है तथा उन्हें अंधकूप में डलवा देती है और रानियों की आँखों को अपनी डायन माँ के पास भिजवा देती है। सात रानियो में से छोटी रानी गर्भवती थी, जिसके नवें महीने लड़का हुआ , जो दिन दूना रात चौगुना बढ़ने लगा। एक दिन वह कुएँ से बाहर खेलने निकला तो वनखण्डी रानी समझ गयी कि यह मेरी सौत का लड़का है। अतः उसने सौत से बदला लेने के लिए लडके के समक्ष कई असम्भव शर्तें रखी। उसने लडके के समक्ष तीन-धनैया बनवा लाने की पहली शर्त रखी। जिस समय लडका अपनी माँ से तीर-धनैया के लिए जिद कर रहा था, उसी समय महादेव-पार्वती वहाँ से गुजरे। पार्वती जी के कहने पर महादेव जी ने लड़के को अपना धनुष-बाण दे दिया। अब लड़का तीन-कमान लेकर निकलने लगा। एक दिन उसने एक पक्षी पर निशाना साधकर

1- जैसी करनी वैसी भरनी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-88 से 98 तक

तीर चलाया जो पक्षी को बेधता हुआ राजदरबार के खम्भे मे जा लगा। जिसे कोई निकाल नही सका लेकिन लडका चुपके-से निकाल लाया। राजा को बड़ा आश्चर्य हुआ।

प्रथम शर्त मे लड़के को सफल देख वनखण्डी रानी ने दूसरी शर्त किसी दानव (दाने) से नादन-भैस लाने की रखी। उसने सोचा कि वहाँ जाकर यह जिन्दा न लौटेगा। लड़का अपना तीर-कमान लेकर दाने के पास जा पहुँचा। दाने उसे देखकर जब खाने को दौड़ा तो एक तीर खींचकर मारा, जिससे दाने घूमकर गिर पड़ा। हारकर दाने अपनी जान बचाने के खातिर नादन-भैंस देने को राजी हो गया जो रोज नाद-भरके दूध देती थी तथा उसको चराने-दुहने के लिए लड़के के साथ हो लिया। अब लड़का व उसकी सातों माताएँ खूब दूध पीने लगी। एक दिन वनखण्डी रानी फिर मिली तथा उसने लड़के से नितनई-धान ले आने की तीसरी शर्त रखी। लड़का नादन-भैंस की तरह नितनई-धान भी ले आया।

वनखण्डी रानी को जब यह सब मालूम हुआ तो वह मन-ही-मन जल-भुनकर खाक हो गयी। उसने इस बार लड़के को अपनी डायन माँ के पास भेजने का निश्चय किया तथा लड़के के समक्ष चौथी शर्त रखी कि उसकी डायन माँ के पास जाकर सातों माताओ की आँखें ले आओ। उसने अपनी माँ के लिए एक चिट्ठी भी लिखी कि मैं अपने दुश्मन को तेरे पास भेज रही हूँ, यह सौत का लड़का है, जिन्दा वापस न आने पावे। लड़का चिट्ठी लेकर घर आया, जिसे दाने ने पढकर उसकी भाषा बदल दी कि मै लड़के को भेज रही हूँ, यह तेरा नाती है, इसे प्यार से रखना। लड़का जंगल में बुढ़िया डायन के पास पहुँचा। पहले तो वह लड़के को देखकर खाने दौडती है। पर पत्र पढकर उसने लड़के को हृदय से लगा लेती है तथा कुशल-क्षेम पूँछती है। लड़के ने खाना खाते समय नानी से उड़नखटोला तथा आग व पानी की तुमरियां (पुड़िया) की जानकारी प्राप्त किया, साथ ही अपनी माताओं की आँखों का भी पता मालूम कर लिया। दूसरे दिन बूढ़ी डायन जब नदी मे स्नान करने गयी तो लड़का आग व पानी की तुमरियां तथा अपनी माताओं की आँखें लेकर उड़नखटोले में बैठकर वहाँ से प्रस्थान करता है। जिसे देखकर बूढ़ी डायन पीछे दौड़ती है। लड़के ने आग की तुमरियाँ छोड़ दी, जिससे डायन जल-भुनकर खाक हो गयी । लड़के

ने घर आकर बाघन का दूध लाकर उससे अपनी सातों माताओं की आँखें चिपका दी जिस
वे पहले के समान देखने लगीं।

एक दिन वनखण्डी रानी ने जब यह सब देखा तो उसके पाँव तले की जमीन
खिसक गयी। उसने शत्रु को प्रबल जानकर, कुछ देर सोचकर पाँचवी शर्त रखी कि अब
अपनी सवारी के लिए श्यामकर्ण घोड़ा और ले आओ। लड़का श्यामकर्ण घोड़ा लेने कजलीवन
को चला। कजलीवन में दोपहर को पचासों घोड़े पानी पीने निकलते हैं। सबसे पीछे एक
मरियल टट्टू पाँव घसीटता हुआ आता है। लड़का उसकी पीठ पर बैठ गया, टट्टू अपने
असली रूप में हो, आकाश में उड़ने लगा। सात-दिन-रात बीत जाने पर जब घोड़ा सवार
को न गिरा सका तो प्रसन्न होकर लड़के के साथ चलने को राजी हो गया। श्यामकर्ण
घोड़े के साथ उसके रक्षक चार दानव भी लड़के के साथ आ मिले। लड़का सभी को लेकर
घर आया तथा उसने पहले दाने से कहकर नगर के बाहर एक अच्छा किला और रहने
का महल बनाकर सातों माताओं के साथ ठाट-बाट से रहने लगा।

वनखण्डी रानी ने जब यह देखा तो वह बहुत घबराई आखिर में उसने लड़के
से प्यार जताकर कहा, बेटा, अब क्या कुंवारा ही बना रहेगा? अमुक राजा के घर में इन्द्र
की परी के समान सुन्दर लड़की है, जा उसे ब्याह ला! राजकुमार (लड़का) चारों दानों
के साथ बारात लेकर चला। बारात दो पहाड़ियों के बीच ठहराई गयी। आधीरात के समय
जब दोनों पहाडिया मिलने के लिए सरकने लगी तो एक दाने ने अपने हाथ की टिहुनिया
का धक्का मारकर दोनों को बारह कोस दूर फेंक दिया। सबेरे राजा ने बारात को जिन्दा
देखकर भांवरे डालने की तैयारी किया। लेकिन भांवर के लिए केतकी के फूल लाने की
शर्त रखी। दूर तक देखने वाले दाने ने बतलाया कि केतकी के फूल पाताल में है तथा
धरती फाड़ने वाले दाने ने लात मारकर पाताल तक जमीन फाड़ दिया। राजकुमार पाताल
से केतकी के फूल तोड़कर लाता है। भांवरों की रस्म सम्पन्न होती है और विवाह के
बाद राजकुमार बहू को लेकर घर आया, जिसे देखकर उसकी सातों माताएं अत्यंत प्रसन्न

हुई। अन्त में वनखण्डी रानी ने राजा से कहकर राजकुमार पर आक्रमण करवा दिया लेकिन असलियत मालूम होने पर राजा ने वनखण्डी रानी को धरती में गड़वा दिया। यहाँ पर छठवीं शर्त के रूप में वनखण्डी रानी सुन्दर स्त्री को व्याह लाने की शर्त रखती है तथा उस सुन्दर स्त्री से विवाह करने के लिए अन्तिम शर्तानुसार राजकुमार को पाताल से केतकी के फूल लाने को कहा जाता है। राजकुमार अपने सहायक, दानवों की सहायता से पाताल से केतकी के फूल लाकर सुन्दरी से विवाह करता है। इस तरह, वनखण्डी रानी कथा में नायक को संकट में डालने के लिए उसके समक्ष सात कठिन शर्तें रखी जाती हैं, जिनको नायक अपने साहसिक प्रयासों से पूरा करता है।

'काग विड़ारिन' बुन्देली लोककथा में ' एक राजा की नई रानी के दो लड़कों व एक लड़की को जन्म के समय ही उसकी सात रानियाँ आपस में सलाह करके क्रमशः नदी में फेंकवा देती हैं तथा उनकी जगह ईंट पत्थर रख देती हैं। राजा इससे बहुत रूष्ट होता है तथा नई रानी को कुलच्छिनी समझ उसे महल में कौओं को हाकने का कार्य सौंपता है, जिससे लोग उसे काग विड़ारिन कहने लगे। इधर नदी के किनारे रहने वाले एक साधु ने इन तीनों बच्चों को पाल-पोसकर बड़ा किया तथा इन्हें एक जादुईमाला देकर नगर में जाकर बसने को कहा। उन्होने अपने पिता राजा के नगर के बाहर मैदान मे जादुई माला से सोने का सातखण्ड का महल खड़ा किया। सारे नगर मैं इसकी चर्चा होने लगी। जब सातों रानियों को इसकी खबर हुई तो वे सोचने लगी कि कहीं ये नई रानी के पुत्र- कन्या न हो, क्योंकि सोने की सी देह और रूपे-जैसे केश उनके ही थे। यदि यह भेद राजा के सामने खुल गया तो वे हमें दीवाल में चुनवा देंगे। अतः उन्होंने एक दूती को उनके पास मार डालने के उपाय के लिए भेजा। एक दिन दूती ने सोने के महल में पहुँचकर बेटी को गले लगाकर खूब रोई तथा उससे कहा, बेटी मैं तेरी मौसी हूँ, मुझे अकेले रहना बुरा लगता है तथा वहीं रहने लगी। एक दिन उसने बेटी से कहा, देखो, तुम इस सोने के महल में मामूली बत्तियों का उजेला शोभा नही देता, इसके लिए तो मणि का उजेला होना चाहिए। इसके लिए तुम अपने भाई को कजलीवन में भेज दो, वहाँ वासुकीनाग के पास सूरज की तरह चमकने वाली मणि है। अगले दिन बेटी

के आग्रह करने पर बड़ा भाई नियत स्थान पर पहुँचा और एक वृक्ष पर चढ़ गया। आधी रात को वासुकी नाग दसों दिशाओं में मणि का प्रकाश फैलाता आया तथा मणि को रखकर भोजन की तलाश करने लगा। राजकुमार ने अपनी ढाल मणि के ऊपर फेंकी, जिससे चारों ओर अन्धकार हो गया। वासुकी नाग क्रोध से ढाल पर फन पटकने लगा, इसी समय राजकुमार ने एक तीर से उसको समाप्त कर दिया तथा मणि लेकर वापस आ गया। अब सोने के सतखण्डे महल पर मणि का प्रकाश होने लगा। दूती की युक्ति व्यर्थ गयी। कुछ दिनों के बाद उसने बेटी से कहा, तुम्हारी एक भौजाई न होने से महल सूना-सूना लगता है। इस महल में हँसने से फूल तथा रोने से मोती झरने वाली भौजाई आनी चाहिए। बेटी द्वारा उसके मिलने का उपाय पूछने पर दूती ने कहा, राजा इन्द्र के दरबार की सब परियाँ रात में स्नान करने के लिए मानसरोवर पर आती हैं। तुम्हारे भाई में अगर बल और चतुराई हो तो वह किसी युक्ति से इनमें से सबसे सुन्दर हँसनपरी को ला सकता है। बेटी के आग्रह करने पर बड़े राजकुमार ने जंगल में एक साधु की सेवा करके उसे प्रसन्न किया तथा उसकी सहायता से हँसन-परी को ले आया, जिससे बेटी के खुशी का ठिकाना न रहा, ननद-भौजाई प्रेम से रहने लगी। इस बार दूती ने खीजकर बेटी से कहा, तेरे मन की एक भौजाई तो आ गयी, परन्तु क्या दूसरे भाई को कुंवारा ही रखना चाहती हो? बेटी ने पद्मिनी के रूप और गुण की प्रशंसा सुनकर भाई से उसे शीघ्र ले आने का आग्रह किया। बड़ा राजकुमार सात-समुन्दर पार सिंहलद्वीप में जा पहुँचा। जहाँ सतखण्डे महल पर बैठकर पद्मिनी चर्खा कात रही थी। उसकी शर्त थी कि जो मनुष्य घोड़े की एक उड़ान में उसके सतखण्डे पर पहुँचकर चर्खे के सूत को तोड़ देगा, उसी के साथ वह विवाह करेगी। जो मनुष्य इस कार्य में सफल नहीं होता, व तुरन्त ही पत्थर हो जाता। राजकुमार ने तुरन्त घोड़े पर सवार होकर एड़ लगायी। घोड़े ने ऊपर को उड़ान भरी, परन्तु वह चर्खे के सूत को छूते-छूते रह गया और घोड़े समेत, ज्यों ही नीचे आया, पत्थर का हो गया। एक साल बीत जाने पर अपने बड़े भाई की खबर लेने छोटा राजकुमार सिंहलद्वीप पहुँचा तथा हाल मालूम होने पर उसने वहीं डेरा डालकर घोड़े की चराई शुरू कर दी। धीरे-धीरे छः महीने में जब घोड़ा खा-पीकर तैयार हो गया तब एक दिन शुभ मूहर्त में छोटे राजकुमार ने महल के

नीचे पहुँचकर घोड़े का कसकर ऐड़ जमाई, घोड़ा ऊपर को उछला और पद्मिनी के सतखण्डे से भी ऊपर चला गया। लौटती बार कुमार ने चर्खे के सूत को पैर से तोड़ दिया। पद्मिनी का प्रण पूरा हुआ, परन्तु राजकुमार पद्मिनी की कुछ परवाह न कर घोड़े पर सवार हो जाने लगा। पद्मिनी ने राजकुमार को लौटा लाने के लिए दूत भेजे, जिनसे राजकुमार ने कहा, मैं ऐसी हत्यारिन के साथ विवाह नही करता, जिसने हजारों युवकों को पत्थर बना दिया है। यदि तुम्हारी राजकुमारी इन सबको जिन्दा कर दे तो मैं उसके साथ विवाह करने को राजी हूँ। दूतों ने सब हाल पद्मिनी से कहा, वह चौदह विद्या और चौसठ कलायें जानती थी। उसने पत्थर हो गये राजकुमार को जिन्दा कर लिया, जिससे बड़ा राजकुमार भी जी उठा, दोनों भाई खुशी-खुशी पद्मिनी को साथ लेकर अपने घर लौट आये। पद्मिनी अपनी विद्या से मौसी बनी दूती का कपट जान गयी। उसने तुरन्त राजकुमार से कहकर उसे दीवाल में चुनवा दिया।[1] 'वनखण्डी रानी' व 'कागविड़ारिन' लोककथाओं में नायक के सामने दुर्लभ वस्तुओं तथा सुन्दरी दोनों को ही ले आने की शर्तें रखी जाती हैं, जिन्हें वह कुशलता से पूरा करता है। 'कागविड़ारिन' में सिंहलद्वीप की पद्मिनी अपने विवाह के लिए शर्त निर्धारित करती है, जिसे छोटा राजकुमार पूरा करता है। लेकिन शर्त पूरी होने के बाद राजकुमार पद्मिनी के सामने सभी को जिलाने की शर्त रखता है, जिसे पद्मिनी पूरी करती है। इस तरह लोककथा में विवाह के लिए शर्तों का आदान-प्रदान दोनों ओर से होता है, जिनके पूरा होने पर नायक-नायिका का विवाह सम्पन्न होता है।

लोककथाओ मे इच्छित वस्तु के रूप में नायिका को ही व्याह लाने की शर्त नायक को मिलती है, जिसे वह अपने मित्रों की सहायता से पूरा करता है। बुन्देली लोककथा 'रानी-फूलवती' में राजकुमार के साहस को देखकर बासुकी नाग ने उसे उत्त्राखण्ड के राजा रणधीर सिंह की लड़की फूलवती को लाने की शर्त रखी, बदले में प्राण-रक्षा का वचन

1- बुन्देलखण्ड की ग्राम्य कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-165 से 177 तक

दिया। राजकुमार घोड़े पर सवार हो उत्तराखण्ड की ओर चला। मार्ग में उसे एक अलाल (आलसी), तीरन्दाज व दूरदर्शी व्यक्ति मिले, जिन्हे साथ में लिए वह फूलवती की नगरी में पहुँचा। राजा को सूचना मिलने पर यथोचित स्वागत सत्कार के बाद उसके सम्मुख शर्त रखी कि देखो , यह सामने लोहे का खम्भा गडा है। कल तुम्हें इस काठ की कुल्हाडी से एक ही बार में खम्भे को काटकर दो टुकड़े करने होंगे। यदि यह काम तुम कर सके तो तुम्हे फूलवती व्याह दी जायेगी, नहीं तो सिर काट लिया जायेगा। राजकुमार को चिन्तित देखकर अलाल बोला, बेटी फूलवती के सोने के केश का एक बाल इस खम्भे में बाँधने पर एक ही बार में दो टुकड़े हो जायगा। अलाल रात को एक छलांग लगाकर खतखण्डे मे सो रही बेटी का एक बाल तोड़कर ले आया। सुबह राजा के सामने राजकुमार ने काठ की कुल्हाड़ी उठाई तथा लोहे के खम्भे में दे मारी, जिससे खम्भा दो टुकड़े होकर गिर गया। अब राजा ने दूसरी शर्त रखते हुए कहा कि लड़कों ने इस खेत में पाँच मन राई बोई है उसे रात-भर में बीनकर राजकुमारी के पलग के नीचे लगा दो तो नहीं तो सिर काट लिया जायगा। राजा के चले जाने पर राजकुमार ने चीटियों को होम लगाया, जिससे लाखो करोड़ों चीटियाँ जुड़ आयीं। उन्हेंाने राजकुमार के कहे अनुसार खेत की राई बीनकर राजकुमारी के पलंग के नीचे राशि लगा दी। राजा ने सबेरे जाकर देखा कि राजकुमारी के पलग के नीचे पाँच मन राई का ढेर लगा है तो उसने तीसरी शर्त रखी कि बेटी के ब्याह की मौर-पनैयाँ यहाँ से हजार कोस दूर उज्जैन में रखी है, जाकर उन्हें रात भर मे ले आओ। राजकुमार को चिन्तित देख अलाल मौर-पनैयाँ लेने उज्जैन चला। राजकुमार दूरदर्शी व्यक्ति के माध्यम से उसकी खोज-खबर लेता रहा। लौटकर आते समय अलाल एक पेड़ के नीचे पड़कर सो रहा, जहाँ एक सर्प अलाल के पास काटने पहुँच रहा था। तीरन्दाज ने दूरदर्शी व्यक्ति द्वारा की गयी अगुली की सीध पर तीर छोड़कर साप को मार गिराया, जो अलाल के ऊपर गिरा, जिससे उसकी नींद खुल गयी और वह मौर-पनैयाँ लेकर आ गया। राजा ने फूलवती का व्याह राजकुमार के साथ कर दिया।[1] इस लोककथा में

1- पाषाण नगरी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0•74 से 79 तक

राजकुमार को रानी फूलवती से विवाह करने के लिए तीन कठिन शर्तों को पूरा करना पड़ता है।

'रतन-पारखी' बुन्देली लोककथा में 'सिंहलद्वीप की पद्मिनी से व्याह करने का प्रण करके राजकुमार घर से निकला तथा सिंहलद्वीप पहुँचकर वहाँ पर मिठाई की दुकान खोली। एक दिन राजा की बेटी ने अपनी दासीं से अनोखी मिठाई मंगवाई। दासी ने कुंवर की दूकान में आकर ऊँचे-से-ऊँचे दाम की दो सेर मिठाई ली। कुँवर को यह मालूम होने पर कि राजकन्या की दासी है, उसने पैसा दासी को अपने पास रख लेने को कहा जिससे दासी बहुत प्रसन्न हुई। वह मिठाई बेटी को बहुत पसन्द आयी तथा वह रोज दासी से मिठाई मंगवाने लगी। दासी मुफ्त में मिठाई लेकर पैसा अपने पास रखने लगी। एक दिन कुंवर ने दासी से पद्मिनी से मिलने का उपाय पूँछा। दासी बोली, बेटी पुरुष का मुँह नहीं देखती तथा नित्य फूलों पर तूलती है। पर तुम ब्राह्मण का वेश बनाकर राजा के पास जाओ और उनसे महल के अन्दर महादेव का पूजन कर लेने को कहो। बाकी बात मैं देख लूँगी। अगले दिन राजकुमार ब्राह्मण का वेष बनाकर राजा के दरबार में गया तथा बोला, मै काशी का ब्रह्मण हूँ, मैं जब तक महादेव का पूजन नहीं कर लेता, भोजन नहीं करता। आपके महल के अन्दर महादेव का मन्दिर है,- मुझे पूजन करने की आज्ञा दें। राजा की बेटी भी नित्य महादेव का पूजन करती थी। राजा ने बेटी को कहला भेजा कि ब्राह्मण भूखा है, इसे पूजन कर लेने दो। अब ब्राह्मण देवता पूजन के बहाने मन्दिर मे जा डटे, इधर बेटी के पूजन का समय निकला जा रहा था। अतः उसने दासी के कहने पर मन्दिर मे एक ओर बैठकर पूजन किया और होम करने लगी। उसी समय ब्राह्मण ने उसका हाथ पकड़कर कहा, ऐसे कहीं होम लगाया जाता है? ऐसे लगाओ तथा अपना झोली-झंगा लेकर वहाँ से भाग गया। पूजन के पश्चात बेटी फूलों से तुलने बैठी, रोज एक कली पर तुलती थी। आज डलियों फूल चढ़ गये। मालिन सोचने लगी कि दाल में कुछ काला है। बेटी ने कलंक से बचने के लिए दासी की सलाह पर उसी ब्राह्मण के साथ कहीं भाग चलने का निश्चय किया। दासी ने तुरन्त राजकुमार के पास पहुँचकर

उसे सूचित किया। राजकुमार ने तीन अच्छे घोड़े खरीदे और आधी रात के समय बेटी के महल के पीछे पहुँच गया। राजकुमार , पद्मिनी और उसकी दासी, तीनो घोड़ों पर सवार होकर वहाँ से चल पड़े।'[1]

'राजकुमारी फूलमदे'[2] नामक राजस्थानी लोककथा में 'एक बहादुर राजपूत ने राजकुमारी फूलमदे की सुन्दरता के बारे मे सुनकर उसके साथ ब्याह करने का निश्चय किया। रास्ते मे उसने क्रमश. तीन सन्यासियो को प्रसन्न किया; तीसरे सन्यासी के द्वारा उसे मालूम हुआ कि राजकुमारी फूलमदे पर एक जादूगर का साया है। उसके महल में प्रवेश करने से पहले घटा बजाकर राजा को अपने आने की खबर देनी पड़ती है। लेकिन जैसे ही घंटा बजता, हवा में साँप और बिच्छू उड़ते हुए आते और उस आदमी को मार डालते। सन्यासी ने राजपूत का दृढ़ निश्चय देखकर कहा, तुम अपने साथ एक बहुत ही महीन धागों का बुना जाल ले जाओ तथा घटा बजाने से पहले उसे अपने चारों तरफ लगा लेना, जिससे बिच्छू और साँप उसमे फँस जायेगे। राजकुमार ने ऐसा ही किया, घंटे की आवाज होते ही सांप और बिच्छू उडते आए और उस जाल मे उलझ गये। राजपूत ने उन सबको मार डाला। घंटे की आवाज सुनकर राजा बाहर निकला तथा उसने देखा कि असंख्य बिच्छू और साँप मरे पडे है और एक बाका जवान जीता-जागता सामने खड़ा है। उसने राज-पुरोहित को बुलवाया और फूलमदे की शादी उस बहादुर राजपूत से करवा दी।' 'रतन-पारखी' लोककथा में जहाँ नायक की सहायता नायिका की दासी करती है वहीं इस लोककथा में नायक सहायता के लिए सन्यासियों को प्रसन्न करता है, जिनकी सहायता से वह नायिका को प्राप्त करने में सफल होता है।

'मस्तराम' बुन्देली लोककथा में, 'राजा ने अवध की रानी का चित्र एक माह के भीतर खींच लाने की शर्त मस्तराम के सामने रखी, नहीं तो जान से मार देने की धमकी

1- जैसी करनी वैसी भरनी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-53 से 59 तक

2- लखटकिया, लक्ष्मीनिवास बिड़ला, पृ0-60 से 63 तक

दी। रास्ते मे मस्तराम एक बूढ़ी-औरत से हंसी-ठिठोली करके अवध की रानी के बारे में जानकारी प्राप्त की तथा उसके बाग मे जा पहुँचा, जहाँ पुरुषों के प्रवेश पर पाबन्दी थी। उसने मालिन को मुहरों का लालच देकर उसकी सहायता से आधीरात को पानी भरते समय बाग मे छिपकर रानी का चित्र खींच लिया तथा उस पर मोहित हो गया। वह सामने प्रकट हो रानी से वार्तालाप करता है। रानी ने उसे पीछे आने का इशारा किया वह रानी के महल में जा पहुँचा। सुबह राजा जब अपने महल वापस आया तो रानी ने खिड़की के सहारे मस्तराम को बाग मे उतार दिया। वह केले की कुंज में जा छिपा। राजा को जब यह सब मालूम हुआ तो उसने बाग में पहुँचकर केले के पेड़ों को भी काट डाला, जिससे मस्तराम का सिर भी कट गया। रानी चिता बनाकर मस्तराम के साथ सती हो गयी। उधर से गुजररहे महादेव-पार्वती ने उनको पुनः जिन्दा कर दिया तथा दो पेटियाँ मंगवाकर एक में रानी तथा दूसरी में उसी वजन की मिट्टी भर दी। इनमें से एक पेटी लेकर मस्तराम घर को चला, रास्ते में उसने पेटी खोली तो उसमें रानी मिली। दोनो सुखपूर्वक रहने लगे।'[1] इस लोककथा मे मस्तराम अवध की रानी का चित्र खींचने के साथ उसे भी प्राप्त कर लेता है।

भारतीय कथाओं मे नायिकायें रोमांचक और साहसपूर्ण कार्य करने वाले व्यक्ति को ही अपने पति के रूप में वरण करने की इच्छा व्यक्त करती हैं। इसलिए नायक को उनके साथ विवाह करने के लिए शर्त के रूप में अनेक तरह के असम्भव कार्यों को करना पड़ता है। 'कथासरित्सागर' में श्रृंगभुज और रूपशिखा की कथा में, 'रूपशिखा का पिता राक्षस अग्निशिख श्रंगभुज को बुलाकर अपनी पुत्री से विवाह करने की शर्त के रूप में कहता है, जाओ, इन दो बैलों की जोड़ी लेकर नगर के बाहर ढ़ेर के रूप में रखे हुए तिलों की एक सौ खारी को खेत मे बो आओ। ऐसा सुनकर घबराया हुआ श्रृंगभुज अपने ऊपर पहले से ही आसक्त रूपशिखा को सारा वृतान्त कह सुनाया। वह बोली, तुम खेत की ओर जाओ, मैं अपने मंत्र से सब सिद्ध किए देती हूँ। यह सुनकर जब श्रृंगभुज खेत

1- बुन्देली लोककहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-45 से 56 तक

मे गया तो उसने देखा कि उसकी प्रेयसी की माया से सारी भूमि जुत गयी है और सारे तिल बो दिए गये हैं। उसने अग्नि शिख को सारा कार्य हो जाने की सूचना दी तो वह धूर्त राक्षस बोला, तुम जाकर उन तिलों को एकत्र करके फिर ढेर लगा दो। श्रृंगभुज ने जाकर अपनी प्रेयसी से फिर कहा तो उसने अपनी माया से उस भूमि में अनगिनत चीटियाँ उत्पन्न करके उनके द्वारा तिलों का ढ़ेर करा दिया। यह सुनकर वह मूर्ख राक्षस बोला, यहाँ से दक्षिण की ओर आठ कोस पर शिव का एक मन्दिर है। उसमें मेरा प्यारा भाई धूमशिख रहता है। तुम उसे मेरी तरफ से निमंत्रण दे आओ कि कल प्रातः काल मेरी कन्या का विवाहोत्सव है। तुम आज ही लौट आओ और प्रातः काल मेरी कन्या से विवाह करो। श्रृंगभुज से सारी बातें सुनकर रूपशिखा ने उसे मिट्टी, पानी, काँटे, आग एवं अपना घोड़ा देकर कहा, तुम वहाँ जाकर सन्देश देकर तुरन्त लौट आना तथा आते हुए गरदन घुमाकर बार-बार पीछे की ओर देखना यदि तुम्हें धूमशिख आता दिखे तो क्रमशः इन चीजों को फेंकते जाना। श्रृंगभुज घोड़े पर सवार हो उस मन्दिर में पहुँचा तथा सन्देश देकर शीघ्र ही लौट पड़ा। क्षणभर में उसे धूमशिखा पीछे आता दिखा, उसने मार्ग में मिट्टी फेंक दी, जिससे वहाँ बड़ा पहाड़ बन गया। उसको लाँघकर जब धूमशिख पीछे आता दिखा तो उसने पानी फेंका, जिससे वहाँ लम्बी नदी बहने लगी। उसको तैरकर जब धूमशिख आता दिखा तो उसने काँटे बिखेर दिए, जिससे वहाँ काँटों का जंगल बन गया। धूमशिख के वन से भी निकलकर पीछे करने पर श्रृंगभुज ने आग फेकी, जिससे सारा जंगल जलने लगा। जंगल को जलते देख डरा हुआ धूमशिख थककर वापस लौट गया। तरनन्तर अपनी प्रिया को उसका घोड़ा वापस करके वह अग्निशिखा के पास पहुँचा तथा निमंत्रण दे जाने की बात बतला दी। यह सुनकर विस्मित अग्निशिख ने उसे देवता समझकर उसके साथ अपनी कन्या रूपशिखा का विवाह सम्पन्न कर दिया।[1]

लोककथाओं में नायिका से विवाह की शर्त के रूप में नायक को अनेक कठिन कार्य करने पड़ते हैं। 'अपना-अपना भाग्य" बुन्देली लोककथा में विजयनगर की राजकुमारी

1- कथासरित्सागर (द्वितीय खण्ड), सप्तम लम्बक, पंचम तरंग, पृ0-115 से 121

से विवाह करने के लिए सात साढ़ो को एक साथ व एक ही रस्सी मे नाथने की शर्त मिलती है। साँढ़ इतने तेज थे कि ज्योही कोई उनके पास आने का प्रयत्न करता, वे सींगों पर उठाकर उसे दूर फेक देते। इसमें बड़-बड़े शूरवीरो का मान चूर हुआ। लेकिन अंत में एक राजकुमार ने सातो साँढ़ों को एक रस्सी से नाथ दिया। सभा में शोर मच गया, चारों ओर जय-जय नाद होने लगी। राजा ने उठकर विजयी राजकुमार को गले से लगा लिया।'[1]

'वासुकी-नाग की मुदरी'[2] बुन्देली लोककथा मे 'साहूकार का पुत्र राजकुमारी के बगीचे मे प्रवेश करता है तथा मालिन को लालच देकर उसके साथ स्त्रीवेश मे राजकुमारी के महल में जाकर मिलता है। राजकुमारी रोज ढ़ाई फूलों से तुलती थी , लेकिन अब वह नहीं तुली जिससे उसने मालिन को डपटकर सारा हाल मालूम कर लिया। राजकुमारी ने साहूकार के लड़के को बुलाकर कहा, अगर तुम सचमुच मेरे प्रेम के लायक हो तो रात भर में इस बगीचे के भीतर सोने का सतखण्डा महल बनवा दो। मैं तुम्हारे साथ विवाह कर लूँगी नहीं तो मैं तुम्हें जान से मरवा डालूँगी। साहुकार के पुत्र ने चार बजे सबेरे स्नान करके वासुकी नाग की मुदरी हाथ मे लेकर कहा, जय सत्य की पूरी वासुकी नाग की मुदरी, जो तोमें, मोमे और वासुकी नाग में सत्य होवे तो यहाँ इसी समय सोने का सतखण्डा महल खडा हो जाय। कहने की देर थी कि सोने का सतखण्डा महल बनकर तैयार हो गया। सवेरा होने पर राजा ने साहूकार के पुत्र को बुलाया तथा उसके साथ धूम-धाम से अपनी बेटी का विवाह कर दिया।'

'चाँदी का चबूतरा सोने का पेड़' नामक मध्यदेश की लोककथा में 'राजकुमारी चित्रलेखा ने एक स्वयंवर रचा और अपने विवाह के लिए यह शर्त रखी कि जो व्यक्ति कीचड से भरे कुड में गले तक डूबकर सिर्फ एक दिए भर पानी में नहा लेगा, उसी से

1- बुन्देलखण्ड की ग्राम्य कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-145 व 146

2- बुन्देलखण्ड की ग्राम्य कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-130 से 132 तक

मै अपना विवाह करूँगी। छोटे राजकुमार को एक उपाय सूझा, उसने तेली के पास जाकर एक मुहर दी तथा उससे कहा, मुझे सिर से पैर तक एक तेल के कुंड में डुबो दो। तेल से स्नान करने के पश्चात् राजकुमार स्वयंवर के स्थान पर पहुँचकर कीचड़ से भरे कुण्ड में छलांग लगा दी तथा गले तक कीचड़ में डूबकर जब वह बाहर आया तो एक लकड़ी से अपने शरीर का कीचड़ साफ किया, जो तेल के कारण जल्दी से साफ हो गया। फिर हाथ में दिए का पानी थोड़ा-थोड़ा लेकर पूरे शरीर पर लगा लिया। राजकुमार अपनी बुद्धि से शर्त जीत गया और चित्रलेखा से उसकी धूमधाम से शादी हो गयी।'[1]

'संत-बसंत'[2] बुन्देली लोककथा में, 'नगर के राजा के एक लड़का और गुलाब के फूल की तरह सुन्दर व कोमल एक लड़की थी। लेकिन एक राक्षसी रोज रात को आती तथा जो मिलता उसे खा जाती। इससे नगर वीरान होता जा रहा था। अन्त में लाचार राजा ने घोषणा की जो कोई राक्षसी को मारेगा मैं आधा राज देकर अपनी लड़की का व्याह उसी के साथ कर दूँगा। बसन्त इसी नगर के बगीचे में ठहरा। आधी रात को राक्षसी वहाँ आयी तथा उसने बसंत को पकड़कर अपने मुँह में डाल लिया। वह दाँतों की चपेट से बचकर भीतर चला गया। राजमहल के फाटक के पास पहुँचते राक्षसी के पेट में दर्द हुआ, बसन्त ने छुरी निकालकर उसके पेट के अन्दर से ही भोंक दी। राक्षसी जमीन पर गिरकर जोर-जोर से चिल्लाने लगी। बसन्त ने धीरे-धीरे उसका पेट चीर डाला तथा पेट से बाहर निकल आया। जरा सी देर मे राक्षसी के मारे जाने का समाचार नगर भर में फैल गया। राजा आये और उन्होने बसन्त को छाती से लगाया और फिर आधा राज्य देकर अपनी बेटी का विवाह उसके साथ कर दिया।'

'जैसी करनी वैसी भरनी' बुन्देली लोककथा में, 'तीन राजकुमारों को राज्य के मंत्री,सेनापति व खजांची षडयंत्र करके विष के लड्डुओं का कलेवा देकर परदेश भेजते हैं। वे दूसरे राजा के राज्य में पहुँचकर दोपहर को स्नान भोजन करने के इरादे से तालाब

1- बालहंस, दिसम्बर (द्वितीय) 93, लोककथा विशेषांक, पृ0-49

2- बुन्देलखण्ड की ग्राम्य कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-233 व 234

पर रूके। तभी डोंडी पीटने वाले ने आकर ऐलान किया, सुनो भाई, राजा का एक हाथी पागल हो गया है उसने रोज शहर मे उत्पाद मचाकर सैकड़ों आदमियों को मार डाला है। राजासाहब का कहना है कि जो उस हाथी को मार डालेगा, उसके साथ मै अपनी बेटी काविवाह कर दूँगा और उसे आधा राज दहेज में दूँगा। तीनों भाइयों ने मुनादी सुनकर, लड्डुओं को घाट पर रख तालाब में स्नान करने के लिए प्रवेश किया। इसी समय वह हाथी वहाँ आ पहुँचा, वे तीनों डुबकी लगाकर पानी के अन्दर हो गये। हाथी ने घाट पर रखे लड्डुओं को पटककर उन्हे खाना शुरू कर दिया। लड्डू खाते ही वह भयंकर चिघाड़ के साथ धरती पर गिरकर मर गया। राजकुमार समझ गये कि लड्डुओं में विष मिला था। हाथी को मरा हुआ देख वे राजा के पास पहुँचे और कहा, महाराज हम लोगों ने उस पागल हाथी को मार डाला। राजा ने जेठे राजकुमार के साथ अपनी बेटी की शादी कर दी और आधा राज्य दहेज में दे दिया।"[1] इन दोनों ही लोककथाओं में राजकुमारों पर शर्त रूपी विपत्ति अचानक आती है, लेकिन वे संयोगवश उस विपत्ति को पारकर विवाह की शर्त भी पूरी कर लेते हैं, जिससे उन्हें राजकुमारी के साथ आधा राज्य मिलता है।

लोककथाओं में नायिका से विवाह करने के लिए उसे जुए में हराने की शर्त भी मिलती है। इसके पहले नायिका छलपूर्वक जुए में हराकर अनेक राजकुमारों को बन्दी बना लेती है लेकिन नायक उसका भेद जानकर चतुरता से उसे हरा देता है, जिससे नायिका उसके साथ विवाह करने को विवश हो जाती है। 'हँसता पान बोलती सुपारी' बुन्देली लोककथा मे, "एक राजकुमार के चार बड़े भाई राजकुमारी से जुए में हारकर कैद हो गये, जिससे छोटे राजकुमार ने राजकुमारी को जुए में हराने की ठानी। लेकिन जुआ खेलने जाने के पहले उसने राजकुमारी की जीत का रहस्य जानने के लिए,जो सिपाही उसे लेने आया था, उसे दो अशर्फिया इनाम देकर भेद पूछा। सिपाही ने बताया कि राजकुमारी बिल्ली के सिर पर चिराग रखकर जुआ खेलती है। जैसे ही वह हारने लगती है, बिल्ली को इशारा दे

1- जैसी करनी वैसी भरनी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-9 से 11 तक

देती है और बिल्ली सिर हिलाकर चिराग को गिरा देती है। इस तरह राजकुमारी किसी को जीतने नही देती। यह सुनकर राजकुमार ने एक चूहा पाला और उसे इस तरह तैयार किया कि वह आस्तीन में बैठा बाहर मुँह चमकाता रहे तथा वह बाँह का झटका दे तो ऊपर चला जाय। इस तैयारी के साथ वह राजकुमारी के पास जुआ खेलने पहुँचा। खेल आरम्भ हुआ तथा जब उसने देखा कि राजकुमारी हारने वाली है तो चट् उसने चूहे को आस्तीन के किनारे पर बैठा दिया, जिससे बिल्ली उसे एकटक देखने लगी। इधर रानी ने बिल्ली को इशारा किया, लेकिन बिल्ली की निगाह चूहे पर होने के कारण वह टस से मस भी न हुई। राजकुमारी की हार हो गयी और प्रतिज्ञा के अनुसार उसे राजकुमार के साथ शादी करनी पड़ी। राजकुमार के बड़े भाई भी छोड़ दिए गये।'[1]

'बुद्धि बड़ी या पैसा'? बुन्देली लोककथा में, 'एक राजा कुमारी चौबोलका के देश में जा पहुँचा। उसका प्रण था कि जो कोई उसे जुए में हरा देगा, उसी के साथ वह विवाह करेगी। राजकुमारी ने अपने महल से कुछ दूरी पर एक बंगला बनवा दिया था, जिसमे विवाह की इच्छा से आने वाले लोग ठहरते थे। राजा भी उस बंगले में ठहरा। थोड़ी देर बाद एक तोता उड़कर आया, उसके गले में एक चिट्ठी बँधी थी, जिसमें विवाह की शर्त लिखी थी, जिसके पूरा न होने पर जेल की हवा खाने का दण्ड भी था। राजा ने शर्त स्वीकार कर ली तो उसे महल में बुलाया गया। जुआ शुरू हुआ और आखिर में राजा की हार हुई। शर्त के अनुसार उसे जेल में डाल दिया गया। इधर राजा का पता लगाते-लगाते उसकी रानी चौबोलका के देश में जा पहुँची तथा सब हाल मालुम होने पर पुरुष वेश में बगले मे जा ठहरी। दो तीन घण्टे बाद उसे महल में ले जाया गया तथा खेलने के लिए चौसर डाली गयी। कुमारी चौसर खेलते समय बिल्ली के सिर पर दीपक रखती थी। जब राजकुमारी हारने लगती तो वह बिल्ली को इशारा करती, जिससे बिल्ली अपना सिर हिलाकर दीपक की ज्योति डगमगा देती। इसी बीच कुमारी अपना पाँसा बदल लेती थी। रानी यह बात पहले ही सुन चुकी थी तथा बिल्ली को खामोश रखने के लिए उसने

1- 'मधुकर', वर्ष-3, अंक-4, 16 नवम्बर 1942, पृ0-120 व 121

एक चूहा पाल रखा था। वह चौसर खेलने लगी, कुमारी जब हारने लगी तो उसने बिल्ली को सिर हिलाने का इशारा किया । लेकिन रानी ने पहले ही से अपनी अस्तीन में से चूहे को बाहर कर लिया और बिल्ली की निगाह उस पर गडी थी, जिससे कुमारी के इशारे का उस पर कोई असर नही हुआ। राजकुमारी ने कई बार प्रयत्न किया, लेकिन बिल्ली टस-से-मस न हुई। अन्त मे कुमारी की हार हो गयी तथा उसके विवाह की तैयारी होने लगी। रानी बोली, हमारा विवाह तो शर्त पूरी करते ही हो गया, भाँवरें पड़ने का दस्तूर घर चलकर होगा। उसने कैद से राजा को छुड़ाकर तथा राजकन्या चौबोलका को बिदाकराकर अपने महल मे आ गयी।'[1]

जुए मे हारना कथाभिप्राय तथा उससे जुड़ा बिल्ली, चूहा व दीपक का प्रसंग अन्य बोलियो की लोककथाओं में भी मिलता है। यथा- ब्रज की कथा 'हंसता रोता मोर'[2] मे भी कथा एव अभिप्राय यही है। इसमें जुए में हारने के साथ-साथ राजकुमारी को बोलने के लिए विवश करने की शर्त भी है। कथा के अनुसार - 'छोटे राजकुमार ने अनबोली राजकुमारी के शहर में पहुँचकर एक सराय में विश्राम किया तथा वहाँ की भटयारिन को अशर्फियो का लालच देकर राजकुमारी को जुए में हराकर बोलने के लिए विवश कर देने का भेद जान लिया। राजकुमार चूहे को आस्तीन में छिपाकर पूरी तैयारी के साथ महल मे जा पहुँचा। राजकुमारी के हुक्म से शतरंज खेलने का प्रबंध किया गया। राजकुमार का खेल देखकर राजकुमारी दंग रह गयी। वह हारने वाली थी कि उसने बिल्ली को इशारा किया। बिल्ली ने दीपक बुझा दिया और मोहरें उलट-फेर करने ही वाली थी कि राजकुमार ने चूहा छोड़ दिया। बिल्ली तुरन्त चूहे पर झपट पड़ी, जिससे उसे मोहरे बदलने का ध्यान भी न रहा। अनबोली राजकुमार मात खाकर गुस्से में बोली यह क्या हुआ? राजकुमार खुशी से बोल पड़ा, मारो नगाड़े पर चोट, अनबोली रानी बोल पड़ी। अनबोली राजकुमारी ने राजकुमार का तिलक किया तथा उसके साथ चलने को राजी हो गयी।' इन लोककथाओं में नायक

1- बुन्देलखण्ड की ग्राम्य कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-140 से 143 तक

2- पुष्प की जड़ हरी, आदर्श कुमारी, पृ0-60 व 61

जुए मे नायिका को हराकर उसके साथ विवाह करते है। लेकिन 'महाभारत' मे महाराज युधिष्ठिर जुए मे अपना सब कुछ हार जाने के बाद अपनी पत्नी द्रौपदी को ही दाव में लगाकर हार जाते है।

अनेक लोककथाओ मे विवाह की शर्त के रूप मे अनबोली नायिका को बोलने के लिए विवश करना पड़ता है। नायक अपने पूर्व ज्ञान से चतुरता पूर्वक इस कार्य को पूरा करता है। बुन्देली लोककथा 'धूल भरा हीरा' में, 'एक साहूकार अपने छोटे लडके व बहू को घर से निकाल देता है। वे दोनों समुद्र के किनारे एक धर्मशाला मे ठहरते हैं। साहूकार का लडका रोज किसी ब्राह्मण को एक रूपया दान करता था। इस नगर के एक धनी सेठ का जहाज बन्दरगाह मे अटक गया। एक औलिया ने बताया कि जो रोज एक रूपया दान देता हो, उसके छूने पर जहाज चल पड़ेगा। सेठ लडके को जहाज के पास ले गया। उसके छूते ही जहाज चल पडा । सेठ ने लड़के को जबरदस्ती जहाज पर चढ़ा लिया। इधर उसकी बहू सध्या समय तक उसके न आने पर समुद्र किनारे बने मन्दिर की छत पर चढ़कर समुद्र मैं कूदकर प्राण देने को तैयार हो गयी। पुजारी ने उसे समझा बुझाकर वापस बुलाया, वह मन्दिर के एक कोने मैं मौन धारण करके बैठ गयी। अब राजा के यहाँ से दो पत्तले खाने की आने लगी। उधर जहाज समुद्र पार दूसरे देश में जा पहुँचा। यहाँ के राजा की लड़की बारह साल से महादेव का पूजन कर रही थी। उसका प्रण था कि ब्रत के बारह साल पूरे होने पर मन्दिर से निकलते समय जिस पुरुष पर नजर पड़ेगी, उसी के साथ विवाह करूँगी। संयोग की बात उसकी नजर साहूकार के लड़के पर पड़ी। राजा ने अपनी बेटी का विवाह उसके साथ कर दिया। जहाज लौटते समय साहूकार का लडका बेटी लेकर आ गया। सेठ ने बेटी को अपने काने लड़के के लिए ले जाने के लालच से साहूकार के लड़के को समुद्र मे फेंक दिया। जहाज के किनारे आने पर बेटी ने अपने पति को न पाकर इसी मन्दिर पर चढ़कर प्राण देने को तैयार हो गयी। पुजारी ने उसे नीचे उतारा, बेटी ने मौन धारण कर लिया। अब राजा के यहाँ से तीन पत्तलें रोज आने लगी। उधर साहूकार का लड़का समुद्र में बहते-बहते एक निर्जन टापू पर जा लगा। कुछ

दूर उसे वहाँ दो सुन्दर स्त्रियाँ दिखाई दी, जिनमें से एक सिहलद्वीप के व्यापारी की लड़की व दूसरी समुद्र की लड़की थी। दोनो का विवाह लड़के के साथ हो गया तथा समुद्र ने उन्हें किनारे उसी मन्दिर के पास पहुँचा दिया। साहूकार का लड़का खाने-पीने का समान लेने बाजार गया, जहाँ जहाज वाले सेठ ने उसे देख लिया तथा भेद खुल जाने के भय से उसे एक कोठरी मे बंद कर दिया। उन दोनो स्त्रियों ने उसे वापस आते न देख मन्दिर पर से गिर कर प्राण देने का निश्चय किया। पुजारी ने उन्हें भी नीचे उतारा तथा वे दोनों भी मौन धारण करके बैठ गयी। अब एक की जगह पाँच पत्तलें रोज राजा के यहाँ से खाने के लिए आने लगी। राजा इसका कारण जानने के लिए मन्दिर में आया तथा उन चारो स्त्रियो से पूछ-पूछ कर हार गया पर किसी स्त्री ने अपना मुँह न खोला। चुपचाप बैठी रहीं। अब राजा ने नगर में डोडी पिटवायी, जो मनुष्य समुद्र तट के मन्दिर में बैठी चारो स्त्रियो से बातचीत करा देगा उसे मै अपना आधा राज्य दूँगा। साथ ही राजकुमारी का विवाह उसके साथ कर दूँगा। डोंडी सुनकर अनेक लोग आये, पर वे सब नाकाम रहे। इधर सेठ ने डोंडी सुनकर साहूकार के लड़के को छोड़ दिया। लड़के के कहने पर राजा, मंत्री व शहर के लोग मन्दिर में एकत्रित हुए। लड़के ने आप बीती सुनानी शुरू कर दी, जिससे क्रमश. चारो स्त्रियो ने आगे क्या हुआ? ऐसा कहकर बोलना शुरू कर दिया। असलियत मालूम होने पर राजा ने सेठ को चौराहे पर गड़वा दिया तथा अपनी लड़की का विवाह साहूकार के लड़के के साथ करके, उसे अपना आधा राज्य भी दे दिया। साहूकार का लड़का अपनी पाँचो स्त्रियो के साथ आनन्द से रहने लगा।'[1]

'चौबोली रानी' नामक राजस्थानी लोककथा में, 'अत्यंत सुन्दरी राजकुमारी का नाम चौबोली थी। जिसका अर्थ था, चार बार बोलने वाली। उसने उसी व्यक्ति से विवाह करने का प्रण लिया था , जो सगाई की रात को उसे चार बार बोलने पर विवश कर दे। अनेक राजकुमार इस शर्त को पूरी करनें में असफल रही थे, जिससे उनसे आटा पिसवाया जाता था। उज्जयिनी के राजा विक्रमादित्य ने यह चुनौती स्वीकार कर ली। उन्होने अपने

1- केतकी के फूल, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-110 से 122 तक

चार जिन्नों को भेजकर राजकुमारी से मिलने के पहले चार और शर्तों का पता लगवाया। जिसमे पहली शर्त थी बिना रस्सी के कुएं से पानी निकालना, दूसरी शर्त थी महल के रास्ते मे मिलने वाले शेर का बध किए बिना ही उससे प्राण बचाकर चले आना, तीसरी शर्त थी सूखी गाय को दुहकर बरतन भर देना तथा चौथी शर्त थी पानी से भरे तालाब को चलकर पार करना। राजा ने पहली शर्त के रूप में जिन्नों के माध्यम से कुएं से बरतन भरकर पानी निकाल दिया। शेर के आगे आने पर एक बकरा उसके आगे करके चल दिया। गाय दुहने का अभिनय किया तथा जिन्नों ने उस बर्तन को दूध से भर दिया। अन्तिम शर्त के रूप में, जिन्नों ने उसे बतलाया कि यह तालाब नही माया जाता है। अतः वह पैदल ही चलकर राजकुमारी के कक्ष में जा पहुँचा। राजकुमारी चित्रवत बैठी थी अब राजा को चार बार उसका मुँह खुलवाना था। राजकुमारी के सामने पलंग पर राजा आराम से बैठ गये तथा जिन्नों ने भी कमरे की वस्तुओं में अपना स्थान ग्रहण कर लिया। राजा ने पलग मे प्रवेश किए पहले जिन्न को सम्बोधित करके कहा, अये पलंग। राजकुमारी तो मौन बैठी है । अब तुम्हीं कोई कहानी सुनाओ, जिससे रात का एक पहर कटे। राजकुमारी पलंग की ओर आश्चर्य से देखने लगी। उसमें बैठे जिन्न ने कथा कहनी प्रारम्भ की तथा अंत मे राजा से उसका समाधान पूछा। राजा के समाधान से असंतुष्ट राजकुमारी बोल उठी, यही राजाविक्रमादित्य का न्याय है? राजा ने राजकुमारी के पहले बोल की सूचना के लिए नगाड़े पर चोट की। इसके बाद राजा ने पानी की झारी की ओर देखकर एक पहर रात बिताने के लिए कथा कहने को कहा, जिससे उसमें बैठे जिन्न ने कथा कहना प्रारम्भ किया। राजकुमारी अवाक होकर झारी की ओर देखने लगी। कथा के अन्त में जिन्न ने फिर राजा से समाधान करने को कहा। राजा ने अपना समाधान दिया, जिसे सुनकर राजकुमारी चहुँक उठी, आपकी न्यायशक्ति यदि इतनी दुर्बल है तो ईश्वर ही रक्षा करें। राजा ने अपनी दूसरी सफलता का डंका भी बजा दिया। फिर राजा ने फानूस को देखकर तीसरा पहर बिताने के लिए कथा कहने को कहा तथा उसमे बैठे जिन्न ने कथा कहनी प्रारम्भ कर दी। राजकुमारी को यह सुनकर अपने कानों पर विश्वास नही हुआ, पर वह चुप बैठी रही। कथा के अत मे उसने राजा से एक प्रश्न किया, जिसका राजा द्वारा दिया गया समाधान सुनकर राजकुमारी

क्रोध से बोल पडी, आप राजा होकर भी ऐसी गैर मिम्मेदारी की बात कैसे कर सकते हैं। राजा ने तीसरी बार डंका बजा दिया। चौथा जिन्न राजकुमारी के मोतियों के हार मे छिपा बैठा था। राजा ने उसी ओर देखकर कहा, अय मोतियों के हार,चौथा पहर बाकी है। तुम्हीं कोई कहानी सुनाओ। तभी हार ने कहानी कहना आरम्भ कर दिया तथा कथा के अंत मे राजा से प्रश्न पूछा। राजा का उत्तर सुनकर राजकुमारी ने उसकी बात काटते हुए कहा, तुम्हारी बुद्धि भी हार जितनी ही है। राजा ने कहा, राजकुमारी तुम चौथी बार भी बोल पडी। यह सुनते ही राजकुमारी को अपनी पराजय का बोध हुआ, उसका गर्व टूट गया। राजा ने राजकुमारी की अन्तिम पराजय की सूचना नगाड़े पर दी। शर्त के अनुसार राजकुमारी को राजा विक्रमादित्य से विवाह करना पड़ा तथा पराजित सभी राणकुमारों को मुक्त कर दिया गया।'[1] इस लोककथा में राजा ने बुद्धि-चातुर्य या बाहुबल से शर्त नही पूरी की है बल्कि जिन्न सहायक बनकर आते हैं। इसी तरह 'बेताल-पच्चीसी' की कथाओं में भी बेताल एक-एक करके राजा विक्रमादित्य को कथाएं सुनाकर उनसे समाधान पूछता है। राजा जब समाधान देने के लिए बोलते हैं तब शर्त के अनुसार बेताल पुनः अपने स्थान को चला जाता है।

लोककथाओ में नायक को विवाह की शर्त के रूप में नायिका के प्रश्नों का उत्तर देना पड़ता है। 'अपना-अपना भाग्य' बुन्देली लोककथा में, 'राजकुमारी की शादी किसी दूसरे राजकुमार से होती है लेकिन रात के समय जब राजकुमारी अपने पति का इन्तजार कर रही होती है उसी समय मन्दिर मे भूखे प्यासे सो रहे राजकुमार जस्सू को उठा कर देवी ने राजकुमारी के पास पहुँचा दिया। राजकुमारी ने देखा कि उसका पति अत्यत साधारण वेश मे आया है और अन्यमनस्क सा बैठा है तो उसने कहा-

'शय्या वस्त्रम् भूषणम् चारु गन्धो,
वीणा वाणी दर्शनीया च रामा।'

1- चौबोली रानी, लक्ष्मीनिवास बिड़ला, पृ0-7 से 25 तक

अर्थात् शय्या, वस्त्र, आभूषण, द्रव्य, गाने-बजाने का सामान, सुन्दर रमणी, सभी चीजें उपस्थित हैं । जिसकी रूचि हो उपभोग कीजिए। तब राजकुमार जस्सू ने उत्तर दिया, भूखे-प्यासे आदमी के लिए ये सभी चीजे तनिक भी रुचिकर नहीं हो सकतीं। इन सबके आदि में भोजन मुख्य है। राजकुमारी ने तुरन्त ही सोने के थाल में नाना प्रकार के व्यंजन परोस दिए, वह भूखा तो था ही खूब डटकर खाया-पिया। तदनन्तर पानदान उठाने के लिए राजकुमारी पीछे को लौटी। उसी समय देवी ने उसे उठाकर वापस मन्दिर में सुला दिया। राजकुमारी जब लौटकर आयी तो उसे न देखकर आश्चर्यचकित रह गयी। थोड़ी देर बाद उसका पति राजकुमार आया जिससे मिलने के लिए राजकुमारी ने इनकार कर दिया। अब राजकुमारी ने अपने पिता से कहा, जो कुछ हुआ सो हुआ। मैं एक समस्या दूँगी, जो कोई उसकी पूर्ति करेगा, उसी को मै अपना पति समझूँगी। अपने दिन राजकुमार जस्सू भी वहाँ पहुँच गया। सभी के साथ उसे भी एक परचा मिला, जिसमें लिखा था-

'शय्या वस्त्रम् भूषणम् चारू गन्धो,
वीणा वाणी दर्शनीया च रामा।'

राजकुमार जस्सू को यह श्लोक परिचित सा जान पड़ा, उसने लिखा-

'नो रोचंते क्षुत्पिपासातुरेभ्यः,
सर्वारंभाः तण्डुलप्रस्थमूलाः।'

राजकुमार जस्सू की यह उक्ति राजकुमारी को पसन्द आयी तथा उसी के साथ राजकुमारी ने गले मे जयमाला पहनाकर विवाह किया।'[1]

इसी तरह स्वय संग्रहीत 'पंडित-पंडिताइन' की कथा में 'पंडित पंडिताइन दोनों जिद वश अपने नवजात शिशु को जगल में छोड़ देते है, जो वही पलकर बड़ा होता है,

---

1- बुन्देलखण्ड की ग्राम्य कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-146 से 149 तक

लेकिन मनुष्यों के बीच मे न रहने के कारण बोलना नही जानता। एक बार जंगल से बरात गुजरी, जिसका दूल्हा काना था। बरातियों ने इसी सुन्दर लड़के को बाँधकर दूल्हा बना लिया। बरात पहुँची, टीका-चढ़ाव सब कुछ हुआ। रात को चित्रसारी का बुलावा आया, कहार बधे बधाये लड़को को घर के अन्दर ले गये। लडकी आरती सजाकर आई तथा दूल्हे के बन्धन खुलवाये। अब लड़की आरती लिए खड़ी सोच रही थी कि ये कुछ बोले लेकिन लड़का बोलना तो जानता नही था, कैसे बोले? जब काफी देर हो गयी तो लड़की ने कहा, हे भगवान। आप इन्हे बोल दे दीजिए। यह कहकर लड़की भगवान से प्रार्थना करने के लिए एक पैर के बल खड़ी हो गयी। उधर गौरा जी ने यह सब देखकर शंकर जी से लड़के को बोल दे देने को कहा। शकर का सिंहासन डोला और उन्होंने लड़के को बोल दे दिया। अब लड़का बोला, तू सब कुछ बाद में करना, पहले मुझे खाना ले आ, मुझे बहुत जोर की भूख लगी है। लड़की ने सोचा कि इस समय सभी दरवाजे बंद हैं मै खाना कहाँ से लाऊँ। लेकिन उसने अपने कोछ में बँधे ढाई चावल की खीर बना दी, जिसे लड़के ने बड़े चाव से खा लिया। सुबह कहार आकर उसे ले गये। जब बरात बिदा हुई तो उसे बरातियों ने उसी जंगल मे छोड़ दिया। उधर तीन साल बाद लड़की की गवने के लिए बरात आई, लेकिन अपने परिचित दूल्हे को न पाकर लड़के ने काने दूल्हे से पूछा, बताओ शादी की रात क्या खाया था? काने दूल्हे ने झूठ ही कह दिया, सब कुछ खाया था। लड़की ने गवने की बरात लौटा दी। इसी समय घूमता-फिरता वही लड़का आ पहँचा, उसने लड़की को देखा तथा लड़की ने उसे। दोनों एक-दूसरे को पहचान गये। लड़के ने कहा,मैंने इसी जगह खीर खायी थी जिसे तुमने ढाई चावल पकाकर बनाई थी। लड़की समझ गयी कि इसी के साथ मेरी शादी हुई थी तथा वह उसके साथ चलने को राजी हो गयी।[1] इन दोनों ही लोककथाओ मे नायिका द्वारा पूछे गये प्रश्नो का उद्देश्य अपने पति की खोज करना है।

'माता की विरासत' नामक राजस्थानी लोककथा मे, 'चौथा राजकुमार बीस प्रश्नो को पूछने वाली राजकुमारी से उसके प्रश्नो का समुचित उत्तर देकर विवाह करता है।

1- पंडित-पडिताइन की कथा, कथक्कड़ - गीता उर्फ गुड्डन, संग्रह क्रमांक--26 (अप्रकाशित)

राजकुमारी का सबसे पहला प्रश्न था, एक क्या? राजकुमार ने कहा, एक ईश्वर है। दो? पृथ्वी और स्वर्ग। तीन? उत्तर मिला तीन लोक। चार क्या? चार वेद। पाँच? पाँच पाण्डव; छह? छह ऋतुए है। सात? सात समुद्र है। आठ? पाठ पर्वत हैं। नौ? नवग्रह हैं। दस? दस दिशाओ के दिक्पाल। ग्यारह? अग्नि। बारह? सूर्य बारह है। तेरह का अंक क्या बताता है? जुआड़ी का भाग्य। चौदह? रत्न चौदह प्रकार के होते हैं। पन्द्रह का क्या महत्व है? चान्द्रमास मे पन्द्रह-पन्द्रह दिनो के दो पखवाड़े होते हैं। सोलह? सोलह श्रृंगार करके नारी की सुन्दरता परिपूर्ण होती है। सत्रह का क्या महत्व है? राज दरबार की शोभा सत्रह सामन्तो से पूरी होती है। अट्ठारह? अट्ठारह जड़ीबूटियाँ प्रमुख हैं। अन्त में राजकुमारी ने पूछा , उन्नीस? राजकुमार ने उत्तर दिया, तुम उन्नीस हो और मैं बीस हूँ। अब विवाह के लिए तैयार हो जाओ। नगाड़ो पर चोट पड़ी और राजकुमारी का राजकुमार से विवाह हो गया।[1] इस कथा मे नायक अपनी बुद्धिमत्ता से नायिका को हराकर उसके साथ विवाह करता है। लेकिन इसके विपरीत कालिदास व विद्योत्तमा के विवाह से सम्बंधित किंवदन्ती भी प्रचलित है जिसके अनुसार मूर्ख कालिदास ने विदुषी विद्योत्तमा को शास्त्रार्थ में हराकर उसके साथ विवाह किया था। इस दौरान पंडितों के कहे अनुसार वे चुप ही रहे थे। लेकिन विवाह हो जाने के बाद जब विद्योत्तमा को वास्तविकता का पता चला तो उन्हें अत्यंत दुख हुआ था।

1- चौबोली रानी, लक्ष्मीनिवास बिड़ला, पृ0-75 व 76

*****

XXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXX

अध्याय-आठ

'सहायक घटक'

(1) देवी-देवताओं द्वारा सहायता-

भगवान विष्णु (कृष्ण), शिव-पार्वती, देवी

(2) साधु-सन्यासियों द्वारा सहायता-

मुनि, तपस्विनी, साधु, गुरू

(3) अतिमानवीय प्राणियों द्वारा सहायता-

राक्षस, राक्षस-पुत्री, दानव, दैत्य, परियाँ

(4) लौकिक प्राणियों द्वारा सहायता-

मित्र, असाधारण व्यक्ति, पत्नी, मालिन, दासी

(5) पशु-पक्षियों द्वारा सहायता-

तोता-मैना, राजहँस, चूहा, बिल्ली, केकड़ा ।

****

भारतीय कथाओं में देवी-देवता संकट में पड़े नायक नायिका को सहायता पहुँचाकर उन्हें सकट से मुक्त करते हैं। देवी-देवताओं द्वारा सहायता करने के कथाभिप्राय का मूल प्राचीन मिथकों मे प्राप्त होता है। मिथकों में देविक शक्तियाँ समय-समय पर मानवों की सहायता करती रही हैं। वेदों, पुराणों आदि में देवों, गन्धर्वों तथा मानवों का संसार संयुक्त रूप से चलता था। अधिकांश लोकवार्ताविद इस बात के पक्ष में हैं कि अपने मूल रूप में मिथक और लोककथाएँ एक थी। कालान्तर में जिन कथाओं में देविकता का अंश क्रमशः क्षीण होता गया, वे लोककथाओं का रूप ग्रहण करती गयी। लेकिन इन लोककथाओं में देवताओं की उपस्थिति अवशिष्ट रूप में विद्यमान रही। इसके अतिरिक्त लोकमानस में निहित आस्तिक चेतना के फलस्वरूप भी लोकसर्जक अपनी अभिव्यक्तियों में देवी-देवताओं के अस्तित्व की अनुभूति को हर क्षण बनाये रखता है।

देवी-देवताओं के विषय में जनसामान्य में यह लोकविश्वास है कि वे संकटग्रस्त प्राणियों की सहायता करने अवश्य आते हैं। 'महाभारत' में द्रौपदी चीरहरण के प्रसंग में, संकट से ग्रसित द्रौपदी जब कोई अन्य सहारा न देखकर भगवान कृष्ण का स्मरण करती है तो वे वहाँ तुरन्त आकर द्रौपदी की लाज बचाते है।[1] इसी तरह 'भागवत पुराण' की कथा में, ग्राह द्वारा सकटग्रस्त गजेन्द्र की करूणामय पुकार को सुनकर भगवान श्रीहरि दौड़े चले आते हैं तथा अपने सुदर्शन चक्र से ग्राह का सिर काटकर गजेन्द्र को संकटमुक्त करते है।[2] लोककथाओं में शिव-पार्वती प्रायः प्राणियों की सहायता करने चले आते हैं। अक्सर शिव-पार्वती सकटग्रस्त नायक अथवा नायिका के पास से गुजर रहे होते हैं। पार्वती जी को उनका दुख देखा नहीं जाता तथा वे भगवान शंकर से नायक-नायिका को संकट से छुटकारा दिलाने का आग्रह करती है। पार्वती जी के आग्रह पर भगवान शंकर संकटग्रस्त प्राणियों के पास पहुँचकर सहायता के लिए तत्पर हो जाते हैं तथा उनको सकट से मुक्ति दिलाते हैं।

1- महाभारत-कथा, चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य, पृ0-127

2- भागवत-कथा, सूरजमल मेहता, पृ0-202 व 203

लोककथाओं का मुख्य एवं महत्वपूर्ण आयाम वे घटनाएँ हैं जिनमें कठिनाई-ग्रस्त मनुष्य अपने निश्चित ध्येय को प्राप्त करने के लिए एक ऐसे स्थान पर पहुँचता है, जहाँ कोई अलौकिक प्रतिभासम्पन्न व्यक्ति अथवा अतिमानवीय प्राणी उसके ध्येय में सहायक होता है तथा नायक को भावी संकट से सावधान करके उसके लक्ष्य प्राप्ति में सहयोग करता है। अलौकिक प्रतिभा सम्पन्न व्यक्तियों में साधु-तपस्वियों का नाम प्रमुखता से आता है, जो होते तो अलौकिक जगत के प्राणी ही है। लेकिन अपनी अतिन्द्रिय प्रतिभा के कारण वे अलौकिक माने जाते हैं। लोककथाओं में प्रायः नायक जब किसी कार्य को पूरा करने अथवा कोई इच्छित वस्तु को प्राप्त करने के लिए घर से निकलता है तो जंगल में पहुँचकर किसी साधु की छः महीने तक सेवा करके उसे प्रसन्न करता है तथा इसकी सहायता से अपने ध्येय को पूरा करने में सफल होता है।

'कथासरित्सागर' में अनेक प्रकार के अतिमानवीय शक्ति वाले प्राणियों का वर्णन मिलता है, जिनमें- असुर, भूत, दैत्य, दानव, दस्यु, गन्धर्व, अप्सरस्, किन्नर, नाग, पिशाच, राक्षस, सिद्ध, बेताल, विद्याधर, यक्ष, कुसुमाण्ड आदि का नाम प्रमुख है। इनमें असुर , दैत्य, व दानव को देवताओं का शत्रु माना गया हैं। देवताओं के सेवक, सहायक तथा मानव जाति के निकट रहने वाले-गन्धर्व, किन्नर, अप्सरस व यक्ष माने गये हैं। स्वतंत्र अतिमानवीय प्राणियों में- विद्याधार, नाग व सिद्ध का नाम आता है जो प्रायः मानव से मेल-जोल रखने वाले माने गये हैं। राक्षस, पिशाच, बेताल, भूत, दस्यु व कुसुमाण्ड मानव-जाति के शत्रु या विरोधी माने गये हैं।[1] लोककथाओं मे मुख्यतः दानव, राक्षस, परी, जादूगरनी आदि अतिमानवीय प्राणियों का उल्लेख मिलता है, जो संकटग्रस्त नायक के सहायक बनते हैं। इनकी सहायता से नायक के प्राणों की रक्षा होती है अथवा उसका कोई बड़ा लाभ होता है। कभी-कभी ये नायक और नायिका को एक-दूसरे के पास पहुँचाकर उनके मिलन में सहायक होते हैं।

1- मध्यकालीन हिन्दी प्रबंध काव्यो में कथानक- रूढ़ियाँ, डॉ0 ब्रज विलास श्रीवास्तव, पृष्ठ-58 से उद्धृत।

नायक-नायिका के सहायकों में दूसरा मुख्य स्थान सामान्य अथवा लौकिक प्राणियों का है, जो मानवीय गुणों से युक्त होते हैं तथा नायक अथवा नायिका को उनके ध्येय प्राप्ति में सही मार्ग निर्दिष्ट करते हैं। लौकिक प्राणियों में 'नायक के मित्र' तथा 'बाग की मालिन' का नाम प्रमुखता से आता है, जिनकी सहायता से नायक की संकट से मुक्ति होती है तथा वह अपनी इच्छित वस्तु को प्राप्त करने में सफल होता है। कभी-कभी कोई असाधारण प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति नायक से उपकृत होकर उसकी सहायता करने को तत्पर हो जाता है तथा नायक उस असाधारण व्यक्ति की सहायता से अनेक रोमांचक कार्यों को सम्पन्न करते हुए अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लेता है। कहीं-कहीं नायक की पत्नी भी संकट के समय उसकी सहायता करके संकट से मुक्ति दिलाती है।

भारतीय कथाओं में पशु-पक्षियों द्वारा सहायता प्राप्त होने के वर्णन विस्तार से मिलते है, जो अद्भुत होने के साथ-साथ रोमांचक भी है। लोककथाओं में अभिव्यक्त जीवन में पशु-पक्षी तथा मानव की दुनिया अभिन्न होती है। लोककथाओं के पशु-पक्षी संकटकाल मे अनेक प्रकार से मनुष्यों की सहायता करते हैं।

लोककथाओं में बार-बार प्रयुक्त होने वाली ये घटनायें कथाभिप्राय कहलाती हैं, जिन्हें निम्न भागों में बाँटा जा सकता है-

(1) देवी-देवताओं द्वारा सहायता- भगवान विष्णु (कृष्ण), शिव-पार्वती, देवी
(2) साधु-सन्यासियों द्वारा सहायता- मुनि, तपस्विनी, साधु, गुरू
(3) अतिमानवीय प्राणियों द्वारा सहायता- राक्षस, राक्षस-पुत्री, दानव, दैत्य, परियाँ
(4) लौकिक प्राणियों द्वारा सहायता- मित्र, असाधारण व्यक्ति, पत्नी, मालिन, दासी
(5) पशु-पक्षियो द्वारा सहायता- तोता-मैना, राजहंस, चूहा, बिल्ली, केकड़ा।

भारतवर्ष मे धर्म और देवी-देवताओं के प्रति श्रद्धा, आदर एवं उन्हें शक्तिशाली मानने के कारण उनके द्वारा सहायता करने से सम्बन्धित कथाओं का बाहुल्य है, जिनमें

भगवान विष्णु, शिव-पार्वती, लक्ष्मी एवं धर्म साधारण मानव के वेश में संकटग्रस्तप्राणियों की सहायता करते है। अपने औघड़ तथा आशुतोष रूप के कारण शिव लोकजीवन में सर्वाधिक प्रचलित देवता हैं। इसके पश्चात देवियों का स्थान है। शिव से जुड़ी पार्वती भी कभी अकेले तथा अधिकतर शिव के साथ लोकजीवन के हितो की संरक्षिका के रूप में सर्वथा मान्य देवी हैं। विष्णु आदि अन्य देवताओं का स्थान इसके बाद आता है।

लोककथाओं में शिव-पार्वती द्वारा सहायता करने का वर्णन बहुलता से मिलता है। वे अक्सर मृत्यु-लोक में विचरते समय दुखी प्राणियों का कष्ट दूर करते हैं एवं प्रेमियों के मिलन मे सहायक होते हैं। 'मस्तराम'[1] बुन्देली लोककथा में, 'मस्तराम अवध की रानी का चित्र खींचते समय उस पर मोहित हो गया। रानी के इशारे पर वह उसके महल में गया, लेकिन वहाँ राजा द्वारा मार डाला गया, जिससे रानी मस्तराम के शव के साथ सती हो गयी। समाचार सुनकर राजा वहाँ पहुँचा तथा खारी (भस्म) बटोरकर और एक पोटली मे बाँध ज्यो ही सिर पर रखने लगा वह आधी-आधी होकर दोनों तरफ गिर पड़ी। जितनी बार उसने खारी उठाई ऐसा ही हुआ, जिससे खीझते-खीझते शाम हो गयी। उसी समय वहाँ से महादेव-पार्वती जी निकले। पार्वती जी बोली, प्रभो, राजा दुखी हो रहा है उसका दुख दूर करो। महादेव बोले, यह तो संसार है, किस-किस का दुख दूर करती फिरोगी। लेकिन पार्वती के आग्रह पर महादेव जी ने अपनी पेंती चीरकर खारी पर छिड़क दी। मस्तराम और रानी दोनो जी उठे। अब राजा और मस्तराम के बीच रानी को पानी के लिए झगड़ा पैदा हो गया। यह देख महादेव जी बोले मैं फैसला किए देता हूँ तथा उन्होंने दो पेटियाँ मगाकर एकान्त में एक पेटी में रानी को बन्द कर दिया और दूसरी मे उसी वजन की मिट्टी भर दी फिर दोनों को बुलाकर एक-एक पेटी ले लेने को कहा। मस्तराम एक पेटी को घोड़े पर रख घर को चला, रास्ते में उसने पेटी खोली तो उसमे रानी निकली। दोनो घोड़े पर सवार हो घर आ गये। अब मस्तराम और अवध की रानी एक साथ प्रसन्नता से रहने लगे।'

1- बुन्देली लोककहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-54 से 56 तक

'निपुत्री की पुत्री'[1] बुन्देली लोककथा में 'एक राजकुमार की शादी चिड़िया के साथ सम्पन्न होती है, राजकुमार उसे अपना भाग्य समझकर अपना लेता है। लेकिन यह भेद राजकुमार के अलावा और कोई नहीं जानता। राजकुमार चिड़िया के पिजरे को अपने कमरे में बन्द रखता है। एक बार राजकुमार अपने छोटे भाई की बरात में जाता है। जाते समय चिड़िया के खाने-पीने का प्रबंध पिजरे में करता है। लेकिन खुसी से नाचते समय चिड़िया से पानी लुढ़क जाता है, अब चिडिया प्यासी मरने लगती है। एक दिन चिड़िया पिंजरे से निकल पानी की कटोरी चोच से दबा बाहर निकली और नदी पर जा पहुँची। उसने जी-भर कर पानी पिया फिर कटोरी भरके उठाने लगी। ज्योंही कटोरी चोंच से दबाकर उठाती, टेढ़ी होते ही पानी नीचे गिर जाता। इसी तरह खीझते-खीझते बहुत समय हो गया। इसी समय वहाँ से पार्वती और महादेव जी निकले। पार्वती ने कहा, प्रभो, चिड़िया बहुत हैरान हो रही है, दुख दूर करो तथा जिद करने लगी कि मुझे इसका दुख देखा नही जाता, आपको दुख दूर करना ही पड़ेगा। अतः दोनो चिड़िया के पास पहुँचकर उसका हाल पूँछा तथा मालूम होने पर महादेव जी ने उसे सोलह वर्ष की सुन्दर लड़की बना दिया। उसके कहने पर चिड़िया का चिह्न भी रख छोड़ा। महादेव-पार्वती के चले जाने पर वह लुकते-छिपते महल में आ गई। अब राजकुमार के आने पर लड़की ने सारा हाल कह सुनाया तथा शरीर पर लगा चिड़िया का चिन्ह दिखाया, जिससे राजकुमार को विश्वास हो गया। दोनों आनन्दपूर्वक रहने लगे।'

स्वय संग्रहीत 'पडित-पंडिताइन' की कथा में, 'एक पडित पंडिताइन अपने नवजात शिशु को जगल मे छोड गये। रात होने पर जब वह शिशु रोया तो उसी समय शंकर-पार्वती देश का हाल चाल जानने के लिए घूमने निकले थे। उन्हें रोने की आवाज सुनाई पड़ी। पार्वती जी ने कहा, देखो शंकर जी, आज का हुआ कोई बालक रो रहा है। तो शंकर जी बोले, इस तरह तो ससार मे तमाम लोग रोते-हँसते रहते हैं। यह संसार सागर है। लेकिन पार्वती जी के आग्रह पर दोनों लोग शिशु के पास जा पहुँचे। शंकर जी ने कहा,

---

1- केतकी के फूल, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-14 से 19 तक

यह पंडितो का लड़का है, इसे छोड़कर चले गये हैं। तो गौरा जी ने कहा, शंकर जी अब क्या किया जाय? शकर जी बोले, देखो पार्वती, मुझमें जितने गुण हैं मैं दिए देता हूँ और जितने तुममें गुण हों, तुम दे दो। गौरा जी बोली, तुममें क्या गुण है? तो शंकर जी बोले, मैं अपना डमरू बजाये देता हूँ जहाँ तक डमरू की आवाज जायेगी, वहाँ तक इसके पास कूड़ा-करकट, कीड़ा-पतिंगा कुछ भी नही आयेगा। अब पार्वती जी ने कहा, मेरे बायें हाथ की अँगुली से दूध निकलता है, मैं अपने बाये हाथ की अंगुली काटकर उसके हाथ के अंगूठे में लगाये देती हूँ, जिससे दूध निकलने लगेगा और यह साल-भर तक पीता रहेगा। शंकर जी ने कहा फिर साल भर बाद क्या करेगा? इसके बाद क्या खायेगा? तब पार्वती जी ने कहा, इस जंगल में किसमिस, चिरौंजी, गरी, छुआरा आदि सभी चीजों के पेड़ लगा देते है; साल भर बाद पेड़-पौधे फलै फूलै लगेंगे तो यह तोड़-तोड़कर खाया करेगा और इसकी जिन्दगी का गुजर-बसर होने लगेगा। शंकर जी ने कहा, ठीक है। इस तरह से जब वह बालक कुछ बड़ा हुआ और पेड़ पौधे भी फलने-फूलने लगे तो वह फल-फूल तोड़-तोड़ कर खाने लगा।[1]

इसी तरह 'बनखण्डी रानी' बुन्देली लोककथा में 'छोटा लड़का कुएं में पड़ी अपनी अंधी माताओं से तीर-धनैया बनवा देने की जिद करता है। माँ बोली , बेटा मैं अंधी हूँ, अंधकूप मे पड़ी हूँ, तीर-धनैया कहाँ से बनवा दूं। लड़का मचलकर जोर-जोर से रोने लगा। उसकी सातों माताएं ज्यों-ज्यों उसे समझाती, वह और जोर से रोता था। इसी समय वहाँ से महादेव-पार्वती निकले। पार्वती ने कहा, प्रभो, कुएं में कोई दुखिया रो रहा है। महादेव बोले, इसी से तो मैं तुम्हें सग लेकर नही चलता, चलो, आगे चलें। पार्वती बोली, नही प्रभो, मुझे उसका रोना सहा नही जाता, चलकर दुख दूर कीजिए। उन्होने कुएं के पास आकर पुकारा, कौन रो रहा है, यहाँ ऊपर आओ। लड़का ऊपर आकर बोला,

---

1- पंडित-पंडिताइन, कथक्कड-गीता उर्फ गुड्डन, संग्रह क्रमाक- 26 (अप्रकाशित)

माँ मुझे तीर-धनैयाँ नहीं बनवाती। महादेव जी ने अपना धनुषवाण देकर कहा, यह धनुष वाण ले लो, मेरा यह तीर अचूक है। लड़का प्रसन्न होकर तीन-कमान लेकर माँ के पास पहुँचा। आगे इसकी सहायता से लडके ने एक दाने को परास्त करके उसे अपने वश में कर लिया।'[1]

'अपना-अपना भाग्य'[2] बुन्देली लोककथा में, 'राजकुमार ने विजय नगर की राजकुमारी के स्वयवर में सम्मिलित होने के लिए गुरू के आश्रम से प्रस्थान किया तथा रात के समय एक देवी-मन्दिर में थकान और भूख से परेशान होकन आधीरात के लगभग सो गया। इधर देवी ने देखा कि उसके द्वार पर एक अतिथि भूखा पड़ा है, सो उन्होंने अपनी योगमाया से उसे उठाकर राजकुमारी के महल में पहुँचा दिया। राजकुमारी ने उसे ही अपना पति जानकर स्वागत किया तथा राजकुमार द्वारा भोजन माँगने पर सोने के थाल में नाना प्रकार के व्यजन और मिठाइयाँ परोस दी। राजकुमार ने खूब डटकर खाया-पिया तथा उसे पलंग पर बैठकार राजकुमारी पानदान उठाने के लिए गयी, उसी समय योगमाया ने राजकुमार को उठाकर मन्दिर में फिर सुला दिया। आगे राजकुमार ने स्वयंवर में पहुँचकर राजकुमारी के प्रश्नो का उत्तर दिया, जिससे राजकुमारी ने उसे पहचान लिया तथा दोनो का विवाह हो गया।'

भारतीय कथाओं में नायक को सिद्ध पुरुषों द्वारा महत्वपूर्ण सहायता मिलती है। इसका कारण भारतीय जनमानस पर इनका प्रभुत्व, इनके प्रति श्रृद्धा और इनका चमत्कारिक एवं विलक्षण कृतित्व है। 'कथासरित्सागर' की एक कथा में, 'नरवाहनदत्त जंगल में स्थित एक सरोवर मे स्नान एवं देवपूजन करने के बाद चन्दन वृक्ष की छाया के नीचे एक शिलाखण्ड पर बैठ गया। वहाँ बैठे-बैठे अपनी प्रिया मदनमचुका के समान राजहंसिनियों की चाल देखकर उसको अपनी दूरवासिनी प्रिया का स्मरण हो आया। प्रिया का स्मरण आते ही

1- बनखण्डी रानी, जैसी करनी वैसी भरनी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-90 व 91

2- बुन्देलखण्ड की ग्राम्य कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-146 से 149 तक

नरवाहनदत्त के मन मे लालसा की जो अग्नि जल उठी, उससे सतप्त होकर वह मूर्च्छित हो गया। उसी समय पिशंगजट नामक मुनिश्रेष्ठ वहाँ स्नान करने के लिए आये और नरवाहनदत्त की वैसी स्थिति देखकर, उसकी प्रिया के स्पर्श की समता करने वाला चन्दन जल उस पर छिडका। तदनन्तर चैतन्य लाभ करके प्रणाम करते हुए उस नरवाहनदत्त से, दिव्यदृष्टि वाले मुनि ने कहा, पुत्र। धैर्य धारण करो, तुम जो चाहते हो, वह तुम्हें मिलेगा।[1]

'कथासरित्सागर' की ही एक कथा में, 'सोमस्वामी' को अपने पास रखने के उद्देश्य से उसकी प्रेयसी ने उसे बन्दर बना लिया लेकिन जंगल से गुजरते समय बन्दरों के उत्पात से वह बिछुड कर जंगल मे ही रह गया। जंगल में उसकी मुलाकात निश्चयदत्त से हुई। वन मे उसके एक साथ रहते हुए एक बार दैव योग से वहाँ मोक्षदा नाम की तपस्विनी आई। उसने प्रणाम करते हुए निश्चयदत्त से पूछा कि तुम्हारे मनुष्य होते हुए भी यह तुम्हारा मित्र वानर कैसे हुआ, यह आश्चर्य है। तब निश्चयदत्त ने सारा वृत्तान्त बतलाते हुए उस तपस्विनी से दीनतापूर्वक कहा, यदि आप कोई प्रयोग या मंत्र जानती हैं तो मेरे मित्र को पशुता से बचाइए। निश्चयदत्त की प्रार्थना सुनकर उस तपस्विनी ने मंत्र की युक्ति से बन्दर के गले का डोरा खोल दिया, जिससे सोमस्वामी बन्दर-रूप छोड़कर उसी समय अपने यथार्थ मनुष्य-रूप मे आ गया।तत्पश्चात वह दिव्य प्रभावशाली मोक्षदायोगिनी बिजली के समान अन्तर्धान हो गयी।[2]

लोककथाओ में किसी साधु द्वारा सहायता प्रदान करने से सम्बंधित घटनाएं बहुतायत से मिलती है। अनेक लोककथाओं में नायक, नायिका प्राप्ति के मार्ग में आने वाली बाधाए साधु की सहायता से ही पार करता है। 'कागबिड़ारिन' बुन्देली लोककथा में, 'राजकुमार ने साधु को प्रसन्न करके उससे इन्द्र के दरबार की हँसनपरी मागा। साधु ने कहा, मानसरोवर

1- कथासरित्सागर (तृतीय खण्ड), द्वादश लम्बक, द्वितीय तरंग, पृ0-13

2- कथासरित्सागर (द्वितीय खण्ड), सप्तम लम्बक, तृतीय तरंग, पृ0-77

में चाँदनी रात के समय इन्द्र की परियाँ स्नान करने आती हैं। तुम उनके वस्त्र लेकर यहाँ भाग आना तथा परियों के लोभ में न पड़ना। लेकिन राजकुमार परियो के लोभ मे पड़कर, जलकर भस्म हो गया। राजकुमार के वापस आने में देर होते देख साधु वहाँ पहुँचा तथा कमण्डल से थोड़ा जल लेकर भस्म पर छिड़क दिया। राजकुमार तुरन्त जिन्दा हो गया। दूसरी बार राजकुमार परियों के लोभ में न आकर, उनके वस्त्र लेकर सीधे साधु की कुटी में जा छिपा। परियों ने साधु से वस्त्र दिलवाने की प्रार्थना की तो साधु ने राजकुमार की इच्छा बतला दी। लाचार होकर परियाँ अगले दिन श्रृगार करके राजकुमार के सामने आयी। लेकिन राजकुमार ने साधु के कहे अनुसार सबसे कुरूप स्त्री का हाथ पकड़ा, जिससे हँसनपरी अपने सुन्दर रूप में आ गयी। राजकुमार ने साधु से आज्ञा लेकर हँसनपरी के साथ अपने घर की ओर प्रथान किया।'[1]

'कुमारी अनारमती'[2] बुन्देली लोककथा में 'राजकुमार ने साधु को प्रसन्न करके कुमारी अनारमती से मिलने का उपाय पूछा। साधु ने उसे सुआ बनाकर बाग से अनार फल लाने को भेजा। वह बाग एक जादूगर का था तथा सुए ने जैसे ही फल तोड़ा चोर-चोर की आवाज आने लगी। घबड़ाकर सुए ने पीछे मुड़कर देखा, जिससे वह पाषाण का हो गया तथा फल उचट कर पेड़ मे जा लगा। राजकुमार को विलम्ब होते देख साधु वहाँ पहुँचा तथा अपनी पेंती चीरकर पाषाण मे छिड़की जिससे राजकुमार सजीव हो गया। साधु ने राजकुमार को पीछे न देखने की हिदायत के साथ उसे सूआ बनाकर पुनः बाग में भेजा। इस बार वह सीधा उडते-उड़ते साधु के आश्रम में आ गया। साधु ने राजकुमार को फिर असली रूप मेंकर दिया तथा बोला, राजकुमार तुम इस अनार को घर पहुँचने पर फोड़ना, तुम्हारी इच्छा पूर्ण होगी। आगे इसी अनार के फूटने पर उसमें से सोलह वर्ष की अपूर्व सुन्दरी निकली।'

1- बुन्देलखण्ड की ग्राम्य कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-172 से 174

2- गौने की बिदा, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-69 से 71 तक

'केतकी के फूल'[1] बुन्देली लोककथा में, 'बहेलिए के लड़के ने साधु को प्रसन्न करके केतकी के फूल मिलने का उपाय पूँछा। साधु ने कहा, यहाँ से थोडी दूर पर मनोहर बाग है, जिसमे दो स्त्रियाँ मिलेगी। तू सुन्दर स्त्री के फेर में न पड़कर मैली कुचैली स्त्री का हाथ पकड लेना, बस तेरा काम बन जावेगा। लेकिन लड़का सुन्दर स्त्री के मोह मे पड गया तथा उसने तोता बनाकर पिजरे मे कैद कर लिया। लड़के को वापस न आते देख साधु वहाँ पहुँचा तथा पिजरे की कील खोलकर तोते को निकालकर उस पर अपने कमण्डल का जल छिड़का, जिससे लड़का तुरन्त तोते से आदमी बन गया। साधु ने लड़के को मैली-कुचैली स्त्री का हाथ पकड़ने को कहकर पुन: भेजा। इस बार लड़के ने सुन्दर स्त्री के बजाय मैली -कुचैली स्त्री का ही हाथ पकड़ा, जिससे वह पहली स्त्री से भी अधिक रूपवान् सोलह वर्ष की युवती बन गयी। युवती के हँसते ही बाग में केतकी के फूलों की वर्षा होने लगी। बहेलिए के लडके ने साधु के चरण छूकर युवती के साथ घर को प्रस्थान किया।'

स्वयं संग्रहीत 'राजा और फसिया का लड़का' लोककथा में, 'राजा की आज्ञानुसार फसिया का लड़का एक विशेष चिडिया को लेने घर से निकला तथा जगल में गुरू महाराज को प्रसन्न करके उनसे चिड़िया प्राप्त करने का उपाय पूछा। गुरू महराज ने कहा, तुम यहाँ से समुद्र के किनारे जाओ, जहाँ एक पेड़ पर चढ़कर बैठ जाना। आधी रात के समय इन्द्रासन की परियाँ वहाँ स्नान करने आयेगी, तुम उनके वस्त्र लेकर यहाँ भाग आना। लड़के ने ऐसा ही किया, परियाँ उसके पीछे दौडी, घबडाकर उसने पीछे मुड़कर देख लिया, जिससे वह भस्म हो गया। लड़के के आने में विलम्ब होते देख गुरू महाराज वहाँ पहुँचे तथा भभूत से मंत्र पढ़कर वहाँ छिड़का, जिससे लडका पुन जीवित हो गया। गुरू ने पीछे लौटकर न देखने को कहकर पुन: उसे भेजा। इस बार लडका कपडे लेकर सीधा कुटी में जा घुसा। परियो ने आकर गुरू महाराज से अपने वस्त्र मांगे तो उन्होंने विशेष चिड़िया देने को कहा। परियाँ अपने वस्त्र लेकर इन्द्रलोक गयी तथा वहाँ से विशेष चिड़िया ले आई। उन्होंने लड़के

1- केतकी के फूल, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-6 से 9 तक

को चिडिया देने के साथ छोटी परी की शादी भी उसके साथ कर दी। लडका गुरू महाराज से आर्शीवाद लेकर परी व चिडिया के साथ घर को चल पडा।[1]

अतिमानवीय प्राणियों में, राक्षस, दानव व जादूगरनी को दुष्ट पात्रों के रूप मे वर्णित किया गया है। लेकिन वे जिस भी स्थान पर नायक की सहायता करते हैं, वहाँ वे अतिमानवीय प्राणी नायक को अपने से अधिक शक्तिशाली मानने के कारण उसकी अधीनता स्वीकार कर लेते हैं। कहीं-कहीं इन अतिमानवीय प्राणियों की इकलौती पुत्री नायक पर मोहित हो जाती है, जिससे वे नायक की सहायता करने को मजबूर हो जाते हैं अथवा स्वयं इनकी पुत्री ही मोहित होकर नायक की सहायता करती है।

'कथासरित्सागर' की एक कथा में, 'राजकुमार श्रृंगभुज ने अपने पिता के सुनहरे वाण से बगुला बने राक्षस को बींध दिया, जिससे रक्त की धार बहाता हुआ बगुला वहाँ से भागा। राजकुमार भी बाण लाने के लिए उसी ओर चल दिया तथा घोर जंगल में स्थित एक उद्यान मे पहुँचकर आश्चर्यमय रूपवाली कन्या को देखा। राजकुमार ने उस कन्या से परिचय पूछा तो वह बोली, यह धूमपुर नामक राक्षसों का नगर है, जिसमें राक्षस श्रेष्ठ अग्निशिख की मैं रूपशिखा नाम की कन्या हूँ तथा तुम्हारे असाधारण रूप से आकृष्ट होकर यहाँ आई हूँ। राजकुमार ने भी बगुले पर बाण चलाने का वृत्तान्त तथा उसकी खोज में यहाँ आने का मन्तव्य प्रकट किया। तब रूपशिखा ने कहा, तुमने बगुला बने मेरे पिता को भीषण बाण से बींध दिया है तथा उस सुनहरे बाण को मैने खेलने के लिए ले लिया है। तदनन्तर, राजकुमार श्रृंगभुज को वहीं बैठाकर रूपशिखा अपने पिता अग्निशिखा के पास जाकर बोली, हे पिता। श्रृंगभुज नाम का राजकुमार रूप, शील, अवस्था और गुणो से असाधारण है। यदि वह मेरा पति न होगा तो मैं निश्चय ही प्राण त्याग कर दूँगी। तब पिता ने कहा, बेटी। मनुष्य तो हमारे भक्ष्य हैं, तो भी यदि तुम्हारा आग्रह है तो

1- राजा और फसिया का लड़का, कथक्कड- राजाराम कुशवाहा, संग्रह क्रमाक-16 (अप्रकाशित)

उस राजकुमार को यहीं लाकर दिखाओ । ऐसा सुनकर रूपशिखा - उस राजकुमार के समीप जाकर उसे लिवा लाई। अग्निशिख ने भी उसे विनयी देखकर सत्कार किया।[1] इस कथा में आगे राक्षस कन्या रूपशिखा राजकुमार पर मोहित होकर अपने विद्या-बल से राजकुमार के प्राणों की रक्षा करती है।

'वनखंडी रानी' बुन्देली लोककथा में दाने राजकुमार की पग-पग पर मदद करता है। कथा में 'राजकुमार अपनी सौतेली माँ के कहने पर नादन-भैंस लेने दाने के पास गया। दाने उसे देखकर प्रसन्न हो खाने को दौड़ा। राजकुमार ने एक तीर खींचकर दाने की छाती में मारा, जिससे वह घूमकर गिर पड़ा तथा कहने लगा, मुझे बचाओ, तुम जो मांगोगे वही दूँगा तथा जन्म भर तुम्हारी सेवा करूँगा। राजकुमार ने तीर उसकी छाती से निकाल कर, महादेव का नाम लेकर घाव पर थोड़ी भभूत लगा दी, जिससे दाना अच्छा हो गया। अब दाने नादन भैंस लेकर राजकुमार के साथ चल दिया। इसी तरह राजकुमार अपनी सौतेली माँ के कहने पर नितनई धान भी ले आया। इस बार उसकी सौतेली माँ जो कि डाइन थी, ने कहा, तेरी सातों माताए अंधी है, उनकी आँखे ले आ तथा एक चिट्ठी अपनी माँ के नाम लिखा कि मै अपने दुश्मन सौत के लड़के को तेरे पास भेज रही हूँ जिन्दा वापस न आने पावे। राजकुमार चिट्ठी लेकर घर आया, दाने ने चिट्ठी पढ़ी । वह दाना था, इसलिए दानों की भाषा जानता था। उसने चिट्ठी बदल दी कि मै अपने लड़के को तेरे पास भेज रही हूँ, यह तेरा नाती है, इसे प्यार से रखना। राजकुमार जब जंगल मे बुढिया डाइन के पास पहुँचा तो उसने पत्र पढ़कर उसे हृदय से लगा लिया। अब राजकुमार ने बुढिया को बहला फुसलाकर सभी जानकारी ले ली तथा एक दिन एकान्त में अपनी सातों माताओ की आँखें लेकर उड़नखटोले में बैठ उठ चला। डाइन ने उसका पीछा किया तो आग की पुड़िया फेककर उसे भस्म कर दिया तथा घर पहुँचकर, बाघन का दूध लाकर सातों माताओं की आँखें चिपका दीं, जिससे वे पहले के समान देखने लगीं। आगे जब राजकुमार ने श्यामकर्ण घोड़े को अपने वश में किया तो उसके रक्षक चारदाने भी शरण में आ गये। अन्त में राजकुमार अपनी सौतेली माता के कहने पर इन्द्र की परी के समान

1- कथासरित्सागर (द्वितीय खण्ड), सप्तम लम्बक, पंचम तरंग, पृ0-109 से 113 तक

सुन्दर लडकी को ब्याहने चारों दानों के साथ बारात लेकर चला। नगर के बाहर दो पहाड़ियों के बीच बरात ठहरी। आधी रात के समय दोनों पहाड़ियाँ एक दूसरे की ओर खिसकने लगी तो दाने ने इन्हें बारह कोस दूर फेंक दिया। सबेरे भाँवरों के समय केतकी के फूल माँगे गये तो दूर तक देखने वाले दाने ने बतलाया कि फूल पाताल में है। धरती फाड़ने वाले दाने ने पाताल तक जमीन फाड दी। राजकुमार पाताल से केतकी के फूल तोड़ लाया। विवाह के बाद राजकुमार बहू को बिदा कराके घर आ गया तथा दाने की सहायता से महल, किले, अटारी बनाकर रहने लगा।[1]

'ढाई मानस'[2] बुन्देली लोककथा में दाने की कन्या ढाई मानस की सहायता करती है। कथा में, 'ढाईमानस कुएँ की तली में स्थित एक सुन्दर बगीचे में पहुँचा, जिसके बीच में एक बढ़िया महल बना हुआ था। ढाईमानस ने महल के अन्दर पहुँचकर देखा कि वहाँ एक अत्यंत सुन्दर कन्या बैठी हुई है। ढाई मानस को देखते ही वह चौंक कर बोली, तुम कौन हो? यहाँ कैसे आए? मेरा बाप दाना है जो आते ही तुम्हें खा जायगा। ढाईमानस ने कहा, अब तो मैं तुम्हारी शरण में हूँ। दाने की कन्या को दया आ गयी। उसने ढाईमानस को मक्खी बनाकर दीवार पर चिपका दिया। थोड़ी देर में दाना और उसके साथ ही चार डाइनें लौटी। आदमी की गन्ध पाकर दाने ने पूछा, बेटी, यहाँ कोई आदमी आया है? कन्या बोली, आदमी का नाम क्यों लेते हो? मुझे ही खा लो। दाने की कन्या दाने के चले जाने पर ढाईमानस को आदमी बना लेती और दाने के आने के समय उसे फिर मक्खी बना देती। एक दिन दाने के द्वारा आश्वासन पाने तथा सुलेमान की कसम खाने पर बेटी ने ढाईमानस को उसके सामने खड़ा कर दिया। दाने ने उसके सिर पर प्रेमपूर्वक हाथ फेरा तथा अगले दिन बहुत से दानों को बुलाकर अपनी बेटी का विवाह ढाईमानस के साथ कर दिया। दोनों आनन्दपूर्वक रहने लगे।

1- जैसी करनी वैसी भरनी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-91 से 97 तक

2- बुन्देलखण्ड की ग्राम्य कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-59 व 60

दानवों द्वारा सहायता के उदाहरण अन्य बोलियों की कथाओं में भी मिलते है, यथा- 'सिंहलद्वीप की पद्मिनी'[1] नामक ब्रज की लोककथा में 'राजकुमार को राजकुमारी से एक काला तथा एक सफेद बाल मिला, जिनको जलाने पर देव प्रकट होकर सारी इच्छाएं पूरी करेगे। राजकुमार खुश होकर सिंहलद्वीप की ओर चल पड़ा। रास्ते में उसने काला बाल जलाया, जिससे काला दैत्य सामने आ खडा हुआ। राजकुमार ने कहा, हमें पद्मिनी के महल में पहुँचा दो। कहने की देर थी कि राजकुमार महल के फाटक पर आ गया। महल के पहरेदारों ने उसे अन्दर नहीं जाने दिया। राजकुमार ने फिर काला बाल जलाया। जिससे दैत्य हाजिर हो गया। उसने बात ही बात में सिपाहियों को मौत के घाट उतार दिया। राजकुमार महल में घुस गया तथा सफेद बाल जलाया, जिससे सफेद दैत्य आ गया। राजकुमार ने उससे कहा, मैं पद्मिनी से विवाह करना चाहता हूँ, बरात सजाकर लाओ। जरा सी देर में देव एक शानदार बरात सजाकर ले आया। पद्मिनी के पिता ने जब देखा कि कोई राजकुमार पद्मिनी को शानशौकत से ब्याहने आया है और इतना शक्तिशाली है कि उसने सारी सेना नष्ट कर डाली है तो उसने पद्मिनी का ब्याह राजकुमार के साथ कर दिया। इसमें देवों (दैत्यों) की सहायता से राजकुमार पद्मिनी को प्राप्त करने में सफल होता है।

'सब्जपरी' बुन्देली लोककथा में, ' छोटा राजकुमार भौजाई के ताना देने पर सब्जपरी को ब्याह लाने का प्रण करके घर से निकला। जंगल में एक साधु की छः महीने तक सेवा करके उसे प्रसन्न किया तथा सब्जपरी के मिलने का उपाय पूछा। साधु ने कहा, यहाँ से तीन योजन चलने पर एक बावड़ी मिलेगी, जिसके पास सेमर का पेड़ है। वहाँ जैसे ही तुम बैठोगे, एक तितली उड़ती हुई आकर तुम्हारी बाँह पर बैठ जायगी। तुम उसका पख उखाड़ लेना, वह तितली परी बन जायेगी तथा आगे का हाल परी बतलायेगी । राजकुमार ने ऐसी ही किया, पंख उखाड़ते ही एक सुन्दर स्त्री हरी साड़ी पहने आ खड़ी हुई तथा उसने कहा, देखो, इस पैख को मत फेंकना, आगे धुएँ का रास्ता है, जिसे पार करके तुम जादूगरनी की लडकी सब्जपरी के पास पहुँचोगे। इतना कह परी गायब हो गयी। राजकुमार

1- पुण्य की जड़ हरी, आदर्श कुमारी, पृ0-55 व 56

हिम्मत करके धुएँ के रास्ते को पार करने लगा। कुछ समय पश्चात उसे धरती हिलती मालूम हुई तथा एक भयंकर आवाज के साथ एक धुएँ की शक्ल का मनुष्य प्रगट हुआ। उसने राजकुमार को लौट जाने को कहा लेकिन राजकुमार सब्जपरी के पास पहुँचने को दृढ़ निश्चयी रहा। तब राजकुमार के साहस को देखकर दयावश देव ने कहा, तुम मेरी पीठ मे बैठ जाओ। राजकुमार उसकी पीठ में बैठ गया। देव राजकुमार को धुएँ के पार पहुँचाकर विलीन हो गया। राजकुमार ने आगे भयंकर अग्नि की लपटें देखी, फिर भी मन का धैर्य करके वह आगे बढ़ा तो आवाज आई, अरे ओ नादान, नाहक क्यो अपनी जान गँवाता है? मेरी कही मान, घर लौट जाओ। राजकुमार ने कहा, मैं अपनी प्रतिज्ञा नहीं तोड सकता। देव ने कहा क्या तेरे पास तितली का पंख है। राजकुमार ने पंख निकालकर दिखा दिया। देव ने प्रसन्न होकर राजकुमार को ऑखें बन्द कर लेने को कहा तथा थोड़ी देर पश्चात् राजकुमार एक रमणीय उद्यान मे सोने के सतखण्डा महल के सामने जा खड़ा हुआ। देव ने कहा, यह जादूगरनी का महल है, इसी में सब्जपरी रहती है तथा वह अन्तर्ध्यान हो गया। राजकुमार महल मे सब्जपरी के पास पहुँच गया। दोनों एक दूसरे को देखकर मोहित हो गये। सब्जपरी ने कहा, प्यारे राजकुमार मै तुम्हें अपनी जादूगरनी माँ के कोप से बचाना चाहती हूँ। जब वह आवे तब तुम उसे मौसी कहकर पुकारना। राजकुमार ने ऐसा ही कहा, जादूगरनी को इस पर विश्वास हो गया। अब राजकुमार सारा भेद जानकर सब्जपरी को उड़नखटोले में बैठाकर ले उड़ा।[1] इसमें राजकुमार के सहायक के रूप में साधु परी, देव तथा जादूगरनी की बेटी का वर्णन मिलता है।

अतिमानवीय सहायक प्राणियों में परियों का महत्वपूर्ण स्थान है। इसका कारण यह है कि परियों का व्यक्तित्व सुखद एवं लाभकारी माना गया है। लोककथाओं में नायक को प्राय. ऐसी दुर्लभ वस्तु को ले आने का कार्य सौंपा जाता है, जिस पर परियों का आधिपत्य होता है। ये परियाँ आकाश, देवलोक अथवा इन्द्रलोक की निवासिनी होती हैं, परन्तु स्नान के लिए पृथ्वी-लोक के ही किसी जलाशय में आती हैं। जब वे जल में डुबकी लगा रही

1- बुन्देली लोककहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-18 से 23 तक

होती हैं उसी समय नायक उनके वस्त्र चुराकर उनसे अपनी इच्छापूर्ति करवा लेता है तथा साथ मे एक सुन्दर परी से विवाह भी कर लेता है। नायक को इस कार्य मे किसी साधु द्वारा भी सहायता मिलने का वर्णन अधिकांश लोककथाओ मे मिलता है। स्वय संग्रहीत 'राजा और फसिया का लडका'[1] बुन्देली लोककथा मे 'गुरू महाराज की सहायता से ही नायक इन्द्रासन की परियों से सोने की चिडिया लेने में सफल होता है। साथ में छोटी परी रानी की शादी भी उसके साथ सम्पन्न हो जाती है। इसी तरह 'काग बिड़ारिन'[2] बुन्देली लोककथा मे भी राजकुमार साधु की सहायता से परियो के वस्त्र हरण करके उनसे हँसन-परी को प्राप्त करने मे सफल होता है।

'चाँदी का चबूतरा सोने का पेड़'[3] नामक मध्यदेश की लोककथा में, 'राजकुमार ने अपने पिता के सपने को सच करने के लिए, घर से निकलकर जंगल में एक साधु को प्रसन्न किया तथा उसके कहने के अनुसार पूर्णिमा की रात को संगमरमर के घाटों से युक्त सरोवर के किनारे जा पहुँचा। थोडी ही देर में परियाँ आकर तालाब में तैरने लगीं तथा अपने सुनहरे वस्त्र तालाब के किनारे रख दिए। राजकुमार उनके वस्त्र उठाकर साधु की कुटी में जा घुसा। राजकुमार का पीछा करती हुई परियाँ कुटी के पास आ गयी। साधु ने सबसे सुन्दर परी बसीवाला की ओर इशारा करते हुए कहा, आपको राजकुमार के साथ उसके नगर जाना होगा, और वहाँ नृत्य का आयोजन करना होगा। बंसीवाला ने इन्द्र से आज्ञा लेने को कहा। राजकुमार ने इन्द्रलोक में पहुँचकर अपनी गायन विद्या से सबको चमत्कृत बसीवाला को माँग लिया। अब बसीवाला ने राजकुमार को भेजकर अपनी बड़ी बहन रानी चौबोलका और श्यामकर्ण घोड़े को भी मंगा लिया, जिनकी सहायता से राजकुमार के पिता का सपना साकार हो गया तथा साथ में राजकुमार का विवाह सुन्दर परियो के साथ सम्पन्न हो गया।

1- राजा और फसिया का लडका , राजाराम कुशवाहा, सग्रहक्रमाक- 16 (अप्रकाशित)

2- बुन्देलखण्ड की ग्राम्य कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-172 से 174 तक

3- बालहंस (लोककथा विशेषांक), दिसम्बर (द्वितीय) 93, पृ0-45 से 47

लोककथाओं में नायक द्वारा स्वतंत्र रूप से परियों से सहायता लेने के वर्णन भी मिलते हैं। पीछे उल्लिखित 'सिंहलद्वीप की पद्मिनी' नामक ब्रज की लोककथा में ही 'राजकुमार अपने मित्र वजीर के लड़के के साथ एक बगीचे में ठहरा तथा थके मांदे होने के कारण दोनों गहरी नींद में सो गये। रात को राजकुमार की आँख खुली तो उसने देखा कि बाग का फाटक बंद है। बाग के बीचो-बीच संगमरमर के चबूतरे पर परियों की महफिल लगी है। परीरानी ने अपनी सखियों से कहकर राजकुमार को पकड़ बुलवाया। राजकुमार को बड़ा डर लगा तथा उसने हाथ जोड़कर कहा, मुझे जाने दीजिए। परीरानी ने मुस्कराते हुए कहा, राजकुमार अब तुम्हें मुझसे विवाह करना होगा। राजकुमारी बोला, मैं सिंहलद्वीप की पद्मिनी की तलाश में हूँ, क्षमा चाहता हूँ। परी ने कहा, अगर तुम मुझसे विवाह कर लोगे तो मैं तुम्हें ऐसी चीज दूँगी, जिससे सिंहलद्वीप की पद्मिनी आसानी से मिल जायेगी। राजकुमार ने प्रसन्न होकर कहा, परीरानी, मैं तुमसे जरूर शादी करूँगा, परन्तु जब मैं पद्मिनी को लेकर लौटूगा तभी तुम्हे अपने साथ ले जाऊँगा। परी ने प्रसन्न होकर अपनी अँगूठी उतारी और राजकुमारी की अगुली मे पहनाती हुई बोली, यह अँगूठी जब तक तुम्हारे पास रहेगी कोई भी विपत्ति तुम्हारे ऊपर असर न करेगी।'[1]

लोककथाओं में परियों द्वारा मोहित होकर नायक से विवाह करने के भी वर्णन मिलते हैं। 'माता की विरासत' नामक राजस्थानी लोककथा में, 'तीसरा राजकुमार पूर्व दिशा की ओर गया तथा एक मनमोहक सरोवर के पास रूक गया। वहाँ एक मैना की विलाव से प्राण-रक्षा की, जिससे मैना के स्थान पर एक परी आ खड़ी हुई। राजकुमार ने परी को देखकर उससे विवाह का प्रस्ताव किया। परी ने कहा, मैं भी तुमसे प्रेम करनी लगी हूँ किन्तु विवाह के लिए मुझे राजा इन्द्र से आज्ञा लेनी होगी। परी ने राजकुमार की आँख पर अजन लगाकर उसे हल्का कर लिया तथा उसका हाथ पकड़कर आकाश को उड़ चली। देवराज इन्द्र के पास पहुँचकर परी ने सारा हाल सुनाया तथा राजकुमार से विवाह करने की अनुमति माँगी। इन्द्र ने उसे अनुमति तो दे दी किन्तु उसके पंख वहीं रखवा लिए,

---

1- चौबोली रानी, लक्ष्मीनिवास बिड़ला, पृ0-67 व 68

जिससे वह स्वर्ग न आ सके। फिर स्वर्ग के एक रथ में राजकुमार और परी को सरोवर के समीप उतार दिया गया। उन्होंने परस्पर पुष्पहार बदलकर विवाह कर लिया और अपने लिए एक सुन्दर कुटियाँ बनाकर रहने लगे।'[1]

नायक के सहायक लौकिक प्राणियों में 'मित्र' का स्थान प्रमुखता से आता है। लोककथाओ में मित्र द्वारा सहायता करने से सम्बंधित घटनाएं विस्तार से मिलती हैं। जिनमें प्राय· सभी स्थानो पर मित्र सुन्दरी की प्राप्ति में सहायक होता है तथा इसके लिए मार्ग मे आने वाली प्रत्येक कठिनाई से नायक की रक्षा करता है। 'मित्र हो तो ऐसा' बुन्देली लोककथा में ' राजकुमार को उसके पिता द्वारा देश निकाला मिला तो उसका मित्र प्रधानमत्री का लडका भी उसके साथ हो लिया। रास्ते में एक बावड़ी के अन्दर स्त्री की मूर्ति देखकर राजकुमार उस पर मोहित हो, हाय पुतरी, हाय पुतरी चिल्लाने लगा। मित्र ने राजकुमार को धीरज बंधाकर उस मूर्ति के बारे मे मालूम किया कि वह सिंहलद्वीप की रानी पद्मिनी की बेटी शैलकुमारी की है। पता पाकर दोनों मित्र सिंहलद्वीप की ओर चले। रास्तें में एक साधु को प्रसन्न करके मित्र ने उड़नखटोला प्राप्त कर लिया, जिस पर बैठकर वे सिंहलद्वीप के बगीचे मे जा उतरे तथा बाग की मालिन को मुहरों का लालच देकर मित्र स्त्रीवेश मे राजकुमारी से मिला, जिससे उसे राजकुमारी के पुरुष जाति से घृणा करने से सम्बंधित चिरौंटा-चिडिया की पूर्वजन्म की घटना मालूम हुई। अब मित्र ने राजकुमार को महंत बनाकर नगर से दूर-धूनी रमाई तथा स्वयं उसका चेला बनकर वहाँ स्त्रियों का आना वर्जित कर दिया। एक दिन साधु की प्रशंसा सुनकर राजा वहाँ आया तथा उनसे स्त्री जाति विषयक घृणा का कारण पूँछा। साधु ने चिरौंटा-चिडया वाली घटना उल्टी करके सुना दी। संयोग से शैलकुमारी की पर्दे की ओट में छिपे यह सब सुन रही थी। अतः उसे भरोसा हो गया कि यह साधु पूर्वजन्म का चिरौंटा है। वह सामने आकर साधु को झूठा कहने लगी तथा साधु राजकुमारी को झूठा कहने लगा। जिससे सबको मालूम हो गया कि ये दोनों पूर्व जन्म के चिरौंटा-चिडिया थे तथा राजा ने दोनों का विवाह कर दिया। विवाह के पश्चात् राजकुमार , मित्र

1- पाषाण नगरी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-96 से 104 तक

व राजकुमारी उडखटोले पर बैठकर अपने देश को वापस आ गये।'[1] इस कथा मे मित्र तथा साधु दोनों सहायक बनते हैं।

इसी तरह 'मित्रों की प्रीति' बुन्देली लोककथा में, 'राजकुमार व उसका मित्र मंत्री का लड़का शिकार खेलने जगल में गये, जहाँ रात हो जाने पर एक पेड़ के नीचे विश्राम किया। एक पहर रात बीतने पर पेड़ के ऊपर बैठे तोता व मैना के बीच रैन काटने के लिए आपस मे बातचीत शुरू हुई, जिसे मित्र जागने के कारण ध्यान से सुनने लगा। तोता बोला, यह जो राजा का कुँवर है, इस पर बड़ी मुसीबतें आने वाली हैं। कुद दिनों में इसके व्याह के लिए जब बरात जायेगी तो रास्ते मे एक सूखी नदी मिलेगी, जिससे बराती तो निकल जायेगे, लेकिन दूल्हे की पालकी बह जायेगी। सो अगर कोई सुनता हो तो दूल्हें को बरात से पहले नदी पार करावे। इससे बच गया तो राजकुमार पर दूसरी आफत आयगी, जब बरात नगर मे पहुँच, पालकी मण्डप के पास उतरेगी तो पालकी पर बना हुआ बाघ जीवित होकर राजकुमार को खा जायगा। सो अगर कोई सुन रहा हो तो बाघ को मार दे। फिर जब बरात लौटते समय एक बरगद के पेड़ के नीचे ठहरेगी तो राजकुमार के ऊपर डाल टूटकर गिरेगी और राजकुमार मर जायगा। सो अग कोई सुनता हो तो राजकुमार को उस पेड़ के नीचे न ठहरने दे। अगर राजकुमार इससे बच गया तो नगर में लौटकर जब पहली रात राजकुमारी के पास सोवेगा, तो आधीरात के समय एक काला नाग आकर उसे डस लेगा। कोई सुनता हो तो रात भर वहाँ पहरा देकर नाग को मार डाले। अगले दिन रात को राजकुमारी की नाक में से एक नागिन निकलकर राजकुमार को काट लेगी। सो अगर कोई सुन रहा हो तो दूसरी रात को भी पहरा देकर नागिन को मार दे। इन सबसे राजकुमार बच गया तो बहुत दिनों तक राज्य करेगा। लेकिन एक बात है मैना, अगर कोई सुनता हो तो यह भेद किसी को भी न बतावे, नहीं तो वह पत्थर का हो जायगा। मैना ने पूछा, पत्थर से फिर वह आदमी नही बन सकता तो तोते ने कहा, राजकुमार के पहला लड़का

1- बुन्देलखण्ड की ग्राम्य कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-85 से 91।

होने पर उसका खून पत्थर पर डालने से वह आदमी जीवित हो जायगा। तोता-मैना की उपश्रुति के द्वारा सारी बाते सुनकर मित्र ने राजकुमार की प्रथम चार संकटो से सकुशल रक्षा की लेकिन दूसरी रात नागिन को मरते समय खून की बूँद राजकुमारी के गाल पर जा गिरी, जिसे मित्र ने ओठों से चाटकर साफ करना चाहा। उसी समय राजकुमार की नींद खुल गयी तथा मित्र को ऐसी दशा मे देखकर वह क्रोध के मारे मित्र को तलवार से मारने को उद्यत हुआ। सन्देह को मिटाने के लिए मजबूरीवश मित्र को सारा भेद बताना पड़ा। जिससे वह पत्थर का हो गया। राजकुमार उदास रहने लगा।. तीन वर्ष बाद सके बच्चा पैदा हुआ, जिससे मित्र को जिलाने के लिए पुत्र का खून चढ़ाने के लिए राजकुमार ने तलवार उठाई। लेकिन तलवार बच्चे की उँगली पर गिरी, जिससे खून निकलकर पत्थर पर ज्यो ही गिरा कि मित्र जीवित हो गया। दोनो मित्र सुखपूर्वक रहने लगे।'[1] इस लोककथा में मित्र नायक की भावी संकटों से रक्षा अपने प्राणों की बाजी लगाकर करता है।

कुछलोककथाओं मे सकट के समय नायक के प्राणों का हरण हो जाता है। ऐसी दशा में नायक को पुर्नजीवित करने का काम उसके सहायक मित्र करते हैं। स्वर्णकेशी बुन्देली लोककथा मे, 'राजकुमार अपने लुहार, बढ़ई व बहेलिया मित्रो के साथ घर से चला। रास्ते मे उसने तीनो मित्रों को काम सीखने के लिए छोड़ दिया। आगे उसने एक दानव को परास्त करके उसकी बेटी स्वर्णकेशी के साथ विवाह किया लेकिन दूसरे राज्य से एक दूती ने आकर उसके प्राणों का हरण कर स्वर्णकेशी को ले गयी। उधर तीनों मित्र काम सीखकर एकत्रित हुए। बढ़ई मित्र द्वारा बनाये गये उड़नखटोला पर बैठकर वे राजकुमार की खोज मे निकले और बहेलिया मित्र द्वारा बनाये गये पिंजड़े के काँटों की मदद से वे राजकुमार के मुर्दाशरीर के पास पहुँच गये। उन्होंने राजकुमार के प्राण स्थित तेगे की तलाश की और लुहार के लड़के ने उस पर फौरन पानी चढ़ाना शुरू कर दिया, जिससे राजकुमार के शव में प्राण आ गये। राजकुमार जीवित होकर उठ बैठा तथा स्वर्णकेशी-स्वर्णकेशी कहकर

1- बुन्देलखण्ड की ग्राम्य कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-85 से 91

चिल्लाने लगा। अब वे चारों मित्र स्वर्णकेशी के पास पहुँचकर उसे भी उड़नखटोले में बैठाकर ले आये।'[1]

इसी तरह, 'नथनी वाला वीर'[2] बुन्देली लोककथा मे, 'राजा अपने तीन मित्रों से यह कहकर कि वे जहाँ भी रहे, खाने के समय चार पत्तले लगवाये, आगे बढ़ा तथा एक डाइन को मारकर उसकी सोने जैसे केशों वाली बेटी से विवाह किया। खाने के समय वह हमेशा चार पत्तलें लगवाता, जिनमें से एक में खाता तथा तीन छोड़ देता। एक दिन दूती ने उसके प्राण स्थित तलवार को आग के हवाले करके राजकुमारी को ले उड़ी। राजकुमारी ने सदावर्त बाँटना शुरू किया, जिससे एक दिन तीनों मित्र वहाँ पहुँचे तथा चार लोगों के खाने का समान मांगा। राजकुमारी ने यह समझकर कि ये मेरे पति के मित्र हैं, उन्हें बुलाया तथा सारा किस्सा सुनाया। अगले दिन वे राजकुमारी को उड़नखटोले पर बैठाकर राजा की लाश के पास पहुँचे तथा भट्टी जलाकर तलवार पर पानी चढ़ाना शुरू किया, जिससे राजकुमार जीवित हो उठा। नथनी वाला वीर राजा राजकुमारी को लेकर अपने देश को लौट आया।' इन दोनो ही लोककथाओ में राजकुमार के प्राण-हरण के साथ-साथ राजकुमारी का भी अपहरण हो जाता है। लेकिन राजकुमार अपने मित्रों की सहायता से इन्हें फिर से प्राप्त कर लेता है।

लोककथाओं में असाधारण प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति भी संकटग्रस्त नायक के सहायक बनते हैं तथा इनकी सहायता से नायक अपनी इच्छित वस्तु को प्राप्त करता है। 'सोने की चिड़िया' बुन्देली लोककथा में 'छोटा राजकुमार सोने की चिड़िया की खोज में एक नगर मे पहुँचा, जहाँ एक प्रसिद्ध डाकू बलराज को चार सिपाही राजा की आज्ञा से शूली में चढ़ाने लिए जा रहे थे। राजकुमार ने सीधे राजा के पास पहुँचकर डाकू को छोड़ने की प्रार्थना

1- बुन्देलखण्ड की ग्राम्य कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-76 से 82

2- बुन्देली लोककहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-77 से 86 तक

की, जिससे राजा डाकू को छोड़ने पर राजी हो गया। अब बलराज ने राजकुमार के उपकारों का बदला चुकाने की सोची तथा राजकुमार के साथ हो लिया। राजकुमार ने बलराज की सहायता से सोने की चिडिया की खोज के दौरानक्रमशः सोने का घोड़ा व सोने के केश वाली कन्या को भी प्राप्त किया। वापस आते समय वे लोग रास्ते में एक बावड़ी के किनारे ठहरे। राजकुमार व राजकन्या तो सो रहे, परन्तु बलराज को नींद न आई। आधीरात के समय बावडी मे से एक भयंकर काला नाग मणि लिए निकला। बलराज ने सर्प को मारकर मणि प्राप्त कर ली, जिसकी सहायता से वह बावड़ी के अन्दर नागकन्या के पास पहुँचा। नागकन्या ने राजकुमार के साथ विवाह करने की अनुमति दे दी। बलराज, राजकुमार और सोने के केश वाली कन्या को अन्दर ले आया। अब सब लोग आनन्दपूर्वक रहने लगे। एक दिन, बलराज चार दिन की छुट्टी लेकर अपने बाल-बच्चों को देखने घर चला तथा राजकुमार को मणि देता गया। लेकिन बलराज के जाते ही राजकुमार मणि को खो बैठा तथा सोने की केशवाली कन्या का अपहरण हो गया। वापस आने पर बलराज ने साधु का वेश बनाकर कन्या को छुड़ा लाया तथा इस बीच मणि भी वापस मिल गयी। अब बलराज ने राजकुमार को घर जाने के लिए बिदा किया लेकिन रास्ते में उसके भाईयों ने उसे कुएं मे फेंककर सभी चीजे लेकर अपने पिता के पास पहुँच गये। बलराज ने वहाँ आकर राजकुमार को कुए से निकाला तथा उसे लेकर पिता राजा के पास पहुँचा। बलराज ने राजा को सब हाल कह सुनाया, जिससे प्रसन्न होकर राजा ने छोटे राजकुमार का राजतिलक कर दिया। अब राजकुमार दोनों पत्नियों के साथ सुखपूर्वक रहने लगा।'[1] इस लोककथा में बलराज डाकू अपने प्राणो की रक्षा के बदले राजकुमार की हर मुसीबत में सहायता करता है।

इसी तरह, 'रानी फूलवती' बुन्देली लोककथा में 'राजकुमार फूलवती को लेने चला। रास्ते मे उसे अलाल, तीरंदाज व पाताल तक देखने वाले व्यक्ति मिले तथा वे राजकुमार के साथ हो लिए। राजकुमारी के नगर मे पहुँचकर राजकुमार ने विवाह की शर्त मालूम

1- बुन्देलखण्ड की ग्राम्य कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-63 से 75

की। पहली शर्त के रूप मे लोहे के खम्भे को काठ की कुल्हाडी से एक ही वार मे काटना था। रात के समय अलाल छलॉंग लगाकर सतखण्डा पर सोती फूलवती का सोने का एक बाल तोड लाया, जिसे खम्भे में बॉंध दिया। सुबह राजकुमार ने कुल्हाणी के एक ही वार से खम्भे के दो टुकड़े कर दिए। अलाल ने अब विवाह की तैयारी करने को कहा तो राजा बोला, बेटी के ब्याह की मौर-पनैयॉं यहॉं से हजार कोस दूर उज्जैन से रात भर में ला दो। अलाल ने शीघ्र ही उज्जैन पहुँचकर मौर-पनैयॉं प्राप्त कर ली लेकिन लौटते समय वह एक पेड के नीचे सो रहा। राजकुमार ने देरी होते देख पाताल तक देखने वाले व्यक्ति से कहा कि देखो अलाल कहॉं पर है। उसने बताया कि अलाल पेड़ के नीचे सो रहा है तथा उसे काटने के लिए पेड़ से सर्प उतरता आ रहा है। तीरदाज के कहने पर उसने उँगली दिखाई, जिसकी सीध में तीरंदाज ने एक तीर छोड़ा, जो सॉंप को लगा,जिससे वह अलाल के ऊपर गिरा, अलाल की नींद खुल गयी और वह मौर-पनैयॉं लेकर आ गया। अब फूलवती का व्याह राजकुमार के साथ सम्पन्न हो गया।'[1] इस लोककथा में नायक विवाह सम्बधी असम्भव शर्तें अपने असाधारण मित्रों की सहायता से पूरी करता है।

लोककथाओं में नायक पर संकट के समय उसकी 'पत्नी' द्वारा सहायता का वर्णन मिलता है, जिसमे पत्नी अपनी बुद्धि-चातुरी से नायक को संकट से मुक्ति दिलाती है। 'बुद्धि बड़ी या पैसा' बुन्देली लोककथा में 'राजा मुसीबत का मारा कुमारी चौबोलका के देश मे जा पहुँचा, जिसका प्रण था कि जो कोई मुझे जुए में हरा देगा, उसी के साथ विवाह करूँगी। दूर-दूर के लोग उसके साथ जुआ खेलने आते लेकिन हार कर जेल में कैद हो जाते। राजा ने भी चौबोलका की सुन्दरता की खबर सुनकर जुआ खेलने की सोचा, लेकिन आखिर मे वह भी हार गया तथा शर्त के अनुसार उसे जेल मे जाना पड़ा। अब राजा का पता लगाते-लगाते उसकी रानी वहॉं पहुँची तो उसे राजा के जेल जाने का समाचार मिला। उसने पता लगाया कि चौबोलका किस तरह जुआ खेलती है और सारा भेद समझकर उसने

1- पाषाण नगरी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-74 से 79 तक।

पुरुष का वेष बना जुआ खेलने महल मे पहुँच गयी। कुमारी चौबोलका की तबियत न जाने क्यों गिरने लगी और अन्त में उसकी हार हो गयी, जिससे शर्त के अनुसार विवाह की तैयारी होने लगी। रानी बोली, भाँवरें पड़ने का दस्तूर घर चलकर होगा तथा यहाँ से चलने के पहले जेल मे रक्खे लोगों को छोडना होगा। सभी कैदियों के साथ राजा को भी छोड दिया गया, उसने अपने नगर का मार्ग पकड़ा। अगले दिन राजकन्या चौबोलका की बिदा करा रानी अपने महल में आ गयी। शुभ मुहूर्त मे चौबोलका का विवाह राजा के साथ हो गया और वे सब सुखपूर्वक रहने लगे।'[1]

इसी तरह 'लढ़िया की बेटी'[2] बुन्देली लोककथा में, 'राजकुमार सिंहलद्वीप की पद्‌मिनी को ब्याहने गया लेकिन विवाह की शर्तों को पूरा करने में असफल होने के कारण उसे जेल में डाल दिया गया। छः मास बीतने पर उसकी पत्नी लढ़िया की बेटी अपने ससुर की आज्ञा लेकर पुरुष वेष बना सिंहलद्वीप को चल दी। रास्ते में कीचड़ का घेरा मिलने पर उसने पहनने के सब कपड़ों की पोटली बना ली। धर्मशाला पहुँचने पर एक सिपाही उसे दिया भर तेल व पानी दे गया। उसने चाकू निकालकर बदन की कीचड़ छुड़ा ली तथा तौलिए से खूब पोंछा। फिर सारे शरीर में तेल-पानी का हाथ फेर दिया, जिससे शरीर स्वच्छ हो गया। अब उसने कपड़े पहने तथा सिपाही के साथ राजकुमारी के पास पहुँची। मुसाफिर की चतुरता देख पद्‌मिनी प्रसन्न हुई तथा पद्‌मिनी के शेष प्रश्नों का उत्तर भी मिल गया, जिससे वह विवाह के लिए राजी हो गयी। लढ़िया की बेटी ने कटार के साथ भाँवरे पड़वाकर सभी कैदियों को छुडवा दिया तथा कैदी राजकुमार को अपने साथ लेकर अपने नगर की ओर चल दी।' इन दोनों ही लोककथाओ में नायक विवाह सम्बंधी शर्तें पूरी न कर पाने के कारण जेल में डाल दिया जाता है। लेकिन नायक की चतुर पत्नी उसे इस संकट से मुक्ति दिलाती है।

1- बुन्देलखण्ड की ग्राम्य कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-142 व 143

2- पाषाण नगरी, शिवसहाय चतुर्वेदी पृ0-30 से 33 तक

लोककथाओ में नायक को संकट में डालने के उद्देश्य से उसके सामने असम्भव कार्य रखे जाते हैं, जिसको वह अपनी असाधारण प्रतिभा सम्पन्न पत्नी की सहायता से पूरा करता है। 'रानी सगुनौती'[1] बुन्देली लोककथा में, 'साहूकार का लडका रानी सगुनौती को साथ लिए एक शहर मे पहुँचा तथा राजा के यहाँ लाख टके रोज पर नौकरी कर ली। एक दिन नाई ने रानी सगुनौती को देख, उसकी सुन्दरता का बखान राजा से किया। राजा ने नाई के कहे अनुसार लखटकिया को बुलाकर रात भर में चार बगीचे (बाग) व महल तैयार करने को कहा। लखटकिया ने अनमने मन से आकर सारी बात रानी को बताई। रानी ने आधीरात के समय अपने सिर के बाल उखाड़कर देते हुए कहा, जहाँ-जहाँ बगीचे और महल बनने है, वहाँ इन्हें गाड़ आओ। लखटकिया ने ऐसा ही किया। सुबह सभी ने चारो तरफ बाग व महल बने देखे। अब नाई के कहे अनुसार राजा ने लखटकिया को रात भर में सामने की पहाड़ी को खोदकर तालाब बनाने तथा उसके चारों ओर और बीच मे मन्दिर बनाने को कहा। आधी रात के समय लखटकिया रानी के साथ गेंती-फावडा ले पहाडी की ओर गया तथा वहाँ पहुँचकर रानी ने कहा, तलवार से तुम मेरे हाथ पैर काट उन्हे चारो तरफ फेक दो और भागकर तालाब के बाहर जाकर आँखें बन्द करके कहना कि रानी सगुनौती मुझे पानी दो। लखटकिया ने ऐसा ही किया। आँखें खोली तो चारों तरफ मीलों लम्बा तालाब था और मन्दिर बने थे। पर तालाब में पानी नही था। तभी सगुनौती हाथ में पानी का लोटा लिए आई और उससे लखटकिया ने जैसे ही हाथ-मुँह धोया कि तालाब पानी से भर गया। अगले दिन सभी ने देखा कि तालाब व मन्दिर तैयार है। तीसरी बार नाई के कहने से राजा ने लखटकिया को स्वर्ग भेजा लेकिन इस बार रानी की चतुराई से नाई स्वयं अपने प्राण गँवा बैठा। अब राजा ने लखटकिया की बुद्धिमानी और चतुराई देखकर उसके साथ अपनी राजकुमारी का विवाह सम्पन्न कर दिया।'

1- बुन्देलखण्ड की ग्राम्य कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृष्ठ - 97 से 103 तक

इसी तरह, स्वयं सग्रहीत 'राजा और फसिया का लड़का'[1] बुन्देली लोककथा मे, 'फसिया का लडका नाई के कहे अनुसार राजा के आदेश से अपनी चार पत्नियों की सहायता से रात भर में एक बड़े खेत के चारो तरफ आदमी बनाबर खाई खोदकर तालाब बनाता है, उसमे पानी भरता है तथा चारों तरफ बाग-बगीचे लगवा देता है। अन्त में नाई उसे स्वर्ग भेजने के बहाने मरवा डालने के चक्कर में स्वय अपने प्राण गँवा बैठता है तथा राजा को लड़के के लिए राज्य छोड़ना पड़ता है।' इन दोनों ही लोककथाओं में नाई नायक को सकट में डालने की धूर्तता करता है लेकिन अंत में उसे अपने किए का फल प्राण गंवाकर मिलता है।

लोककथाओ मे नायक की सहायता करने वाले स्त्री पात्रों में 'बाग की मालिन' का नाम प्रमुखता से आता है, जिसका प्रमुख ध्येय नायक-नायिका का संयोग करवाना होता है। अधिकांश लोककथाओं में नायक किसी ऐसी राजकुमारी के बाग में पहुँचता है , जहाँ पुरषों के प्रवेश की मनाही होती है। चूँकि राजकुमारी पुरुषों का मुँह नहीं देखती है इसलिए रोज ढ़ाई फूलो से तुलती है। नायक मालिन को मुहरों का लालच देकर उसे अपना सहायक बना लेता है तथा उसकी सहायता से राजकुमारी से जाकर मिलता है।

'बढई का कुँवर' बुन्देली लोककथा में, 'राजकुमार बढ़ई द्वारा बनाये गये काठ के घोडे पर सवार हो सात समुन्दर पार एक बाग में पहुँचा तथा मालिन से ठहरने की इजाजत माँगता है। मालिन ने कहा यह राजा की बेटी का बगीचा है, यहाँ मर्द नहीं रह सकते। कुमार ने एक मुहर निकालकर मालिन को देते हुए कहा, मैं थका-माँदा मुसाफिर हूँ, कम से कम आज तो ठहर लेने दो। मुहरों के लालचवश मालिन राजकुमार को ठहराने पर राजी हो गयी। मालिन राजकुमारी के लिए नित्य फूलों के गजरे बनाकर ले जाया करती थी। एक दिन राजकुमार ने बहुत सुन्दर गरजे बनाकर मालिन के हाथो राजकुमारी के पास भेजा । सुन्दर गजरे देखकर राजकुमार बहुत प्रसन्न हुई तथा मालिन से गजरे बनाने वाली

1- राजा और फसिया का लड़का, कथक्कड़- राजाराम कुशवाहा, संग्रह क्रमांक-16 (अप्रकाशित)

को पूछा। मालिन ने डरते हुए कह दिया कि मेरी बहनोतिया ने बनाये है। राजकुमारी ने उसे कल साथ लाने को कहा, अब मालिन उदास चेहरा लिए घर आई। राजकुमार को जब यह सब मालूम हुआ तो उसने मालिन को पाँच मुहरें देकर बाजार से बढ़िया जनानी पोशाक मगवाई तथा उसे पहन डलिया में गजरे लेकर अगले दिन मालिन के साथ राजकुमारी के पास पहुँच गया। राजकुमारी को उससे मिलकर अत्यत प्रसन्नता हुई तथा उसने मालिन की बहनोतिया को अपने पास रोक लिया। रात को कुमार ने अपना असली परिचय दिया, जिससे राजकुमारी प्रसन्नता के साथ बातें करने लगी।'[1]

इसी तरह, 'वासुकी नाग की मुदरी'[2] बुन्देली लोककथा में, 'साहूकार का पुत्र एक नगर में जा पहुँचा। वहाँ के राजा की लड़की बहुत सुन्दर थी, जिससे मिलने की आशा से वह बेटी के बगीचे में जा पहुँचा, जहाँ पुरुषों के जाने की मनाही थी। मालिन नाराज हुई परन्तु उसने धन का लोभ देकर प्रसन्न कर लिया। एक दिन मालिन की मदद से स्त्री वेश में वह राजकुमारी के पास गया। राजकुमारी नित्य फूलों से तुला करती थी लेकिन जब उसने साहूकार के लड़के का मुँह देख लिया तो मालिन फूल चढ़ा-चढ़ाकर हार गयी, परन्तु उसका वजन पूरा न हुआ। बेटी ने गुस्से में आकर मालिन से पूछा, सच-सच बता यह कौन है? नहीं तो मैं तेरी खाल खिचवा लूँगी। मालिन ने डरकर सब हाल कह दिया। राजकुमारी ने लड़के से कहा, अगर तुम सचमुच मेरे लायक हो तो रात-भर मे इस बगीचे के भीतर सोने का सतखण्डा महल बनवा दो नहीं तो तुम्हें जान से मरवा डालूँगी। साहूकार के लड़के ने वासुकी नाग की दी गयी मुदरी की सहायता से सतखण्डा महल खड़ा कर दिया, जिससे राजा ने अपनी बेटी का विवाह उससे कर दिया।'

लोककथाओं में कही मालिन की जगह राजकुमारी की दासी के द्वारा नायक को सहायता प्राप्त होने का वर्णन मिलता है। 'रतन पारखी' बुन्देली लोककथा में, 'राजकुमार

1- बुन्देखण्ड की ग्राम्य कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-157 से 159

2- बुन्देलखण्ड की ग्राम्य कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी पृ0-130 से 132 तक

सिंहलद्वीप की पद्मिनी से विवाह करने के लिए वहाँ जाकर मिठाई की दूकान खोली। एक दिन राजा की बेटी ने अपनी दासी को अनोखी मिठाई लेने बाजार भेजा। दासी रूपया लेकर भाव पूछते-पूछते नये हलवाई की दुकान पर आई तथा ऊँचे-से-ऊँचे दाम की दो सेर मिठाई ली। कुंवर को यह मालूम होने पर कि यह पद्मिनी की दासी है, उसने मिठाई के पैसे दासी को स्वयं रख लेने को कह दिया। दासी प्रसन्न हो चली गयी तथा मिठाई पद्मिनी को बहुत पसन्द आयी। अब दासी रोज दूकान से मुफ्त में मिठाई ले जाती तथा पैसे अपने पास रख लेती, जिससे राजकुमार व दासी में हेल-मेल .हो गया। एक दिन कुँवर ने दासी से पद्मिनी के मिलने का उपाय पूछा तो वह बोली, वह पुरुष का मुँह नहीं देखती तथा नित्य फूलों पर तुलती है लेकिन मैं तुम्हारे लिए उपाय बताये देती हूँ। तुम ब्राह्मण का वेष बनाकर राजा के पास जाकर महादेव का पूजन कर लेने को कहना। मन्दिर महल के अन्दर है तथा बेटी नित्य महादेव का पूजन करती है। राजकुमार ने ऐसा ही किया तथा राजा के आग्रह पर पद्मिनी भी राजी हो गयी। राजकुमार ब्राह्मण वेश में पूजा के बहाने मन्दिर में जा डटा। अधिक समय होने पर बेटी जब भूख से व्याकुल होने लगी तो दासी की सलाह पर उसने मन्दिर में एक ओर बैठकर पूजन किया तथा जैसे ही होम करने लगी ब्राह्मण ने उसका हाथ पकड़कर कहा, ऐसे कहीं होम लगाया जाता है? ऐसे लगाओ। इतना कहकर वह वहाँ से भाग निकला। अब पूजन के पश्चात बेटी फूलो से तूलने बैठी तो डलियों फूल चढ़ गये। मालिन सोचने लगी कि दाल में कुछ काला है। बेटी ने कलंक से डरकर दासी से सलाह ली तो दासी ने उसे ब्राह्मण के साथ ही भाग चलने की सलाह दी। कोई दूसरा मार्ग न देखकर पद्मिनी राजी हो गयी। दासी ने तुरन्त राजकुमार के पास पहुँचकर सारा हाल सुनाकर कहा, आज रात तीन घोड़ों का इंतजाम करके महल के पिछवाड़े आ जाना। राजकुमार घोड़े लेकर पहुँच गया तथा पद्मिनी व दासी को लेकर चल दिया।'[1]

1- जैसी करनी वैसी भरनी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-55 से 59 तक

लोककथाओं में सहायक के रूप में पशु-पक्षी जिस बुद्धि चातुरी का परिचय देते हैं वह प्रशंसनीय है। नायक-नायिका को सघन वनों में, भीषण संकटों से पशु-पक्षी ही मुख्य रूप से उबारते हैं। किसी-किसी स्थान पर तो अद्‌भुत कार्य भी पक्षियों की सहायता से पूरे किए जाते है। 'बढ़ई का कुंवर'[1] बुन्देली लोककथा में 'राजकुमार काठ के घोड़े पर राजकुमारी को बैठाकर ले उडा। चलते समय राजकुमारी ने सोने के पिंजड़े में बंद अपने तोते को भी साथ ले लिया। वे समुद्र के बीच एक टापू में विश्राम करने ठहरे, जहाँ रात के समय काठ का घोड़ा चोरी हो गया। अब टापू से बाहर निकलने का कोई उपाय न देखकर राजकुमार व राजकुमारी बहुत दुखी हुए, लेकिन तोते ने पिंजड़े से निकलकर घास के दो पूले तिनके इकट्ठे किए तथा उन्हें साड़ी की किनारी से बाँध दिया। उन पर बैठकर कुमार,कुमारी व तोता, तीनो समुद्र पार करने लगे, लेकिन समुद्र में तैर रहे एक चूहे ने शरारत वश पूले के बाँध काट डाले जिससे कुमार व कुमारी समुद्र में अलग-अलग बह गये तथा तोता उड़ गया। राजकुमारी बहते-बहते एक शहर में समीप जा लगी। वहाँ के राजकुमार ने उसे समुद्र से निकालकर, राजमहल में ले गया तथा उसके सामने विवाह का प्रस्ताव रखा। राजकुमारी ने बारह वर्ष तक पक्षी चुगाने का बहाना करके, महल के छत पर दाना डालकर पक्षी चुगाने लगी। एक दिन दाना चुगने वही तोता आया, जिसे पहचानकर राजकुमारी ने आँखों में आँसू भरकर कहा, तुम किसी तरह राजकुमार का पता लगाओ। तोते ने राजकुमार को भड़भूजे के पास से ढूँढ निकाला तथा उसे लेकर राजकुमारी के शहर में आ पहुँचा। एक दिन तोते को काठ का घोड़ा जुलाहे के घर दिखलाई पड़ा। तोते ने राजकुमार को खबर दी, जिससे कारीगर का रूप बनाकर राजकुमार ने घोड़े को ठीक करने के बहाने उसे ले उडा तथा महल की छत पर राजकुमारी के पास जा पहुँचा, जहाँ तोता भी पहुँच गया था। अब तीनो प्राणी उस घोड़े पर बैठकर उड़ चले तथा राजकुमार अपने पिता राजा के पास आ गया। राजा ने आनन्दपूर्वक राजकुमार का विवाह राजकुमारी के साथ कर दिया।' इस कथा में तोते की सहायता से राजकुमार व राजकुमारी समुद्र को पार करने का प्रयास करते हैं तथा बिछुड़ जाने पर तोता ही दोनों को ढूँढ़कर आपस में मिलाता है।

1- बुन्देलखण्ड की ग्राम्य कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-160 से 163 तक

'हार-जीत'[1] बुन्देली लोककथा में, 'राजा की आज्ञानुसार मंत्री की पुत्री मर्दानी पोशाक में काबुली घोड़े पर सवार हो एक पढ़ाया हुआ तोता लेकर मोतियों का भुट्टा खोजने निकली। कुछ दूर चलकर उसने तोता से पूछा, मोतियों का भुट्टा कहा मिलेगा? तोता बोला, उत्तर दिशा मे एक बाग है, उसमें परकोट खिचा है, उसी के अन्दर भुट्टे लगे हैं। मंत्री पुत्री ने वहाँ पहुँचकर घोड़े को ऐड़ लगायी और घोड़े ने परकोटा पार कर लिया। बगीचे मे राजकुमार और उसकी माँ चौपड़ खेल रहे थे। उन्होंने सुन्दर राजकुमार को देखा किन्तु माँ को उसके मर्द होने मे सन्देह हुआ। राजकुमार ने परीक्षा लेने के लिए रास्ते मे सूखे मटर के दाने विखेर दिए लेकिन तोते द्वारा सूचना मिलने पर उसने सँभलकर मटर के दानो पर चलकर रास्ता पार कर लिया। माँ-बेटे , दोनों ने उस पर मोहित होकर उसे पास बिठाया तथा हाल-चाल पूँछा। माँ ने उसे रात को रुकने तथा साथ भोजन करने का निमंत्रण दिया। राजकुमार और उसकी माँ के मन में शक था कि यह लड़की है अत राजकुमार ने खूब नशा करवाके सच उगलवाने की सोची। तोते ने मत्री-पुत्री को पहले ही सतर्क कर दिया था। वह गिलास जमीन पर उल्टी करती. गयी तथा राजकुमार नशे में धुत्त हो गया। तोते ने कहा, अच्छा मौका है, जल्दी भुट्टा तोड़ो और रात को ही भाग लो। मंत्री पुत्री ने बाग टहलने का बहाना बनाकर , एक भुट्टा तोड़ अपने वस्त्र में छिपा लिया तथा राजकुमार के हाथ पर लिखा, मैं लड़की थी, मगर आप जान नहीं पाये, तुम हारे मैं जीती। फिर अस्तबल से घोड़ा निकाल परकोटा पार कर सुबह होते-होते अपने पिता के पास पहुँच गयी।'

इसी तरह, 'रानी की चतुराई' बुन्देली लोककथा में, 'राजा की बहन सपने में देखी चीजें लाने पुरुष वेश मे घोडे पर सवार हो अपने सिखाये हुए तोता-मैना को साथ लेकर चल दी। कुछ दिनो मे वह समुद्र-किनारे के एक नगर की धर्मशाला में ठहरी। उस धर्मशाला मे ठहरे अतिथि का राजा की ओर से आदर-सत्कार होता था। रात को राजा का नाई पैर दबाने आया तो उसे मुसाफिर के मर्द होने पर सन्देह हुआ। उसने राजा से

1- बुन्देली लोककथाये, बटुक चतुर्वेदी, 'चौमासा,' वर्ष-10, अक-31, पृ0-39

जाकर कहा, सरकार, वह किसी राजा की लड़की मालूम होती है। राजा ने उसकी परीक्षा के लिए निमत्रण देकर भोजन के लिए महल मे बुलवाया तथा नाई के कहे अनुसार भोजन में नमक की मात्रा कम-ज्यादा करवा दी। राजकुमारी ने आते ही मैना को छोड़ दिया था तथा वह छिपकर राज दरबार में हुई बातचीत की जानकारी लेती रहती थी। उसने निमंत्रण वाली बात राजकुमारी को बता दी, जिससे राजकुमारी ने खाने में नमक के कम-ज्यादा होने की अनदेखी करके चुपचाप खाना-खाकर डेरे पर आ गयी। अब नाई के कहने पर राजा ने दोबारा परीक्षा लेने की सोचकर उसे चौपड़ खेलने के लिए आमंत्रित किया। मैना के द्वारा राजकुमारी को इसकी खबर पहले ही मिल चुकी थी। रात्रि को भोजन के पश्चात् राजा और मुसाफिर फूलो की शैय्या पर चौपड़ खेलने बैठे तथा अधिक रात हो जाने पर राजा मुसाफिर को वहीं लेटने को कहकर अपने सोने के कमरे में चला गया। इधर राजकुमारी ने तोता-मैना के गले में कपड़े की झोली बाँध दी थी, जिससे दोनों पक्षियों ने बाग से फूल तोड़ने शुरू कर दिए तथा राजकुमारी की शैय्या के पास ताजे फूलों का ढेर लगा दिया। चार बजे तोते ने अपनी चोच की ठोकर राजकुमारी के पैर में मारकर उसे जगा दिया। राजकुमारी ने शैय्या के कुम्हलाये फूल तोता-मैना की झोलियों में भरकर दूर फिकवा दिए और नये फूलों की शैय्या बनवा दी। इतने में सवेरा होने पर राजकुमारी ने धर्मशाला की राह ली। सबेरे राजा ने नाई के साथ जाकर देखा तो शैय्या के फूल तनिक भी नहीं कुम्हलाये थे।[1] इन दोनों ही लोककथाओ में नायिका प्रशिक्षित तोता-मैना की सहायता से अनेक संकटों को पार करके इच्छित वस्तु को प्राप्त करने में सफल होती है।

लोककथाओं में सकट के समय नायक-नायिका राजहंस आदि पक्षियों की पीठ पर बैठकर गंतव्य स्थानों की यात्रा करते हैं। इससे नायक-नायिका की कठिनाइयाँ दूर होने के साथ-साथ उनको एक दूसरे से मिलने में सहायता भी मिलती है। 'पाषाण नगरी' बुन्देली लोककथा में 'राजकुमार पाषाण नगरी का पता न मालूम होने के कारण गंगाजी मे आत्महत्या करने के लिए कूद पड़ा। लेकिन लहरों ने उसे किनारे फेंक दिया तथा गंगाजी ने प्रकट

1- पाषाण नगरी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-159 से 162 तक

होकर उससे आत्महत्या का कारण पूछा। राजकुमार ने उनसे पाषाण नगरी की कहानी पूछी तो उन्होंने राजकुमार को पाषाण नगरी की सैर करा लाने के उद्देश्य से लीला और धौरा नामक दो हसों को बुलाया। गंगाजी के अन्तर्धान हो जाने पर दोनों हँस एक साथ जुड़कर राजकुमार को अपनी पीठ मे बैठकार ले चले तथा बीच गगा में पहुँचने पर दोनों हंसों ने डुबकी लगाकर राजकुमार को पाषाण नगरी के द्वार पर पहुँचा दिया। राजकुमार पाषाण नगरी की सैर करके वापस द्वार पर आ गया तथा हंसों पर सवार होकर फिर उसी जगह पर आ गया।'[1] इस लोककथा मे गंगाजी के कहने पर दो हंसों की सहायता से राजकुमार पाषाण नगरी की सैर करके उसकी कहानी मालूम कर लेता है।

इसी तरह, 'राजहंस'[2] बुन्देली लोककथा मे, 'राजकुमार ने अपने पिता का कोढ़ (कुष्ठ रोग) दूर करने के लिए पकडे गये राजहंस को छोड़ दिया, जिससे उसे देश निकाला मिला। वह राजहंस की पीठ पर बैठकर उसके माता-पिता के पास मानसरोवर जा पहुँचा। एक दिन राजकुमार को उदास देखकर राजहंस उसे एक सुन्दर शहर के बगीचे में ले गया तथा रात के समय राजकुमार को राजकुमारी के सतखण्डे महल पर उतार दिया। दोनों एकदूसरे पर मोहित होकर सारी रात चौपड़ खेलते रहे। सुबह राजहंस राजकुमार को लेकर डेरे में आ गया। इधर जब राजकुमारी पुरुष का मुँह देख लेने के कारण ढ़ाई फूलों से नहीं तुली तो शंका होने पर राजा ने चोकसी बढा दी, जिससे राजकुमार पकड़ा गया। उसे शूली पर चढाने की राजज्ञा हुई, लेकिन राजकुमार ने मरने से पहले पेड़ पर चढ़कर मातृभूमि की ओर एक बार देख लेने की इच्छा की। सिपाही पेड को घेरकर खड़े हो गये, राजकुमार ज्यो ही पेड़ पर चढ़ा उसी समय राजहंस महल पर से राजकुमारी को पीठ पर बिठा पेड़ के ऊपर आ गया। राजकुमार भी तुरन्त राजहस पर सवार होकर उड़ चला। घर आने पर हंस की बीट से राजा कोढ़ दूर हो गया, सभी आनन्दपूर्वक रहने लगे।'

1- पाषाण नगरी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0 13 से 15 तक

2- बुन्देली लोककहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-11 से 16 तक

बुन्देली लोककथा 'वासुकी नाग की मुदरी'[1] में, 'नायक के सहायक के रूप मे तोता, चूहा व बिल्ली का उल्लेख मिलता है। कथा में पडोस के राजा द्वारा भेजी गयी दूती छलपूर्वक राजकुमारी तथा वासुकी नाग की मुदरी का अपहरण करके ले जाती है। खोई मुदरी तथा राजकुमारी का पता लगाने के उद्देश्य से नायक साहूकार का पुत्र अपने सहायक तोते के गले मे एक चिट्ठी बाँधकर उसे भेजता है। तोता शीघ्र ही राजकुमारी को ढूँढ़ निकालता है तथा उसका हाल-चाल लेकर साहूकार के लड़के के पास वापस आ जाता है। अब साहूकार का पुत्र अपने सहायक चूहा व बिल्ली को मुदरी वापस ले आने को भेजता है। उन दोनों ने मिलकर युक्ति से खोई हुई मुदरी पुनः प्राप्त कर साहूकार के लडके को दे देते है। अब साहूकार का पुत्र उस चमत्कारी मुदरी की सहायता से राजकुमारी को अपने पास बुला लेता है। इस तरह साहूकार का पुत्र राजकुमारी तथा मुदरी को पुनः प्राप्त कर लेता है।'

इसी तरह, 'ठग की बेटी'[2] बुन्देली लोककथा में, 'एक सेठ केकड़े को साथ लेकर यात्रा करता है। रास्ते में एक पेड के नीचे विश्राम करते समय सेठ को एक सर्प निकलकर काट लेता है तथा सर्प का दोस्त कौआ उसे मुर्दा समझकर खाने को आ जाता है। इसी समय सेठ के साथ का केकड़ा कौएं की गर्दन पकड़ लेता है। जिससे अपने दोस्त कौए की प्राण रक्षा के बदले सर्प को सेठ के शरीर से अपना विष वापस खीचना पड़ता है। इस तरह केकडे की सहायता से सेठ के प्राणों की रक्षा होती है।' इस कथा में केकड़े को सहायक के रूप मे वर्णित किया गया है।

निष्कर्षतः पूर्वोक्त विवेचित लोककथाओं में शिव-पार्वती, साधु जैसे अलौकिक पात्रों के अतिरिक्त; लौकिक पात्रों में 'मित्र' का स्थान प्रमुखता से आता है। भारतीय सामाजिक सम्बंधों में मित्र का स्थान महत्वपूर्ण होता है। वस्तुत सच्चे मित्र की पहचान संकटकाल में ही होती है। लोककथाओ में सकटापन्न स्थिति मे मित्रों द्वारा की गयी अहैतुक सहायता

1- बुन्देल की ग्राम्य कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-159 से 162 तक

मानवीय मूल्यो का श्रेष्ठ उदाहरण है। पूर्वोक्त विवेचित 'मित्रो की प्रीति' कथा का राजकुमार भ्रमवश अपने उस मित्र की हत्या का कारण बनता है, जो उसी की सहायता में लगा था। पश्चातापवश हत्यारा राजकुमार अपने शिशु के रक्त को छिड़ककर मित्र को जीवित करने के उद्देश्य से शिशु की हत्या करने को उद्यत होता है लेकिन शिशु की अंगुली से रक्त निकलने के कारण मित्र जीवित हो उठता है तथा शिशु की जान भी बच जाती है।

नायक के सहायक स्त्री पात्रों में उसकी 'पत्नी' के . अलावा 'बाग की मालिन' व 'दासी' का प्रयोग अधिक मिलता है। लोककथाओ मे मालिन अथवा दासी द्वारा नायक की सहायता करना हमारी मध्यकालीन सामन्ती सामाजिक व्यवस्था एवं परिवेश को स्पष्ट करता है। मध्यकाल में, राजघराने की स्त्रियो एवं कन्याओं को विलग रखा जाता था। उनके आसपास पुरुषों की छाया भी नहीं पड सकती थी। उनके मनोरंजन एवं सेवा के लिए स्त्रियाँ ही होती थी। यही कारण है कि उनके श्रृंगार करने वाली दासियाँ, फूल व गजरे लाने वाली बाग की मालिन, तथा अन्य सेविकाएं उनकी अंतरंग सखी की भाँति होती थी, जिनसे उनका कोई दुराव-छिपाव नहीं होता था। इसलिए लोककथाओं में मालिन लालचवश नायक को संरक्षण देकर, राजकुमारी से उसका संयोग ·आसानी से करवा देती है। क्योंकि उसको महल में प्रवेश करने की कोई बन्दिश नहीं होती है। इसी तरह राजकुमारी की दासी भी उससे अन्तरंगता के चलते सारे भेद जानती होती है, जिसे वह लालच वश नायक को बतलाकर उसे राजकुमारी से मिलवाने में सहयोग करती है। नायक-नायिका के सहायक पक्षियों में शुक, सारिका व हंस का उल्लेख सबसे अधिक मिलता है। शुक-सारिका भावी संकट की सूचना देकर पात्रों को न केवल विपत्ति से बचाते है बल्कि विपत्ति से उबरने के लिए सहायक भी बनते हैं। सन्देश पहुँचाने में इनकी भूमिका सराहनीय होती है। सहायक के रूप मे हंस की भूमिका भी महत्वपूर्ण है। सन्देशवाहक के रूप में हंस का उल्लेख पुराण-कथाओं मे अधिक मिलता है। लोककथाओं में संकटग्रस्त, विवश नायक-नायिका अथवा अन्य पात्रों को हंस वाहन बनकर दुर्गम स्थलों तक आकाशमार्ग से पहुँचाने का कार्य करते हैं।

सहायक घटक' के प्रस्तुत अभिप्राय में उपर्युक्त अनेक समानताओं के अतिरिक्त रूप में, निम्न बातों की अनेक कथाओं में पुनरावृत्ति होती है- साधु द्वारा कमण्डल का जल छिड़ककर मृत या पाषाण हुए पात्र को पुनर्जीवित करना अथवा पशु-पक्षी बने मानव के रूप को परिवर्तित करना; पेंती चीरकर, रक्त छिड़ककर अभीष्ट पूरा करना या मृतपात्र को जीवित करना; बायें हाथ का अँगूठा काटकर भूखे शिशु को दूध पिलाना। मंत्र द्वारा कार्यसिद्ध करने के उदाहरण अपेक्षाकृत कम मिलते हैं।

*****

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

अध्याय-नौ

ए्वं श्राप'-

(1) देवी-देवताओं द्वारा वरदान एवं शाप

(2) अलौकिक शक्ति सम्पन्न व्यक्तियों
द्वारा वरदान एवं शाप

(3) स्त्रियों द्वारा दिया गया वरदान एवं शाप ।

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

किसी अलौकिक शक्ति सम्पन्न व्यक्ति के प्रसन्न होने पर उसके द्वारा कहे गये कथन को 'वरदान' तथा उसके रूष्ट होने पर कहे गये कथन को 'शाप' की संज्ञा दी जाती है। देवी-देवता, ऋषि-मुनि आदि अलौकिक शक्ति सम्पन्न व्यक्तियों का कथन कभी मिथ्या नहीं हो सकता यह विश्वास भारतीय जीवन में अत्यंत प्राचीन काल से चला आ रहा है। अलौकिक शक्ति सम्पन्न व्यक्ति प्रसन्न होकर यदि कठिन एवं असम्भव कार्यों की सिद्धि में सहायक हो सकते हैं, तो किसी कारण से रूष्ट होने पर वे अनिष्टकारक भी हो सकते हैं। भारतीय ऋषियों , मुनियों, ब्राह्मणों आदि की सात्विक कृपा एवं रोष ही वरदान और शाप के रूप में समूचे भारतीय वाङ्मय में प्राप्त होता है।

'वरदान एवं शाप' की धारणा के मूल में भौतिक शक्ति की तुलना में आत्मिक शक्ति की महत्ता एवं श्रेष्ठता दिखलाई पड़ती है। अलौकिक एवं दिव्य शक्ति रखने वाले व्यक्तियों को कठिन आराधना के द्वारा प्रसन्न करके उनसे मनचाही वस्तुएं प्राप्त की जा सकती हैं। दूसरी ओर इनको जानबूझकर कष्ट पहुँचाने या अनजाने में इनके प्रति कोई अपराध हो जाने पर क्रोध का पात्र भी बनना पड़ता है। क्रुद्ध होकर यदि किसी ऐसे व्यक्ति ने 'कथन' कह दिया है तो उसका घटित होना निश्चित है, उसे कोई टाल नही सकता। यहाँ तक कि स्वयं शाप देने वाला व्यक्ति अपने शाप को बिल्कुल वापस् नहीं ले सकता, शाप मुक्ति का उपाय अवश्य बतला देता है। इसके साथ ही, शाप का प्रभाव प्रत्येक व्यक्ति पर समान रूप से पड़ता है, चाहे वह सामान्य व्यक्ति हो अथवा अलौकिक शक्ति सम्पन्न कोई देवता या ऋषि हो। भगवान राम को भी नारद के शाप-वश प्रिया-विरह में बन-बन भटकना पड़ा था। दुष्ट प्रवृत्ति का व्यक्ति जब वरदान प्राप्त करके अनीति करता है तो उसे दिया गया वरदान ही उसके पतन का कारण बनता है। भगवान शंकर द्वारा भस्मासुर को दिया गया वरदान स्वयं उसे ही भस्म कर डालता है।

इस कथाभिप्राय से सम्बंधित लोककथाओं को निम्न भागों में विभाजित किया जा सकता है:-

(1) देवी-देवताओं द्वारा वरदान एवं शाप

(2) अलौकिक शक्ति सम्पन्न व्यक्तियों द्वारा वरदान एवं शाप

(3) स्त्रियों द्वारा दिया गया वरदान एवं शाप ।

इस कथाभिप्राय की प्राचीन और विस्तृत परम्परा महाभारत, पुराणों, रामचरितमानस कथासरित्सागर आदि में मिलती है। 'महाभारत' में, सुन्द और उपसुन्द नामक दो दैत्य भाई तीनों लोकों पर विजय पाने की इच्छा से विन्ध्य पर्वत पर कठोर तपस्या करते हैं। उनकी उग्र तपस्या देखकर देवताओं को भय होता है तथा वे नाना प्रकार से उसमें विघ्न डालने का प्रयत्न करते हैं। लेकिन दोनों में से कोई भी विचलित नहीं होता है। तब सम्पूर्ण लोकों के हितैषी पितामह ब्रह्मा जी ने उनके निकट आकर इच्छानुसार वरदान माँगने को कहते हैं। ब्रह्माजी को अपने सामने देख वे दोनों एक साथ कहते हैं कि यदि आप हमारी तपस्या से प्रसन्न हैं तो हम सम्पूर्ण मायाओं के ज्ञाता, अस्त्र-शस्त्रों के विद्वान, बलवान, इच्छानुसार रूप धारण करने वाले और अमर हो जायें। तब ब्रह्मा जी बोले कि अमरत्व के सिवा तुम्हारी सभी माँगें प्राप्त होगी। तुम लोग मृत्यु का कोई दूसरा ऐसा विधान माँग लो, जो तुम लोगों को देवताओं के समान बनाये रख सके। वे दोनों बोले पितामह हमें यह वर दीजिए कि हम दोनों में से एक-दूसरे को छोड़कर तीनों लोकों में कोई भी न मार सके। ब्रह्म जी ने 'ऐसा ही हो' कहकर ब्रह्मलोक को प्रस्थान किया।[1] यहाँ पर ब्रह्मा जी द्वारा दिए गये वरदान में ही इन दोनों दैत्यों की मृत्यु का मार्ग रहता है। आगे जब सभी लोग इनके अत्याचारों से त्रस्त हो जाते हैं तब ब्रह्मा जी की आज्ञा से विश्वकर्मा ने सुन्दर युवती तिलोत्तमा का रूप धारण करके अपने आकर्षण से दोनों दैत्यों का मन मोह लेती है, जिसे पाने के लिए दोनों आपस में ही लड़ मरते हैं।[2]

1- महाभारत (प्रथम खण्ड), आदि पर्व, पृ0-600 व 601।

2- वही, पृ0-602 से 607 तक

'पुराणों' में 'इन्द्र और अहल्या' की कथा मिलती है। जिसके अनुसार 'एक बार अहल्या की सुन्दरता पर मोहित होकर इन्द्र ने उससे एकान्त में प्रणय की प्रार्थना की, जिसे उस मूर्खा ने स्वीकार कर लिया। तप के प्रभाव से इस बात को जानकर अहल्या के पति गौतम ऋषि, उसी समय वहाँ आ गये तथा अहल्या को शाप देते हुए कहा कि हे दुराचारिणी! बन में घूमते हुए रामचन्द्र के दर्शन पर्यन्त तू पत्थर की हो जा। साथ ही इन्द्र को भी शाप दिया कि जिस स्त्री-वरांग के लोभ में तूने पाप किया है, उस अंग के तेरे शरीर में हजारों चिह्न हो जाय। इस प्रकार शाप के प्रभाववश अहल्या कठोर शिला बन गयी तथा इन्द्र का शरीर भी चारों ओर से स्त्री योनि के चिन्हों से भर गया।'[1]

'रामचरितमानस' में भगवान राम के अवतार की प्रस्तावना 'वरदान एवं शाप' की पौराणिक कथाओं को लेकर खड़ी की गयी है, जिसमें वरदान एवं शाप को ही भगवान विष्णु के मानव योनि में जन्म लेने का कारण बतलाया गया है। एक तरफ जहाँ 'स्वयंभू मनु एवं उनकी पत्नी शतरूपा नैमिषारण्य तीर्थ में तपस्या करके भगवान विष्णु को प्रसन्न कर लेते हैं तथा उन्हें अपने पुत्र के रूप में पाने का वरदान माँग लेते हैं। अगले जन्म में वे दोनों महाराज दशरथ एवं महारानी कौसिल्या के रूप में जन्म लेते हैं, जिनके पुत्र भगवान राम होते हैं।'[2] दूसरी तरफ 'भगवान विष्णु नारद जी को बन्दर रूप देकर उनका गर्व खण्डित करते हैं, जिससे कुद्ध होकर महर्षि नारद उन्हें मानवयोनि में जन्म लेने का शाप देते हैं।'[3]

'रामचरितमानस' में ही, राजा भानुप्रताप की कथा में, 'राजा भानुप्रताप से बदला लेने के लिए, वन में मुनि का कपटवेश धारण किए हुए पराजित नरेश ने, भानुप्रताप को प्रेरित करके उनसे यज्ञ कराया, जिसमें उसका सहायक निशाचर कालकेतु पुरोहित बनकर ब्रह्मभोज में एक ब्राह्मण का मांस पका देता है। जब ब्राह्मणों के सामने भोजन परोसा जाता

1- कल्याण (गीता प्रेस), पुराणकथांक, पृ0-425

2- तहँ करि भोग बिसाल तात गएँ कछु कालपुनि।
होइहहु अवध भुआल तब मैं होब तुम्हार सुत।। रामचरितमानस (बालकाण्ड)

3- कपि आकृति तुम्ह कीन्हि हमारी। करिहहिं कीस सहाय तुम्हारी
मम अपकार कीन्ह तुम भारी। नारि बिरह तुम्ह होब दुखारी।। रामचरितमानस (बा0)

है, उस समय आकाशवाणी द्वारा ब्राह्मणों को इसकी सूचना मिलती है और वे क्रुद्ध होकर भानुप्रताप को परिवार सहित निशाचर होने का शाप दे देते हैं।[1] यह प्रसंग बिना किसी अपराध के ही भयंकर शाप पाने का उदाहरण है।

शापवश राजा भानुप्रताप, अपने बन्धु-बान्धवों समेत रावण, कुम्भकर्ण, विभीषण आदि के रूप में राक्षस-योनि में जन्म लेते हैं, तीनों भाई कठिन तपस्या करके ब्रह्मा जी को प्रसन्न करते हैं, वरदान मांगने को कहने पर रावण बोला कि मनुष्य एवं बन्दर के अलावा हम किसी के हाथों मृत्यु को प्राप्त करें-

हम काहू के मरहिं न मारे। बानर मनुज जाति दुई बारें।।
एवमस्तु तुम्ह बड़ तप कीन्हा। मैं ब्रह्मा मिलि तेहि बर दीन्हा।।

(रामचरितमानस बालकाण्ड)

तदनन्तर भगवान विष्णु महाराज दशरथ के यहाँ पुत्र रूप (भगवान राम) में अवतरित होकर, बन्दरों आदि की सहायता से रावण का बन्धु-बान्धवों सहित विनास करके उनका उद्धार करते है। इस तरह, 'रामचरितमानस' की पूरी कथा 'वरदान एवं शाप' के साथ आगे बढ़ती है।

'कथासरित्सागर' में 'मित्रद्रोह का फल' नामक कथा में, 'एक बार योगनन्द का पुत्र हिरण्यगुप्त शिकार खेलने जंगल में गया, जहाँ रात्रि हो जाने पर एक उपयुक्त पेड़ पर चढ़ गया। कुछ ही समय के अनन्तर सिंह से डराया हुआ एक भालू भी उसी वृक्ष पर आ चढ़ा। राजपुत्र को घबराया देख भालू उसे न मारने का आश्वासन देकर विश्वास

1- बोले बिप्र सकोप तब नहिं कछु कीन्ह बिचार।
जाइ निसाचर होहु नृप मूढ़ सहित परिवार।।

(रामचरितमानस- बालकाण्ड)

जमा लिया। भालू की बातों से निर्भय होकर राजपुत्र सो गया और भालू जागता रहा। इतने में नीचे से सिंह ने रीक्ष से कहा कि तुम इस मनुष्यको नीचे फेंक दो , मैं इसे लेकर चला जाऊँगा, लेकिन भालू इसके लिए तैयार नही हुआ। क्रमशः भालू के सोने और राजपुत्र के जागते रहने पर सिंह ने राजपुत्र से भी यही कहा। राजपुत्र ने भय के कारण सिंह को प्रसन्न करने के लिए भालू को नीचे फेंकने का यत्न किया। दैवयोग से वह जग पड़ा तथा नीचे गिरने से बच गया। अब भालू ने राजपुत्र को शाप दिया कि हे मित्रदोहिन्! जब तक यह वृत्तान्त प्रकट न होगा, तब तक तू पागल बना रहेगा।'[1] आगे वररूचि ने सरस्वती की कृपा से वन की रात का सारा वृत्तान्त जाकर इस मित्रद्रोही राजपुत्र को सुनाता है,जिससे राजपुत्र शाप से मुक्त हो जाता है।

कथासरित्सागर की उत्पत्ति के सम्बंध में सोमदेव ने लिखा है कि 'एक बार शिव ने पार्वती से सात विद्याधर चक्रवर्तियों की आश्चर्यमयी कथाओं का वर्णन किया। यद्यपि शिव की वार्त्ता एकान्त में हुई थी किन्तु उनके अनुचर पुष्पदत्त ने वे कहानियाँ सुन लीं, और अपनी पत्नी जया को उन्हें सुना दिया। जया ने उन कहानियों को अपनी सहेलियों से कहा। जब यह बात पार्वती जी को मालूम हुई तो उन्होंने रूष्ट होकर पुष्यदत्त को मृत्युलोक में जन्म लेने का शाप दिया। पुष्पदत्त के भाई माल्यवान ने उसकी ओर से क्षमायाचनाकी तो उसे भी वैसा ही दण्ड मिला। जब पार्वती जी ने अपनी सखी जया को शोक से दुखी देखा, तो उन्हें करुणा आ गयी और शाप का परिहार करते हुए कहा कि पुष्यदत्त का विन्ध्यपर्वत में काणभूमि नामक एक पिशाच से मिलना होगा। उसे अपनी पूर्वजन्मों की स्मृति बनी रहेगी और जब वह काणभूति को ये कथाएँ सुनायेगा, तब उसकी शापोन्मुक्ति होगी तथा माल्यवान भी जब काणभूति से इन बृहत्कथाओं को सुनकर लोक में इनकाप्रचार कर चुकेगा, तब वह पुनः स्वर्ग में लौट आयेगा।'[2] इस तरह कथासरित्सागर

1- कथासरित्सागर (प्रथम खण्ड), प्रथम लम्बक, पंचम तरंग, पृ0-65 व 67

2- कथासरित्सागर (भूमिका), वासुदेवशरण अग्रवाल, पृ0-13

की कथाओं के जनसामान्य में प्रचलित होने के मूल में 'शाप' की अवधारणा का समावेश मिलता है।

लोककथाओं में 'वरदान और शाप' से सम्बन्धित अनेक कथाएं मिलती हैं। देवी-देवताओं के द्वारा दिए गये वरदान और शाप के अन्तर्गत निपूते का पूत'[1] बुन्देली लोककथा मिलती है, जिसमें निपुत्री राजा, जिसका मुँह सुबह के समय कोई देखना पसन्द नहीं करता, एक दिन राजपाट छोड़कर वन में जाकर महादेव जी की तपस्या करने लगा। तपस्या करते-करते जब बारह वर्ष बीत गये तो एक दिन महादेव-पार्वती ने आकर दर्शन दिए तथा वर माँगने को कहा। राजा ने त्रिवाचा लेकर कहा कि मुझे पुत्र चाहिए। इस पर महादेव जी बोले कि तुम्हारे भाग्य में पुत्र लिखा ही नहीं है तो मैं कहाँ से दूँ। इस पर राजा ने कहा कि यदि बरदान देने की सामर्थ्य नहीं है तो माँगने को क्यों कहा? अब तो दिए गये बचन को निभाना ही होगा। यह सुन पार्वती जी बोली कि यह ठीक कह रहा है, जब आप वरदान नहीं दे सकते तो बचन देकर पूरा न करने पर आप ही बदनाम होंगे। पार्वती जी की बात सुनकर महादेव जी ने सोचकर कहा कि मैं तुम्हें चौबीस वर्ष के लिए पुत्र देता हूँ। राजा ने कहा कि नहीं महराज मुझे पूर्णायु पुत्र दीजिए, ऐसे अल्पायु पुत्र से क्या सुख मिलेगा? इस पर पार्वती जी बोली कि नादान बिल्कुल न होने से चौबीस वर्ष के लिए ही अच्छा है, इससे तेरा निपुता नाम तो मिट जायेगा,अभी तो वर ले ले, आगे हरिइच्छा। राजा राजी हो गया। महादेव जी ने उसे एक फल देकर कहा कि इसे ले जाकर अपनी रानी को खिलाओ, नवें मास पुत्र उत्पन्न होगा। आगे जब पुत्र चौबीस वर्ष का होकर मर जाता है तो उसकी पत्नी उसका सिर अपनी गोद में रखकर महादेव का पूजन करती है जिससे महादेव पार्वती सहित आकर खड़े हो जाते हैं, पत्नी उठकर उन्हें प्रणाम करती है, जिससे महादेव उसे सौभाग्यवती होने का आर्शीवाद देते हैं। इस पर पत्नी द्वारा हठ करने पर महादेव जी अपनी तूँबी से थोड़ा सा जल छिड़क देते हैं, पुत्र तुरन्त उठकर बैठ

1- बुन्देलखण्ड की ग्राम्य कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0 -187 से 192 तक

जाता है। पुत्र को जीवित देख राजा की खुशी का ठिकाना नहीं रहता।' यह लोककथा 'सावित्री-सत्यवान' की कथा से मिलती है, लेकिन यहाँ यमराज की जगह शंकर-पार्वती को वरदान देते दिखाया गया है।

इसी तरह, 'रतन-पारखी'[1] बुन्देली लोककथा में 'राजकुमार अखैवट में टगा रानी पद्मिनी का नौलखा हार लेने जाता है,जहाँ हार की रखवाली कर रही नागिन उसे काट लेती है, जिससे वह गिरकर मर जाता है। इधर राजा की बेटी बारह वर्ष तक प्रतिदिन महादेव का पूजन करने रात को चार बजे निकलती है तथा आज उसके बारह वर्ष का अन्तिम दिन था, बेटी जब पूजन को निकलती है तो रास्ते में अखैवट के नीचे पड़े राजकुमार के शव को पहचान लेती है, क्योंकि उसके साथ राजा की बेटी की शादी होने वाली है। बेटी स्नान करके महादेव जी का पूजन करती है, जिससे महादेव जी प्रसन्न होकर वरदान माँगने को कहते हैं। बेटी बोली कि जो राजकुमार अखैवट के नीचे मरा पड़ा है वह जीवित हो जाय। महादेव जी ने एक तूँबी जल देकर कहा कि जाकर मुर्दे पर छिड़क देना वह जी उठेगा । बेटी ने अखैवट के समीप पहुँचकर मुर्दे पर जल छिड़का, जिससे राजकुमार क्या अच्छी नींद आयी थी, कहकर उठ बैठा।' यहाँ भी महादेव जी के तूँबी के जल से राजकुमार पुनः जीवित हो उठता है।

'पाषाण-नगरी' बुन्देली लोककथा में, इन्द्र के शाप से राजकुमारी का नगर पत्थर का हो जाता है तथा जब एक राजकुमार उसे पाषाण नगरी की कथा सुनाता है तो वह पुनः आबाद हो जाता है। कथा के अनुसार 'छोटा राजकुमार अपने घर से निकलकर एक टाँडे वाले के यहाँ नौकरी करता है। एक बार जब टाँडा रास्ते में था तो राजकुमारी के भेजे दूतों ने आकर पूछा कि आप लोगों में से किसी को पाषाण नगरी की कहानी मालूम है। राजकुमार झूठमूठ ही हामी भर लेता है, दूतों ने उसे राजकुमारी के सामने पेश किया।

1- जैसी करनी वैसी भरनी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0·63 व 64

राजकुमार बोला: मुझे जबानी याद नहीं है, काशी में पोथी रखी है, उसमें लिखी है। राजकुमारी ने चार सिपाहियों के साथ उसे पोथी लेने काशी भेजा। अब झूठ खुलने के डर से राजकुमार आत्महत्या करने के लिए गंगाजी में कूद पड़ा, लेकिन गंगाजी ने उसे लहरों द्वारा किनारे लगा दिया तथा दो हंसो को बुलाकर पाषाण नगरी की सैर करा लाने को कहा। अब राजकुमार दोनो हंसों की पीठ पर सवार हो गया, जब वे बीच गंगा में पहुँचे तो हंसों ने डुबकी लगाकर उसे पाषाण नगरी के फाटक पर पहुँचा दिया, जो पत्थर की ही थी। यहाँ की राजकुमारी इन्द्रसभा की नर्तकी थी, एक बार नाचते समय ताल चूकने पर इन्द्र ने उसे शाप दे दिया कि जा तेरी नगरी पत्थर की हो जाय। नर्तकी के विनय करने पर इन्द्र ने पुनः कहा कि जब तुम पाषाण नगरी की कहानी किसी के मुँह से सुनोगी तब तुम्हारी नगरी फिर जैसी की तैसी हो जायेगी। पाषाण नगरी की सैर करके राजकुमार हंसों पर बैठकर फिर से गंगा जी के तट पर आ गया। जिसे सिपाहियों ने पकड़कर राजकुमारी के सामने पेश किया। राजकुमार के कहने पर नगर भर के लोग इकट्ठे हुए, बीच में दो तख्त रखे गये, जिनमें से एक पर राजकुमारी बैठी और दूसरे पर राजकुमार। राजकुमार ने कहा कि मेरी कहानी सुनने पर तुम पत्थर की हो जाओगी तब मुझे दोष न देना। राजकुमारी के सहमति देने पर राजकुमार ने कहानी कहना प्रारम्भ किया, राजकुमार ज्यो-ज्यों कहानी कहता जाता राजकुमारी पैरों की तरफ से पत्थर की होती जाती, धीरे-धीरे राजकुमारी गले तक पाषाण की हो गयी, तब वह बोली कि देखो राजकुमार मैं कहानी पूरी सुनते ही पत्थर की हो जाऊँगी और पाषाण-नगरी में अपने इसी रूप में प्रकट होऊँगी। अतः आप एक बार पाषाण नगरी अवश्य आना। राजकुमार ने सहमति देकर कहानी कहना जारी रखा, कहानी पूर्ण होते ही राजकुमारी पाषाण की हो गयी। अब राजकुमार हंसों की सहायता से फिर से पाषाण नगरी में पहुँचता है, लेकिन इस बार वह पूर्णतः आबाद मिलता है, राजकुमारी से मिलकर दोनो आनन्दपूर्वक रहने लगते हैं।[1] आगे इस लोककथा में राजकुमारी इन्द्र के शाप से बारह-मन का पत्थर होकर समुद्र में गिरती है, जिसे राजकुमार सूस मछली

1- पाषाण नगरी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-12 से 15 तक

से समुद्र के किनारे निकलवा लेता है, जिस पर सूर्य का प्रकाश पड़ते ही राजकुमारी पुनः अपने पहले रूप मे आ जाती है।'[1]

इस कथाभिप्राय से सम्बन्धित कथाएँ अन्य बोलियों में भी मिलती हैं। 'सती'[2] नामक ब्रज की लोककथा में एक सेठ के सात लड़कों को उसका गुरू जादू से सर्प बनकर शादी होने के बाद सुहागरात को ही डॅसकर मार डालता है; जिसमें छोटी बहू जो अत्यंत सत्यवती थी, अपने पति के शव को नाव में रखकर, साथ में एक काली बिल्ली व दूध से भरा मटका लेकर इन्द्रपुरी को चल दी, जिससे इन्द्रासन डोलने लगा। रास्ते में एक गॉव के निकट कुछ लोग नदी मे नहा रहे थे, एक आदमी ने उस बहू को देखकर कहा कि सुन्दरी तू मुर्दे पर क्यों जान दे रही है, मेरे साथ चलकर सुख से रह। बहू को बडा क्रोध आ,उसने चूल्लू में गंगाजल लेकर उस आदमी को शाप देते हुए कहा कि दुष्ट तू पत्थर का होकर यही मेरी बाट देखना, वह पत्थर का हो गया। आगे वह काली बिल्ली को लाश की रखवाली के लिए नाव पर छोड़कर एक धोबिन के यहाँ जाकर रहने लगी, जो राजा इन्द्र के कपड़े धोती थी। एक बार मना करने पर भी उसने ऐसे साफ कपड़े धोये, जिसे देखकर राजा इन्द्र ने उसे इन्द्रलोक बुलवाया तथा कहा कि हम तेरे काम से खुश है, जो चाहे सो मॉग ले। बहू ने त्रिवाचा हराकर अपनी छः जिठानियो के सुहाग की भीख मॉगी। इन्द्र ने स्वर्गलोक से सेठ के छः बेटों की हड्डियाँ मंगवाई और उन पर अमृत छिड़ककर उन्हें जिन्दा कर दिया तथा थोडा सा अमृत बहू को भी दिया और कहा कि इसे अपने पति पर छिड़कलेना। इन्द्र की सहायता से धूर्त गुरू को खत्म करवाके वह नाव के पास आयी और पति के मृत शरीर पर अमृत छिड़का जिससे वह पुन. जीवित हो उठा।' इस लोककथा में इन्द्र के वरदान के साथ स्त्री द्वारा शाप देने का भी वर्णन मिलता है।

1- पाषाण नगरी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-16 से 18 तक

2- पुण्य की जड हरी, आदर्शकुमारी, पृ0-18 से 25

'वीर विक्रमादित्य'[1] बुन्देली लोककथा में, 'राजा विक्रमादित्य एक ब्राह्मणी को पुनः जिलाने के लिए अमृत की खोज में निकलकर दानी राजा कर्ण के यहाँ जाकर नौकरी करने लगे। इनका काम प्रतिदिन रात को बारह बजे राजा कर्ण को जगाना था; उन्होने राजा कर्ण को जगाया, वे पूजन की सामग्री लेकर नगर से दूर निर्जन वन में देवी के मन्दिर में पहुँचे। मन्दिर के समीप तालाब में स्नान करके राजा कर्ण ने मन्दिर में आकर देवी की पूजा की, फिर मन्दिर के सामने एक बड़ी भट्ठी पर खौलते तेल से भरे हुए कड़ाह पर कूद पड़े। जब उनका शरीर चुर गया तब देवी प्रकट हुई तथा राजा कर्ण के शरीर को कड़ाहे से निकाल कर भोजन किया। फिर बची हुई हड्डियों को इकट्ठी करके अमृत छिडका, जिससे राजा कर्ण पुनः जीवित हो उठे। देवी ने खलांत से सवा मन सोना निकालकर राजा कर्ण को दिया, जिसे लेकर राजा कर्ण घर आये तथा उसे याचकों को दान कर दिया। राजा कर्ण का यह प्रतिदिन का नियम था। एक दिन राजा विक्रमादित्य यह सब छिपकर देख लेते है तथा अगली रात अपने वीर राजा कर्ण पर छोड़कर उन्हें आज्ञा दी कि वे उनकी नींद न खुलने दें। आधीरात होते ही वे देवी के मन्दिर में पहुँचे, स्नान करके देवी की पूजा की फिर अपनी देह को चाकू से चीरकर मेवा-केसर आदि भरकर कड़ाही मे कूद पडे। देवी ने प्रकट होकर भोजन किया तथा अधिक तृप्त होकर मनचाहा वरदान माँगने को कहा। राजा विक्रमादित्य ने त्रिवाचा हराकर उनसे अमृत का घड़ा व सोना बनाने का खलांत माँगा तथा उनसे इस स्थान को छोड़कर अन्यत्र चली जाने को कहा। देवी वरदान में मांगी चीजें देकर चली गयी तथा राजा विक्रमादित्य ने वीरों को बुलवाकर मन्दिर का नामोनिशान मिटवा दिया। सुबह जब राजा कर्ण जगे तो वहाँ का हाल देखकर आश्चर्यचकित रह गये तथा सोना न मिलने पर दुखित होकर घर लौट आये। याचक गणों के इकट्ठा होने पर राजा विक्रमादित्य ने उन्हें सोना बनाने का खलांत देकर कहा आप को अब प्रतिदिन अपने शरीर को कड़ाह में चुराकर कष्ट देने की जरूरत नहीं है, आप इससे सेना बनाकर याचकों को दीजिए। इसके बाद अपने राज्य में आकर राजा

1- पाषाण नगरी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-48 से 53 तक

विक्रमादित्य ने ब्राह्मणी के मृत शरीर पर अमृत छिड़ककर उसे जीवित कर दिया।'

स्वयं संग्रहीत 'अपना-अपना भाग्य'[1] बुन्देली लोककथाओ में, 'छोटा राजकुमार दूसरे राजा के राज्य मे जाकर लाख टके रोज पर नौकरी करता है तथा जो काम किसी से न हो सकेगा, वह करने को कहता है। एक दिन रात्रि के समय नगर के बाहर स्थित देवी के मन्दिर मे से देवी बूढ़ी स्त्री का वेश धारण करके नगर के पास आकर रोने लगी। राजा ने जब रोना सुना तो इस बात का पता लगाने के लिए लखटकिया राजकुमार को भेजा, उसने बूढ़ी स्त्री का पीछा किया तथा उससे रोने का कारण पूछा तो उसने बताया कि आज इस नगर का धर्मात्मा राजा मर जावेगा। उपाय पूछने पर उसने कहा कि तुरन्त पैदा हुए लड़के की बलि देवी को दिया जाय तो राजा बच सकता है। लखटकिया अपने घर में पैदा हुए बच्चे को लेकर मन्दिर मे पहुँचा तथा तलवार से उसका सिर काटकर देवी को अर्पित कर दिया। देवी ने कहा कि राजा की उम्र पच्चीस वर्ष हो गयी तथा एक बलिदान और होने पर पच्चीस वर्ष और बढ़ जायेगी। इस पर लखटकिया ने अपनी स्त्री का सिर काटकर देवी को अर्पित कर दिया। अब राजा की उम्र पचास वर्ष हो गयी तथा एक बलिदान और दिया जाय तो पचहत्तर वर्ष हो जायेगी। अब लखटकिया अपना सिर स्वयं काटने लगा,जिससे देवी ने प्रकट होकर उसका हाथ पकड़ लिया तथा वरदान माँगने को कहा। लखटकिया ने अपनी पत्नी व पुत्र को पुनः जीवित हो जाने को कहा, जो देवी के वरदान से पुनः जीवित हो गये। राजा भी यह सब छिपकर देख रहा था, उसने लखटकिया पर प्रसन्न होकर, उसके साथ अपनी लड़की की शादी करके उसे पूरा राज्य सौंप कर जंगल को तपस्या करने चला गया।'

अलौकिक शक्ति सम्पन्न व्यक्तियों में, साधु द्वारा वरदान देने की अनेक लोककथायें मिलती हैं। 'कंजूस की फजीहत'[2] बुन्देली लोककथा में, 'नर्मदा किनारे एक साधु रहता

1- अपना-अपना भाग्य, कथक्कड- रघुवीर सिंह, संग्रह क्रमाक-5, (अप्रकाशित)

2- केतकी के फूल, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-97 से 101 तक

था, जिसे लोग मौजी बाबा कहा करते थे। वह सिद्ध था तथा जो कह देता था, वही हो जाता था। एक दिन बाबा घूमते-घूमते रात में ठहरने के लिए एक गाँव में पहुँचा तथा एक बड़ी हवेली को देखकर उसके मालिक के पास जाकर रात-भर टिकने की जगह देने को कहा। लेकिन मालिक बड़ा कंजूस था, उसने कहा कि बिना जान-पहिचान के आदमी को मैं अपने घर नहीं ठहराता हूँ। रात अधिक हो गयी थी, बाबा जी कठिनाई से लाठी के सहारे आगे बढ़े। इतने में हवेली के सामने स्थित घास की झोपड़ी से एक व्यक्ति निकला तथा बाबा जी को अपने घर ले जाकर उनकी खूब सेवा की। सुबह चलते समय बाबा जी ने प्रसन्न होकर उससे वरदान मांगने को कहा। तो उस गरीब आदमी ने कहा कि मेरे घर में जो कोई आवे उसकी आवभगत मैं अच्छी तरह से कर सकूँ, यही मुझे वरदान दीजिए। बाबाजी ने देखा कि इसने अपने लिए तो कुछ नही मांगा। अत: वे बोले कि मैं तुम्हे दो वरदान और देता हूँ, आज सूर्य निकलते-निकलते तेरी झोपड़ी अच्छी महल बन जाय और सब तरह से धन-धान्य से परिपूर्ण हो जाय। देखते-ही-देखते झोपड़ी की जगह महल बन गया और उसमे बहुत से हाथी-घोड़े , धन-दौलत , नौकर-चाकर दिखाई पडने लगे। इधर सुबह जब हवेली के कंजूस मालिक ने यह सब देखा तो अपनी लालची पत्नी के कहने पर वह घोड़े पर बैठकर बाबा जी को मनाने चला पड़ा। थोड़ी दूर चलने पर बाबाजी मिल गये, उनके चरणों पर गिरकर कजूस ने माफी मांगी तथा अपने घर चलने को कहा। बाबाजी ने फिर आने को कहने पर उसने अपने पड़ोसी की तरह तीन इच्छाएँ पूरी करने की प्रार्थना की। हारकर बाबाजी ने कहा कि जा मेरे कहने से तेरी तीन पहली इच्छाए पूर्ण होगी। वरदान पाकर कंजूस अत्यंत प्रसनन होकर घोड़ा दौड़ाते हुए घर को चला। रास्ते मे कड़ी धूप होने के कारण घोड़ा तेज नहीं दौड़ पा रहा था, जबकि वह बहुत जल्द घर पहुँचना चाहता था। उसने खीझकर कहा कि ऐसा घोड़ा मर जाय तो अच्छा था। ऐसा कहना था कि घोड़ा धड़ाम से गिरकर मर गया। कंजूस होने के कारण झट मरे घोड़े की जीन व लगाम निकालकर, उन्हें अपनी पीठ पर रखके वह घर को चला। चलते-चलते वह थक गया, प्यास लगी लेकिन पास में कुँआ नहीं दिखा। जल्दी-जल्दी घर की ओर जाते हुए उसके मन में विचार आया कि देखो मैं तो कैसी आफत में पड़ा हूँ और मेरी स्त्री घर मे आराम कर रही होगी। यदि उसकी पीठ पर यह जीन व लगाम कस जाय

तो उसे मालूम पडे। यह विचार आते ही जीन व लगाम गायब हो गयी और जाकर उसकी स्त्री के पीठ में चिपक गयी। वह तकलीफ के मारे चिल्ला-चिल्लाकर रोने लगी। घर आकर स्त्री को इस दशा में देखने पर पहले तो उसे हंसी आयी पर बाद में उसकी दशा पर लाचार होकर उसने तीसरी इच्छा की जिससे जीन व लगाम स्त्री के शरीर से निकल गये। इस तरह साधु बाबा के दिए गये तीनों वरदान पूर्ण हो गये परन्तु उन लोगों को दुख, क्रोध, फजीहत और घोडे की हानि के सिवा कुछ नही मिला।'

'केतकी के फूल'[1] बुन्देली लोककथा में, 'बहेलियाँ का लड़का केतकी के फूल की खोज में निकलता है तथा उड़नखटोले पर बैठकर सात समुन्दर पार टापू पर पहुँचता है, जहाँ एक साधु रहता है। खटोले से उतरकर वह साधु के पास पहुँचा तो देखा कि साधु समाधि लगाये बैठा है। लड़के ने साधु के आश्रम की सफाई की, जंगल से लकड़ी लाकर धूनी जला दी, पास के नाले से पानी लाकर फुलवाड़ी को सींचा। बस रोज यही काम करता और जंगल से फल-मूल खाकर पड़ा रहता। छः महीने बाद साधु की समाधि खुली, आश्रम को साफ-सुथरा और हरा-भरा देखकर वह प्रसन्न हुआ तथा लड़के से वर मांगने को कहा। लडके ने हाथ जोड़कर कहा कि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो मुझे केतकी के फूल मिलने का उपाय बतला दीजिए।' आगे साधु द्वारा बतलाई गयी युक्ति की सहायता से लड़का अनेक कष्टो को पार करते हुए सोलह साल की रूपवान युवती के पास पहुँचता है, जिसके हँसते ही बाग में केतकी के फूलों की वर्षा होने लगती है।

इसी तरह 'कुमारी अनारमती'[2] बुन्देली लोककथा मे भी, 'छोटा राजकुमार भौजाई द्वारा ताना देने पर कुमारी अनारमती को लाने का प्रण करके घर से निकलता है तथा रास्ते मे घोर जंगल मे साधु की सेवा करता है। छः महीने बाद साधु की समाधि खुलने पर उसने प्रसन्न होकर वरदान मांगने को कहा, जिस पर राजकुमार अनारमती के मिलने का उपाय पूछता है। साधु कहता है कि बच्चे तेरी इच्छा पूर्ण होगी।' आगे वह साधु द्वारा बतायी

1- केतकी के फूल, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-6

2- [illegible] शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-6[illegible]

गयी युक्ति से कुमारी अनारमती को प्राप्त करता है।

इस तरह, बुन्देली लोककथाओ में साधु की सेवा करके उससे वरदान के रूप में मनचाही वस्तु, प्राय. कोई सुन्दर राजकुमारी की प्राप्ति का उपाय मालूम करने से सम्बंधित वर्णन अधिक मिलते है। मित्र हो तो ऐसा[1] लोककथा में सिंहलद्वीप की रानी पद्मिनी की बेटी शैलकुमारी के मिलने का आर्शीवाद मांगा गया है। 'भाग्य और पुरुषार्थ'[2] लोककथा में लखटकिया इसी तरह सात साधुओं की सेवा करके उनसे वरदान के रूप में नौलाख की सोने की पायलिया मागता है, जिसे पाने के लिए सात डाइनों द्वारा रक्षित सोलहवर्ष की सुन्दर लड़की के पास पहुँच जाता है। 'सब्जपरी'[3] लोककथा में, राजकुमार साधु से वरदान के रूप में सब्जपरी का पता और मिलने का उपाय पूछता है। लेकिन 'राजपुत्र को ज्ञान प्राप्ति और साधु के तीन उपदेश'[4] नामक भोजपुरी लोककथा में राजकुमार साधु से वरदान के रूप मे ज्ञान मॉगता है। इस पर साधु कहता है कि तुमने कुछ न मांगकर सब कुछ माग लिया। मैं तुम्हें तीन बातों का ज्ञान देता हूँ। पहली, रास्ते में अकेला नहीं चलना चाहिए। दूसरी, किसी के दिए हुए आसन पर बिना जॉच-पड़ताल किए नहीं बैठना चाहिए। तीसरी, परदेश में यदि कोई अनजान मनुष्य कुछ खाने को दे तो उसमें से थोड़ा किसी जानवर को पहले खिलाकर तब खाना चाहिए। कथा में आगे राजपुत्र साधु द्वारा दी गयी इन तीनों ज्ञान की बातो की क्रमशः आजमाइश करता है, जो खरी उतरती है तथा उनसे राजपुत्र के प्राणो की रक्षा होती है।

1- पाषाण-नगरी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-9।

2- पाषाण नगरी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-107

3- बुन्देली लोककहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-17

4- हमारी लोककथाए, शिवसहायत चतुर्वेदी, ईश्वरी प्रसाद गुप्त, पृ0-103

अनेक लोककथाओं मे किसी स्त्री द्वारा शाप देने के वर्णन मिलते हैं। 'शाप'[1] नामक ब्रज की लोककथा मे, 'मधुवन का राजा बड़ा पराक्रमी था। एक बार उसके राज्य मे अकाल पड़ा, जिसमें सब कुछ खत्म हो गया, लोग मधुवन छोड़कर भाग गये लेकिन राजा वहीं डटा रहा। एक दिन भूख से तड़पती हुई एक भिखारिन वहाँ आई, राजा ने तुरन्त अपना भोजन उसे दिया, अब वह स्त्री राजा से विवाह करने का आग्रह करने लगी। राजा को बड़ा गुस्सा आया, उसने भिखारिन को वहाँ से भाग जाने को कहा। भिखारिन का दिल टूट गया, वह उसी समय एक सुन्दर बन गयी तथा राजा को शाप दिया कि तूने मेरे दिल को ठेस पहुँचाई है, तू कभी सुख से नहीं रह सकेगा। आज तू जिसका तिरस्कार कर रहा है, कल उसी की याद मे तड़पेगा। तू आदमी नही पशु है। यह कहकर वह सुन्दरी अंतर्धान हो गयी। राजा उसी समय आदमी से शेर बन गया और व्याकुल होकर इधर-उधर दहाड़ने लगा। यह देखकर कैलाश पर्वत पर बैठे महादेव जी हँसने लगे। पार्वती को यह अच्छा न लगा। उन्होंने कहा कि ऐसी कठोर परीक्षा नहीं लेनी चाहिए, आप इस बेचारे सिंह को शाप से छुड़ा दें। महादेव जी बोले कि अब जो होना था वह हो चुका। बारह बरस बाद जब उसी स्त्री के आँसू इस सिह पर गिरेंगे तो यह पहले जैसा आदमी हो जायेगा। आगे वह स्त्री सौदागर के यहाँ छोटी बेटी के रूप में जन्म लेती है तथा पिता द्वारा मधुवन का पता लगा लेने पर वह बारह वर्ष बाद वहाँ आती है, शेर नदी के किनारे बेहोश पड़ा आखिरी सांसें गिन रहा था, वह दौड़कर उसके पास पहुँचकर उससे लिपटकर रोने लगी, जिससे आँसू गिरने से शेर सुन्दर राजकुमार बन गया तथा लड़की से व्याह कर लिया।'

इसी तरह, 'प्रतिव्रता'[2] बुन्देली लोककथा में, 'ब्राह्मण का लड़का अपनी पत्नी को विदा कराने ससुराल जाता है। रास्ते में पण्डित को हाथ दिखाने से उसे मालूम होता है कि पूर्व जन्म में सती द्वारा दिए गये शाप के कारण वह अपनी पत्नी से प्रथम मिलन

के समय गधे के रूप में बदल जायेगा। पण्डित ने यह भी कहा कि सती के शाप को कोई नहीं मेट सकता, इसलिए अपनी करनी का फल तुम्हें भोगना ही पड़ेगा। ससुराल पहुँचकर पत्नी का प्रथम दर्शन करते ही वह गधा बन जाता है, उसकी पतिव्रता पत्नी उसे लेकर निकल पड़ती है, रास्ते में उसकी सत्यक्रिया से नगर के राजा का तालाब पानी से भर जाता है। जिससे प्रसन्न होकर राजा व प्रजा सभी उसे शाप से मुक्ति दिलवाने के लिए भगवान सूर्य की प्रार्थना करते हैं। प्रार्थना समाप्त होते ही ब्राह्मण का लड़का गधे से पुनः मनुष्य रूप में आ जाता है तथा शाप का प्रभाव जाता रहता है।' इस लोककथा में पतिव्रता स्त्री के प्रयास से शाप मुक्ति होते दिखलाया गया है।

इस तरह के उदाहरण अन्य देशों की लोककथाओं में भी मिलते हैं; जैसे टर्की की इस 'शाप बना वरदान'[1] लोककथा में, 'टर्की के राजा के कोई सन्तान नहीं थी, उसे एक पुत्र की चाहत थी, लेकिन बहुत दिनों बाद उसके एक लड़की पैदा हुई। राजा की खुशी के लिए रानी ने दासी की सलाह पर उसे पुत्र ही घोषित किया। सोलह वर्ष का होने पर जब उसके विवाह करने का समय हुआ तो वह घोड़े पर बैठकर जंगल में गया तथा वहाँ एक मालिक के यहाँ रसोइए का काम करने लगा। मालिक की बड़ी लड़की उस पर मोहित हो गयी तथा लड़की ने अपने पिता से सलाह लेकर उसे जादुई शीशा लेने भेजा। राजकुमार बनी राजकुमारी घोड़े की सहायता से बूढ़ी जादूगरनी के पास शीशा लेने पहुँची, मौका पाकर वह शीशा लेकर भागी। इसी समय गुस्से में बुढ़िया उसे शाप देती हुई बोली कि यदि तुम लड़का हो तो लड़की बन जाओ और यदि लड़की हो तो लड़का बन जाओ। बुढ़िया के ऐसा कहते ही राजकुमारी लड़का बन गयी। शाप उसके लिए वरदान बन गया तथा उसकी खुशी का ठिकाना न रहा।'

'महाभारत' में, 'इन्द्रलोक की अप्सरा अर्जुन के पास कामवश होकर आती है, लेकिन अर्जुन ने पुरूवंश की जननी होने के कारण उन्हें माता समान पूज्यनीया ठहराकर वापस चली जाने को कहा। जिससे क्रोधित हो उसने अर्जुन को शाप देते हुए कहा कि

विचार हिजड़ों के समान होगा।'[1] आगे, पाण्डवों के एक वर्ष के अज्ञातवास के समय उर्वशी का यही शाप अर्जुन के लिए वरदान सिद्ध होता है जब अर्जुन राजा विराट के यहाँ बृहन्नला के रूप में राजकुमारी उत्तरा की संगीत शिक्षक नियुक्त होती है। यहाँ एक वर्ष तक नर्तक वेष और नपुंसक भाव से रहकर अर्जुन उर्वशी के शाप को पूरा करके पुनः अपना पुरुषत्व प्राप्त कर लेते हैं।

निष्कर्षतः 'वरदान एवं शाप' कथाभिप्राय की अवधारणा, अलौकिक-शक्तियों के लोकविश्वासों पर आधारित है तथा यह कथा कहने वाले (कथक्कड़) के लिए बहुत ही उपयोगी सिद्ध होती है। कथक्कड़ को जहाँ कही भी कथा को दूसरी दिशा में मोड़ना होता है, उसे इस अभिप्राय से सहायता मिल जाती है। जहाँ वह नायक-नायिका के दुख-भरे जीवन को सुखमय बनाने के लिए 'वरदान' का उपयोग करता है वहीं उनके सामान्य सुखमय जीवन मे विषमता लाने के लिए उन्हें 'शाप' का पात्र बना देता है। जिसमें कभी तो कोई पात्र जान बूझकर ऐसा अपराध करता है , जिसके कारण उसे शाप मिलता है और कभी अनजाने में ही उससे कोई अपराध हो जाने पर शाप का फल भुगतना पड़ता है। चरित्र-चित्रण की दृष्टि से भी यह अभिप्राय विशेष उपयोगी सिद्ध हुआ है। लोककथाओं मे प्राय. सज्जन व्यक्ति अपने गुणों व साधना से 'वरदान' प्राप्त करके सुखी होता है। लेकिन दुष्ट प्रवृत्ति का व्यक्ति वरदान प्राप्त करके भी सुखी नहीं रह पाता है तथा वही वरदान उसके लिए शाप बनकर पतन का कारण बनता है। यह अभिप्राय भारतीय विश्वास से जुडा है। दुष्ट व्यक्ति को प्राप्त वरदान उसकी दुष्ट प्रकृति के कारण शाप बन जाता है।

लोककथाओं में इस अभिप्राय का प्रयोग अत्यन्त व्यापक रूप में हुआ है। अनेक कथाओ का औचित्य ही इसी के द्वारा सिद्ध होता है, जिससे कथा की घटनाओ में रोमांचकता का समावेश हो जाता है । इस अभिप्राय का नैतिक-शिक्षा की दृष्टि से भी महत्व है।

1- महाभारत (द्वितीय खण्ड), वन पर्व, पृ0- 1080 व 1081

*****

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

अध्याय - दस

'प्रेममूलक अभिप्राय'-

(1) स्वप्न-दर्शन-जन्य प्रेम

(2) चित्र-दर्शन-जन्य प्रेम

(3) मूर्ति-दर्शन-जन्य प्रेम

(4) रूप-गुण-श्रवण-जन्य प्रेम

(क) प्रेम-सन्देश-जन्य प्रेम

(ख) साहचर्य-जन्य प्रेम

(5) सांकेतिक-भाषा-जन्य प्रेम ।

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

'प्रेम' एक शाश्वत सत्य है, जो सृष्टि रचना के साथ ही विद्यमान रहा है। प्रेम ब्रह्म के सदृश निराकार होता है। ठीक उसी निराकार की भाँति जो जिस रूप मे चाहता है उसे उसी रूप मे प्राप्त होता है। प्रेम की प्रतीति सार्वकालिक तथा सर्वव्यापक है, किन्तु उसकी अभिव्यक्ति और सहायक साधनों का स्वरूप विभिन्न युगों में बदलता रहा है। प्रायः प्रेमी-प्रेमिका का एक दूसरे को देखकर अथवा साहचर्यवश परस्पर प्रेम करना सभी युगों का साधारण नियम रहा है। प्रेमी-प्रेमिकाओं के प्रेम-सम्बंधों के तमाम किस्से मिथकीय गरिमा से मण्डित होकर अनादिकाल से लोगों की ज़ुबान पर चढ़े रहे हैं। इनमें से कई तो निखालिस इतिहास की घटनाएं हैं, जबकि कई साहित्य के पन्नों से उतरकर जनमानस में जा पैठी हैं।

भारतीय परिनिष्ठित साहित्य एवं लोकसाहित्य, दोनों में नायक-नायिका के 'पूर्वानुराग' को बहुत अधिक महत्व दिया गया है। प्रमियों के मन में अपरिचित के प्रति पूर्वानुराग उत्पन्न करने के लिए कथाकारों ने 'रूप-गुण-श्रवण-जन्य आकर्षण' के साथ स्वप्न, चित्र, संकेत और मूति-दर्शन-जन्य प्रेम का सहारा लिया है। भारतीय कथाओं में बार-बार प्रयुक्त होने वाले इस तरह के वर्णन 'प्रेममूलक अभिप्राय' कहलाते हैं।

प्रेममूलक अभिप्राय को निम्न भागों में बाँटा जा सकता है -

(1) स्वप्न-दर्शन-जन्य प्रेम

(2) चित्र-दर्शन-जन्य प्रेम

(3) मूर्ति-दर्शन-जन्य प्रेम

(4) रूप-गुण-श्रवण-जन्य प्रेम

(क) प्रेम-सन्देश-जन्य प्रेम

(ख) साहचर्य-जन्य प्रेम

(5) सांकेतिक-भाषा-जन्य प्रेम ।

'स्वप्न-दर्शन-जन्य प्रेम' का प्रचलित रूप चमत्कारिक स्वप्न-दर्शन है। 'कथासरित्सागर' में अनेक स्थानों पर इसका प्रयोग मिलता है। 'उषा और अनिरुद्ध' की कथा में, 'बाणासुर की कन्या उषा गौरी की आराधना करके पति-प्राप्ति का वरदान प्राप्त करती है कि स्वप्न में जिसका संग प्राप्त करोगी, वही तुम्हारा पति होगा। एक बार उसने देवकुमार के समान किसी को स्वप्न मे देखा, गान्धर्व विधि से उसके साथ विवाह किया और प्रातः काल सोकर उठी। उठने पर स्वप्न में देखे हुए पति को न देखकर और सम्भोग के लक्षणों को देखकर गौरी के वर को स्मरण करके वह आतंक और भय से व्याकुल हो गयी तथा अपनी योगेश्वरी सखी चित्रलेखा से सब समाचार कह दिया। लेकिन चित्रलेखा भी उसके नाम-धाम आदि का परिचय न जानती हुई उषा से बोली कि यह देवी पार्वती के वर का प्रभाव है, इसमें क्या कहा जा सकता है। यदि तू उसे नहीं पहचानती है, तो मैं संसार के सुन्दर देवताओं, असुरों और मनुष्यों के चित्र बनाती हूँ उनमें तू उसे पहचान कर दिखा। चित्रलेखा ने सभी सुन्दर व्यक्तियों के चित्र बनाए। उषा ने काँपती हुई अंगुली से द्वारकापुरी के यदुवंशीय अनिरुद्ध को पहचान लिया। यह देखकर चित्रलेखा बोली कि सखि तू धन्य है, जो तूने भगवान कृष्ण के पौत्र अनिरुद्ध को अपना पति प्राप्त किया।'[1] इस कथा मे स्वप्न-दर्शन से प्रेम का प्रारम्भ दिखलाया गया है, जिसमें चित्रदर्शन सहायक के रूप में है।

'कथासरित्सागर' में ही राजा विक्रमादित्य की कथा मे, 'राजा विक्रमादित्य एक सुन्दरी का चित्र पहले देखते है, फिर सपने में उसी रूप की सुन्दरी को देखकर उस पर मोहित हो जाते है। कथा के अनुसार ' एक चित्रकार, दूर के बटोही द्वारा दिए गये अद्भुत रूपवाली सुन्दरी का चित्र राजा को उपहार में देता है। जिसे देखते ही विस्मित हो राजा ने कहा कि यह तुम्हारी उरेही रेखाए नहीं हैं, यह तो विश्वकर्मा का लेख है। यह सुनकर चित्रकार ने राजा को उसका हाल सुना दिया। तब विक्रमादित्य उसी चित्र

1- कथासरित्सागर (प्रथम खण्ड), षष्ठ लम्बक, पंचम तरंग, पृ0-705 व 707

को सदा एकटक दृष्टि से देखते-देखते , एक दिन सपने में किसी अन्य द्वीप में ठीक उसी रूप की सुन्दरी को देखा, देखते ही राजा भी उत्कण्ठित हो गये और वह सुन्दरी भी। किन्तु ज्यों ही राजा उससे मिलने लगे, त्योंही पहरेदारों ने रात बीतने पर उन्हें जगा दिया। जिससे राजा का सपने में उस सुन्दरी के साथ संगम का सुख भंग हो गया तथा वे कामज्वर मे जलने लगे।'[1]

कथासरित्सागर में वर्णित इन दोनों ही कथाओं के प्रसंग में यह उल्लेखनीय है कि जहाँ एक तरफ प्रेमी जिस स्वप्न को देखता है, वहीं दूसरी तरफ प्रेमिका भी उसी तरह का स्वप्न देखती है। इसे दैवयोग ही कहा जा सकता है, जिसके लिए स्वप्न की सत्यता में विश्वास करने के अलावा अन्य किसी आधार की अपेक्षा नहीं होती है। इस तरह, इन दोनों ही कथाओं में प्रेमी-युगल एक साथ, एक ही तरह के स्वप्न देखते हैं, जिससे उनके बीच परस्पर प्रेम का प्रारम्भ होता है।

स्वप्नदर्शन के माध्यम से प्रेमारम्भ की परम्परा लोककथाओं में प्राप्त होती है। 'जलकन्या' बुन्देली लोककथा में, 'एक राजा अपने महल में रात को सपना देखता है कि एक बड़ा जंगल है, जंगल के बीच में एक तालाब है, तालाब के किनारे एक मन्दिर है, मन्दिर के भीतर एक भोंहरा है। भोंहरे में घुसे तो नौ सीढ़ियाँ उतरने पर उन्हें एक कुंआ दिखाई दिया, जिसमें वे कूद पड़े तथा नीचे जाकर देखा कि एक सुन्दर बाग है, बाग के बीच में एक महल बना है, जिसमें एक सोलह वर्ष की रूपवती कन्या खड़ी है। राजा इस प्रकार सपना देख रहे थे कि महल के पास बनी झोपड़ी में से जसोंदी की सारंगी बज उठी, जिससे राजा का स्वप्न टूट गया। राजा को बड़ा क्रोध आया उसने जल्लादों को हुक्म दिया कि जसोंदी का सिर काट डालो और आँखें मेरे सामने पेश करो। जल्लादों ने जसोंदी के गिड़गिड़ाने पर उसे जंगल में छोड़ दिया तथा उसकी जगह बकरे की आँखें निकालकर

1- कथासरित्सागर (तृतीय खण्ड), अष्टादश लम्बक, तृतीय तरंग, पृ0 - 117 व 119

राजा के सामने पेश कर दी। अब एक रात राजा पुनः सोते समय वही सपना देखने लगा तथा उन्होंने देखा कि उस लड़की के साथ उनका विवाह हो गया है। स्वप्न पूरा होने पर राजा की नींद खुल गयी। जागने पर राजा ने देखा तो कुछ नही था। अतः वे जसोंदी को व्यर्थ मरवा डालने की सोचकर उदास रहने लगे। इधर जसोंदी जल्लादों के हाथों से छूटकर जंगल में उसी सपने वाले तालाब के किनारे पहुँच गया तथा रात होने पर डर के मारे एक पेड़ पर चढ़ गया। आधी रात के समय चन्द्रमा का उजेला फैल जाने पर, एक सोलह बरस की बहुत रूपवती कन्या तालाब पर आई, स्नान करके मन्दिर गयी, देवता की पूजा की और सात मुट्ठी आँटा चढ़ाकर भोंहरे के मार्ग से वापस चली गयी। उसके साथ एक कुत्ता आया था, जो चढ़ाया हुआ आटा खाकर उसी मार्ग से चला गया। जसोंदी एक दिन जनकन्या के वापस जाने पर हिम्मत करके नीचे उतरा तथा आँटा समेटकर, लकड़ी बीनकर रोटियाँ बनाई। इसी समय वह कुत्ता रोटियाँ लेकर भागा, जिसकी पूँछ जसोंदी ने पकड़ ली, कुत्ता जसोंदी को घसीटता हुआ भोंहरे की राह से जाकर कुएं में कूद पड़ा। भीतर पहुँचकर जसोंदी ने एक सुन्दर बाग देखा, कुत्ता भागकर जलकन्या के पास खड़ा हो गया। अब जलकन्या ने जसोंदी को अपने लिए भगवान का भेजा वर समझकर उसका आदर-सत्कार किया, लेकिन यह समझकर कि वह गरीब खान-दान का है, उससे विवाह करने का निश्चय त्याग दिया। रात के समय जब बेटी के साथ कुत्ता बाहर जाने लगा तो जसोंदी उसकी पूँछ पकड़कर तालाब के किनारे आ गया। अब जसोंदी ने राजा को सपने वाले स्थान को लाकर दिखलाने का निश्चय किया। पहले तो राजा जसोंदी को देखकर भौचक्का रह गया, लेकिन सब कुछ मालूम हो जाने पर सवेरा होते ही वह घोड़े पर बैठकर जसोंदी के साथ चल पड़ा तथा तालाब के किनारे पहुँचकर दोनों ही संध्या के समय पेड़ पर चढ़कर बैठ गये। आधी रात को पेंजनों की झंकार सुनाई दी, राजा ध्यानपूर्वक देखने लगा, जलकन्या अपने रूप का प्रकाश फैलाती हुई तालाब के पास आ पहुँची, जिसे देखते ही राजा को मूर्च्छा आ गयी। कुछ समय बाद राजा होश में आकर कहने लगा कि बस यही है इसी को मैंने सपने में देखा था, कैसी भली लगती है।[1] आगे जसोंदी द्वारा बतायी

1- हमारी लोककथायें, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-8 से 25 तक

गयी युक्ति से दोनों जलकन्या के पास पहुँच जाते हैं। जहाँ जलकन्या उनका खूब सत्कार करती है तथा राजा की परीक्षा लेने के बाद उसका मन भर जाता है अर्थात् वह राजा पर मोहित हो जाती है। फिर दोनों का विवाह हो जाता है। इस तरह राजा के सपने की बात सच होती है।

'जलकन्या' लोककथा में राजा के सपने की बात उसके सेवक के माध्यम से सच होती है। लेकिन 'चाँदी का चबूतरा सोने का पेड़'[1] नामक मध्यदेश की लोककथा में, अपने पिता द्वारा देखे गये सपने को छोटा राजकुमार सच करके दिखाता है साथ में सुन्दरियों को प्राप्त करता है। कथा के अनुसार 'चुनार शहर के राजा ने एक विचित्र सपना देखा कि एक चाँदी का चबूतरा है ओर उस पर सोने का पेड़ लगा है। पेड़ पर एक अप्सरा बैठी मधुर बाँसुरी बजा रही है। चबूतरे पर कई मनमोहक परियाँ नृत्य कर रही हैं। चबूतरे के चारों ओर जमीन पर रानी चौबोलका अपने श्यामकर्ण घोड़े पर बैठी घोड़ा नचा रही है। छोटा राजकुमार अपने भईयों द्वारा विश्वासघात किए जाने के बावजूद एक साधु की सहायता से बाँसुरी बजाने वाली अप्सरा बंसीवाला को प्राप्त कर लेता है। बंसीवाला इन्द्र के दरबार की परी है। बंसीवाला के कहने पर राजकुमार उसकी बड़ी बहन रानी चौबोलका को भी उसके श्यामकर्ण घोड़े सहित ले आता है। अब राजकुमार के पिता के सामने राजसी डोली से उतरकर बंसीवाला अपनी बांसुरी बजाती है, जिससे चकाचौंध सी हुई तथा मैदान में एक दूध सा चमकता चाँदी का चबूतरा और उस पर सोने का पेड़ आ जाता है। पेड़ पर बंसीवाला बाँसुरी बजा रही है और चबूतरे पर परियाँ नृत्य कर रही हैं। रानी चौबोलका अपने श्यामकर्ण घोड़े को चारों ओर नचा रही है। सभी लोग मुग्ध होकर यह चमत्कारी नृत्य देखते हैं।' इस लोककथा में यद्यपि राजकुमार भावी-प्रिया का स्वप्न में दर्शन तो नहीं करता, लेकिन स्वप्न को सच करने के प्रयास में उसे सुन्दरियों की प्राप्ति अवश्य हो जाती है।

1- बालहंस (लोककथा-विशेषांक), दिसम्बर (द्वितीय) 93, पृ0-42 से 47 तक

इसी तरह, 'सपने की खोज'[1] बुन्देली लोककथा में, राजा के देखे गये सपने को छोटा राजकुमार सच करके दिखाता है तथा साथ में सात सुन्दरियों को भी प्राप्त करता है। इस लोककथा में राजकुमार के शेष तीनों भाई उसके साथ विश्वासघात नहीं करते तथा राजकुमार अपने भाइयों को ससुराल से प्राप्त राज्य देखकर सातों रानियों के साथ पिता के राज्य में सुखपूर्वक रहने लगता है।

'रानी की चतुराई'[2] बुन्देली लोककथा में रानी सपना देखती है जिसको खोजने के लिए राजा की बहन निकलती है तथा तोता-मैना की सहायता से रानी का सपना सच करके लाती है। लेकिन इस दौरान एक राजा उससे क्रोधित होकर उसके साथ विवाह करके तीन घूँट रक्त पीने की प्रतिज्ञा करता है। संयोग से बहन की शादी उसी राजा के साथ तय हो जाती है। बहन चिन्ता से दुबली होती जाती है। रानी उससे इसका कारण पूछती है तथा मालूम होने पर विदा के समय शक्कर के शीरे से भरी मोम की पुतली पालकी में रख देती है तथा राजा की बहन को नाइन के रूप में उसके साथ कर देती है। राजा जब डोली में बैठी मोम की पुतली को अपनी रानी समझकर प्रतिज्ञावश उस पर तलवार चलाकर उसका खून पीता है तो उसे वह बहुत मीठा मालूम होता है। जिससे राजा सोचने लगता है कि जब इसका रक्त इतना मीठा था तो वह कितनी न मीठी होगी? मैंने व्यर्थ ही उसको मार डाला तथा वह स्वयं कटार निकालकर मरने का निश्चय करता है। इसी समय नाइन के वेश में उसकी रानी उसका हाथ पकड़ लेती है।'

इस तरह के वर्णनों को स्वप्न खोजने के दौरान प्रिय या प्रिया की प्राप्ति का अभिप्राय कहा जा सकता है।

1- गौने की बिदा, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-20 से 35 तक

2- पाषाण नगरी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-158 से 166 तक

'चित्र-दर्शन-जन्य प्रेम' के उदाहरण 'स्वप्न-दर्शन-जन्य प्रेम' अभिप्राय के समान ही भारतीय कथाओं में व्यापक रूप में मिलते हैं। पूर्व विवेचित 'विक्रमादित्य की कथा' में 'स्वप्न दर्शन जनित' प्रेम के आरम्भ के मूल में चित्र-दर्शन ही है। इसी प्रकार, 'उषा अनिरुद्ध की कथा' में अनिरुद्ध के नाम व देश आदि का ज्ञान उषा को चित्र के माध्यम से ही होता है। इससे स्पष्ट होता है कि ये दोनों अभिप्राय परस्पर सहायक बनकर आते हैं। लेकिन यह भी ध्यातव्य है कि कथाविधान में इन दोनों अभिप्रायों का स्वतंत्र अस्तित्व है।

'कथासरित्सागर' में, मुक्तिपुर की राजकुमारी रूपलता का राजा पृथ्वीरूप के प्रति आकर्षण और प्रेम उनका एक चित्र देखकर होता है। कथा के अनुसार 'प्रतिष्ठानपुर का अत्यंत रूपवान राजा पृथ्वीरूप ने श्रवणों से मुक्तिपुर के राजा रूपधर की पुत्री रूपलता की प्रशंसा सुनी, तथा कुमारिदत्त नामक कुशल चित्रकार को बुलाकर एक कपड़े पर अपना चित्र बनवाया, जिसे मुक्तिपुर के राजा की कन्या रूपलता को दिखलाने के लिए भेजा। मुक्तिपुर पहुँचकर चित्रकार ने राजद्वार पर उस चित्रपट को लगाकर घोषणा की कि मेरे समान कोई दूसरा योग्य चित्रकार नहीं है। राजा रूपधर के बुलवाने पर दरबार में जाकर निवेदन किया कि मैं देवों, दैत्यों और मनुष्यों में किसका चित्र बनाऊँ। यह सुन राजा ने अपनी कन्या रूपलता का चित्र बनाने को कहा। तब उस चित्रकार ने कपड़े पर रूपलता का चित्र बनाकर उसे वास्तविक रूप में दिखाया। राजा ने इस चित्र की बनावट पर प्रसन्न होकर जामाता की इच्छा से चित्रकार से पूछा कि यह बताओ, मेरी कन्या के समान रूप में सुन्दर कोई स्त्री या पुरुष है। इस पर चित्रकार ने कहा कि हाँ प्रतिष्ठानपुर का राजा पृथ्वीरूप इसके समान रूपवान है। तब राजा ने पुनः पूछा कि क्या उसका चित्र तुम्हारे पास है? चित्रकार ने राजा को पृथ्वीरूप का चित्र दिखा दिया, जिसे देखकर राजा रूपधर ने आश्चर्य के साथ कहा कि हम धन्य हैं, तथा उन्हें प्रणाम करते हैं। पिता के ऐसे वचन सुनकर और चित्र में राजा पृथ्वीरूप को देखकर उत्कंठित रूपलता चकित सी रह गयी। तदनन्तर, अपनी कन्या को काम-मोहित देखकर राजा रूपधर ने उस चित्रकार से कहा कि राजा पृथ्वीरूप इस कन्या के अनुरूप पति है। इसीलिए, मेरी इस कन्या के चित्र को

ले जाकर उन्हें दिखाओ। यदि वे उचित समझे तो मेरी कन्या का परिणय करने के लिए शीघ्र ही पधारें। अब कुमारिदत्त चित्रकार ने प्रतिष्ठानपुर आकर सब हाल सुनाया तथा चित्र-पट पर लिखा हुआ रूपलता का चित्र राजा पृथ्वीरूप को दिखाया। उस रूपलता के शरीर के चित्र को देखकर राजा मोहित हो गया तथा एकटक-चित्र को ही देखता रहा।'[1]

सामंती संस्कृति का क्षेत्र होने के कारण बुन्देली कथाओं में यह अभिप्राय व्यापक रूप में प्राप्त होता है। 'मस्तराम' बुन्देली लोककथा में 'एक राजा नगर में ऐलान करता है कि सुनते हैं, अवधपुर की रानी बहुत सुन्दर है। जो व्यक्ति उसका चित्र खींच लायेगा, उसे पाँच हजार मुहरें इनाम में दी जायेंगी। मस्तराम चित्र खींचने का बीड़ा उठाकर चल देता है तथा रास्ते में लढ़िया (कारीगर) से रानी के बाग और महल का रास्ता पूछकर बाग के बाहर जा पहुँचता है, जिसके चारों ओर ऊँची दीवारें थीं तथा बाहर से जाने का कोई मार्ग नहीं था। घोड़े को एड़ लगा दीवार को लाँघकर वह बाग में पहुँच जाता है। इसी समय मालिन आकर बोली कि परदेशी तुम कौन हो? मस्तराम ने पाँच मुहरें निकालकर मालिन को दे दिया, जिससे लोभ में आकर उसने मस्तराम को अपने घर में ठहरा लिया। रात के समय मस्तराम ने मालिन से अपने आने का उद्देश्य बताकर रानी से मिलने का उपाय पूछा तो मालिन ने कहा कि आधीरात के समय रानी अपनी सहेलियों के साथ बाग में आती है। बाग के बीच में एक कुँआ है, उसके पास केले के पेड़ों की एक घनी कुंज है। वहाँ तुम छिपे बैठे रहना और जब रानी कुएं पर पानी भरने आवे तब उसका चित्र खींच लेना। ठीक आधी रात के समय रानी अपनी सहेलियों के साथ बाग के कुएं पर आयी, बारी-बारी से रानी और सहेलियों ने पानी भरा। मस्तराम ने छिपे-छिपे रानी का चित्र खींच लिया। कुछ समय बाद रानी बाग में इधर-उधर घूमकर पानी का घड़ा ले जब जाने लगी तो मस्तराम ने बाहर निकलकर रानी से पानी पिलाने को कहा तथा रानी के मना करने पर उसने अपने पाँव से मोती जवाहर जड़ा एक जूता रानी के सामने फेंक दिया। रानी का मन मस्तराम के सौन्दर्य पर पहले ही आकर्षित था, अब लाखों की कीमत का जूता

1- कथासरित्सागर (द्वितीय खण्ड), नवम लम्बक, प्रथम तरंग, पृ0-467 से 471 तक

देखकर उसने सोचा कि यह अवश्य ही कहीं का राजा है तथा वह मस्तराम पर निछावर हो गयी। रानी पानी का घड़ा कुएं की पाट पर रख लोटे से उसे पानी पिलाने लगी। पानी पीते समय मस्तराम ने उसे नजरीक से देखा, रानी का रूप टपका पड़ता था। रानी जब जाने लगी तो उसने पीछे महल में चले आने का संकेत दिया मस्तराम भी रानी के प्रेम से आश्वस्त होकर उसके पीछे हो लिया।'[1] आगे अनेक कष्टों को सहते हुए मस्तराम अवधपुर की रानी को लेकर वापस आता है। दरबार में पहुँकर रानी का चित्र राजा को दे देता है, जिसे देखकर राजा भी मोहित हो जाता है लेकिन रानी ने चूँकि मस्तराम को चाहा था, इसलिए मस्तराम एवं रानी खुसी से एक साथ रहने लगते हैं।[2] इस तरह, इस लोककथा में चित्र खींचने के उपक्रम में प्रिया की प्राप्ति होती है।

प्राचीन कथाओं में प्राप्त यह अभिप्राय सभी जनपदीय भाषाओं की लोककथाओं में मिलता है। सिंहलद्वीप की पद्मिनी[3] नामक ब्रज की लोककथा में, नायक सुन्दर युवती के चित्र को देखकर उस पर मोहित हो जाता है। कथा के अनुसार 'राजकुमार अपने पिता की मृत्यु के बाद गद्दी पर बैठता है। एक दिन उसके लिए निषिद्ध कमरे में जाकर दीवार पर लगी सुन्दर-सुन्दर स्त्रियों की तस्वीरें (चित्र) देखता है। अचानक राजकुमार की निगाह एक बड़ी सुन्दर युवती की तस्वीर पर पड़ती है। उसने वजीर से पूछा कि यह किसकी तस्वीर है। वजीर ने डरते हुए कहा कि यह सिंहलद्वीप की पद्मिनी की तस्वीर है। राजकुमार उसकी सुन्दरता पर मोहित होकर उसके साथ व्याह करने का प्रण लेकर राज्य के काम-काज छोड़कर बैठ गया।' आगे वजीर के लड़के के साथ राजकुमार पद्मिनी की खोज में निकलता है तथा अनेक कठिनाइयों को पार करके पद्मिनी को प्राप्त कर लेता है। इस तरह किसी सुन्दरी नायिका या सुन्दर नायक को चित्र में देखकर आकर्षण उत्पन्न होना स्वाभाविक है तथा पूर्वानुराग उत्पन्न करने के लिए बहुत उपयुक्त अभिप्राय है।

1- बुन्देली लोककहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-47 से 53 तक

2- वही, पृ0-56

3- पुष्प की जड़ हरी, आदर्शकुमारी, पृ0-50

यह अभिप्राय वास्तविकता के निकट होने के कारण सर्वव्यापक है। अन्य देशों की लोककथाओं में भी इसका प्रयोग मिलता है। यथा 'राजकुमार सबुर की कथा'[1] नामक मारीशस की लोककथा में, 'धनी व्यापारी की छोटी लड़की अपने पिता से उपहार में 'सबुर' लाने को कहती है। व्यापारी को एक बुढ़िया द्वारा मालूम होता है कि सबुर पड़ोसी देश का राजकुमार है। व्यापारी राजकुमार के साथ जा पहुँचता है, व्यापारी की बातें सुनकर राजकुमार सबुर को बड़ी हैरानी होती है। वह सोचना है कि यह लड़की कैसी है, जो मुझे उपहार में प्राप्त करना चाहती है। राजकुमार ने व्यापारी से पूछा कि क्या आपके पास उसका कोई चित्र है। सौभाग्य से व्यापारी के पास उसकी तीनों लड़कियों का एक चित्र था। वह चित्र उसने राजकुमार को दिया और बताया कि उनमें से कौन सबसे छोटी लड़की है। राजकुमार उस चित्र को देखकर अचरज में पड़ गया। उसने बहुत से देशों की सुन्दरियों को देखा था, पर यह सुन्दरी तो अपने सौन्दर्य से सबको मात कर सकती थी। चित्र को देखते ही राजकुमार उसके प्रेम में आसक्त हो गया किन्तु अपने भावों को प्रकट नहीं होने दिया। उसने चित्र व्यापारी को लौटा दिया और उसे बचन दिया कि वह उसकी उलझन को दूर करेगा।' इस लोककथा में भी राजकुमार नायिका को चित्र में देखकर उस पर मोहित हो जाता है तथा आगे अपने प्रयास से उसे प्राप्त करता है।

किसी सुन्दर नायिका की मूर्ति को देखकर नायक का उस पर मोहित हो जाना 'मूर्ति-दर्शन-जन्य प्रेम' कहलाता है। इस अभिप्राय से निर्मित कथायें थोड़े-बहुत अन्तर के साथ प्रायः इस प्रकार की होती है- (1) नायिका का शापग्रस्त होकर अथवा स्वेच्छा से किसी जड़-वस्तु में स्थित हो जाना (2) नायक के स्पर्श, दर्शन अथवा किसी प्रयत्न से सजीव रूप में प्रकट होना। इससे नायक-नायिका के बीच आकर्षण-जन्य-प्रेम उत्पन्न होता है तथा दोनों मिलनजन्य सुख प्राप्त करते हैं।

1- मारीशस की शकुन्तला, प्रह्लाद रामशरण, पृ0-35 से 38 तक

'कथासरित्सागर' में निश्चयदत्त और विद्याधरी अनुरागपरा की प्रेम-कथा इसी अभिप्राय से शुरू होती है। कथा के अनुसार 'वणिक निश्चयदत्त, प्रतिदिन स्नान, पूजा आदि करके महाकाल मन्दिर के समीप श्मशान में जाकर शरीर में चन्दन लगाता था। शरीर के पृष्ठ भाग पर स्वयं लेप नहीं कर सकता था अतः श्मशान में खड़े एक पत्थर के खम्भे पर चन्दन लगाकर उस पर अपनी पीठ रगड़ता था। प्रतिदिन पीठ रगड़ने से वह खम्भा अत्यंत चिकना हो गया। एक बार मार्ग से निकल रहे एक चित्रकार एवं मूर्तिकार (संगतराश) ने खम्भे को देखकर उस पर गौरी का चित्र बना दिया। उनके चले जाने पर महाकाल की पूजा के लिए आई एक विद्याधरी उधर से आ निकली और उस खम्भे पर पार्वती की खुदी हुई मूर्ति देखकर उसी में अदृश्य रूप से प्रवेश कर गयी। नित्य की तरह उस दिन भी निश्चयदत्त लेप करने के लिए वहाँ आया और उसी स्तम्भ के दूसरी ओर लेप करके अपनी पीठ उससे रगड़ने लगा । विद्याधरी अनुरागपरा उसके रूप पर मुग्ध हो गयी और सोचने लगी कि इस सुन्दर व्यक्ति के पृष्ठ भाग पर लेप करने वाला कोई नहीं है। तब मैं ही इसकी पीठ पर चन्दन लगाती हूँ। यह सोचकर उसने स्तम्भ के भीतर से ही अपने हाथ फैलाकर निश्चयदत्त की पीठ मलने लगी। वणिकपुत्र ने हाथ का संस्पर्श पाकर और कंकण की ध्वनि सुनकर उसका हाथ पकड़ लिया। विद्याधरी ने अदृश्य रूप से ही हाथ छोड़ देने का आग्रह किया, किन्तु निश्चयदत्त ने बाहर प्रगट रूप में आने का वचन लेने के बाद ही उसका हाथ छोड़ा। विद्याधरी प्रत्यक्ष प्रकट हुई और दोनो में प्रेम-सम्बध स्थापित हो गया।'[1] इस कथा में विद्याधरी स्वेच्छा से स्तम्भ में प्रवेश करती है।

'कथासरित्सागर' की ही एक कथा में, 'अप्सरा कलावती इन्द्र के शाप के कारण एक मन्दिर के खम्भे पर सालभंजिका (स्तम्भमूर्ति) के रूप में स्थित हो जाती है। अप्सरा की माता के अनुरूप-विनय से द्रवित होकर इन्द्र ने शाप का प्रभाव तब तक के लिए सीमित कर दिया, जब तक कि वह मन्दिर, जिसके निर्माण में कई वर्ष लगे हैं,

---

1- कथासरित्सागर (द्वितीय खण्ड), सप्तम लम्बक, तृतीय तरंग, पृ0-45 व 47

गिरकर सपाट न हो जाय। कलावती का प्रेमी ठिण्ठाकराल यह सब मालूम होने पर चतुराई से उस देश के राजा को वशीभूत करके वह मन्दिर गिरवा देता है और इस प्रकार शीघ्र हीकलावती से उसका मिलन हो जाता है।'[1] इस कथा में मूर्तिस्थित नायिका से प्रेम का प्रारम्भ नही होता, बल्कि कथा के मध्य पुरस्सरक अभिप्राय के रूप में इसका प्रयोग करके नायक-नायिका को वियुक्त करके कथा को आगे बढ़ाया गया है।

'पाषाण - नगरी'[2] बुन्देली लोककथा मे, 'राजकुमारी इन्द्र के दरबार में नाचते समय ताल में चूक जाती है, जिससे इन्द्र उसे बारह-मन का पत्थर होकर समुद्र में जा गिरने का शाप देते है। राजकुमारी के अनुनय विनय करने पर इन्द्र सरस होकर कहते हैं कि जब पत्थर निकलकर किनारे पर आ जायेगा और उस पर सूर्य की किरणें पड़ेंगी तब तू फिर जीवित हो जायगी। राजकुमारी ने वापस आकर राजकुमार से यह सब हाल कहा तथा सबेरा होते ही बारहमन का पत्थर बनकर समुद्र मे जा गिरी। इधर राजकुमार हजारों मन मिठाई लेकर समुद्र के किनारे जा पहुँचा तथा टोकनी भर-भरकर मिठाई समुद्र के जल में फेकने लगा। इतने में एक सूस मछली मुँह फैलाये आयी, राजकुमार ने टोकनी भर-भरकर मिठाई उसके मुँह में डालना शुरू कर दिया, जब वह अफर गयी तब प्रसन्न होकर राजकुमार से वरदान मागने को कहा। राजकुमार बोला कि बारह मन का पत्थर जो समुद्र के भीतर पड़ा है, उसे निकालकर बाहर फेक दो। सूस मछली ने ऐसी ही किया तथा शिला पर सूर्य की किरणें पड़ते ही राजकुमारी फिर अपने असली रूप में आ गयी। अब दोनों आनन्दपूर्वक रहने लगे।'

लोककथाओं में नायिका प्राप्ति के बाद कथा का विकास प्राय: अवरुद्ध हो जाता है। अत: ऐसे अवसर पर नायिका को शाप के द्वारा नायक से वियुक्त करके उसे

1- कथासरित्सागर (तृतीय खण्ड), अष्टादश लम्बक, द्वितीय तरंग, पृ0-1095 से 1101

2- पाषाण नगरी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-17 व 18

जड़-वस्तु (मूर्ति) में स्थित कर दिया जाता है और नायक के द्वारा उसके उद्धार करने के प्रयास से कथा आगे बढने लगती है। इस प्रकार कथाविकास और रोचकता की दृष्टि से यह बहुत ही उपयुक्त अभिप्राय है। शाप के साथ-साथ चित्र खींचकर नायिका की मूर्ति बनाने, जिससे वह पत्थर की हो जाती है, का भी उल्लेख लोककथाओं में मिलता है।

'बीरन पटवा की बेटी'[1] बुन्देली लोककथा में, 'राजकुमार बेटी के सुन्दर कपड़ो पर मोहित होकर उसके साथ शादी कर लेता है, जो इन्द्र के अखाड़े की परी है। एक दिन राजकुमार इन्द्र के दरबार में पहुँचकर वहाँ पर बहुत अच्छा तबला बजाता है, जिससे प्रसन्न होकर इन्द्र उसे पटवा की बेटी दे देते है। वहाँ से दूर एक नगर के राजा के बनवाये मन्दिर में कलश नहीं चढ़ रहा था, जिस पर ज्योतिषियों ने बताया कि यदि इस मन्दिर मे बीरन पटवा की बेटी की मूर्ति लगाई जाय तो कलश चढ़ सकता है। राजा द्वारा ऐलान करवाने पर दो चित्रकारों ने आकर राजा से कहा कि हम बेटी का चित्र खींच ला सकते हैं, उससे मूर्ति आप बनवा लीजिएगा। अब चित्रकार पंडित का रूप बनाकर राजकुमार के यहाँ उसके स्वर्गवासी पिता के गुरू के रूप मे ठहरे, बेटी ने अपने हाथो से रसाई बनाई। पंडित ने खाना परोसते समय बेटी का चित्र खींच लिया तथा अच्छे मन से भोजन नहीं परोसा गया, यह कहकर बिना खाये ही चले गये। राजकुमार भी गुरू महाराज के भूखे चले जाने पर बेटी से नाराज होकर चला गया। उधर राजा के यहाँ चित्र पाकर पटवा की बेटी की मूर्ति बनाई जाने लगी। मूर्तिकार ने ज्योंही बेटी के पाँव बनाये त्योंही उसके पाँव पत्थर के हो गये। बेटी ने राजकुमार को बुलवाया लेकिन नाराज होने के कारण वह नहीं आया। दिन-प्रतिदिन मूर्ति के जो-जो अँग बनते जाते थे, पटवा की बेटी के वे ही अंग पत्थर के होते जाते थे। अंत में सारा शरीर पत्थर का हो गया। एक दिन पटवा की बेटी ने राजकुमार को सपना दिया कि अमुक राजा के मन्दिर में मेरी मूर्ति लगी है, यदि तुम मुझे चाहते हो तो अमावस के दिन वहाँ आ जाओ। राजकुमार के वहाँ पहुँचने

1- जैसी करनी वैसी भरनी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-30-36 तक

पर आधी रात के समय पटवा की बेटी थाली में मिठाई एवं जल की झारी लेकर आई। दोनों मिले, खाया-पिया और पैंसासार खेलते रहे। चार बजे सुबह पटवा की बेटी मन्दिर की मूर्ति में समा गयी। एक दिन राजा की बेटी ने जिसका विवाह राजकुमार के साथ हो चुका था, चुपके से आकर यह सब देखा तथा पिता से कहकर बीरन पटवा की बेटी की मूर्ति चक्की में पिसवा दी। अब रात को पटवा की बेटी ने पुनः राजकुमार को सपना दिया कि आप शीघ्र ही घर आ जाओ, मै यहॉ पर आ गयी हूँ। राजकुमार राजा की बेटी को बिदा कराके अपने घर आ गया, जहॉ मूर्ति पिसने के कारण पटवा की बेटी पुन. अपने रूप में आ गयी थी। राजा की बेटी यह देखकर मन मसोसकर रह गयी। अब तीनों लोग प्रेम से रहने लगे। इसमें चित्र खींचने के साथ स्वप्न-दर्शन एवं मूर्ति-दर्शन-जन्य प्रेम मिलता है।

स्वयं संग्रहीत 'राजा का लड़का'[1] बुन्देली लोककथा में, 'राजकुमार जंगल में शिकार खेलने निकला, जहॉ एक आदिम जाति की परी उस पर मोहित होकर, उसके साथ हो ली। रास्ते में दूसरे राजा के नगर में एक तालाब मिला, जिसका पानी परी ने अपनी पलको में भर लिया। दोनों आकर महल में रहने लगे। उधर राजा ने तालाब सूखने का कारण मालूम करवाया तो कहा गया कि यहॉ से आदिम जाति की परी निकल गयी है, यदि उसकी फोटो (चित्र) खींचकर फिर पत्थर में उसकी मूर्ति बनाकर यहॉ पर रखी जाय तो पानी फिर से भर जायेगा। राजा के ऐलान करवाने पर एक कारीगर परी का चित्र खींच लाने को तैयार हुआ। वह राजकुमार के पास पहुँकर उसके महल में बेलबूटे काढ़ने के बहाने काम करने लगा। एक दिन धोखे से घरेलू कार्यवश परी कारीगर को दिख गयी, इतने में ही उसने कागज-पेन्सिल लेकर फोटो खींच ली तथा समान लेने के बहाने वापस चला आया। जब परी ने राजकुमार से कहा कि देखो मैंने पहले ही महल में किसी को लाने से मना किया था, वह मेरा चित्र खीचकर ले गया है। मैं पत्थर की हो जाऊँगी तथा

1- राजा का लडका, कथक्कड़- रघुबीर सिह, सग्रह क्रमाक-7 (अप्रकाशित)

दीवाली को तालाब के पानी से ऊपर निकलूँगी। उधर एक बड़ी शिला लेकर कारीगर ने परी की मूर्ति तराशनी शुरू कर दी, वह ज्यो-ज्यो शिला तराशता परी पत्थर की होती जाती। अन्त में वह अस्सी-मन की शिला होकर तालाब में गिरी तथा तालाब पानी से भर गया। राजकुमार पागल होकर तालाब के किनारे पहुँचा। बच्चे उस पर पत्थर फेंकते हैं। दीवाली के दिन वह परी पानी से बाहर निकली तथा राजकुमार से बोली कि इस तरह तुम्हारा-मेरा मिलन नहीं होगा। यह अस्सीमन की शिला, तुम्हारे लिए फूल के समान हल्की होगी, उसे उठाकर गंगा जी में बहा आओगे तभी मैं तुम्हें मिलूँगी। इसी समय उस नगर का राजा मर जाता है तथा 'सुबह के समय रानी की उस पर नजर पड़ने से वह राजा बन जाता है। राजा बनने के बाद उसने तालाब का किनारा कटवा दिया, जिससे उसका पानी बह गया। अब राजकुमार उस शिला को उठाकर गंगा जी में बहा आया, जिससे उसकी परी रानी पुनः प्राप्त हो गयी।' इस लोककथा में, राजकुमार परी रानी (नायिका) के बताये मार्ग से उसको पुनः प्राप्त करता है लेकिन 'बीरन पटवा की बेटी' लोककथा में, राजा की बेटी ईर्ष्यावश उस मूर्ति को पिसवा डालती है, जिससे बेटी पुन: अपने रूप में आ जाती है।

'मित्र हो तो ऐसा' बुन्देली लोककथा में, 'राजा के लड़के को देश निकाला होता है तो उसका मित्र प्रधानमंत्री का लड़का भी उसी के साथ चल देता है। शाम को दोनों मित्र एक बियावान जंगल में बावडी के पास ठहरते है। पहले राजकुमार ने आधीरात तक जगकर पहरा दिया तथा प्रधानमंत्री का लड़का सोता रहा। इसके बाद राजकुमार सो गया तथा उसके मित्र ने शेष रात को पहरा दिया। सुबह जब वह हाथ मुँह धोने बावड़ी में गया तो उसे एक बहुत सुन्दर पाषाण की स्त्री मूर्ति दिखलाई दी। उसने सोचा यदि इसे राजकुमार देख लेगा तो वह उस स्त्री को पाने के लिए पागल हो उठेगा, जिसकी खोज में अनेक मुसीबतें उठानी पड़ेंगी। अत: उसने मूर्ति को मिट्टी में छिपा दिया। कुछ समय पीछे राजकुमार हाथ मुँह धोने बावड़ी में गया तो उसने देखा कि कोई चीज गीली मिट्टी से अभी ही छापी गयी है। उसका कौतूहल बढ़ा तथा उसने मिट्टी निकालकर पानी से धोया तो स्त्री की लुभावनी मूर्ति दिखाई दी। उस मूर्ति को देखते ही वह हाय पुतरी! हाय

पुतरी ।। कहकर चिल्लाने लगा, जिसे सुनकर उसका मित्र बावड़ी के अन्दर आकर राजकुमार को समझाने लगा। लेकिन राजकुमार के मुँह से हाय पुतरी तू कहाँ मिलेगी के सिवाय दूसरी रट नहीं थी। मित्र ने कहा, इस तरह रोने से कुछ नहीं होगा, चलो इसका पता लगावें।'[1] यह मूर्ति सिहलद्वीप की रानी पद्मिनी की बेटी शैलकुमारी की थी, जिसे अन्त में राजकुमार मित्र की सहायता से प्राप्त कर लेता है ।

उपर्युक्त बुन्देली लोककथा से समानता रखती हुई राजस्थानी लोककथा 'यारी-का घर दूर' में, 'एक राजकुमार और उसका मित्र देशाटन के लिए निकले। रास्ते में उन्होंने एक बावड़ी पर विश्राम किया। उस बावड़ी के एक कोने में पत्थर की पुतली खड़ी थी, जो सौन्दर्य की प्रतिमा थी। राजकुमार उसे देखकर पागल के समान हो गया और सब कुछ छोड़कर बारम्बार पुकारने लगा, चलो पुतली घर चलो, चलो पुतली घर चलो। राजकुमार की ऐसी हालत देखकर उसका मित्र अत्यत चिन्तित हुआ। आस-पास पता लगाने पर उसे मालूम हुआ कि पुतली एक अप्सरा की है जो रात के समय कभी-कभी उस बावड़ी पर आती है। मित्र लौटकर बावड़ी पर आ गया। राजकुमार पागल के समान वही प्रलाप कर रहा था। एक रात मित्र ने बावड़ी के पास ही एक पेड़ के नीचे काफी प्रकाश देखा, जहाँ आकाश से विमान उतरा एवं कई अप्सरायें उतरकर नाच करने लगी, जिनमें प्रतिमा की सुन्दरी भी थी। विमान जाते समय मित्र ने उसके निम्न भाग को पकड़ लिया तथा वह इन्द्रलोक जा पहुँचा, जहाँ अपनी गायन-विद्या से इन्द्र को प्रसन्न कर प्रतिमा की सुन्दरी को मांग लिया तथा दोनों बावड़ी पर आ पहुँचे। अप्सरा एव मित्र को देखकर राजकुमार स्वस्थ हो गया। उसे अपनी इच्छित वस्तु प्राप्त हो गयी।'[2]

1- पाषाण नगरी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-96 व 97

2- राजस्थान की एक लोक-कथा- यारी का घर दूर है, मनोहर शर्मा 'शोध-पत्रिका' अंक-1 व 2, सितम्बर और दिसम्बर 1956, पृ0-84 व 85

नायक-नायिका की प्रेमकथा प्रायः पूर्वानुराग से प्रारम्भ होती है। इस पूर्वानुराग की उत्पत्ति के लिए प्राय: नायक-नायिका किसी दूत से एक दूसरे का 'रूप-गुण सुनकर' आकृष्ट होते है और प्रेम-व्यथा से व्याकुल होकर प्रिय-प्राप्ति का व्रत लेते है। ये दूत प्राय: पक्षी होते है, किन्तु कभी-कभी मानव अथवा मानवेत्तर अन्य जीव भी दूत होते हैं। 'कथासरित्सागर' में नरवाहनदत्त की कई प्रेमकथायें रूप-गुण-श्रवण-जन्य प्रेम से शुरू होती हैं। जिनमें प्रायः किसी भिक्षु, भिक्षुणी या सन्यासिनी द्वारा किसी राजकुमारी या गन्धर्व-कन्या के सौन्दर्य की प्रशंसा सुनकर नरवाहन उसके प्रेम में व्याकुल हो उठते हैं और उसे प्राप्त करने के लिए चल पड़ते हैं। 'कर्पूरिका की कथा' में 'नरवाहन के हाथ से छूटी हुई गोली एक तपस्विनी के जा लगती है, जिस पर वह रोष करके कहती है कि अभी तुम्हें ऐसी मस्ती है, तो जब कर्पूरिका को पत्नी बना लोगे, तब न जाने कितना मद बढ़ जायगा। नरवाहनदत्त के अनुनय विनय करने पर तपस्विनी ने कर्पूरिका का परिचय देते हुए कहा कि समुद्र के पार कर्पूर-सम्भव नाम का द्वीप है, वहाँ नाम के समान गुणों वाला कर्पूरक राजा है, उसकी कर्पूरिका नाक की सुन्दरी कन्या है। लक्ष्मी जी के समान सुन्दर वह कन्या पुरुषों से द्वेष रखती है तथा विवाह नहीं करना चाहती। तदनन्तर नरवाहनदत्त उसकी वाणी से उत्पन्न मदन की आज्ञा से आकृष्ट होकर कर्पूरिका के पास चलने को उतावला हो उठा।'[1]

'कथासरित्सागर' की एक कथा में, 'प्रतिष्ठान नगर का राजा पृथ्वीरूप अत्यंत रूपवान था। एक दिन उसके समीप दो ज्ञानी श्रमण आये और राजा के आश्चर्यकारी सुन्दर रूप को देखकर बोले कि हमने सारे भू-मण्डल में तुम्हारे जैसा कोई रूपवान पुरुष या स्त्री नहीं देखा, किन्तु मुक्तिपुर द्वीप में राजा रूपधर की बेटी रूपलता तुम्हारे योग्य है और तुम उसके योग्य हो। यदि तुम दोनों का विवाह हो जाय तो बहुत अच्छा हो। इस प्रकार श्रमणों की बातों को सुनकर कामदेव के वाण राजा के कानों द्वारा घुसकर उसे हृदय

1- कथासरित्सागर (द्वितीय खण्ड), सप्तम लम्बक, अष्टम तरंग, पृ0-159 व 161

में जा लगे, अर्थात राजा रूपलता पर मोहित हो गया ।'[1] यहाँ पर भिक्षुओं और सन्यासियों द्वारा नायक-नायिका का रूप-गुण श्रवण कराया गया है। जिसका कारण यह है कि एक तो ये हंस, शुक आदि पक्षियों की तरह सर्वत्र घूमते रहते हैं, दूसरे वे अपनी दिव्यशक्ति से ऐसे नायक-नायिकाओं की जानकारी भी रखते हैं।

लोककथाओं में रूप-गुण-श्रवण-जनित प्रेम अभिप्राय अधिक प्रचलित है। बुन्देली लोककथाओं में नायक किसी के मुख से नायिका के रूप-गुण की प्रसंशा सुनकर अथवा भौजाई द्वारा ताना देने पर सुन्दर नायिका को प्राप्त करने के लिए घर से निकल पड़ता है। बुन्देली लोककथा 'सब्जपरी'[2] में, 'भौजाई द्वारा ताना देने पर राजकुमार सब्जपरी को ब्याह लाने का प्रण करके घर से निकलता है तथा जंगल में एक साधु को प्रसन्न करके उससे सब्जपरी का पता एवं मिलने का उपाय पूछता है। साधु द्वारा बतलाये गये उपाय से अनेक कठिनाइयों को पार करके वह एक महल में जा पहुँचता है। राजकुमार भीतर जाकर देखता है कि महल के बीचो-बीच एक कमरा बहुत सुन्दर सजा हुआ है, दरवाजों पर कीमती पर्दे लटक रहे हैं, सुनहरी शमादान में घी के दीपक जल रहे हैं, यत्र-तत्र सुगन्धित द्रव्य जल रहे हैं। इसी कमरे में रत्नजटित पलंग पर एक सोलह साल की अपूर्व सुन्दरी बैठी पान चबा रही है। उसके शरीर से रूप की छटा निकलकर चारों ओर फैल रही है। राजकुमार जाकर कमरे के द्वार पर खड़ा हो गया, उसने रमणी को देखा और रमणी ने उसे। दोनों की आँखें चार हुई, दोनों एक दूसरे के रूप पर मुग्ध हो गये। न कुछ इससे कहते बनता था, न कुछ उससे। अन्त में वह रमणी सब्जपरी अपने को संभालकर उठ खड़ी हुई और राजकुमार को आदर पूर्वक भीतर बुला लाई।' इसमें रूप को प्रत्यक्ष देखकर प्रेम उत्पन्न होना दिखलाया गया है।

1- कथासरित्सागर (द्वितीय खण्ड), नवम् लम्बक, प्रथम तरंग, पृ0-467

2- बुन्देली लोककहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-17 से 22 तक

'वासुकी नाग की मुदरी'[1] बुन्देली लोककथा में, 'साहूकार का पुत्र एक नगर मे जा पहुँचता है। वहाँ के राजा की लड़की बहुत सुन्दर थी। राजकुमारी के रूप की तारीफ सुनकर उससे मिलने की आशा से साहूकार का पुत्र उसके बगीचे में छिप-छिपाकर मालिन के घर पहुँच जाता है। मालिन नाराज होती है, क्योंकि उस बगीचे में पुरुषों के आने की मनाही थी। परन्तु साहूकार के पुत्र ने मालिन को लोभ देकर प्रसन्न कर लिया तथा उसी की मदद से स्त्रीवेश में एक दिन वह राजकुमारी के पास पहुँच गया। राजकुमारी ने अभी तक किसी मर्द का मुँह नही देखा था इसलिए वह नित्य चमेली के ढाई फूलों पर तुल जाती थी। लेकिन जब उसने साहूकार के पुत्र का मुँह देख लिया तो मालिन फूल-चढ़ा-चढ़ाकर हार गयी, परन्तु उसका वजन पूरा न हुआ। तब राजकुमारी ने नाराज होकर मालिन से पूछा कि सच-सच बता कि यह कौन है? मालिन ने डरकर सब कुछ कह दिया। राजकुमारी ने साहूकार के पुत्र से कहा कि तुम मुझसे प्रेम करने के लिए इस वेश में कहा से आ गये। अगर तुम सचमुच मेरे लायक हो तो रात-भर में इस बगीचे के भीतर सोने का सतखण्डा महल बनवा दो। साहूकार के बेटे ने वासुकी नाग द्वारा दी गयी मुदरी की सहायता से सतखण्डा महल खड़ा कर दिया। सवेरा होने पर महल को देखकर सब लोग आश्चर्यचकित रह गये। राजा ने तुरन्त साहूकार के पुत्र की शादी अपनी लड़की से कर दी। साहुकार का पुत्र और राजा की लड़की उसी सोने के सतखण्डे महल में रहने लगे।' इस लोककथा में प्रिया प्राप्ति के लिए नायक स्त्री का वेश धारण करता है।

कथाओं में नायक-नायिका दूतों के माध्यम से प्रेम-सन्देशों का आदान-प्रदान करते हैं, जिससे उनके बीच प्रेम का प्रारम्भ होता है। 'महाभारत' में, नल और दमयन्ती की कथा में, निषध देश के राजा नल उत्तमगुणों से सम्पन्न रूपवान और अश्वचालन की कला में कुशल थे। उसी समय, विदर्भ देश के राजा भीम की कन्या दमयन्ती भी अनिन्द्य सुन्दर अंगों वाली थी। लोग कौतूहलवश दमयंती के समीप नल के तथा नल के समीप दमयन्ती

1- बुन्देलखण्ड की ग्राम्य कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0 - 130 से 132 तक

के सौन्दर्य की सराहना किया करते थे जिससे उनके बीच परस्पर अनुराग उत्पन्न हो गया था। एक दिन विरह व्यथित राजा नल ने उपवन में विचरते एक हंस को पकड़ लिया, जिसने मानवी वाणी में कहा कि राजन मुझे न मारो, मैं दमयन्ती के निकट आपकी प्रशंसा करूँगा। राजा नल ने उसे छोड़ दिया तथा वह हंस दमयंती के निकट जाकर उतरा, जिसे पकड़ने के लिए दमयन्ती जब निकट दौड़ रही थी तो हंस ने मानवीवाणी में कहा कि राजकुमारी दमयन्ती सुनो, निषध देश में नल नाम के एक प्रसिद्ध राजा हैं, जो आश्विनी कुमारों के समान सुन्दर हैं। मनुष्यों में तो कोई उनके समान सुन्दर है ही नहीं। सुन्दरि! रूप की दृष्टि से तो वे मानो स्वयं मूर्तिमान कामदेव से ही प्रतीत होते है। यदि तुम उनकी पत्नी हो जाओ तो तुम्हारा जन्म और यह मनोहर रूप सफल हो जाय। हंस के ऐसा कहने पर दमयन्ती बोली कि पक्षिराज! तुम नल के निकट भी ऐसी ही बातें कहना। तब हंस पुन. निषधदेश में आकर राजा नल से सब बातें निवेदन की ।'[1] 'कथासरित्सागर' की कथा मे दमयन्ती पहले हंस को पकड़कर अपना प्रेम-सन्देश राजा नल के पास भेजती है। तदनन्तर हंस राजा नल के पास जाकर संदेश सुनाता है, जिससे राजा नल कामदेव के वाणों से बिंध जाते हैं।[2]

बुन्देली लोककथा 'यार का पूत' में, 'राजा साहुकार की चतुर बेटी से शादी करके उसे तालाब के बीच में स्थित महल में रखता है, जिससे साहूकार की बेटी का किसी से मिलना-जुलना न हो सके। एक दिन बेटी महल के सतखण्डा पर बैठी चारों ओर का दृश्य देख रही थी। तभी उसे तालाब के घाट पर नहा रहा भरा-पूरा सुन्दर जवान बंजारा दिखाई पड़ा। बंजारे को देखकर बेटी उस पर मोहित हो गयी तथा बेटी ने पतंग पर प्रेम-पत्र लिखकर बंजारे से प्रार्थना की मैं तुम्हें हृदय से चाहती हूँ, तुम प्रयत्न करके मुझे यहाँ से ले चलो, मैं तुम्हारे साथ चलने को तैयार हूँ। इस तरह, पतंग पर प्रेम-पत्र लिखकर बेटी ने सतखण्डा महल पर से पतंग उड़ाकर टाँडे के नायक बंजारा के पास गिरा

1- महाभारत (द्वितीय खण्ड), वनपर्व, पृ0-1095 से 1098 तक

2- कथासरित्सागर (द्वितीय खण्ड), नवम् लम्बक, षष्ठ तरंग, पृ0-667 व 669

दिया। बंजारा ने पतंग उठा ली तथा उस पर लिखा लेख देखकर ध्यान से पढ़ा। लेख पढ़कर बंजारे के मन में भी प्रेम का उदय होता है तथा वह साहूकार की बेटी को प्राप्त करने के लिए तत्पर हो जाता है।[1]

स्वयं संग्रहीत 'साहूकार की बेटी'[2] बुन्देली लोककथा में भी 'राजा साहूकार की चतुर बेटी से शादी करके उसे तालाब के बीच महल बनवाकर उसमें रखता है। जिससे कि उसके पास कोई आ-जा न सके। एक दिन बेटी तालाब के किनारे एक बंजारा को देखकर उसके लिए प्रेमपत्र लिखती है। जिसमें अपना सारा हाल लिखने के साथ तालाब के किनारे से महल के अन्दर तक सुरंग खुदवाने को भी कहती है। उस प्रेम-पत्र को तालाब के पानी में बहा देती है, जो लहरों से चलता हुआ किनारे जा लगता है। जिसे बंजारा उठाकर ध्यान से पढ़ता है। बंजारा सुरंग खुदवाकर उसके माध्यम से साहुकार की बेटी से जाकर मिलता है तथा दोनों का प्रेम-सम्बंध शुरू हो जाता है। एक दिन साहूकार की चतुर बेटी राजा को चकमा देकर उससे बहुत सारा धन लेकर अपने प्रेमी बंजारे के साथ वहाँ से रवाना हो जाती है।'

जहाँ 'यार का पूत' लोककथा में प्रेमिका पतंग के माध्यम से प्रेम-सन्देश भेजती है, वहीं 'साहूकार की बेटी' में प्रेमिका अपनी युक्ति यानि पानी की लहरों के माध्यम से प्रेम-पत्र भेजती है। इन दोनों ही कथाओं में प्रेम-सन्देश भेजने के लिए दूतों का इस्तेमाल नहीं किया गया है। जबकि राजस्थानी लोकगाथा'ढोला-मारू' [3] में प्रेमिका मारवणी अपने प्रेमी ढोला को लोकगायक ढाढ़ियों के माध्यम से प्रेम-सन्देश भेजती है, जो ढोला के पास जाकर मारवणी की विरह-गाथा गा-गाकर सुनाते हैं। जिससे ढोला के मन में मारवणी के प्रति प्रेम जाग उठता है।

1- पाषाण नगरी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-119 व 120

2- साहूकार की बेटी, कथक्कड़- मुन्नूलाल कुरील व साथी,संग्रह क्रमांक-2 (अप्रकाशित)

3- ढोला-मारू, बी0आर0पद्म,'कादम्बिनी',फरवरी 97 अंक, पृ0-97 व 98

लोककथाओं में नायक-नायिका के बचपन से ही साहचर्य में रहने से प्रेम उत्पन्न होता दिखलाया गया है। 'कथासरित्सागर' में नायक नरवाहनदत्त का पहली पत्नी मदन-मंचुका से प्रेम बाल्य-विलास से विकसित होता है। बचपन में एक बार नरवाहनदत्त की माँ ने दोनों को अपने पास बुलवाया। खिले हुए मुख-कमलवाले बालक नरवाहनदत्त ने उस कन्या मदनमंचुका को इस प्रकार देखा, जैसे सरोवर प्रातःकालीन नवीन-सूर्य-रश्मियों को निहारता है। मदनमंचुका भी आँखों को आनन्द देने वाले नरवाहनदत्त को देखती हुई उसी प्रकार अतृप्त रह गयी जैसे चकोरी चन्द्रमा को देखते रहने पर भी तृप्त नहीं होती। परस्पर दर्शन के अनन्तर वे दोनों बालक होने पर भी स्थिर न रह सके। यद्यपि वे दोनों अलग-अलग थे किन्तु दृष्टिपाश से बंधे हुए हुए, अतएव एक थे।'[1]

स्वयं संग्रहीत 'सदाबिरिज-सारंगा'[2] बुन्देली लोककथा में, 'सदाबिरिज व सारंगा दोनों बचपन में स्कूल में पढ़ने गये, जहाँ वे दोनों पढ़ने की बजाय साथ-साथ खेलते रहते थे। मास्टरों के कहने पर उनके माँ-बाप ने स्कूल के बीचो-बीच एक दीवार खड़ी करवा दी, जिस पर उन्होंने कारीगरों से कहकरखिड़की रखवा ली, जिससे दोनों चिट्ठियों का आदान-प्रदान करने लगे। एक बार उन दोनों को बाग सींचने के लिए भेजा गया, जहाँ जाकर वे सो गये। मास्टरों को मालूम होने पर उन्होंने सारंगा के पिता से उसकी शादी कर देने की सलाह दी। सारंगा के पिता के कहने पर सदाबिरिज के पिता ने उसको पैसे वसूलने के बहाने बाहर भेज दिया, इस बीच सारंगा की शादी धारानगरी में तय कर दी गयी। रास्ते में सदाबिरिज को सारंगा की बरात मिली, जिसके साथ वह वापस अपने गाँव आ गया लेकिन सारगा ने लोकलाजवश उसे रास्ते में देवी के मन्दिर के पास मिलने का वादा करके चारा काटने के बहाने वापस भेज दिया। सदाबिरिज थोड़ा-बहुत चारा काटकर मन्दिर में गहरी नींद में सो गया। इस बीच सारंगा की डोली वहाँ पहुँची, उसने कहारों से देवी-पूजन का अनुरोध किया, मन्दिर के अन्दर सराबिरिज उसे सोता मिला। वह रो-रोकर उसके हाथ

1- कथासरित्सागर (प्रथम खण्ड), षष्ठ लम्बक, आठवाँ तरंग, पृ0-789 व 79।

2- सदाबिरिज-सारंगा, श्रीमती गिरिजा देवी, संग्रह क्रमांक-9 (अप्रकाशित)

से अपने आँसू पोछती रही तथा कहारों के बुलाने पर वह पुनः डोली में आकर बैठ गयी। रास्ते में गन्ना बेचते एक बुढ़िया मिली, जिसे चार-पैसे देकर सारंगा ने कहा तुम इस रास्ते से आने वाले को इन पैसों के गन्ने के टुकड़े देकर उसे वापस चले जाने को कह देना। सारंगा अपनी ससुराल चली गयी। इधर जब सदाबिरिज की आँख खुली तो अपने हाथों में काजल देखकर सह समझ गया कि सारंगा यहाँ आयी थी। वह सारंगा के पीछे चल दिया, रास्ते में उसे बुढ़िया मिली, जिसने उसे चार पैसे के गन्ने के टुकड़े देकर वापस चले जाने को कहा। वह नहीं माना तथा सारंगा की ससुराल धारानगरी पहुँच गया। धारा नगरी में घर-घर जाकर वह अपना नाम लेकर भीख मांगने लगा, लेकिन वह किसी से भीख नहीं लेता था। अन्त में वह सारंगा के दरवाजे पहुँचा, अपनी सास से आज्ञा लेकर सारंगा भिक्षा डालने दरवाजे पर आयी तथा मोतियों भरा थाल जमीन पर रखकर सदाबिरिज से बातें करने लगी। पूर्वयोजनानुसार सारंगा ने सर्प-काटने का बहाना किया तथा थोड़ी देर बाद अपनी सांस रोक ली, जिससे लोगों ने उसे मरा समझकर श्मशान ले जाने की तैयारी की। इस बीच सदाबिरिज ने पीछे से जाकर घर में आग लगा दी, जिससे लोग मुर्दे को बीच में छोड़कर आग बुझाने में लग गये उधर सदाविरिज सारंगा को लेकर वहाँ से चल पड़ा।'

'सारंगा रानी' नामक ब्रज की लोककथा में बचपन के इस साहचर्य को पूर्वजन्म से जोड़ा गया है। कथा के अनुसार 'दोनों पूर्वजन्म में हंस-हंसिनी के जोड़ा थे, जो अकाल पड़ने पर एक अन्य हंस के साथ पोखर का पानी पीने से मर गये थे। संयोग से, इन तीनों ने एक ही दिन, एक ही नगर में जन्म लिया। हंसिनी राजा की लड़की हुई, हंस वजीर का लड़का तथा तीसरा हंस वजीर की घोड़ी का बछेड़ा हुआ। राजा ने वजीर के लड़के सत्यव्रत को अपने महल में रख लिया और उसका लालन-पालन शिक्षा-दीक्षा राजकुमार की तरह होने लगी। राजकुमारी सारंगा और सत्यव्रत साथ ही खेलते, साथ ही खाते और साथ ही पढ़ते। लिली सागर नामक बछेड़े पर बिठाकर सत्यव्रत सारंगा को खूब सैर कराता। सारंगा के विवाह योग्य होने पर राजा को यह सब अखरने लगा। उसने सत्यव्रत को दैत्य-राज में जाकर कर वसूलने को भेजा तथा इसी बीच सारंगा का व्याह तय कर दिया। रास्ते

में एक मित्र से खबर पाकर सत्यव्रत भेष बदलकर अपने घर वापस आया, सारंगा को पता चलने पर वह शादी की आधीरात को उससे मिलने आयी। उधर सारंगा की अनुपस्थिति में उसकी चुनरी के साथ भांवरें पड़ी। सवेरा होने पर सारंगा दरोगा के वेश में महल पहुँचकर अपने पलंग पर जा पड़ी। विदाई के बाद रास्ते में सारंगा ने शिवमन्दिर में पूजा के लिए डोला रुकवाया तथा अन्दर जाकर आँख के काजल से मन्दिर के एक कोने में अपनी वियोगगाथा लिखी तथा डोले में बैठकर ससुराल चली गयी। उधर सत्यव्रत भटकते-भटकते जब शिवालय में पहुँचा तो सारंगा के हाथ की लिखावट देखकर उसने सारंगा को प्राप्त करने का प्रण किया तथा अपने कपड़े रंगाकर जोगी का भेष बनाकर भिक्षा मांगने लगा।'[1]

लोककथाओं में प्रायः देखा जाता है कि नायक और नायिका जब परस्पर मिलने में असमर्थ हो जाते हैं तब उनको मिलाने के लिए 'सांकेतिक भाषा' नामक कथाभिप्राय का प्रयोग किया जाता है। इस अभिप्राय से सम्बंधित लोककथाओं में कथक्कड़ संकेतों की भाषा नायिका के माध्यम से समझाना चाहता है, लेकिन कथा का नायक जब उसे नहीं समझता तो एक तीसरे व्यक्ति की आवश्यकता आ पड़ती है जो उन संकेतों की व्याख्या करता है, जिससे कथा को गति मिलती है।

बेताल-पच्चीसी' की पहली कथा में 'राजकुमार वज्रमुकुट अपने मित्र दीवान के लड़के के साथ शिकार खेलने जंगल में जाता है । वहाँ तालाब के किनारे एक राजकुमारी को देखकर उस पर मोहित हो जाता है। राजकुमारी भी उसकी तरफ देखती रही, फिर उसने जूड़े में से कमल का फूल निकाला, कान में लगाया, दाँत से कुतरा, पैर के नीचे दबाया और फिर छाती से लगा, अपनी सहेलियों के साथ वहाँ से चली गयी। राजकुमार ने निराश होकर अपने मित्र से यह सब हाल कह सुनाया, मित्र ने कहा कि उसने कमल का फूल सिर से उतारकर कानों में लगाया तो उसने बताया कि मैं कर्नाटक की रहने वाली हूँ। दाँत से कुतरा तो उसका मतलब था कि मैं दंतवार राजा की बेटी हूँ। पाँव से दबाने का अर्थ था कि मेरा नाम पद्मावती है और छाती से लगाकर उसने बताया कि तुम मेरे दिल में बस गये हो।

राजकुमार की खुशी का ठिकाना न रहा, वह अपने मित्र के साथ उसी शहर में पहुँच कर राजा के महलों के पास एक बुढ़िया के यहाँ रुका, जो पद्मावती का धाय थी। राजकुमार ने बुढ़िया को कुछ धन देकर, उसके द्वारा पद्मावती को संदेश भिजवाया, जिसे सुनते ही राजकुमारी ने गुस्सा होकर, हाथों में चन्दन लगाकर उसके गाल पर तमाचा मारा। बुढ़िया ने घर आकर सब हाल कह सुनाया, जिससे राजकुमार आश्चर्यचकित रह गया, तब उसके मित्र ने कहा कि उसने दसों उँगलियाँ सफेद चन्दन में सानकर मारीं, इससे उसका मतलब यह है कि अभी दस रोज चाँदनी के हैं, उसके बीतने पर मैं अंधेरी रात में मिलूँगी। दस दिन बाद राजकुमार ने फिर बुढ़िया को भेजा तो राजकुमारी ने इस बार केसर के रंग में तीन उँगलियाँ डुबोकर उसके मुँह पर मारीं। राजकुमार फिर शोक से ब्याकुल हो गया, तो मित्र ने का कि इसमें हैरान होने की कोई बात नहीं है, उसने कहा है कि मुझे मासिक धर्म हो रहा है, तीन दिन और ठहरो। तीन दिन बाद बुढ़िया फिर गयी, इस बार राजकुमारी ने उसे पटकार कर पश्चिम की खिड़की से बाहर निकाल दिया। सुनकर दीवान का लड़का बोला कि मित्र उसने आज रात को तुम्हें उस खिड़की की राह बुलाया है। राजकुमार मारे खुशी के उछल पड़ा, दो पहर रात बीतने पर वह महल में जा पहुँचा और खिड़की में से होकर अन्दर पहुँच गया। राजकुमारी वहाँ तैयार खड़ी थी, वह उसे भीतर ले गयी।'[1]

'लखेरे की बेटी'[2] बुन्देली लोककथा में, 'एक राजा रास्ते में जाती एक पीनस (डोली) का तीन दिन तक भूखा-प्यासा रहकर पीछा करता है, लेकिन वह उसके अन्दर बैठी स्त्री की झलक भी नहीं देख पाता। निराश होकर जब वह वापस लौटने लगता है तब पीनस वाली स्त्री ने कपड़े की गाँठ में कुछ बाँधकर बाहर फेंक दिया, जिसे राजा ने घोड़े से उतरकर उठा लिया तथा खोलकर देखा तो उसमें एक काँच का टुकड़ा, हल्दी की गाँठ, सुपारी और लाख का टुकड़ा रखा हुआ था। इन सब चीजों को लेकर वह

1- बेताल-पच्चीसी, यशपाल जैन, पृ0-9 से 11 तक

2- केतकी के फूल, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-73 से 89 तक

महल में आया तथा रात के समय अपनी रानी से सब हाल कह सुनाया। रानी बोली कि सुनो राजा साहब, कॉच के टुकड़े से वह यह दरशाती है कि मैं कंचनपुर की रहने वाली हूँ, सुपारी से उसने बतलाया है कि उसके मकान के सामने सुपाड़ी का पेड़ है, हल्दी से उसने अपना रंग और लाख से उसने अपनी जात बतलाई है। अगले दिन राजा अपनी रानी के साथ कंचनपुर जा पहुँचा, जो कि उसकी ससुराल भी थी तथा वहॉ पर एक टूटी-हवेली में रुके। रानी के कहने पर राजा सौदागर का रूप बनाकर लखेरे की दूकान पर पहुँचा और एक लाख रूपये के चोखेमाल की फरमाइश की। उसी समय मुसाफिर की आवाज पहचान कर लखेरे की बेटी बाहर आई और दीवाल पर काजल की बारह उँगलियॉ लगाकर चली गयी। राजा ने हवेली पर आकर रानी को सब हाल सुनाया,जिस पर रानी बोली कि जब बारह घंटे की अंधेरी रात अर्थात अमावस आवेगी तब वह आपसे मिलेगी। अमावस के दिन राजा फिर लखेरे की दूकान पर पहुँचा। इस बार बेटी सफेदी की बारह उँगलियॉ दीवाल पर लगाकर चली गयी। रानी ने कहा कि जब बारह घंटे की उजेली रात अर्थात् पूनो आवेगी तब वह आपसे मिलेगी। पूर्णमासी के दिन राजा लखेरे की दूकान पर फिर पहुँचा । बेटी बाहर निकली और तीन सुर्खी की उँगलियॉ दीवाल पर लगाकर चली गयी। रानी बोली कि इस समय वह मासिक-धर्म से हो गयी है , तीन दिन बाद अवश्य मिलेगी। चौथेदिन राजा लखेरे की दूकान पर पुनः पहुँचा। इस बार बेटी पूजा की थाली लिए बाहर निकली, दोनों ने एक-दूसरे को देखा तथा अपना दिल खो बैठे। बेटी जमीन पर बैठकर अंगारे पर घी का होम लगाया, प्रदक्षिणा की और फिर धरती पर सिर रखकर प्रणाम करके उसने कुछ चॉवल उत्तर दिशा की ओर फेंक दिए। फिर बारह उँगलियॉ सफेदी की लगाकर भीतर चली गई। राजा ने प्रसन्नचित्त हो रानी से आज का सब वृत्तान्त सुनाया। रानी बोली कि आज वह तुमसे बारह बजे रात को उत्तर दिशा में देवी के मन्दिर पर मिलेगी। रात होते ही राजा देवी के मन्दिर में जा पहुँचा, रात ठीक बारह बजे लखेरे की बेटी अपने महल से निकलकर मन्दिर में जा पहुँची, जिसे देखकर शहर के कोतवाल ने दाल में कुछ काला समझ वहॉ पर सिपाहियों का पहरा बैठा दिया तथा जाकर अपने राजा को खबर दी , उसने इसकी

जाँच करने को कहा। अपने को घिरा समझकर लखेरे की बेटी ने राजा से कहा कि कहिए अब क्या हो? राजा भौचक्का सा रह गया, बेटी समझ गयी कि ये तो वैसाखनन्दन है। उसने राजा से पूछा कि आप के साथ कोई दूसरा आदमी है, राजा बोला कि हाँ, मेरी रानी है। बेटी ने पहरे के सिपाहियों को पाँच सौ मुहरें देकर हवेली में यह संदेश भिजवाया कि जिसका हाथी, घोड़ा, ऊँट , गधा गुम हो गया हो वह रात को ही तलाश करके अपने घर बाँध ले। अन्यथा सवेरा होते ही वह काँजी हौस जायगा। रानी समझ गयी कि राजा तो फँस गए, उसने तुरन्त पूजन की सामग्री लेकर मन्दिर को प्रस्थान किया तथा पहरेदारों से बारह वर्ष से नित्य रात के समय देवी का पूजन करने का बहाना बनाकर अन्दर प्रवेश करके अपनी पोशाक लखेरे की बेटी को पहनाकर उसे मन्दिर से बाहर निकाल दिया। लखेरे की बेटी पहरे के सिपाहियों को प्रसाद देकर अपने घर चली गयी। सुबह नगर के राजा ने मंत्री व कोतवाल को साथ लेकर मन्दिर में पहुँच फाटक खुलवाये, जहाँ अपने लड़की व दामाद को देखकर अचम्भित रह गये। सारे शहर में खबर फैल गयी कि मन्दिर में लखेरे की बेटी नहीं, राजा साहब के लड़की-दामाद थे। राजा ने कोतवाल को लखेरे की बेटी की झूठी बदनामी करने के अपराध में शूली की सजा दी।' बेताल-पच्चीसी की कथा में जहाँ सांकेतिक भाषा को पढ़ने का काम नायक का मित्र करता है, वहीं इस लोककथा में यह काम उसकी रानी के द्वारा सम्पन्न कराया गया है।

सांकेतिक भाषा जन्य प्रेम के अभिप्राय के उदाहरण अन्य बोलियों में भी मिलता है। 'यशोधवल और फूलांदे' नामक राजस्थानी लोककथा में,'यशोधवल सपने में सुन्दरी को देखकर उससे परिचय पूछा तो सुन्दरी ने फूलों की एक डाली उठाकर एक फूल अपने सिर के चारों तरफ घुमाया। इसी समय राजकुमार की नींद खुल गयी। यशोधवल अपने पिता राजा से आज्ञा लेकर अपने मित्र मंत्री-पुत्र के साथ उसे खोजने निकल पड़ा। रास्ते में राजकुमार ने अपने मित्र से स्वप्न की बात बतायी। उसने विचार करके कहा कि स्वप्न में उस सुन्दरी ने जो संकेत किया, उसका अर्थ यह है कि उसका नाम फूलांदे (फूलों की देवी) है। पता लगाने पर मालूम हुआ कि फूलांदे गंगानगर की राजकुमारी है। वहाँ पहुँचकर दोनों मित्रों ने व्यापारियो का भेष धारण कर एक दूकान खोल ली। एक दिन राजकुमारी की दासी

जरी के वस्त्र खरीदने उस दूकान पर आई, राजकुमार ने कपड़ों में एक चिट्ठी रख दी। कुछ देर बाद दासी लौटी, उसने राजकुमार को एक दर्पण दिखकार उसे एक काली थैली में रख दिया। फिर उसने एक टहनी दिखाई और कुछ फूल बिखेरकर उस पर पैर रखकर चलने का अभिनय किया। राजकुमार ने अपने मित्र से इन संकेतों का अर्थ पूछा, उसने कहा कि काले थैले में दर्पण रखने का अर्थ है रात होने दो। टहनी का संकेत बाग से है। फूलों पर चलने का अर्थ है कि तुम्हें ऐसे रास्ते पर पहुँचना है, जो फूलों से घिरा हुआ है। रात के समय तुम राजा के बाग में जाकर फूलों की क्यारियों के पास के रास्ते पर पहुँच जाना। राजकुमार रात के समय माली को लालच देकर बाग में महल के पास जा पहुँचा, लेकिन स्वादिष्ट भोजन खाकर वह सो रहा। सूरज निकलने पर वह हड़बड़ा कर उठा तथा एक खुली कटार उसकी छाती से नीचे गिर पड़ी। मंत्री के लड़के ने कहा कि सीने पर कटार रखने का अर्थ है कि यदि तुम इसी प्रकार यत्न करोगे तो तुम्हारी गर्दन काट दी जायगी। उसने राजकुमार की अंगुली में घाव करके उस पर नमक छिड़क पुनः भेजा। दो पहर रात बीत जाने पर महल की खिड़की पर वह स्वप्न सुन्दरी दिखलाई दी, वह हँसी, अपने केशों से अपना चेहरा ढंक लिया। फिर उसने एक बरतन नीचे फेंक दिया और खिड़की में एक छोटा रस्सा टांगकर खिड़की बंद कर दी। राजकुमार ने यह सारी कार्रवाई देखी तथा बरतन में उसे घोड़े की लीद भरी हुई मिली। मंत्री पुत्र ने कहा कि बातों में मुंह छिपाने का अर्थ है तुम्हें अंधेरी रात्रि में वहाँ जाना चाहिए। बरतन में घोड़े की लीद का अर्थ है, तुम्हें अस्तबल में जाना होगा, वहाँ एक खिड़की में रस्सा बंधा होगा, वहीं राजकुमारी मिलेगी। अंधेरी रात अपने पर राजकुमार फिर राजकुमारी से मिलने चला गया।'[1]

निष्कर्षतः लोककथाओं में इस अभिप्राय के अध्ययन से स्पष्ट है कि नायक 'सांकेतिक भाषा' को नहीं समझ पाता लेकिन उसके सहायक (मित्र या पत्नी), जो कि इस भाषा के जानकार होते हैं, के द्वारा इसका स्पष्टीकरण होता है, जिससे नायक अपने

1- भाग्य की बलिहारी, लक्ष्मीनिवास बिड़ला, पृ0-98 से 102 तक

उद्देश्य (नायिका) को प्राप्त करने में सफल होता है। सांकेतिक भाषा को लेकर प्रायः पूरी की पूरी कथायें निर्मित होती हैं, जिससे उनमें रोचकता एवं कौतूहल-वृत्ति का समावेश मिलता है। यह अभिप्राय बुद्धि-परीक्षा का साधन भी होता है।

लोककथाओं में इस अभिप्राय का प्रचलन विशेषतः स्त्री-पुरुषों का स्वतंत्रतापूर्वक न मिल पाना, पर्दा-प्रथा, पत्र भेजने में खतरा एवं शिक्षा का अभाव आदि कारणों से हुआ होगा। अतः समाज-विशेष में प्रचलित इन रीति-रिवाजों की. इस कथाभिप्राय के निर्माण में प्रमुख भूमिका है।

*****

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

अध्याय-ग्यारह

'आकाश-गमन'-

(1) अतिप्राकृत-शक्तियों द्वारा आकाश-गमन

(2) मत्र-तंत्र आदि यौगिक सिद्धियों द्वारा आकाशगमन

(3) सामान्य व्यक्तियों द्वारा आकाश-गमन-

(क) उड़ने वाले घोड़े की सहायता से

(ख) उड़न-खटोले के माध्यम से

(ग) उड़ने वाले पक्षियों, यथा-हंस, गरुण आदि की सहायता से ।

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

आकाश-मार्ग से एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचने की विद्या को 'आकाश-गमन' नाम दिया जाता है। भारतीय कथाओं में विद्याधर, गन्धर्व आदि अतिप्राकृत शक्तियाँ जन्मना ही इस तरह की विद्याओं में पारंगत बताई जाती है। लोककथाओं में आकाश में उड़ने वाली परियों का उल्लेख बहुतायत से मिलता है। 'आकाश-गमन' का सम्बंध यौगिक-क्रियाओं से भी जोड़ा जाता है। मध्यकाल में अनेक ऐसे योगियों का उल्लेख मिलता है जो अपनी साधना के द्वारा पलक झपकते ही एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँच जाते थे। हमीरपुर गजेटियर (1909) में प्रकाशित एक घटना के अनुसार- 'गुरू गोरखनाथ के नवें सिद्ध दीपकनाथ व अरब से आये इस्लाम धर्म के प्रचारक पीर मुबारकशाह के बीच श्रेष्ठता के लिए महोबा में स्थित मदन सरोवर में मुकाबला तय होता है। निश्चित तिथि पर दीपकनाथ अपने चरणों में लकड़ी की खड़ाऊँ धारण कर सरोवर के जल के ऊपर बिना भीगे चलते हुए मध्य में आकर खड़े हो जाते हैं, दूसरी ओर पीर मुबारक शाह भी अपनी मृगछाल के ऊपर चढ़कर आकाश-मार्ग से तालाब में सिद्ध के सामने आ पहुँचते हैं।'[1] इसी तरह, आकाश में उड़ने की वास्तविक घटना सन् 1882ई0 में कलकत्ता में प्रिंसवेल्स के समक्ष एक फकीर ने प्रस्तुत की थी।[2]

'आकाश-गमन' के कथाभिप्राय को निम्न भागों में बाँटा जा सकता है-

(1) अतिप्राकृत शक्तियों द्वारा आकाश-गमन

(2) मंत्र-तंत्र आदि यौगिक सिद्धियों द्वारा आकाश-गमन

(3) सामान्य व्यक्तियों द्वारा आकाश-गमन- इसे निम्न भागों में विभाजित किया जा सकता है-

(क) उड़ने वाले घोड़े की सहायता से (ख) उड़न-खटोले के माध्यम से आकाश-गमन करना (ग) उड़ने वाले पक्षियों, यथा- गरुण, हंस आदि की सहायता से।

1- चन्देलकालीन महोबा और जनपद हमीरपुर के पुरावशेष, वासुदेव चौरसिया, पृ0-34

2- 'हवा में उड़ने वाला फकीर' लेखक-आशीष, 'कादम्बिनी', नवम्बर 1983, पृ0-25

मनुष्येत्तर अतिप्राकृत शक्तियों में देवता, राक्षस, गन्धर्व, विद्याधर, सिद्ध, बेताल आदि का नाम आता है। पौराणिक कथाओं में देवताओं को अक्सर आकाश-मार्ग में विमानों में बैठकर विचरण करते हुए दिखलाया गया है। रामायण, महाभारत एवं कथासरित्सागर में इस कथाभिप्राय से सम्बंधित वर्णन मिलते हैं।

'रामचरितमानस' में, रामजन्म का समय जानकर ब्रह्मा आदि सभी देवगण अपने-अपने विमानों को सजाकर चल पड़ते हैं-

सो अवसर विरंचि जब जाना।
चले सकल सुर साजि विमाना।। (बालकाण्ड)

इसी तरह, राक्षस रावण वन में अकेली सीता का छल द्वारा हरण करके आकाश-मार्ग से ही प्रस्थान करता है-

क्रोधवंत तब रावन लीन्हिस रथ बैठाइ।
चला गगनपथ आतुर भयँ रथ हाँकि न जाई।। (अरण्यकाण्ड)

'महाभारत' में, दुर्योधन अपनी सेना सहित गन्धर्वराज से पराजित हो जाता है। गन्धर्व दुर्योधन व उसकी स्त्रियों को बाँधकर आकाश-मार्ग से उड़ चलते हैं। सहायता के लिए दुर्योधन युधिष्ठिर से याचना करता है। युधिष्ठिर की आज्ञा से अर्जुन गन्धर्वों को आकाश में उड़ते देख चारों ओर वाणों का विस्तृत जाल-सा फैलाकर उन्हें आकाश में ही घेरे में डाल देते हैं।[1]

1- महाभारत (द्वितीय खण्ड), वनपर्व, पृ0-1647

पाण्डवों के वनवास के समय एक बार इन्द्र उनसे मिलने आते हैं, इसी समय अन्तरिक्ष में देवताओं के सम्पूर्ण वाद्यों की तुमुल ध्वनि गूँज उठती है। पाण्डवों ने प्रसन्नतापूर्वक उस ध्वनि की ओर देखा, तो उन्हें देवराज इन्द्र दृष्टिगोचर हुए जो सम्पूर्ण देवताओं के साथ आकाश मार्ग से आ रहे थे। गन्धर्वों व अप्पसराओं के समूह सूर्य के समान तेजस्वी विमान पर आरूढ़ देवराज इन्द्र को चारों ओर से घेरकर उन्हीं के पथ का अनुसरण कर रहे थे।[1]

'कथासरित्सागर' में वत्सराज उदयन और कलिंगसेना की कथा में, एक रात महल में सभी व्यक्तियों के सो जाने के बाद वत्सराज उदयन और उसका योग्य मंत्री xxx यौगन्धरायण कलिंग सेना के निवास भवन में जाते हैं, जहाँ उन्हें कलिंगसेना के साथ वत्सराज का रूप धारण किए मदनवेग नाम का विद्याधर सोया मिलता है। राजा द्वारा उसको मारने के लिए तलवार उठाने पर वह अपनी विद्या से वत्सराज का रूप छोड़कर विद्याधर बन जाता है तथा शीघ्र ही उठकर भवन से बाहर निकलकर आकाश-मार्ग में उड़ जाता है।[2] ये सभी अतिप्राकृत शक्तियों द्वारा आकाश-गमन करने के उदाहरण हैं।

अतिप्राकृत शक्तियों की सहायता से मनुष्य के आकाश-गमन करने के वर्णन भी मिलते हैं। महाभारत में, 'गन्धमादन पर्वत एवं बद्रिकाश्रम की यात्रा के समय मार्ग में जब पाण्डव, द्रौपदी सहित थक जाते हैं , तब भीमपुत्र, राक्षसश्रेष्ठ , आकाशचारी, हिडिम्बानन्दन घटोत्कच अपने पिता की आज्ञा से द्रौपदी को आपनी पीठ में बैठाकर आकाश-मार्ग से चलने लगता है तथा उसके अन्य आकाशचारी राक्षस साथी सभी पाण्डवों को अपनी-अपनी पीठ मे बैठाकर आकाश-मार्ग में साथ-साथ चलते हैं। लेकिन पाण्डवों के साथ तीर्थयात्रा को चल रहे अनुपम तेजस्वी महर्षि लोमश अपने ही प्रभाव से दूसरे सूर्य की भाँति सिद्धमार्ग

1- महाभारत (द्वितीय खण्ड), वनपर्व, पृ0-1414

2- कथासरित्सागर (प्रथम खण्ड), षष्ठ लम्बक, सप्तम तरंग, पृ0 ·773

अथवा आकाशमार्ग से चलते हैं। इस प्रकार महावेगशाली और तीव्रगति से आकाश मार्ग में चलने वाले उन राक्षसों पर सवार होकर वीर पाण्डव उस विशाल पर्वत को शीघ्रता से पार कर बद्रिकाश्रम तीर्थ पहुँच जाते हैं।'[1]

'आकाश-गमन' कथाभिप्राय से सम्बंधित दूसरे वर्ग में वे कथायें आती हैं, जिनमें तंत्र-मंत्र आदि यौगिक क्रियाओं के द्वारा आकाश-गमन सम्भव होता है। 'कथासरित्सागर' में कालरात्रि की पूरी कथा ही इस उड़ने की विद्या को लेकर कही गयी है। कथा में, 'महाराज आदित्यप्रभ की रानी कुवलमानी ने अविवाहित अवस्था के समय एक बार उचित पति की प्राप्ति के लिए गणेश पूजन किया । बगीचे के एकान्त स्थान में स्थित विघ्नराज की पूजा के उपरांत अकस्मात उसने देखा कि उसकी सखियाँ, अपनी सिद्धि के प्रभाव से उछलकर आकाश में पक्षियों के समान उड़ रही हैं। यह देखकर आश्चर्य से उसने सखियों को बुलाकर इसके बारे में पूछा तो सखियों ने कहा कि मनुष्य का मांस खाने से प्राप्त होने वाली ये डाकिनी-मंत्रों की सिद्धियाँ हैं तथा कालरात्रि नामक की ब्राह्मणी इस विषय में हमारी गुरु है। आकाश में चलने की सिद्धि के लिए लोलुप होने पर भी मानव-मांस खाने से भयभीत हो वह कुछ समय तक तो सोचती रही किन्तु उस सिद्धि का लोभ न रोक सकी और अपनी सखियों से दीक्षा दिलवाने को कहा। जिससे वे सहेलियाँ उसी समय विकट आकृतिवाली कालरात्रि को बुला लाई, जिसकी मिली हुई भौहें, नीली आँखें, धँसी हुई चिपटी नाक, फूले लटके हुए स्तन, फूला हुआ पेट, कटे और फूले पाँव थे, मानो विधाता ने कुरूपता के निर्माण में अपनी विशेषता का प्रदर्शन किया हो। पैरों पर झुकी हुई (प्रणाम करती हुई) और स्नान करके गणेश का पूजन किए हुए उस कुवलयावली (राजकुमारी कुवलयानी) को नंगी करके कालरात्रि मण्डल के बीच बैठकर भैरव की पूजा करने लगी। तदनन्तर उसने कुवलयावली का अभिषेक करके उन मंत्रों की दीक्षा दी और देवताओं द्वारा भोग लगाया हुआ मनुष्य का मांस खाने को दिया। मंत्रों की दीक्षा लेकर व मनुष्य के मांस का भक्षण

1- महाभारत (द्वितीय खण्ड), वनपर्व, पृ0-1349 व 1350

करके कुवलयानी नंगी ही सखियों के साथ आकाश में उड़ने लगी।'[1] कुवलयावली की उपर्युक्त कथा इस विद्या का साधना पक्ष है, जिसका सम्बंध तांत्रिक आचारों और साधनाओं से है।

इस वर्ग की कथाओं का विशिष्ट रूप मंत्राभिषिक्त वस्तुओं की सहायता से आकाश-मार्ग में यात्रा करना है। 'कथासरित्सागर' में, राजा त्रिभुवन एक पाशुपत (शैव) की सलाह पर जंगल में जाकर एक गुफा में प्रवेश करते हैं, जहाँ एक असुर कन्या उन्हें प्रेम से अन्दर ले जाती है तथा एक खड्ग भेंट करती है, जो सब सिद्धियों को देने वाला तथा आकाश में गति प्रदान करने वाला है तथा इस खड्ग को धारण करते ही यह सिद्धि प्राप्त हो जाती है।[2]

इस तरह, 'आकाश-गमन' की विद्या देवताओं और विद्याधरों तक ही सीमित नहीं रही बल्कि मनुष्य भी इन विद्याओं को प्राप्त कर सकता था। 'कथासरित्सागर' में 'मय-दानव' को इस तरह की विद्याओं का सर्वज्ञाता माना गया है। राजकुमार सूर्यप्रभ मय-दानव के साथ पाताल लोक जाकर उससे अन्य विद्याओं के साथ विमान बनाने की विद्या भी सीखता है, जिससे सूर्यप्रभ ने भूतासन नामक विमान का निर्माण किया, तथा उससे मंत्रियों के साथ विभिन्न देशों की सरलतापूर्वक आकाश-मार्ग से यात्रा की।[3]

'कथासरित्सागर' में ही, राज्यघर बढ़ई की कथा में, 'कांची में मय-दानव से आविष्कृत यंत्रों के निर्माण में कुशल दो बढ़ई भाई रहते हैं। जिनमें से बड़ा भाई वेश्या-व्यसन के लिए धन-प्राप्ति के उद्देश्य से रस्सी में बँधे हुए काठ के उड़ने वाले हंसों की जोड़ी बनाता है तथा उसकी सहायता से रात को वह राजा के खजाने से धन उड़ाता है।

1- कथासरित्सागर (प्रथम खण्ड), तृतीय लम्बक, छठा तरंग, पृ0-389

2- कथासरित्सागर (द्वितीय खण्ड), नवम् लम्बक, षष्ठ तरंग, पृ0-665

3- कथासरित्सागर (द्वितीय खण्ड), अष्ठम लम्बक, प्रथम तरंग, पृ0-235

यंत्र के पकड़े जाने से भुद खुलने के भय से वे दोनों भाई माया-मय यंत्रों वाले विमान (आकाश-यान) में अपने परिवार सहित बैठकर शीघ्र ही आठ सौ कोस उड़कर निकल जाते हैं।'[1] राजा नरवाहनदत्त राज्यधर बढ़ई के द्वारा बनाये गये वायु-यंत्र विमान की सहायता से कर्पूरसंभव-द्वीप पहुँचते हैं तथा उसके बड़े भाई प्राणधर द्वारा बनाये गये उससे भी बड़े वायुयान पर बैठकर कौशाम्बी लौट आते हैं।[2] 'महाभारत' में, धनाध्यक्ष कुबेर विश्वकर्मा द्वारा निर्मित सुन्दर एवं श्रेष्ठ पुष्पक-विमान का इस्तेमाल करता है , जो विचित्र निर्माण कौशल की पराकाष्ठा थी।[3]

बुन्देली लोककथाओं में उड़ने वाले काठ के घोड़े बनाये जाने का उल्लेख मिलता है। 'बढ़ई का कुँवर'[4] लोककथा में , 'राजा की आज्ञा से बढ़ई का कुँवर एक काठ का घोड़ा तैयार कर उसे लेकर राजदरबार में पहुँचता है तथा राजा से कहता है कि आपकी आज्ञा से यह घोड़ा तैयार है, जो सवार आपके यहाँ बहुत चतुर हो उसे इस घोड़े पर बैठाइए तभी वह अपनी करामात दिखायेगा। राजकुमार यह कहकर कि मैंने बड़े-बड़े घोड़ों की सवारी की है, यह काठ का घोड़ा क्या चीज है? घोड़े पर छलाँग लगाकर उस पर सवार हो जाता है, उसी क्षण वह काठ का घोड़ा उड़कर आसमान में जा पहुँचता है और देखते ही देखते लोगों की निगाह में ओझल हो जाता है।'

'सब्जपरी' बुन्देली लोककथा में, 'राजकुमार सब्जपरी को ढूँढ़ता हुआ, उसके पास पहुँचता है तथा सब्यपरी की सलाह पर उसकी जादूगरनी माँ को अपनी मौसी बना लेता है। एक दिन राजकुमार जादूगरनी से पूछता है कि मौसी महल में हमेशा बन्द रहने

1- कथासरित्सागर (द्वितीय खण्ड), सप्तम लम्बक, नवम् तरंग, पृ0 193 व 195

2- वही, पृ0 207 से 221 तक

3- महाभारत (द्वितीय खण्ड), वनपर्व, पृ0-1403

4- बुन्देलखण्ड की ग्राम्य-कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-157

वाले इन कोठों में क्या है? इस पर जादूगरनी एक कमरे का ताला छोड़कर कहती है कि देखो यह 'काठ का घोड़ा' है,इस पर बैठकर आकाश की सैर की जाती है। राजकुमार के कहने पर उसने काठ के घोड़े पर बैठने, चलने और लौटने की युक्ति बतला दी। अब क्या था राजकुमार काठ के घोड़े पर बैठकर आकाश की सैर करने लगा। आगे बहाना बनाकर राजकुमार दूसरा कोठा खुलवाकर 'पानी की पुड़िया' भी प्राप्त कर लेता है, जिसके इस्तेमाल से भयंकर आग भी बुझ जाती थी। एक दिन राजकुमार ने कहा कि मौसी इस तीसरे कोठे में क्या रखा है? मालूम होता है कि इसमें बहुत कीमती वस्तु रखी है। इस पर जादूगरनी ने कहा कि बेटा इसमें 'उड़न-खटोला' रखा है। राजकुमार के द्वारा उसके गुण पूछने पर वह बोली कि काठ के घोड़े पर एक ही आदमी बैठ सकता है पर उड़नखटोले पर एक साथ कई आदमी बैठकर एक घण्टे में हजारों मील की गति से आकाश मार्ग से चल सकते हैं। राजकुमार ने आग्रह करके उड़न-खटोला को चलाना भी सीख लिया। एक दिन जब जादूगरनी बाहर गयी हुई थी तब राजकुमार उड़न-खटोले पर राजकुमारी को बिठाकर आकाश में उड़ने लगा।'[1]

लोककथाओं में, इस तरह के 'उड़न-खटोला' के माध्यम से नायक-नायिका अपने मनचाहे स्थानों की यात्राएँ करते हैं। 'मित्र हो तो ऐसा'[2] बुन्देली लोककथा में, 'राजकुमार अपने बढ़ई मित्र के साथ साधु द्वारा दिए गये 'उड़न-खटोले' पर बैठकर आकाश मार्ग में उड़ने लगता है तथा कुछ समय बाद समुद्र पार सिंहलद्वीप जा पहुँचता है । जहाँ पर नगर के बाहर सुन्दर बगीचे में उड़नखटोले को उतारता है।' इसी तरह 'केतकी के फूल' बुन्देली लोककथा में, 'बहेलिए का लड़का केतकी के फूलों की तलाश में अपने ससुर राजा से उड़न-खटोला लेकर सात समुन्दर पार टापू में पहुँचने का निश्चय करता है। पुरजा घुमाते ही उड़न खटोला आकाश में मंडराने लगता है, उसकी चाल क्रमशः तेज होने लगती है और

1- बुन्देली लोककहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0 22 व 23

2- पाषाण नगरी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0 98 व 99

वह आकाश में छक-छक-छक करता हुआ चलने लगता है। बहेलिये का लड़का उड़न-खटोला में बैठा हुआ खुश होता है, उड़ते-उड़ते वह कुछ दिन बाद सात समुन्दर पार टापू पर जा पहुँचता है।'[1]

'चाँदी का चबूतरा सोने का पेड़'[2] नामक मध्यदेश की लोककथा में, 'छोटा राजकुमार अपने पिता के सपने को खोने निकलता है तथा साधु की सहायता से बंसीवाला परी से मिलता है, जो राज इन्द्र के दरबार में नृत्य करने जाती है। 'एक दिन राजकुमार बंसीवाला तथा अन्य परियों के साथ उड़न-खटोला में सवार होकर इन्द्र के दरबार में पहुँचता है तथा वहाँ अपनी गायन-विद्या से इन्द्र को प्रसन्न कर बंसीवाला को प्राप्त कर लेता है। अब राजकुमार फिर से उड़नखटोला में बैठकर बंसीवाला परी के साथ साधु की कुटिया में वापस आ जाता है।'

इसी तरह , 'बीरन पटवा की बेटी'[3] बुन्देली लोककथा में, 'पटवा की बेटी इन्द्र के अखाड़े की परी है, जिसके सुन्दर कपड़ों को देखकर राजकुमार उससे विवाह कर लेता है। बेटी दिन भर तो राजकुमार के पास रहती थी, और रात को इन्द्रसभा में नृत्य करने चली जाती थी। एक रात जब इन्द्र का उड़नखटोला पटवा की बेटी को लेने आया तो राजकुमार उसका पाया पकड़कर इन्द्र के दरबार में पहुँच जाता है। वहाँ राजकुमार महफिल में इतना बढ़िया तबला बजाता है कि इन्द्र प्रसन्न होकर उससे वर माँगने को कहते हैं, जिससे त्रिवाचा हटाकर बेटी को प्राप्त कर लेता है तथा पटवा की बेटी को लेकर वापस आकर आनन्दपूर्वक रहने लगता है।'

1- केतकी के फूल, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-5 व 6

2- बालहंस (लोककथा विशेषांक), दिसम्बर (द्वितीय) 93, पृ0-45 व 46

3- जैसी करनी वैसी भरनी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-30-32 तक

इस तरह, लोककथाओं में काठ का घोड़ा एवं उड़नखटोला के माध्यम से नायक आकाश-मार्ग से कभी सात समुन्दर पार किसी द्वीप में पहुँचकर अपूर्व सुन्दरी को प्राप्त करता है। तो कभी उड़नखटोला पर बैठकर इन्द्र के दरबार में पहुँच जाता है, जहाँ अपनी गायन-विद्या से सबको चमत्कृत करके मनचाही सुन्दरी परी को प्राप्त करके वापस आ जाता है।

लोककथाओं में 'काठ के घोड़े' की तरह उड़न-खटोला' बनाने वालों का भी उल्लेख मिलता है जिसे प्रायः नायक का बढई मित्र बनाना सीखता है। इस उड़न-खटोला के माध्यम से आगे चलकर नायक-नायिका को संकट के समय बचाया जाता है। 'स्वर्णकेशी'[1] बुन्देली लोककथा में, 'राजकुमार को उसकी उदंडता पर सात साल का देश निकाला होता है। वह अपने तीन अन्य मित्रों - लुहार, बढ़ई व बहेलिया के लड़कों के साथ निकल पड़ता है। रास्ते में, एक नगर के बाजार में राजकुमार की नजर एक 'उड़नखटोले पर पड़ती है, जिसकी कीमत एक हजार रूपए व उसे बनाने की सीखने के लिए एक हजार रूपए कुल दो हजार रूपए चुकाकर राजकुमार अपने बढ़ई मित्र को उड़न-खटोला बनाने की विधि सीखने के लिए वहाँ छोड़ कर आगे बढ़ जाता है। आगे जब राजकुमार स्वर्णकेशी राजकुमारी को खोकर अपने प्राण भी गँवा बैठता है तब अपने तीनों मित्रों की सहायता से उसके प्राण पुन. वापस आते हैं। तथा राजकुमारी का भी पता चल जाता है। जिस नगर के राजा ने राजकुमारी का अपहरण कराया था वहाँ पहुँचकर बढ़ई का लड़का उड़नखटोला को लेकर नगर में तमाशा दिखाता है तथा मौका देखकर राजकुमारी को ले उड़ता है, रास्ते में राजकुमार व उसके अन्य दो मित्र भी मिल जाते हैं। चारों मित्र व राजकुमारी सकुशल राजकुमार के पिता के नगर में वापस आ जाते हैं।'

'शूरवीर और सत्यवादियों की कहानी'[2] नामक राजस्थानी लोककथा में भी राजकुमार

1- बुन्देलखण्ड की ग्राम्य कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-76 से 84 तक

2- हमारी लोककथाएँ, शिवसहाय चतुर्वेदी व कन्हैयालाल सहल, पृ0 -124 से 141

का बढ़ई मित्र उड़न-खटोले को बनाने का हुनर सीखता है। आगे राजकुमारी फूलमती को खोकर जब वह अपने प्राण गवाँ बैठता है तब उसके तीनों मित्र राजकुमारी को छुड़ाकर उड़नखटोले में बैठाकर लाते हैं। तथा राजकुमार पुनः जीवित होकर अपने मित्रों व राजकुमारी के साथ अपने पिता के यहाँ लौट आता है।' इस तरह संकट में पड़े हुए राजकुमार व राजकुमारी को उड़न-खटोले से सहायता मिलती है।

.लोककथाओं में उड़नखटोले का प्रयोग बहुतायत से मिलता है। 'भाग्य और पुरुषार्थ'[1] बुन्देली लोककथा में, 'राजा की आज्ञा से लखटकिया राजकुमार राजा की लड़की के लिए दूसरी सोने की पायलियाँ लेने छह माह का समय लेकर राज्य से निकलता है। साधु की सहायता से वह एक मकान की आठवीं कोठरी में बन्द सोलह साल की अपूर्व सुन्दरी के पास पहुँचता है, जो उसकी सुन्दरता पर मोहित हो जाती है। असल में वह सात डायनों की लड़की थी, जिनके मारे बारह कोस तक का मनुष्य नहीं बचता था। एक दिन डायनें उसे देखकर खाने को दौड़ती है, जिससे वह साधु द्वारा दिया गया करामाती डंडा आगे कर देता है। जिससे डरकर उन्होंने लखटकिया को निर्भय कर कुछ माँगने को कहा। लड़की द्वारा पहले से ही समझाये जाने पर वह डायनों से खटुलिया (उड़नखटोला) और बाँस की पुंगलिया (बाँसुरी) माँग लेता है। कुछ दिन बाद लड़की से विवाह कर वहाँ विदा लेता है, विदा के समय लड़की के रोने से जितने ही आँसू गिरे, उतनी ही पायलियाँ बन गयी। दोनों उड़नखटोले पर बैठकर वहाँ से चल दिये।' लोककथाओं में प्रायः ऐसी पादुकाओं व मृगछाल का भी वर्णन मिलता है, जिन्हें धारण कर कोई व्यक्ति आकाश में उड़कर एक स्थान से दूसरे स्थान पर जा सकता है।[2]

आकाश मार्ग में उड़ने के लिए पक्षियों का प्रयोग भी किया जाता है। 'पाषाण-नगरी' बुन्देली लोककथा में हंस का प्रयोग हुआ है। इस कथा में, 'छोटा राजकुमार पाषाण

1- पाषाण नगरी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0 184 से 188 तक

2- दृष्टव्य-हमीरपुर गजेटियर (1909) में प्रकाशित पूर्वोक्त घटना

नगरी की खोज में निकलता है।गंगाजी द्वारा दिए गये दो हंसों पर सवार होकर वह चलता है तथा बीच गंगा में पहुँचने पर दोनों हंस डुबकी लगाकर उसे पाषाण नगरी के द्वार पर पहुँचा देते हैं। यहाँ की राजकुमारी इन्द्रसभा की नर्तकी थी, जिसने राजकुमार को महल के कोने में स्थित चार कोठों को न खोलने की हिदायत देकर इन्द्र के दरबार को चली गयी। राजकुमार ने तीन दिनों में क्रमशः तीन कोठे खोले जिनमें से पहले में एक नौका, दूसरे में एक श्यामकर्ण घोड़ा व तीसरे में एक सफेद हाथी बँधा पाया। अब राजकुमार नाव से समुद्र की, श्यामकर्ण घोड़े से तीनों लोकों की तथा हाथी पर बैठकर इन्द्रलोक की यात्रा करने लगा।'[1] इस लोक में राजकुमार हंसों, नाव, श्यामकर्ण घोड़ा व सफेद हाथी की सहायता से आकाश-मार्ग व जलमार्ग की यात्रायें इच्छानुसार सम्पन्न करता है।

लोककथाओं में, उड़ने वाले पक्षी, यथा- गरुड़, हंस आदि का उल्लेख मिलता है,जिनकी पीठ पर बैठकर नायक दूरस्थ स्थान में निवास करने वाली नायिका के स्वप्निल लोक में पहुँच जाता है। 'राजहंस' बुन्देली लोककथा में, 'राजकुमार एक हंस की प्राण-रक्षा करता है,जिसके बदले वह राजकुमार का मित्र बनकर उसे अपनी पीठ में बैठाकर मानसरोवर में अपने माता-पिता के यहाँ ले जाता है। एक दिन, मन बहलाव के लिए हंस राजकुमार को अपनी पीठ पर बैठाकर एक सुनसान बगीचे में ले जाता है, जहाँ राजकुमार की मुलाकात ढ़ाई-फूलों से तुलने वाली राजकुमारी से होती है, जो राजकुमार पर मोहित हो जाती है। अगले दिन सवेरे राजकुमारी जब फूलों से तुलती है तो ढेरों फूल चढ़ते हैं। राजा ने सोचा कि हो न हो कोई पुरुष राजकुमारी से चोरी-छिपे मिलता है। अन्त में, राजकुमार पकड़ा जाता है तथा उसे दण्डस्वरूप शूली पर चढ़ाने का आदेश होता है। राजकुमार सूली पर चढ़ाये जाने से पहले पीपल के पेड़ पर चढ़कर अपनी जन्मभूमि की ओर एक बार देख लेने की इच्छा प्रकट करता है, जिससे उसकी बेड़ियाँ खोल दी जाती हैं। राजकुमार पेड़

1- पाषाण नगरी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-13 से 17 तक

पर चढ़ता है, उसी समय राजहंस महल पर से राजा की बेटी को अपनी पीठ पर बैठाकर पेड़ के पास पहुँच जाता है, राजकुमार भी तुरन्त हंस पर सवार हो जाता है। सब के देखते-देखते हंस राजकुमार व राजकुमारी को लेकर उड़ जाता है।'[1]

'कथासरित्सागर' में, लोहजंघ की कथा के अनुसार,'एक गरुड़वंशी पंक्षी लोहजंघ को अपनी चोंच में उठाकर समुद्र के पास टापू में ले जाता है, जो विभीषण द्वारा शासित लंका है। विभीषण उसे दिव्य प्रभाववाला व्यक्ति समझता है, लोहजंघ के मथुरा वापस लौटते समय उसे बहुमूल्य रत्न देता है तथा मथुरापति भगवान को भेंट देने के लिए सोने के शंख , चक्र, गदा व पद्म बनवाकर भक्तिपूर्वक लोहजंघ को देता है। विभीषण से प्राप्त समस्त धन को लेकर लोहजंघ एक बार में सौ योजन उड़ने वाले उस गरुड़ जातीय पक्षी पर बैठकर आकाश मे उड़कर समुद्र पार करता हुआ बड़े आराम से मथुरा आ जाता है। मथुरा आकर वह नगरी के बाहरी भाग में स्थित बौद्धविहार में आकाश-मार्ग से उतरता है। प्राप्त धन को वहीं भूमि पर गाड़कर, उस गरुड़वशी उड़ने वाले पक्षी को भी वहीं बाँध देता है।'[2]

निष्कर्षतः 'आकाश-गमन' कथाभिप्राय लोकविश्वास एवं कविकल्पित दोनों ही धारणाओं पर आधारित है। प्राचीनकाल में, देवताओं के अलावा विद्याधर, असुर , राक्षस, गन्धर्व , बेताल आदि अतिप्राकृत शक्तियाँ इस अलौकिक विद्या (आकाश-गमन) तथा इसी तरह की अनेकों विद्याओं की जानकारी के लिए ख्यात थे। उनके सम्बंध में यह लोकविश्वास था कि वे अपने विद्या-बल से आकाश में उड़ सकते हैं, इच्छानुसार अपना रूप बदल सकते हैं। मध्यकाल में सिद्ध, कापालिक आदि तंत्र-मंत्र पर आधारित ऐसी विद्याओं के ज्ञाता माने गये, जो अपनी सिद्धियों के द्वारा आकाश-गमन करने में सक्षम थे। उस समय के ऐसे अनेक

1- बुन्देली लोककहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-11 से 16 तक

2- कथासरित्सागर (प्रथम खण्ड), द्वितीय लम्बक, चतुर्थ तरंग, पृ0-189 व 191

वर्णन उपलब्ध होते हैं, जिसमें कोई सिद्ध पुरुष अपनी खड़ाऊँ या मृगछाल की सहायता से आकाश-मार्ग से एक स्थान से दूसरे स्थान की यात्रा करते दिखाया जाता है। किसी पक्षी, यथा- गरुड़, हंस आदि की पीठ पर बैठकर यात्रा करना पूर्णतः कविकल्पित व सम्भावनाओं पर आधारित घटना है। यद्यपि पौराणिक आख्यानों में, विष्णु के वाहन गरुड़ पक्षी का उल्लेख मिलता है, जो आकाश-मार्ग में, मन की गति से भी अधिक तेज चलने में सक्षम है।

इस कथाभिप्राय से सम्बंधित लोककथाओं का अध्ययन करने पर मालूम होता है कि आकाश-गमन की विद्या केवल देवताओं, विद्याधरों, सिद्धों तक ही सीमित नहीं रह सकी बल्कि सामान्य मनुष्य भी इन विद्याओं को प्राप्त करते दिखाया जाता है। लोककथाओं में इस विद्या को अच्छी तरह से सीखकर और अभ्यास करके प्राप्त किया जाता है, साथ ही चोरी से सुनकर इसे जान लिया जाता है, तो कभी धोखे से फुसलाकर भी इसे प्राप्त कर लिया जाता है। परिस्थिति और आवश्यकता के अनुसार कथक्कड़ जब चाहे नायक-नायिकाओं को इस विद्या से युक्त तथा आकाश-मार्ग से एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचा सकता है।

'आकाश-गमन' कथाभिप्राय के लोककथाओं में प्रयोग से कथक्कड़ को कथा में कई रोमांचक घटनाओं की योजना करने का अवसर मिलता है,जिससे लोककथाओं में कभी तो जटिल गुत्थियों को सुलझाने में सहायता मिलती है और कभी कथा को आगे बढ़ाने के लिए इसे कथा-कौशल के रूप में प्रयोग किया जाता है।

*****

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

अध्याय-बारह

'इच्छित भोज्य-पदार्थ देने वाले पात्र'

(1) ईश्वरीय कृपा से प्राप्ति- भगवान सूर्य, शिव-पार्वती, देवराज इन्द्र, भगवान राम, गणेश जी

(2) सिद्ध पुरुष या साधु के आर्शीवाद से प्राप्ति

(3) अतिमानवीय प्राणियों द्वारा प्राप्ति-

(क) खुश होकर- सर्प, अन्नपूर्णा

(ख) डरकर - प्रेत, परियाँ ।

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

भारतीय कथाओं में इच्छित पदार्थ प्रदान करने वाले ऐसे पात्रों का उल्लेख मिलता है, जिनसे मनचाही भोज्य-वस्तुएँ तुरन्त प्राप्त की जा सकती हैं। साथ ही ऐसे पात्रों का प्रभाव दीर्घकाल तक बना रहता है, इसलिए इन्हें 'अक्षय-पात्र' भी कहा जाता है। इस अभिप्राय की परम्परा प्राचीन काल से प्राप्त होती है। दैविक तथा चमत्कारिक शक्ति पर आधारित होने के कारण इस अभिप्राय के उदाहरण धार्मिक कथाओं में बहुत मिलते हैं। महाभारत, पुराणों तथा कथासरित्सागर में इस अभिप्राय के असंख्य उदाहरण प्राप्त होते हैं।

भारतीय कथाओं में देवी-देवताओं द्वारा इच्छित भोज्य-पदार्थ प्रदान करने वाले पात्रों का वर्णन मिलता है। 'महाभारत' में, 'पाण्डवों के वनवास के प्रारम्भ में युधिष्ठिर की तपस्या से प्रसन्न होकर भगवान सूर्य ने उन्हें एक 'अक्षय-पात्र' प्रदान करके कहा था कि बारह वर्ष तक इसके द्वारा मैं तुम लोगों को भोजन दिया करूँगा। इसकी विशेषता यह है कि द्रौपदी हर रोज चाहे जितने लोगों को इस पात्र में से भोजन खिला सकेगी। परन्तु सबके भोजन कर लेने के बाद जब द्रौपदी स्वयं भी भोजन कर चुकेगी, तब फिर इस बरतन की शक्ति अगले दिन तक के लिए लुप्त हो जायगी। इसीलिए पाण्डवों के यहाँ आश्रम में सबसे पहले ब्राह्मणों और अतिथियों को भोजन दिया जाता था। फिर सब भाईयों के भोजन कर लेने के बाद युधिष्ठिर भोजन करते थे। जब सभी भोजन कर चुकते तब अन्त में द्रौपदी भोजन करती और बरतन मांज-धोकर रख देती थी। एक समय दुर्योधन की प्रार्थना पर दुर्वासा ऋषि अपने शिष्यों सहित वहाँ पधारे, उस समय सभी को खिला-पिलाकर द्रौपदी भी भोजन कर चुकी थी। इसलिए सूर्यदेव द्वारा दिया गया अक्षयपात्र उस दिन के लिए खाली हो चुका था। भोजन न मिलने पर दुर्वासा ऋषि क्रोधित होकर पाण्डवों को कोई शाप दे देते। अतः संकट की इस घड़ी में द्रौपदी ने श्रीकृष्ण का स्मरण किया। उन्होंने वहाँ आकर द्रौपदी के अक्षय-पात्र मांगा तथा उसकी पेंदी में कहीं चिपका चावल का एक कण अपने मुँह में डाल लिया, जिससे शिष्यों सहित दुर्वासा ऋषि का बिना खाये-पिये ही पेट फूलने लगा तथा वे युधिष्ठिर से खेद प्रकट करके वापस लौट गये।'[1]

1- महाभारत-कथा, चक्रवर्ती राजगोपालचारी, पृ0-175

भारतीय कथाओं में 'कामधेनु' का भी उल्लेख मिलता है, जो मनुष्य को इच्छित भोज्य-वस्तुएँ पल भर में उपलब्ध करा देती है। 'पुराणों में विश्वामित्र के सम्बंध में एक आख्यान मिलता है- 'ये राजा गाधि के पुत्र व क्षत्रिय राजकुमार थे। एक बार महर्षि वशिष्ठ के आश्रम में राजकुमार विश्वामित्र अपने दल-बल सहित पधारे। वशिष्ठ ने कामधेनु की पुत्री (कपिला) की सहायता से थोड़ी ही देर में सभी के लिए खाने-पीने की उत्तम व्यवस्था की। जब विश्वामित्र को यह सब मालूम हुआ तो उन्होंने कामधेनु की पुत्री को लेना चाहा परन्तु वशिष्ठ ने देने से इन्कार कर दिया। इस पर विश्वामित्र ने क्रोधित होकर लड़ाई छेड़ दी, परन्तु वशिष्ठ के ब्रह्म-बल के आगे उनका क्षत्रियबल कुछ काम न कर सका तथा कामधेनु की पुत्री स्वर्गलोक को चली गयी। इससे विश्वामित्र को बहुत आत्मग्लानि हुई तथा उन्होंने घोर तपस्या करके ब्राह्मणत्व प्राप्त किया।'[1]

इसी तरह, कथाओं में 'कल्पवृक्ष' की परिकल्पना मिलती है, जो स्वर्ग में स्थित माना गया है। ऐसी मान्यता है कि इसके नीचे जाने पर मनुष्य को सभी इच्छित वस्तुएँ प्राप्त हो जाती हैं। 'कथासरित्सागर' में जीमूतवाहन की कथा में, किसी समय राजा जीमूतकेतु ने उद्यान में स्थित कल्पवृक्ष के पास जाकर देवता स्वरूप उस वृक्ष से प्रार्थना की, हे देवस्वरूप, हम लोग सदा से तुम्हारे द्वारा अपना मनोरथ सिद्ध करते आए हैं। इसलिए मुझ पुत्रहीन को पुत्र प्रदान करो। तब कल्पवृक्ष ने कहा, हे राजन! तुम्हें पूर्वजन्म का स्मरण करने वाला, प्राणियों का हित करने वाला दानवीर पुत्र उत्पन्न होगा। तदनन्तर शीघ्र ही राजा के यहाँ जीमूतवाहन नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ। प्राणियों पर दया के साथ-साथ वह महात्मा बालक धीरे-धीरे बढ़ने लगा। एक बार युवराज पद को प्राप्त कर वह परोपकारी जीमूतवाहन पिता जीमूतकेतु से बोला, पिताजी, इस संसार में जो कुछ भी है, वह सब नश्वर है। स्थिर रहने वाला केवल यश ही है। इसलिए हमारे यहाँ जो वांछित फल देने वाला कल्पवृक्ष है, मैं चाहता हूँ कि इस वृक्ष की सम्पत्ति से समस्त याचक धनी हो जायें। फिर पिता

1- कल्याण (गीता प्रेस), पुराणकथांक वर्ष-63, सं01, पृ0-432 व 433

से आज्ञा प्राप्त करके जीमूतवाहन ने कल्पवृक्ष से जाकर कहा, हे देव! तुम सदा हमारे अभीष्ट फलों को देते रहे हो, तुम इस पृथ्वी को दरिद्रों से रहित कर दो। धैर्यशाली जीमूतवाहन द्वारा इस प्रकार कहने पर उस कल्पवृक्ष ने भूमि पर प्रचुर स्वर्ण की वर्षा की जिससे सारी प्रजा प्रसन्न हो गयी।'[1]

भारतीय कथाओं में मिलने वाले इन वर्णनों को 'इच्छित भोज्य-पदार्थ देने वाले पात्र' कथाभिप्राय कहते हैं, जिसे निम्न भागों में विभाजित किया जा सकता है-

(1) ईश्वरीय कृपा से प्राप्ति- भगवान सूर्य,शिव-पार्वती, देवराजइन्द्र, भगवान राम, गणेश जी

(2) सिद्ध पुरुष या साधु के आशीर्वाद से प्राप्ति

(3) अतिमानवीय प्राणियों द्वारा प्राप्ति-

(क) खुश होकर- सर्प, अन्नपूर्णा

(ख) डर कर - प्रेत, परियाँ।

लोककथाओं में भूख-प्यास से व्याकुल नायक-नायिका को अचानक किसी देवी-देवता द्वारा दयावश ऐसे पात्रों की प्राप्ति हो जाती है, जिनकी सहायता से वे छप्पन प्रकार के व्यंजनों का स्वाद ग्रहण कर तृप्त होते हैं। इसी तरह, लोककथाओं में अभावग्रस्त नायक को किसी साधु के आशीर्वाद से ऐसे पात्रों की प्राप्ति होती है। लोककथाओं में अतिमानवीय प्राणियों द्वारा नायक से खुश होकर या उससे डरकर भी नायक को ऐसे इच्छित भोज्य-पदार्थ देने वाले पात्र प्रदान करने के वर्णन प्राप्त होते हैं।

1- कथासरित्सागर (प्रथम खण्ड), चतुर्थ लम्बक, द्वितीय तरंग, पृ0 - 433 व 435

बुन्देली लोककथाओं में अक्सर भूख-प्यास से ब्याकुल नायक-नायिका को वहाँ से गुजर रहे शंकर-पार्वती द्वारा कृपास्वरूप ऐसे पात्र प्राप्त होते हैं, जिनकी सहायता से वे मनचाही खाद्यवस्तुऐं प्राप्त करते हैं। 'गड़रिया की बेटी'[1] बुन्देली लोककथा में, "किसी गाँव में एक गड़रिया रहता था। उसकी बड़ी बेटी को सौतेली माँ गाड़रें चराने जँगल में भेजती तथा खाने के लिए सूखी रोटियाँ देती, जो आटे में कंडा मिलाकर बनाती थी। एक दिन उसी जंगल में शिव-पार्वती निकले, उस समय लड़की सूखी रोटियाँ खाने को बैठी थी। पार्वती जी ने यह सब देखकर शिवजी से कहा, इस सीधी सादी लड़की को इसकी सौतेली माँ बहुत तंग करती है, कुछ मदद करिये। पार्वती जी के जिद पकड़ लेने पर शिवजी ने उस लड़की को एक डिब्बी देकर कहा, जब भी खाने की जरूरत हो इस डिब्बी को सामने रखकर कहना कि मुझे खाना चाहिए, तुम्हें छप्पन भोजन तैयार मिल जायेंगे। लड़की ने उस डिब्बी को ले लिया और जंगल में आने के बाद रोज डिब्बी से छप्पन प्रकार के भोजन प्राप्त करके खा लिया करती थी। एक दिन उस राज्य का राजकुमार शिकार खेलने जंगल में आया और पेड़ पर चढ़कर शिकार का इन्तजार करने लगा। लड़की उसी पेड़ के नीचे आयी और डिब्बी सामने रखकर खाने की फरमाइश करने लगी। राजकुमार ने देखा कि पलक झपकते ही खाना हाजिर हो गया। वह अचम्भे में पड़ गया तथा घर वापस आकर गड़रिया की लड़की से शादी करने के लिए खटपाटी लेकर सो गया।"

इसी तरह 'जीजी' बुन्देली लोककथा में, "गड़रिया की लड़की को उसकी सौतेली माँ जंगल में ढोर चरा लाने के लिए भेजती तथा दो-चार भूसी की रोटी रख देती। एक दिन लड़की जंगल में नदी के किनारे बैठकर भूसी की रोटी खा रही थी, परन्तु वे उससे खाई नहीं जाती थी। भूख से व्याकुल होकर वह रोने लगी, उसी समय वहाँ से महादेव-पार्वती निकले तथा लड़की का रोना सुनकर उसके पास जा पहुँचे । लड़की का हाल सुनकर

1- बुन्देलखण्ड की लोककथाऐं- ओमप्रकाश चौबे, 'चौमासा', वर्ष-10, अंक-31, मार्च-जून 93, पृ0-103 व 104

पार्वती जी का हृदय दया से भर गया तथा उनके आग्रह पर शिवजी बोले, बेटी तू इस कबरी गाय की पीठ पर हाथ रख दिया करो, जिससे उसके थनों से दूध गिरने लगेगा, उसे पीकर मस्त रहना। महादेव-पार्वती के चले जाने पर , लड़की ने पत्ता तोड़ दोना बनाया तथा कबरी गाय की पीठ पर हाथ रखकर दूध की धार से दोना भर-भरकर पीने लगी। कुछ दिनों में लड़की मस्त पड़ गयी, जिसे देख सौतेली माँ ने एक दिन जंगल में उसके साथ अपनी लड़की को भेज वास्तविकता मालूम की तथा अपने पति से कहकर उस कबरी गैया को बेंचवा दिया। अब लड़की फिर भूखों मरने लगी तथा पहले के समान दुबली हो गयी। एक दिन महादेव-पार्वती फिर वहाँ से निकले तथा लड़की का हाल सुनकर महादेव जी बोले, तुम इस आम के पेड़ में डंडा मारा करो, जिससे नित्य एक थाल निकला करेगा, खाकर मस्त रहा करना। लड़की आम के पेड़ से निकले हुए थाल का भोजन खा-खाकर फिर मस्त हो गयी। वास्तविकता मालूम होने पर सौतेली माँ ने अपने पति से कहकर उस आम के पेड़ को खरीदकर कटवा दिया, जिससे लड़की फिर भूखों मरने लगी। इस बार महादेव जी बोले, बेटी मैं तुझे वरदान देता हूँ कि जब तू अपना बायाँ पैर फैलायेगी तो गंगा की धारा बह निकलेगी और जब तू दाहिना पैर फैलायेगी तब मनचाहा भोजन मिल जाया करेगा। लड़की अब मजे के साथ रहने लगी। जब भूख-प्यास लगती तो दोनों पैर फैलाकर मनचाहा भोजन करती और पानी पीती। एक दिन एक राजकुमार जंगल में शिकार खेलने आया तथा राह भूलकर भूख-प्यास से ब्याकुल लड़की के पास जा पहुँचा। लड़की ने अपने दोनों पैर फैलाकर छप्पन प्रकार के भोजन तथा पानी राजकुमार के सामने पेश किया। राजकुमार खा-पीकर संतुष्ट हो गया तथा वापस घर जाकर गड़रिया की लड़की के साथ विवाह करने का प्रण करके अन्न-जल ग्रहण करना त्याग दिया।'[1]

स्वयं संग्रहीत 'पंडित-पडिताइन की कथा' में 'एक पंडित व उसकी पत्नी जंगल से गुजरते समय अपने नवजात शिशु को वहीं छोड़ देते हैं। शिशु के रोने की आवाज सुनकर वहाँ घूम रहे शंकर-पार्वती उसके पास पहुँचे। शंकर जी ने अपनी डमरू बजाकर शिशु

1- गौने की बिदा, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-91 से 95 तक

के पास आने वाले सम्भावित कूड़ा - करकट, कीट-पतिंगों को रोक दिया। पार्वती जी ने अपने बायें हाथ की अँगुली काटकर शिशु के हाथ के अँगूठे में लगा दी, जिससे साल भर तक वह दूध पीता रहेगा। इसके बाद उन्होंने जंगल में खाने-पीने के लिए फल-फूल के पौधों को लगा दिया जो एक साल बाद फल देने लगे। इस तरह शिशु की परवरिश हो गई।'[1]

'महाभारत' में इसी तरह 'मानधाता की कथा' मिलती है । जिसके अनुसार 'देवता के समान तेजस्वी शिशु को देखकर देवता आपस में कहने लगे, यह किसका दूध पीयेगा? यह सुनकर देवराज इन्द्र ने कहा, यह पहले मेरा ही दूध पीये। तदनन्तर इन्द्र की अँगुलियों से अमृतमय दूध प्रकट हो गया। क्योंकि इन्द्र ने करूणावश 'माँ धास्यत' (मेरा दूध पीयेगा) ऐसा कहा था, इसलिए उसका नाम 'मानधाता' निश्चित हुआ। तत्पश्चात महामाना मानधाता के मुख में इन्द्र के हाथ ने घी और दूध की धारा बहायी। वह बालक इन्द्र का हाथ पीने लगा और एक ही दिन में बहुत बढ़ गया। वह पराक्रमी राजकुमार बारह दिनों मे ही बारह वर्ष की अवस्था वाले बालक के समान लगने लगा। राजा होने पर मानधाता ने एक ही दिन में सारी पृथ्वी को जीत लिया।'[2]

'सीता की रसोई' बुन्देली लोककथा में,'वनवास के समय राम जी ने सीता जी को प्रायश्चित के रूप में एक किसान के घर बारह महीने तक रहने की आज्ञा दी। सीता जी ने किसान को अपना भाई मानकर उसके घर में रहना शुरू किया। एक दिन सीता जी ने किसान की स्त्री से कहा , भौजी, रोज-रोज रसोई बनाया करती हो, आज मैं बनाऊँगी। किसान की स्त्री ने उन्हें बहुत मना किया लेकिन हठ करके वे रसोई में जा पहुँची। रसोई

1- पंडित-पंडिताइन की कथा, कथक्कड़ - गीता उर्फ गुड्डन, संग्रह क्रमांक- 26 (अप्रकाशित)

2- महाभारत, द्रोणपर्व, अध्याय 62, पृ0-326। व 326।

में उन्होंने देखा कि एक हाँडी, एक तवा और दो-चार मिट्टी के बर्तन हैं, जिनमें ज्वार का आटा, मसूर की दाल और समा के चावल रखे हैं। सीता जी सोचने लगी कि इस समान से मैं रसोई कैसे बना सकूँगी? फिर उन्होंने मन में श्रीराम जी को स्मरण करके कहा, अयोध्या में मेरा जैसा रसोईघर है वैसा ही यहाँ बन जाय। सीता जी के मन में इतना आते ही मिट्टी के बर्तनों की जगह सोने-चाँदी के बर्तन हो गए। रसाई घर घी, दूध , शक्कर और तरह-तरह की खाद्य-वस्तुओं से परिपूर्ण हो गया। अब सीता जी ने छप्पन प्रकार के भोजन तैयार किए तथा सभी को खिलाया। ऐसा भोजन किसान और उसकी स्त्री ने अपने जीवन में पहले कभी नहीं खाया था। अतः वे अपने भाग्य को सराहने लगे।'[1] यह लोककथा बुन्देलखण्ड में स्त्रियों के 'राम - लक्ष्मण व्रत' की कहानी है। इसी तरह व्रत सम्बंधी अनेक कथाओं में व्रत को करने से धन-धान्य की पूर्णता प्राप्त होने के वर्णन मिलते हैं।

ईश्वरीय कृपा से इच्छित भोज्य-पदार्थ प्रदान करने वाले पात्रों का वर्णन अन्य बोलियों की लोककथाओं में भी मिलता है यथा- 'दो भाई' नामक मालवा की लोककथा में, किसी गाँव में दो भाई रहते थे, जिनमें बड़ा अमीर था तथा छोटा गरीब। एक दिन गरीब भाई के यहाँ ईंधन खत्म हो गया। उसने स्त्री के कहने पर बाड़े में जाकर बाप-दादा के जमाने की लकड़ी की गणपति की मूर्ति के टुकड़े ले आने के विचार से मूर्ति के सामने कुल्हाड़ी लेकर पहुँच गया। हाथ जोड़कर उसने कहा, महाराज मैं अपनी मर्जी से नहीं आया हूँ। मेरी स्त्री ने मुझे जबरजस्ती भेजा है। वह भूख से व्याकुल हो रही है। हमें क्षमा करें। इतना कहकर उसने मूर्ति के टुकड़े करने के लिए जैसे ही कुल्हाड़ी तानी कि मूर्ति में से आवाज आई, ठहर-ठहर , तू मेरी तौंद में रोज हाथ डाला कर, तेरा काम हो जाया करेगा। गरीब भाई ने गणपति के चरणों में गिरकर क्षमायाचना की तथा चलते समय तौंद में हाथ डाला, जिससे दस लड्डू और दस बाटी मिल गयी। अब उसका जीवन बड़े आनन्द से कटने लगा। अमीर भाई ने सोचा कि हो न हो, इसे कहीं गड़ा धन मिल गया

1- केतकी के फूल, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-51 से 54 तक

है । एक दिन उसकी स्त्री चूल्हा जलाने के लिए आग लेने का बहाना करके गरीब भाई के घर गयी। गरीब भाई की स्त्री भोली थी। उसने कहा, बहन हमारे यहाँ तो अब चूल्हा ही नहीं जलता तथा मूर्ति से भोज्य-वस्तुए मिलने का सारा हाल कह सुनाया। अमीर भाई की स्त्री ने तुरन्त अपने पति के पास जाकर कहा, गणपति पर तो अपना भी हक है। तुम भी जाकर उनको कुल्हाड़ी से डराओ। आखिर स्त्री की जिद के चलते अमीर भाई कुल्हाड़ी लेकर गणपति के पास पहुँचा। गणेश की मूर्ति ने उससे भी उसी तरह कहा। अमीर भाई ने गणपति की तोंद में हाथ डाला। मगर वहाँ लड्डू-बाटी तो नहीं मिले, उल्टे उसका हाथ ही चिपक गया। काफी देर हो जाने पर उसकी स्त्री भी वहाँ आ पहुँची तथा उसने पति को छुड़ाने की कोशिश की पर वह भी चिपक गयी। इसी तरह छुड़ाने की कोशिश करने पर बाल-बच्चे व नौकर सभी चिपक गए। अब ये गणपति के सामने खूब गिड़गिड़ाये और क्षमा माँगी। काफी देर बाद गणपति बोले, यदि तुम अपनी जमीन, जायजाद दौलत सभी में से आधा हिस्सा अपने गरीब भाई को देना मंजूर करो तो तुम छूट सकते हो। हारकर अमीर भाई ने शर्त मान ली गणपति ने उन्हें छोड़ दिया, उसने अपने गरीब भाई को आधा हिस्सा दे दिया । उस दिन से दोनों भाई आनन्दपूर्वक रहने लगे।'[1]

लोककथाओं में किसी साधु या सिद्धपुरुष के आर्शीवाद से नायक को ऐसे पात्रों की प्राप्ति होती है, जिनकी सहायता से वह मनचाही वस्तुएं प्राप्त करता है। 'संतू और साईं' नामक लोककथा में, 'सन्तू के सात बच्चे थे। गरीबी के कारण वह बच्चों का भरण-पोषण ठीक से नहीं कर पाता था। अतः वहबुद्धिमान साईं के पास गया तथा उससे अपनी व्यथा कही। साईं ने उसे करामाती थैली दी जो 'झड़-थैली-झड़' कहने से सोने की मुहरें बरसाती तथा 'रूक-थैली-रूक' कहने पर रूक जाती। सन्तू के वापस चलते समय साईं ने उसे रास्ते में कहीं रुकने से मना किया था लेकिन वह एक सराय में रुका, जहाँ भेद खोल देने से थैली ठग ली गयी। दूसरी बार आने पर साईं ने हंडिया दी जो उलट देने पर

1- सतवंती, चन्द्रशेखर दूबे, पृ0-7 से 10 तक

मनचाहे व्यंजन देती तथा रुकने को कहने पर रुक जाती है। लेकिन यह भी रास्ते में स्थित सराय में सन्तू के रुकने पर ठग ली गयी। अन्त में साई ने सन्तू को एक रस्सी व डंडा दिया, जो आज्ञा देने पर व्यक्ति को बाँधकर मार लगाते थे। सन्तू इन्हें लेकर सराय में आया तथा ठग व्यक्ति को रस्सी से बाँधकर डंडे से जमकर पिटाई करवाई, जिससे उसने करामाती थैली व हंडिया सन्तू को वापस कर दी। सन्तू इन तीनों चीजों को लेकर साई को वापस करने गया, जिन्हें लेकर साई अज्ञात स्थान को चला गया। अब सन्तू व उसके बच्चे मेहनत करके अपनी रोजी-रोटी कमाने लगे।'[1]

'काग बिड़ारिन'[2] बुन्देली लोककथा में, 'कागबिड़ारिन के तीन बच्चों को उसकी सात सौतें जन्म लेते ही नदी में फिकवा देती हैं तथा उनकी जगह कंकड़-पत्थर रख देती हैं। सौभाग्य से ये तीनों बच्चे नदी के किनारे पर रहने वाले एक साधु को एक-एक करके मिल गये थे। साधु ने उनका लालन-पोषण किया तथा जब वे बड़े हुए तब साधु ने उन्हें नाना प्रकार की विद्याएं सिखाई। अपनी मृत्यु के पहले साधु ने उन तीनों को अपने पास बुलाकर कहा, मैं तुम्हें अपनी माला दिए जाता हूँ। इसके प्रताप से जब तुम जिस वस्तु की इच्छा करोगे, प्राप्त हो जाया करेगी। ऐसा कहकर साधु ने अपने गले की माला उतारकर उन्हें दे दी। इसके बाद साधु की मृत्यु हो गयी।' इसी तरह 'भाग्य और पुरुषार्थ'[3] नामक बुन्देली लोककथा में भी राजकुमार एक साधु की सेवा करके उससे मनचाहा भोजन देने वाली कुण्डी प्राप्त करता है।

लोककथाओं में अतिमानवीय प्राणियों यथा सर्प आदि के द्वारा खुशी होने पर ऐसी वस्तुओं के प्राप्त होने के वर्णन मिलते हैं। जिनकी सहायता से मनचाही भोज्य वस्तुएँ

1- उत्तर प्रदेश की लोककथाएं , सावित्री देवी वर्मा, पृ0-9 से 12 तक

2- बुन्देलखण्ड की ग्राम्य-कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-165 से 169

3- पाषाण नगरी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-190

प्राप्त की जाती हैं। बुन्देली लोककथा 'लक्ष्मी'[1] में, 'एक ग्वाले की पुत्री लक्ष्मी को उसकी सौतेली माँ जंगल में पशु चराने भेजती तथा खाने के लिए गोबर की रोटियाँ बनाकर उस पर आटा लगाकर देती। लक्ष्मी गोबर की रोटियों के ऊपर लगे आटे को चाटकर, रोटियाँ एक पेड़ के नीचे रखती जाती। एक दिन पशु चराते समय एक बहुत बड़ा नाग घबराया आकर लक्ष्मी से बोला, बहन, एक निर्दयी सपेरा मेरा पीछा कर रहा है, तुम मुझे कहीं छिपा लो। लक्ष्मी ने कहा, तुम्हारी रक्षा करना मेरा धर्म है भैया, तुम इन गोबर की रोटियों (कंडों) के अन्दर छुप जाओ। सपेरा आया तथा लक्ष्मी की भोलेपन की बातें सुनकर आगे बढ़ गया। अब नागदेवता बाहर आया तथा प्रसन्न होकन एक छोटी सी भेंट देनी चाही। उसने अपने मुँह से एक चमकती मणि निकालकर कहा, बहन, जमीन पर लीपकर, चौक पूरकर, मणि को उस पर रखकर जब तुम प्रार्थना करोगी तो इस मणि से जो भी माँगोगी वही मिलेगा। नाग के जाने के बाद लक्ष्मी ने मणि की परीक्षा लेने के लिए कहा, मणि रानी, मुझे छप्पन प्रकार के भोजन, जड़ाऊ वस्त्राभूषण दीजिए। तुरन्त स्वर्ण थाली में सारी सामग्री आ गयी, उसने भगवान का भोग लगाकर भरपेट भोजन किया तथा वस्त्राभूषणों से अपना श्रृंगार किया। संन्घ्या होते ही उसने सारा समान मणि आदि कंडों में छिपा, अपने पुराने कपड़े पहन, पशुओं को घेरकर घर आ गयी।'

इसी तरह 'वासुकी नाग की मुदरी'[2] बुन्देली लोककथा में, 'साहूकार का छोटा लड़का एक सर्प को खरीदकर घर लाता है, जिससे उसका पिता उसे घर से निकाल देता है। चलते-चलते नागराज की जन्मभूमि के पास से गुजरता है। सर्प अपने माता-पिता से मिल आने की आज्ञा माँगता है तथा लड़के के साथ अपने पिता वासुकी नाग की बाबी के अन्दर जा पहुँचता है। वासुकी नाग अपने पुत्र के बदले में साहूकार के लड़के को एक 'हाथ की मुदरी' देकर बिदा करता है जिससे किसी चीज की इच्छा करने पर वह तुरन्त मिल जाती है।'

1- बुन्देली लोककथाएँ, बटुक चतुर्वेदी, 'चौमासा,' वर्ष-10, अंक-31 मार्च-जून 93, पृ0-12 व 13

2- बुन्देलखण्ड की ग्राम्य कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-127 से 130

सिंहासन बत्तीसी' की सातवीं कथा, 'एक रात राजा विक्रमादित्य को किसी के रोने की आवाज सुनाई पड़ी। वहाँ पहुँचकर राजा ने देखा कि एक सुन्दर तरुणी धाड़े मार-मारकर रो रही है। राजा ने पूछा तो उसने कहा, मेरा आदमी चोरी करता था, एक रात वह पकड़ा गया तथा सूली पर लटका दिया गया। मैं उसे प्यास से खिलाने आयी हूँ। राजा ने कहा, तुम मेरे कन्धे पर चढ़कर उसे खिला दो। वह स्त्री डायन थी तथा राजा के कन्धे पर सवार होकर उस आदमी को खाने लगी। पेट भर जाने पर उसने खुशी से कहा, जो चाहो सो मांगो। राजा ने कहा, मुझे अन्नपूर्णा दे दो। वह बोली, अन्नपूर्णा तो मेरी छोटी बहन के पास है, उसके पास चलो। वे दोनों अन्नपूर्णा के पास पहुँचे तथा डायन स्त्री ने उसे सब बातें बताई। अन्नपूर्णा ने हँसकर एक थैली राजा को दी और कहा, जो भी खाने की चीज चाहोगे, इसमें से मिल जायगी। राजा ने खुश होकर उसे लेकर चल दिया तथा नदी के किनारे जाकर स्नान-ध्यान, पूजा-पाठ किया। इतने में एक ब्राह्मण वहाँ आया, वह बहुत भूखा था। राजा ने पूछा, क्या खाओगे? तथा उसने जो बताया, वही राजा ने थैली में से निकालकर दे दिया। ब्राह्मण ने भरपेट खाया, फिर बोला, कुछ दक्षिणा भी तो दो। राजा ने कहा, जो मांगोगे, दूँगा। ब्राह्मण ने थैली माँग ली। राजा ने थैली ब्राह्मण को दे दी तथा खुशी-खुशी अपने घर चला आया।'[1]

लोककथाओं में नायक काम ढूँढ़ने के उद्देश्य से घर से बाहर निकलता है। संयोगवश, रास्ते में उसके कथन से डरकर प्रेत, परियाँ आदि उसे मनचाही वस्तुएँ प्रदान करने वाले पात्र दे देते हैं। नायक जब उस वस्तु को लेकर अपने घर वापस लौट रहा होता है, तब रास्ते में उसकी वस्तु बदल ली जाती है। वह पुनः प्रेत, परियों के पास जाकर ऐसी वस्तु प्राप्त करता है, जिसकी सहायता से वह अपनी सभी वस्तुएँ प्राप्त कर लेता है।

1- सिंवाहन-बत्तीसी, यशपाल जैन, पृ0-17 व 18

'बाँध रस्सी लगे सोटा'[1] बुन्देली लोककथा में, 'एक गरीब बुढ़िया का बेटा काम ढूँढ़ने के लिए घर से निकला, माँ ने उसे चार रोटियाँ पोटली में बाँधकर दी। रास्ते में वह बावड़ी में रुका तथा भूख लगने पर चारों रोटियाँ रखकर उनकी परिक्रमा करके कहने लगा, एक खाऊँ, दो खाऊँ, तीन खाऊँ, चारों खाऊँ? उस बावड़ी में चार प्रेत रहते थे, वे समझे यह कोई हमसे भी बड़ा प्रेत आया है, जो हम चारों को खाना चाहता है। अतः डरवश एक प्रेत उपहार लेकर बाहर आकर बोला, हम तुमको एक कढ़ाई देते हैं। इसे लीप-पोतकर, चौकपूरकर उसके ऊपर रखकर कहोगे कि खाने को फलाँ-फलाँ पकवान दो तो यह कढ़ाई देगी। लड़का प्रसन्न हो उसे लेकर वापस घर को चल पड़ा तथा रात हो जाने पर एक सराय में रुका तथा कढ़ाई को सराय की बुढ़िया के पास रख दिया। बुढ़िया को जब कढ़ाई का भेद मालूम हुआ तो उसने लुहार से वैसी ही कढ़ाई बनवा कर सुबह लड़के को दे दी। घर पहुँचकर जब लड़के ने अपनी माँ से लिपवा-पुतवाकर चौक करवा कढ़ाई से भोजन माँगा तो कुछ न मिला। लड़का फिर चार रोटियाँ बँधावाकर बावड़ी में पहुँच गया। इस बार प्रेतों ने उसे उड़न खटोला दिया, जिसे सराय की बुढ़िया ने फिर बदल लिया। तीसरी बार प्रेतों ने मोहरें, अशर्फियाँ देने वाली थैली दी, जिसे सराय की बुढ़िया ने बदल लिया। चौथी बार प्रेतों ने क्रोधित होकर उसे रस्सी और सोटा (बेंत) दिया। लड़का रास्ते में उसी सराय की बुढ़िया के पास रूका। लड़के के सो जाने पर लालची बुढ़िया ने पहले की तरह चौक पूरकर रस्सी सोटा रखकर कहा,- बाँध रस्सी , लगे सोटा। तुरन्त रस्सी बुढ़िया के बदन से लिपट गयी और बेंत उछलकर उसकी पिटाई करने लगा। बुढिया चिल्लाने लगी, जिससे लड़के की नींद खुल गयी। उसने लड़के से कहा, भैया, बचाओ, मैं तुम्हारी सब चीजें लौटा दूँगी। लड़के ने रस्सी-सोटें को रूकने का आदेश दिया। बुढ़िया ने कढ़ाई , खटोला व थैला लाकर लड़के को सौंपकर क्षमा मांगी। लड़का खुशी से उन्हें ले अपने घर आ गया।'

1- बुन्देली लोककथाएँ , बटुक चतुर्वेदी, 'चौमासा,' वर्ष-10, अंक-31, मार्च-जून-93, पृ0-32 व 33

यह अभिप्राय अन्य भाषाओं की कथाओं में भी मिलता है। 'इच्छापूरनी छलनी'[1] नामक राजस्थानी लोककथा में, 'एक दरिद्र ब्राह्मण काम-धन्धे की तलाश में चार रोटियाँ बाँधकर घर से निकला। रास्ते में बरगद के पेड़ के नीचे उसने खाने के लिए पोटली खोल अपने आपसे ही कहने लगा, एक खाऊँ, या दो, या तीन खाऊँ या फिर चारों ही खा जाऊँ? उस पेड़ पर रह रहे चार भूतों ने समझा कि ब्राह्मण उन्हें ही खाने की बात कह रहा है। उन्होंने डरकर ब्राह्मण के सामने आकर कहा, हमारे योग्य कोई सेवा हो तो बताइए। ब्राह्मण ने झट सारी बात समझकर कहा, मेरी आमदनी का कोई साधन नहीं है, कुछ ऐसा करो कि मैं आराम से रह सकूँ। भूत एक छलनी लेकर आये तथा कहा, यह इच्छा पूरी करने वाली छलनी है। इसे हिलाकर जिस चीज की इच्छा हो, उसका नाम लो। बस, वह छलनी से गिर पड़ेगी। ब्राह्मण छलनी लेकर वापस लौट पड़ा। वह इतना खुश और उत्तेजित था कि ज्यादा दूर सफर नहीं कर सका तथा शाम को एक गाँव में जाट के यहाँ रुका। रात को जब ब्राह्मण ने छलनी के द्वारा तरह-तरह की मिठाइयाँ एवं पकवान निकाले तब जाट व उसकी माँ ने छिपकर यह सब देख लिया तथा ब्राह्मण के सो जाने पर उसकी छलनी चुरा ली तथा उसे झोपड़ी के बाहर फेंक दिया। अब ब्राह्मण सीधा बरगद के पेड़ पर जा पहुँचा तथा चिल्लाकर भूतों को पुकारा । वे आकर ब्राह्मण को दण्डवत प्रणाम करने लगे। ब्राह्मण ने छलनी के चोरी हो जाने की बात बताई, इस पर भूतों ने कहा, हम तुम्हें एक लाठी देंगे तुम जिसको कहोगे, उसी को यह पीटने लगेगी। इसके अलावा हम तुम्हें एक शंख भी देंगे, जो बड़ी - बड़ी बातें बनायेगा। ब्राह्मण उन्हें लेकर चल पड़ा तथा फिर जाट के यहाँ रुका। रात को ब्राह्मण अपनी कोठरी में जाकर बोला, ओ शंख, जाट बेचारा बहुत गरीब आदमी है, इसके लिए सौ सिक्के दे दो। शंख से ऐसी आवाज आई, जैसे सिक्के गिन रहा हो। जाट ने यह सुनकर शंख को चुराने की योजना बनाई। ब्राह्मण ने सोने का बहाना किया तथा जाट ने चुपके से जाकर जैसे ही शंख उठाया, ब्राह्मण झट उठ बैठा। वह चिल्लाकर लाठी से बोला, जाट की खूब ठुकाई करो। लाठी ने जाट

1- लखटकिया, लक्ष्मीनिवास बिड़ला, पृ0-39 से 43 तक

को जमकर पीटा। जाट हाल-बेहाल हो ब्राह्मण के पैरों में गिरकर बोला, लो, अपनी छलनी वापस ले लो तथा मेहरबानी करके लाठी को रोक लो। ब्राह्मण ने लाठी को रुकने का आदेश दिया तथा सुबह छलनी लेकर घर जा पहुँचा तथा खूब आनन्द से रहने लगा।'

'परियों की करामात'[1] बुन्देली लोककथा में, 'बुढ़िया का लड़का कमा लाने के उद्देश्य से माँ से रोटियाँ बँधाकर परदेश को चला। दोपहर को एक बावड़ी में भोजन के लिए रोटियाँ निकाली, चार रोटियाँ थीं। लड़के ने कहा, एक खाऊँ, या दो खाऊँ, या तीन खाऊँ या चारों खा जाऊँ। उस बावड़ी के भीतर चार परियाँ रहती थीं, उन्होंने सोचा कि बाहर कोई दाना आ गया, जो हम सब को खाने को कह रहा है। अतः वे डर के मारे लड़के के पास आकर बोली, तुम किसी को भी मत खाओ, हम तुम्हें एक बकरी देती हैं, जो सोने की गिन्नी देगी। लड़के ने बकरी लेकर घर की ओर प्रस्थान किया। रास्ते में वह एक भड़भूजे के यहाँ ठहरा तथा बातचीत के सिलसिले में परियों की दास्तान उससे कह सुनाई। भड़भूजे ने लड़के की आँख बचाकर बकरी बदल ली, जिसे लेकर लड़का घर आया लेकिन बकरी ने गिन्नियाँ नहीं दी। अब लड़का फिर परियों के पास पहुँचा। इस बार उन्होंने उसे एक कढ़ाई दी जो छप्पन प्रकार के भोजन तैयार कर देती थी। लड़का कढ़ाई लेकर रस्ते में भड़भूजे के यहाँ फिर ठहरा था उसने उस कढ़ाई को बदलकर दूसरी कढ़ाई लड़के को दे दी। महीने भर बाद लड़का फिर परियों के पास पहुँचा। इस बार उन्होने रूपये झरने वाली कथरी दी, जिसे भड़भूजे ने आदतन उसे भी बदल दिया। चौथी बार जब लड़का परियों के पास पहुँचा तो उन्होंने उसे एक सोटा देकर कहा , तुम इसे ले जाओ, इससे कहना, दे रे सोटा ऐसी मार, कान छोड़ कनपट्टी मार। ऐसा कहते ही यह सोटा कपटी आदमी को ऐसी मार देगा कि उसका दिमाग ठिकाने आ जायगा। सोटा लेकर लड़का भड़भूजे के पास पहुँचा तथा सोटा को उसकी पिटाई करने को कहा। सोटे ने भड़भूजे को इतनी मार लगायी कि वह हाय-हाय करने लगा और उसने बकरी, कढ़ाई व कथरी निकाल कर दे दी। उन सबको लेकर लड़का खुशी-खुशी अपने घर आ गया।'

1- परियों की करामात, श्री बाबू लाल जैन 'फाल्गुन' , 'मधुकर', वर्ष-2 अंक-6, 16 दिसम्बर, 1942, पृ0-8 से 10 तक

निष्कर्षतः इस कथाभिप्राय से सम्बन्धित कथाओं में प्रायः नायक-नायिका अभावग्रस्त होकर या भूख-प्यास से ब्याकुल होकर परेशान होते हैं , तभी अचानक कोई घटना घटती है तथा देवी-देवता साधु पुरुष या अलौकिक पात्रों द्वारा उनको ऐसी वस्तुएं प्राप्त होती हैं, जिनकी सहायता से वे मनचाहे खाद्य-पदार्थ प्राप्त कर सकते हैं। लेकिन दुष्ट व्यक्तियों द्वारा उन वस्तुओं का अपहरण कर लिया जाता है,जिससे नायक-नायिका पुनः सम्बद्ध व्यक्ति से मिलते हैं। अन्त में उनको ऐसी वस्तु (रस्सी या डंडा) दिया जाता है जिनकी सहायता से वे दुष्ट व्यक्ति को दण्डित करके अपनी सभी वस्तुएँ वापस ले लेते हैं तथा सुखी जीवन बिताते हैं।

लोककथाओं में कथाभिप्राय के रूप में ऐसी घटनाएं जो सामान्य से अलग हटकर विचित्र होती हैं और अपनी विचित्रता के कारण ही कौतूहल उत्पन्न करने में सहायक होती हैं। इस तरह की घटनाएं स्वैर कल्पना पर आधारित होती हैं, जिन पर काल्पनिकता की गहरी छाप होती है लेकिन इसे पूर्णतः काल्पनिक भी नहीं कहा जा सकता, क्योंकि ये घटनाएं कहीं न कहीं लोकविश्वास से भी सम्बद्ध होती हैं।

इस कथाभिप्राय की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि काल्पनिक होते हुए भी यह जनजीवन के सन्निकट है। इसके साथ ही यह ध्यान देने योग्य बात है कि इन 'अक्षय-पात्रों' के द्वारा मानव जीवन की मुख्य आवश्यकता - भोजन आदि की पूर्ति होती है। इनके द्वारा किसी का अहित करने का वर्णन नहीं मिलता तथा इनसे अनुचित लाभ लेने की बात सोची भी नहीं जाती। हाँ दुष्ट व्यक्ति से वस्तुओं को वापस लेने के लिए उसे कुछ सजा अवश्य मिलती है। इन अक्षय-पात्रों के द्वारा कथापात्र राजसिंहासन अथवा स्वर्ग जाने की बात नहीं सोचते वरन् वे लौकिक जीवन में रहकर भौतिक इच्छाओं की पूर्ति करते हैं।

इस कथाभिप्राय की विशिष्ट बात यह है कि इसमें प्रयुक्त उपादान सीधे लोकजीवन से जुड़े हैं। इच्छित भोज्य पदार्थ देने वाले पात्र हैं- डिब्बी, कड़ाही, कुण्डी, थैली, छलनी, कथरी , बकरी, कबरी गाय ,हाथ की मुदरी।

*****

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

अध्याय-तेरह

'हँसने से फूल बरसना, रोने से मोती'-

(1) सुन्दरी-नायिका के हँसने से फूल तथा रोने से मोती बरसना

(2) चिड़िया के हँसने से फूल तथा रोने से मोती बरसना ।

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

लोककथाओं में कथाभिप्रायों की भूमिका न केवल कथा को विस्तार देने के लिए होती है, अपितु वे कथा को कौतूहलपूर्ण बनाने में भी सहायक माने जाते हैं। वस्तुतः ये कथाभिप्राय कोई न कोई ऐसी बात उत्पन्न कर देते हैं कि कथा नवीन रूप धारण कर लेती है। 'हँसने से फूल बरसना , रोने से मोती' कथाभिप्राय भी उन्हीं मे एक है। लोककथाओं में इस कथाभिप्राय का प्रयोग विभिन्न रूपों में हुआ है। इस कथाभिप्राय में प्रायः नायक को ऐसी सुन्दरी नायिका को ले आने का कार्य सौंपा जाता है जिसके हँसने से फूल तथा रोने से मोती बरसते हैं। किसी कथा में नायिका के हँसने से तिल व रोने फूल गिरते हैं, तो कहीं रोने से मोती की पैरियाँ या लाल या फिरोजी पत्ते बनते हैं। नायक किसी सिद्ध पुरुष की सहायता से अनेक कठिनाइयों को पार कर उस सुन्दरी नायिका को लाने में सफल होता है। कुछ लोककथाओं में नायिका के सिर पर छलपूर्वक कील ठोककर उसे चिड़िया बना दिया जाता है, जिसके हँसने से फूल तथा रोने से मोती झरते हैं। नायक उस चिड़िया को पकड़वाकर उसके सिर की कील निकालता है जिससे वह सुन्दरी के रूप में पुनः परिवर्तित हो जाती है।

अतः 'हँसने से फूल बरसना, रोने से मोती' कथाभिप्राय को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है-

(1) सुन्दरी-नायिका के हँसने से फूल तथा रोने से मोती बरसना -

(2) चिड़िया के हँसने से फूल तथा रोने से मोती बरसना।

बुन्देली लोककथाओं में इस कथाभिप्राय से सम्बन्धित वर्णन मिलते हैं। 'सब्जपरी' बुन्देली लोककथा में, ' छोटा राजकुमार भौजाई द्वारा ताना देने पर सब्जपरी को ब्याह लाने का प्रण करके घर से निकला, जंगल में छः महीने एक साधु की सेवा की तथा उसके प्रसन्न होने पर राजकुमार ने सब्जपरी के मिलने का उपाय पूछा। साधु ने कहा, जंगल के उस पार एक जादूगरनी रहती है। उसकी लड़की बहुत सुन्दर है। उसके शरीर से रूप टपकता है तथा उसकी सुवास से बारह कोस तक की जगह महक उठती है। जब वह हँसती है तब फूल बरसते हैं और जब रोती है तब मोती। इसी का नाम सब्जपरी है। इस जगह से तीन योजन दक्षिण तरफ चलने के पश्चात एक बावड़ी मिलेगी, जिसके पास स्थित सेमर

के पेड़ के नीचे बैठ जाना। वहाँ एक तितली आयेगी, तुम उसके पंख उखाड़ लेना, वह परी बन जायगी। आगे का हाल परी बतलायेगी। राजकुमार ने साधु के कहे अनुसार ही किया। पंख उखाड़ते ही चारों ओर प्रकाश फैला और एक सुन्दर स्त्री हरी साड़ी पहने सामने आ खड़ी हुई। परी ने कहा, देखो, इस पंख को मत फेंकना, जिसकी सहायता से आगे धुआँ भरा रास्ता पारकर सब्जपरी के पास पहुँचोगे। आगे राजकुमार ने हिम्मत करके धुआँ भरा रास्ता तथा आग की लपटों से भरा रास्ता पार करके सब्जपरी के पास जा पहुँचा। सब्जपरी राजकुमार पर मोहित हो गयी तथा राजकुमार उसे जादूगरनी माँ के चंगुल से छुड़ाकर अपने घर ले आया,जिसके हँसने से फूल बरसते थे तथा रोने से मोती झरते थे।'[1]

'काग बिड़ारिन'[2] बुन्देली लोककथा में, 'बड़ा राजकुमार दूती के बहकाने से राजा इन्द्र के दरबार की हँसनपरी को लेने घर से निकला, जिसके हँसने में फूल और रोने में मोती झरते थे। राजकुमार ने छः महीने एक साधु की सेवा की तथा प्रसन्न होने पर हंसन-परी की माँग की। साधु ने कहा, मेरे आश्रम से चार योजन की दूरी पर मानसरोवर में चाँदनी रात के समय इन्द्र की परियाँ स्नान करने आती हैं तुम उनके वस्त्र लेकर यहाँ भाग आना। राजकुमार उनके वस्त्र लेकर कुटिया में जा छिपा। परियों ने आकर साधु से कपड़े वापस दिलवाने को कहा। साधु ने परियों से राजकुमार की इच्छा बतलाई। परियाँ राजी हो गयी तथा अगली सुबह सभी श्रृंगार करके आई। राजकुमार ने साधु के कहे अनुसार सबसे कुरूप व फटे-पुराने कपड़े पहने स्त्री का हाथ पकड़ा, जो अपने असली रूप में आ गयी। राजकुमार साधु से आज्ञा लेकर हँसनपरी के साथ अपने घर वापस आ गया। हँसन-परी के आने से महल में 'सोने में सुगन्ध' वाली कहावत पूरा हुई, जिस समय वह हँसती थी, फूल बरसते थे और जब रोती थी तब मोती झरते थे।'

'केतकी के फूल' बुन्देली लोककथा में नायिका के हँसने से सुगन्धित केतकी के फूल झरते है। कथा के अनुसार 'राजा की आज्ञा से बहेलिये का लड़का रानी के लिए

1- बुन्देली लोक कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-17 से 24 तक

2- बुन्देलखण्ड की ग्राम्य कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी पृ0 171 से 174

केतकी के फूल लेने गया। जंगल में उसने एक साधु की छः महीने सेवा की तथा प्रसन्न होने पर केतकी के फूल मांगे। साधु ने कहा, मेरे आश्रम से थोड़ी दूर एक मनोहर बाग है। उस बाग के भीतर तुझे एक बहुत कबूल सूरत स्त्री और दूसरी मैली-कुचैली कोढ़-ग्रसित स्त्री मिलेगी। तू उस मैली-कुचैली स्त्री का हाथ पकड़ लेना, तेरा काम बन जायगा। लड़के ने ऐसा ही किया, जिससे वह कुरूपा स्त्री पहली स्त्री से भी अधिक रूपवान युवती बन गयी तथा लड़के को देखकर खिलखिलाकर हँस पड़ी। उसके हँसते ही बाग में केतकी के फूलों की वर्षा होने लगी तथा सारा बाग एक अनोखी सुगन्धि से महक उठा। साधु की आज्ञा ले लड़का उस सुन्दरी को लेकर घर वापस आया तथा केतकी के फूलों को सोने की थाल में भरकर राजा के सामने पेश कर दिया।'[1] इस लोककथा में सुन्दरी नायिका के हँसने से फूल बरसने का ही वर्णन मिलता है, रोने का नहीं।

'रानी फूलवती'[2] बुन्देली लोककथा में, 'बड़ा राजकुमार वासुकी नाग की शर्त पर उत्तराखण्ड के राजा की लड़की फूलवती को लाने चला तथा अपने मित्रों की सहायता से विवाह सम्बंधी शर्तें पूरी करके फूलवती को ब्याह लिया। नागताल पहुँचने पर उसने वासुकी नाग से कहा कि मैं फूलवती को ले आया हूँ, इसे लो। यह सुनकर फूलवती रोने लगी, जिससे मालती, गुलाब, बेला, जूही आदि के फूल आकाश से बरसने लगे। उन फूलों की सुगंध से प्रसन्न होकर वासुकी नाग ने वर मांगने को कहा, राजकुमार ने फूलवती को मांगा। वासुकी नाग ने प्रसन्न होकर फूलवती के साथ उसे प्राणदान भी दे दिया। राजकुमार फूलवती को लेकर अपनी राजधानी आ गया।' इस लोककथा में सुन्दरी नायिका के रोने से फूलों के बरसने का वर्णन मिलता है।

बुन्देली लोककथा में नायिका के रोने से मोती व फूल झरने के साथ, उसके आँसुओं से सोने की पैरियाँ , लाल, फिरोजी पत्ता आदि बनने के वर्णन भी मिलते हैं।

1- केतकी के फूल, शिवसहाय चतुर्वेदी पृ0-1 से 10 तक

2- पाषाण नगरी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-80

'भाग्य और पुरुषार्थ'[1] बुन्देली लोककथा में, 'लखटकिया राजकुमार एक डायन का पैर काट लेता है, जिसमें एक सोने की पैरियाँ थी। जिसकी बनावट अपूर्व थी तथा उसमें कीमती रत्न जड़े थे। लखटकिया उसे राजा को भेंट करता है राजा की बेटी उसे देखकर बहुत खुश होती है तथा उसी तरह की दूसरी पैरियाँ की मांग करती है। लखटकिया छः माह की मुहलत लेकर चला, उसने जंगल में एक साधु की सेवा करके उसे प्रसन्न किया तथा नौ लाख की पैरियाँ मांगी। साधु बोला, मेरा यह डंडा ले जा। यहाँ से बारह कोस की दूरी पर एक बड़ा मकान मिलेगा। उसमें जाकर तू आठवीं कोठरी के सामने डंडा पटकना। लखटकिया ने वहाँ जाकर डंडा पटका, जिससे कोठरी के भीतर से एक अपूर्व सुन्दरी लड़की बाहर निकली। लड़की राजकुमार पर मोहित हो गयी तथा अपनी डायन माताओं के डर से मक्खी बना लिया। एक दिन लड़की के कहे अनुसार लखटकिया डंडा लेकर डायनों के सामने आया, उनसे उड़नखटोला व बाँसुरी की मांग की। डायनों ने अपनी बेटी की शादी उसके साथ करके उसे दोनों चीजें दे दी। विदा के समय बेटी के रोने पर जितने आँसू गिरे, उतनी ही पैरिया बन गयी। लखटकिया ने कुछ पैरियाँ उठाकर रख लीं। लड़की बोली, व्यर्थ वजन क्यों बटोरते हो? पैरियाँ तो घर की खेती है, जब जितनी चाहोगे मिल जायगी।'

'सपने की खोज' बुन्देली लोककथा में, ' लखटकिया राजकुमार को बावड़ी में एक लाल मिलता है, जिसे राजा की लड़की अपनी ओढ़नी के एक पहलू में टका लेती है लेकिन अखयवट (अक्षयवट) पर बैठी हँसनी उसे और लाल टकाने का ताना देती है। राजा के कहने पर लखटकिया उसी बावड़ी के अन्दर जा पहुँचा जहाँ उसे सोलह वर्ष की अपूर्व सुन्दरी मिली। उसने अपने पिता दाने के डर से लखटकिया को भौरा बना दिया। बेटी ने अपने पिता दाने से बचन लेकर लखटकिया को उसके सामने पेश किया। बिदा के समय बेटी ने अपनी बहनों से भेंट किया। उस समय उसकी आँखों से जितने आँसू टपककर जमीन पर गिरे वे सब लाल बन गए। घर आकर दाने की बेटी ने अपनी जेठी से भेंट

1- पाषाण नगरी, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-182 से 188 तक

किया, उस समय जितने आँसू गिरे उतने ही लाल बन गए। उनमें से चार लाल एक थाली में रखकर लखटकिया ने राजा के सामने पेश किया। उन लालों को अपनी ओढ़नी में टाँककर जब राजा की लड़की निकली तब हँसनी बोली, जैसे तुम्हारी ओढ़नी के चारों खूटों में चार लाल जड़े हैं, वैसे उसके चारों किनारों पर जब मोतियों की झालर लगेगी तब कितना अच्छा लगेगा। राजा ने लखटकिया को मोती लाने को कहा। लखटकिया को उदास देखकर दाने की बेटी ने अपनी छोटी बहन को ले आने को कहा, जिससे आँसुओं से मोती बनते थे। लखटकिया बावड़ी में जाकर दाने की मझली बेटी को ले आया, उसने आते ही अपनी बहन से भेट की तो मोतियों की झड़ी लग गयी। अब की बार हँसनी ने कहा, जैसे चार खूँटों में चार लाल और किनारों पर मोतियों की झालर है। वैसे ही जब यह ओढ़नी फिरोजी पत्तों के रंग में रंगी जाती तब बनता। इस बार लखटकिया दाने की सझली बेटी को ले आया, जिसके आँसुओं से फीरोजी पत्ते बन गये। अन्त में राजा की बेटी ने लखटकिया राजकुमार से शादी कर ली।'[1]

यह अभिप्राय अन्य देशों की लोककथाओं में भी मिलता है। जैसे- 'सोनपरी-के आँसू' [2] नामक अरबी लोककथा में 'एक बार सोनपरी धरती की सैर करते-करते थककर बगीचे में एक पेड़ के नीचे सो गई। उस बगीचे का मालिक अरबी सौदागर फल तुड़वाने के लिए आया तो उसने उस परी पर मोहित होकर उसे पिंजड़े में कैद कर लिया तथा उसे बगदाद के खलीफा को भेंट देने के लिए चल पड़ा। रास्ते में चिलचिलाती धूप व भूख-प्यास से सोनपरी काली पड़ गयी, जिसे देखकर खलीफा ने उसे बौना जीव समझा तथा सौदागर पर नाराज होकर उसे पिंजड़े से उड़ा दिया। कैद से छूटकर सोनपरी हवा पाकर कुछ सहज हुई और अरब के रेगिस्तान की तरफ रोती-रोती उड़ चली। उड़ते समय उसके आँसू जहाँ-जहाँ भी गिरे वहीं पर पानी की छोटी-बड़ी तलाई बन गये। एक-दो जगह पेड़ों की छाया में उसने विश्राम किया तब भी वह सुबक-सुबक रोती रही, इससे

1- गौने की बिदा, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-24 से 32 तक

2- सोनपरी के आँसू, बालमुकुन्द, राष्ट्रीय सहारा, रविवार, 25 जुलाई 1993

वहाँ काफी पानी इकट्ठा हो गया। कालान्तर में इसी पानी की वजह से वहाँ फांस, वनस्पति, पेड़, पौधे, लता आदि उगकर पनपने लगे और पशु-पक्षी व इन्सान उसी से अपनी प्यास बुझाने लगे। रेत के अथाह भण्डारों के बीच ऐसी जगहों को नखलिस्तान कहा गया जो अब भी सोनपरी के आँसुओं की याद दिलाते हैं।'

लोककथाओं में चिड़िया (पक्षी) के हँसने से फूल तथा रोने से मोती बरसने के वर्णन भी मिलते हैं। 'जीजी'[1] बुन्देली लोककथा में, 'गड़रिया की लड़की को उसकी सौतेली माँ बहुत दुख देती है। लेकिन लड़की के गुणों से मोहित होकर राजकुमार उसके साथ शादी करता है। बिदा के समय सौतेली माँ ने कहा, आओ बेटी तेरे बाल सँभाल दूँ। लड़की पास जा बैठी, उसने बाल संभालने के बहाने उसके सिर में लोहे की कील ठोंक दी, जो एक जादूगर की बनाई थी। कील ठोकते ही लड़की तुरन्त चिड़िया बनकर उड़ गई तथा सौतेली माँ ने अपनी लड़की को सजा-बजाकर राजकुमार के साथ विदा कर दिया। राजमहल के पिछवाड़े एक बाग था, उसमें एक चिड़िया रोज आकर आधीरात के समय मौलश्री के पेड़ पर बैठकर करुण गीत गाती। चिड़िया जब हँसती तब फूल झरते थे और जब रोती तब मोती। राजकुमार को जब यह मालूम हुआ तो उसने आधीरात को वहाँ पहुँचकर धीरे-धीरे मौलश्री के पेड़ में चढ़कर चिड़िया पकड़ ली। चिड़िया को पिंजरा में रखने के लिए राजकुमार ने उसके सिर पर हाथ फेरा तो उसे लोहे की कील चुभी। कील निकालते ही चिड़िया तुरन्त लड़की बन गई। राजकुमार ने उसे पहचान लिया, उसकी खुशी का ठिकाना न रहा। गड़रिया की लड़की ने अपनी छोटी बहन को भी महल में रखने के लिए राजकुमार को राजी कर लिया।'

इसी तरह 'दो बैनें' बुन्देली लोककथा में, 'बड़ी बहन तिलकमती के रूप की प्रशंसा सुनकर राजकुमार ने उसके साथ शादी कर ली। छोटी बहन जब विवाह योग्य

1- गौने की बिदा, शिवसहाय चतुर्वेदी, पृ0-91 से 98 तक

हुई, उसे कोई कुंवर न मिला, जिससे वह दुखी रहने लगी। एक बार जादूगर ने आकर अनेक तमाशे दिखाये, छोटी बहन ने उससे मंत्र वाली कील मांग ली। जब बड़ी बहन मायके आई तो छोटी बहन ने उसके गहना-गुरिया पहनकर केश संवारने के बहाने कील उसके सिर में ठोंक दी , जिससे तिलकमती चिड़िया बनकर उड़ गई। माँ-बाप ने दूसरा कोई उपाय न देख छोटी बहन को ही ससुराल भेज दिया। अब चिड़िया आधीरात के समय बाग में जाकर अपना दुख हल्का करने के लिए रोया करती थी। उसके रोने से मोती झरते थे, जिसे बाग का माली बटोर लेता था। एक दिन उसने राजा के पास जाकर कहा, आधीरात को बगिया में एक चिड़िया आती है, जब वह हँसती है तो फूल झरते हैं और रोती है तो मोती बरसते हैं।[1]

स्वयं संग्रहीत 'तिलमती-चावलमती'[2] की कथा में, ' बड़ी बहन चावलमती के गुणों पर रीझकर राजकुमार उसके साथ शादी कर लेता है। ससुराल में चावलमती जब कभी हँस देती तो चावल-चावल ही गिरने लगते थे और यदि रो देती तो फूल-ही फूल गिरने लगते। इधर बुढ़िया माँ को तिलमती की शादी की चिन्ता रहने लगी। एक बार जब चावलमती अपने मायके गई तब उसे बुढ़िया माँ तालाब में नहलाने ले गई तथा लोहार के यहाँ से लाई गयी एक कील उसके सिर में ठोंक दिया, जिससे वह चिड़िया बनकर उड़ गई। अब बुढ़िया ने चावलमती की शक्ल सूरत से मिलती-जुलती उसकी छोटी बहन तिलमती को बिदा कर दिया। अन्तर केवल इतना था कि जब छोटी बहन हँसती तो उसके मुँह से तिल गिरते थे और जब रोती थी तो फूल गिरते। उधर वह चिड़िया माली के घर बैठा करती थी और जब हँसती तो उसके मुख से मोती झरते तथा जब रोती तो फूल झरते थे। माली इन मोतियों को जमा करता जाता था। राजा को जब यह मालूम हुआ तो उसने चिड़िया को पकड़ मंगवाया। एक दिन चिड़िया को नहलाते समय राजा के हाथ में सिर की कील अटकी। राजा ने ज्यों ही कील उसके सिर से निकाली वह बारह वर्ष की लड़की बन गयी। वास्तविकता मालूम होने पर राजा ने दोनों बहनों को अपने घर पर रख लिया।'

1- बुन्देली लोककथायें, नर्मदा प्रसाद गुप्त, 'चौमासा,' वर्ष-10- अंक-31, मार्च-जून 93, पृ0-145

2- तिलमती-चावलमती, गीता उर्फ गुड्डन, संग्रह क्रमांक-31 (अप्रकाशित)

इस अभिप्राय से सम्बद्ध 'हँसता-रोता-मोर'[1] नामक ब्रज की लोककथा अत्यंत कौतुहलपूर्ण है। इस कथा में, 'राजा भरे दरबार में ऐसे मोर को लाने की घोषणा करता है, जिसके हँसने पर रेशम के लच्छे और रोने पर मोती झड़ते हैं। छोटा राजकुमार अनेक कठिनाइयों को पार करता हुआ एक ऐसे दैत्य राज के महल में पहुँचता है, जिसके पास इस प्रकार का मोर है। दैत्यराज की पुत्री राजकुमार पर मोहित होकर अपने पिता से उसके प्राण की स्थित पूछकर बताती है । राजकुमार दैत्यराज की वाटिका के अन्दर से मेढ़क निकालकर उसे मार देता है, जिससे दैत्य भी मर जाता है तथा मोर को लेकर राजकुमारी के पास जा पहुँचता है। राजकुमारी कहती है, मोर भैया, राक्षस मर गया। मोर हँस पड़ा जिससे रेशम के लच्छों का ढ़ेर लग गया। फिर राजकुमारी ने कहा, मोर भैया, मैं तुझे छोड़कर राजकुमार के साथ जा रही हूँ। मोर रो उठा और मोती झरने लगे। राजकुमार ने प्रसन्न होकर राजकुमारी और मोर को साथ लेकर अपने राज्य की ओर प्रस्थान किया।'

जल का किसी अन्य वस्तु के रूप में परिवर्तित होने का अभिप्राय प्राचीन कथाओं में भी प्राप्त होता है। 'कथासरित्सागर' की एक कथा में, बादल के बरसने के कारण वटवृक्ष में लटकते हुए नर-कंकाल पर से जो बूँदें नदी में गिरती हैं वे सरोवर में आकर सोने के कमल के रूप में परिवर्तित हो जाती हैं।[2] इसी तरह, सिंहासन-बत्तीसी' की तेइसवीं कथा में, नदी के किनारे एक पेड़ में एक तपस्वी जंजीर से बंधा उलटा लटक रहा था और उसके घाव से लहू की जो बूँदें नीचे गिरती, वे फूल बन जाती थी।[3] लेकिन 'हँसने से फूल बरसना, रोने से मोती' कथाभिप्राय से सम्बंधित वर्णन विशुद्ध रूप से लोककथाओं में ही प्राप्त होते हैं।

1- पुण्य की जड़ हरी, आदर्शकुमारी, पृ0-57 से 68 तक

2- कथासरित्सागर (द्वितीय खण्ड), सप्तम लम्बक, छठवीं तरंग, पृ0-147

3- सिंहासन-बत्तीसा, यशपाल जैन, पृ0-44

निष्कर्षतः इस कथाभिप्राय को मुख्य रूप से दो आधारों पर निर्मित माना जा सकता है- (1) प्रतीकात्मकता व (2) ऐन्द्रजालिक में विश्वास। हँसने से फूल बरसना का अर्थ प्रतीकात्मक है, इसीलिए फूलों से हँसना सीखने की उक्ति दी जाती है। रोने से गिरने वाली आँसू की बूंदों को मोती से सम्बद्ध करने का कारण यह माना जा सकता है कि भावातिरेक में प्रत्येक निरर्थक एवं सामान्य सी वस्तु भी मूल्यवान एवं सार्थक प्रतीत होती है। इसीलिए नायिका के आँखों से गिरते आँसुओं का महत्व सदैव मोती के समान अनमोल माना गया है; दूसरे आँसुओं का आकार एवं रंग भी मोती से मिलता-जुलता होता है। इसी प्रकार रोने से लाल, सोने की पैरियाँ, चावल, तिल आदि वस्तुओं का निकलना जादू एवं मंत्रों की सिद्धि के द्वारा सम्भव हो सकता है।

*****

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

परिशिष्ट

1- कथाभिप्रायों का अध्ययन

2- हिन्दी की लोककथाओं के कथाभिप्रायों का अध्ययन

3- स्वयं संग्रहीत बुन्देली लोककथायें-

पंडित- पंडिताइन, निपुत्री राजा,

उजबासा रानी, राजा की लड़की,

निपूता राजा, शंकर-घरघालन,

तुम्हई आय पयार तरे घुसै रहा,

राजा के लड़के व नेऊरा।

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

कथाभिप्रायों का अध्ययन

भारतीय साहित्य की कथानक-रूढ़ियों (कथाभिप्रायों) का अध्ययन करने वाले विद्वानों में मॉरिस ब्लूमफील्ड का नाम सर्वप्रथम आता है। ब्लूमफील्ड तो 'हिन्दू-कथा-अभिप्रायों का विश्वकोश' (इनसाइक्लोपीडिया ऑव हिन्दू फिक्शन मोटिफ्स) तैयार करने की बात सोच रहे थे और इसके लिए उन्होंने स्वयं कई लेख लिखे और साथ ही अपने शिष्यों और सहयोगियों से भी कई लेख लिखवाये; किन्तु दुर्भाग्यवश उनकी मृत्यु हो जाने के कारण यह कार्य आगे नही बढ़ सका। इस विश्वकोश की भूमिका में ब्लूमफील्ड का सबसे पहला लेख 'अमेरिकन ओरियंटल सोसायटी' की छत्तीसवीं जिल्द (American Journal of Oriental -Society, Vol-36) में प्रकाशित हुआ, जिसमें उन्होंने 'एक ही साथ हंसना और रोना', 'देवदूत श्वेतकेश', 'बोलने वाली गुफा या चट्टान' तथा अन्य अनेक ऐसे ही मानसिक और बौद्धिक-चातुर्य-सम्बंधी अभिप्रायों की संक्षेप में विवेचना की थी। इसके पूर्व ही उनके दो लेख- 'मूलदेव का चरित्र और उसके साहसिक कार्य' तथा 'हिन्दू कथाओं में पक्षियों की बातचीत' प्रकाशित हो चुके थे। इसके अतिरिक्त विभिन्न जर्नलों में उनके निम्नलिखित लेख प्रकाशित हुए, जो कथाभिप्रायों से सम्बंधित थे-

1- स्त्री की दोहद कामना: हिन्दू कहानियों का एक अभिप्राय
(Journal of American Oriental Society, Vol-40)

2- परकाय-प्रवेश की कला: हिन्दू कहानियों का अभिप्राय
(Proceedings of American Philosophical Society, Vol. 56)

3- उपश्रुति (American Journal of Philology, Vol-41)

4- जोसेफ और पोटिफर की स्त्री (Transaction of the American-Philosophical Association, Vol-44).

5- कौवा और शाल्मली वृक्ष।[1]

1- मध्यकालीन हिन्दी प्रबंध काव्यों में कथानक-रूढ़ियां, डॉ बृजविलास श्रीवास्तव, पृ0-4 से 6 तक से उद्धृत

हिन्दू-कथाभिप्रायों पर कार्य करने वाले ब्लूमफील्ड के सहयोगियों में डब्ल्यू नार्मन ब्राउन, ई0 डब्ल्यू बर्लिंगेम और रूथ नार्टन के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इन्होंने भारतीय कथाभिप्रायों के सम्बंध में 'अमेरिकन जर्नल ऑव फिलालोजी', 'जर्नल ऑव रायल एशियाटिक सोसायटी', 'साइन्टिफिक मन्थली' और 'स्टडीज इन आनर ऑव मॉरिस ब्लूमफील्ड' में भारतीय कथाभिप्रायों- 'सत्यक्रिया', जीवन-निमित्त वस्तु', 'दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति से अप्रत्याशित रूप से रक्षा' एवं 'द्वित्व शब्दों पर आधारित अभिप्राय' के सम्बंध में अपने लेख लिखे।[1]

ब्लूमफील्ड व उनके सहयोगियों के अतिरिक्त कथाभिप्रायों पर विचार करने वाले पाश्चात्य विद्वानों में बेनिफी, टानी, जैकोबी व कीथ के नाम उल्लेखनीय हैं, जिन्होंने अपनी पुस्तकों में कथाभिप्रायों से सम्बंधित महत्वपूर्ण पाद टिप्पणियाँ दी हैं। इनमें से, बेनिफी ने 'पंचतंत्र' की कहानियों पर विशेष रूप से कार्य किया। यद्यपि इस जर्मन विद्वान ने निष्कर्ष बाद की खोजों एवं कार्यों द्वारा गलत सिद्ध हो चुके हैं, फिर भी अपनी पुस्तक 'दास - पंचतंत्र' की भूमिका में दी गयी महत्वपूर्ण टिप्पणियों में बेनिफी ने जो विचार व्यक्त किए, वे आज भी उपयोगी व मार्गदर्शक हैं। बेनिफी का विचार था कि विश्व की लोककथाओं (अद्भुत कथाओं) का मूल सामान्यतया भारतीय है। उनकी विद्वता और विशेषज्ञता का ही यह प्रभाव था कि उनका यह मत कि भारतीय लोककथाओं की उत्पत्ति बौद्धों के समय में हुई, बहुत बाद तक दुहराया जाता रहा।

टानी ने 'कथासरित्सागर' (The Ocean of Story), 'कथाकोष' और 'प्रबंध-चिन्तामणि' के अंग्रेजी अनुवादों में ऐसी अनेक कथाओं और घटनाओं पर पाद-टिप्पणी में संकेत किया है जो थोड़े-बहुत परिवर्तन के साथ भारतीय तथा पाश्चात्य कथा साहित्य में ज्यों-की-त्यों मिल जाती हैं। किन्तु समानान्तर घटनाओं का उल्लेख करते

---

1. मध्यकालीन हिन्दी प्रबंध काव्यों में कथानक-रूढ़ियाँ, पृ0-11 व 12 से उद्धृत

समय टानी का ध्यान विशेष रूप से यूरोपीय कथा-साहित्य की ओर रहा; अतः इन टिप्पणियों से इतनी ही सूचना मिलती है कि ये कथाएं और घटनाएं यूरोपीय कथा-साहित्य में कहाँ और किस रूप में प्राप्त होती हैं। जबकि, जैकोबी ने 'परिशिष्ट-पर्वन' की भूमिका में पुस्तक में आई प्रचलित घटनाओं के सम्बंध में पाद-टिप्पणी में संकेत किया है। भारतीय साहित्य में प्रचलित इस घटनाओं को कथाभिप्रायों के रूप में जाना जाता है।

कीथ ने अपने 'संस्कृत साहित्य का इतिहास' (ए हिस्ट्री ऑव संस्कृत लिटरेचर) में पाश्चात्य और भारतीय साहित्य में प्रयुक्त होने वाले कुछ अभिप्रायों पर तुलनात्मक दृष्टि से विचार किया है।[1] उन्होंने ग्रीस और भारत के पशु कथाओं (पंचतंत्र सरीखी) और लोक-कथाओं की उत्पत्ति पर विचार करते हुए बेग्नर, बेनिफी , बेवर आदि अनेक पाश्चात्य विद्वानों के मतों का उल्लेख करते हुए यह संकेत दिया है कि पंचतंत्र सरीखी पशुकथाओं की उत्पत्ति ग्रीस एवं भारत दोनों में से किसी जगह में न होकर इनके बीच मिश्र, लीडिया आदि देशों में हुई होगी; जबकि लोककथाओं की उत्पत्ति पहले से आती हुई समान पैतृक सम्पत्ति और मानव मस्तिष्क के समान रचना के कारण स्वतंत्र विकास के रूप में हुई होगी। भारतीय साहित्य- पंचतंत्र,कथासरित्सागर, 'महाभारत', 'शुक-सप्तति', 'महोसध - जातक', 'वृहत्कथा' (कश्मीरी रूपान्तरण) आदि में प्राप्त कथाभिप्रायों का पाश्चात्य साहित्य से तुलनात्मक दृष्टि से विचार करते हुए वे संकेत देते हैं कि इतनी उत्पत्ति किसी एक स्थान पर न होकर अलग-अलग स्थानों पर हुई होगी, जिनका बाद में आदान-प्रदान होता रहा है।

ब्लूमफील्ड और उनके सहयोगियों के बाद कथाभिप्रायों पर कार्य करने वाले पाश्चात्य विद्वानों में पेंजर का नाम विशेष उल्लेखनीय है। यद्यपि पेंजर ने भारतीय कथाभिप्रायों के सम्बंध में कोई स्वतंत्र निबंध नही लिखा है, किन्तु सोमदेव के 'कथासरित्सागर' का

1- संस्कृत साहित्य का इतिहास, अनु0-डॉ0 मंगलदेव शास्त्री, पृ0-415 से 440 तक

टानी द्वारा अंग्रेजी में अनुवाद (The Ocean of Story, Vol-1 to 10) प्रस्तुत करने के बाद, इसके नये संस्करण (1924 ई0) में इन्होंने कथा में आये हुए बहुप्रचलित अभिप्रायों का ऐतिहासिक विवरण तुलनात्मक ढंग से दिया है तथा 'द ओसन ऑव स्टोरी' की दसवी जिल्द में एक सौ से भी ज्यादा उन कथाभिप्रायों की लम्बी सूची दी है, जिन पर उन्होंने पुस्तक में विचार किया है।[1] कुछ कथाभिप्रायों के नाम इस प्रकार हैं- सत्यक्रिया, प्रिया की दोहद-कामना और उसकी पूर्ति के लिए प्रिय का प्रयत्न, मछली जो हँसी, तंत्र-मंत्र या रूप-परिवर्तन की लड़ाई, लिंग-परितर्वन, परकाय-प्रवेश, जीवन-निमित्त-वस्तु, देवदूत श्वेतकेश, प्राण-रक्षा के लिए अज्ञान बनना, कक्ष-विशेष में प्रवेश-निषेध, उपश्रुति, देवी, देवता, ऋषि आदि का शाप, स्वामि भक्त सेवक, कुतिया और मिर्च मिला हुआ मांसखण्ड, अप्सराओं के वस्त्रहरण द्वारा किसी रहस्य का पता चलना, कुलटा स्त्रियाँ, फँसे विवाहोत्सुक, एक साथ हँसना व रोना, छिपकर सुनना चतुर बालक इत्यादि। इस तरह पेंजर ने 'द ओसन ऑव स्टोरी' में विविध कथाभिप्रायों से सम्बंधित अपेक्षाकृत विस्तृत पाद-टिप्पणियाँ देकर इस विषय पर आगे कार्य करने वालों के लिए प्रचुर सामग्री प्रस्तुत कर दी है।

स्टिथ थामसन से पूर्व कथाभिप्राय विषयक विचार न तो बहुत स्पष्ट हो पाये थे तथा न उन्हें ठोस वैज्ञानिक पद्धति से ही प्रस्तुत किया गया था। यह महत्वपूर्ण कार्य स्टिथ थामसन के द्वारा सम्पन्न हुआ। उन्होंने पुस्तकालयों की पुस्तकों के वर्गीकरण की प्रणाली के अनुकरण को अपनाकर अभिप्रायों के वैज्ञानिक वर्गीकरण का मार्ग प्रशस्त किया। उन्होंने इस विधि से अभिप्रायों की एक 'वृहद अनुक्रमणिका' (Motif Index of Folks-Literature, Vol.1 to 6) बना डाली, जिसका पहला संस्करण 1935 ई0 में प्रकाशित हुआ, जो अपेक्षाकृत छोटा था और उसमें भारतीय कहानियों के अभिप्रायों को सामान्य रूप से ही सम्मिलित किया गया। लेकिन इसका दूसरा वृहत संस्करण जो कि 1957 ई0 में प्रकाशित हुआ में भारतीय कहानियों के पर्याप्त अभिप्राय सम्मिलित

1- The Ocean of story, edited by- N.M. Penzer, Vol. 10, Page- 38 to 41

हुए। कथाभिप्रायों का यथार्थ और पूर्वज्ञान पाने के लिए यह अनुक्रमणिका अत्यंत उपयोगी है। इस वृहद अनुक्रमणिका का सार स्वयं स्टिथ थामसन ने अपनी पुस्तक 'फोकटेल' में दिया है, जिसे डॉ0 सत्येन्द्र ने अपनी पुस्तक 'लोक साहित्य-विज्ञान ' में भी शामिल किया है।[1]

भारतीय साहित्य की कथानक-रूढ़ियों (कथाभिप्रायों) का अध्ययन करने वाले भारतीय विद्वानों में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का नाम सर्वप्रथम आता है। आचार्य द्विवेदी ने अपने इतिहास ग्रन्थ 'हिन्दी साहित्य का आदिकाल' (1952 ई0) में विद्वानों का ध्यान भारतीय कथानकों की कतिपय अत्यंत प्रचलित रूढ़ियों की ओर आकृष्ट किया। 'पृथ्वी राज रासो' एवं 'पद्मावत्' आदि ऐतिहासिक चरित-काव्यों पर विचार करते समय उन्होंने कथानक-रूढ़ियों के सम्बंध में महत्व का अनुभव किया। उनके अनुसार-सम्भावना-पक्ष पर जोर देने के कारण बहुत सी कथानक-रूढ़ियाँ इस देश के साहित्य में चल पड़ी हैं। कुछ रूढ़ियाँ ये हैं-

1- कहानी कहने का सुग्गा

2- (क) स्वप्न में प्रिय का दर्शन पाकर आसक्त होना

(ख) चित्र में देखकर किसी पर मोहित हो जाना

(ग) भिक्षुओं या बंदियों के मुख से कीर्ति वर्णन सुनकर प्रेमासक्त होना

3- मुनि का शाप

4- रूपपरिवर्तन

5- लिंग परिवर्तन

6- परकाय प्रवेश

7- आकाशवाणी

1- लोक साहित्य विज्ञान, डॉ0 सत्येन्द्र, पृ0-290 से 299 तक उद्धृत

8- अभिज्ञान या सहिदानी

9- परिचारिका का राजा से प्रेम और अन्त में उसका राजकन्या और रानी की बहन के रूप में अभिज्ञान

10- नायम का औदार्य

11- षड्-ऋतु और बारहमासा के माध्यम से विरह-वेदना

12- हंसकपोत आदि से सन्देश भेजना ; आदि

कुल 21 रूढ़ियों का उल्लेख किया है।[1] द्विवेदी जी के 'शुकवाली' कथानक-रूढ़ि का विस्तृत विवेचन अपने इस इतिहास-ग्रन्थ में किया है।[2]

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के सुझाव और निर्देश पर डॉ0 ब्रजविलास श्रीवास्तव ने अपने शोध-प्रबंध 'पृथ्वीराज-रासो में कथानक-रूढ़ियाँ' में रासो-काव्य में आये हुए महत्वपूर्ण कथाभिप्रायों का मूल्यांकन करने के साथ विभिन्न विद्वानों की खोजों का उपयोग करते हुए भारतीय कथानक-रूढ़ियों की विस्तृत सूची दी है। अपने अगले शोध-प्रबंध 'मध्यकालीन हिन्दी प्रबंध काव्यों में कथानक-रूढ़ियाँ' (1968 ई0) में उन्होंने मध्यकालीन हिन्दी प्रबंध काव्यों में प्रयुक्त कथानक-रूढ़ियों को दो भागों में विभाजित किया है- (1) लोकाश्रित, व (2) कवि-कल्पित। इनमें से, प्रथम के अन्तर्गत- जीवन-निमित्त-वस्तु, सत्यक्रिया, परकाय-प्रवेश, पंचदिव्याधिवास, उपश्रुति, कक्ष-निषेध, नायक का अतिप्राकृतजन्म, वस्त्र-हरण द्वारा अप्सराओं और परियों की प्राप्ति, रूप-परिवर्तन , दिव्य - विद्या--आकाश-गमन, अदृश्यता, योगी के नेत्र में प्रिया-देश का दर्शन, मृत व्यक्ति का जीवित हो जाना, अज्ञान में अपराध और शाप, शिव-पार्वती, आकाशवाणी,भविष्य-सूचक-स्वप्न आदि कथाभिप्रायों तथा द्वितीय के अन्तर्गत स्वप्न-

---

1- हिन्दी साहित्य का आदिकाल, डॉ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ0-80 व 81।

2- वही, पृ0-82 से 96 तक

दर्शन-जन्य प्रेम, चित्र-दर्शन-जन्यप्रेम, रूप-गुण-श्रवण-जन्य आकर्षण, मूर्तिकन्या और प्रेम, स्थानान्तरण द्वारा प्रेम-संघटन, शुक-शुकी, समुद्रयात्रा के समय जल पोत का टूटना, भरूण्ड-हंस आदि की पीठ पर यात्रा, उजाड़ नगर, वन में मार्ग भूलना , आदि अनेक कथाभिप्रायों को सम्मिलित किया है। इन सभी कथाभिप्रायों कोमध्यकालीन हिन्दी प्रबंध काव्यों के परिपेक्ष्य में विस्तृत शास्त्रीय एवं तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करते हुए डॉ0 श्रीवास्तव का निष्कर्ष है - 'इन कथाभिप्रायों से जहाँ एक ओर सामाजिक रूढ़िबद्धता , गतानुगतिकता और अन्धविश्वासों का पता चलता है, वही दूसरी ओर धार्मिक, आध्यात्मिक और सांस्कृतिक क्षेत्र में होने वाले महत्वपूर्ण प्रयत्नों की भी सूचना मिलती है।'[1]

डॉ0 रूक्मिणी वैश्य ने 'कुशललाभ के कथासाहित्य का लोकतात्विक अध्ययन' (1979 ई0) नामक पुस्तक में राजस्थानी कवि कुशललाभ के कथा-काव्यों- 'ढोला-मारू-चौपई', 'माधवानल कामकंदला चौपई', 'तेजसार-रास चौपई,' 'दुर्गा-सात्तसी' आदि में प्रयुक्त विविध रूढ़ियों का विस्तार से अध्ययन प्रस्तुत किया है। उनके अनुसार- 'कथानक के शिल्प-तत्वों के साथ ही कुशललाभ के कथा-साहित्य में कथा-विकास में प्रयुक्त कथानक रूढ़ियों का भी विशिष्ट महत्व है। .... ये कथानक रूढ़ियाँ भारतीय की परम्परागत निधि हैं।'[2]

डॉ0 रूक्मिणी वैश्य ने अपने इस कार्य को वैज्ञानिक आधार देने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय विद्वान स्टिथ थामसन की 'अभिप्राय-अनुक्रमणिका' (मोटिफ इन्डेक्स) प्रणाली के आधार पर कुशललाभ के कथा-काव्यों में प्रयुक्त विविध कथानक रूढ़ियों का वर्गीकरण प्रस्तुत किया है।[3]

1- मध्यकालीन हिन्दी प्रबंध काव्यों में कथानक-रूढ़ियाँ, पृ0-322

2- कुशललाभ के कथासाहित्य का लोकतांत्रिक अध्ययन, पृ0-246

3- कुशललाभ के कथासाहित्य का लोकतात्विक अध्ययन, डॉ0 रूक्मिणी वैश्य, पृ0-311 से 327तक

इसके पहले राजस्थान से ही प्रकाशित 'मरूभारती' पत्रिका में श्री हरिचरण लाल शर्मा का लेख- 'पद्मावति समय में कथानक-रूढ़ियाँ' छपा, जिसमें शर्मा जी ने कवि चन्द्र की रचना 'पद्मावति समय' में प्रयुक्त कथानक-रूढ़ियों- 'रूप-गुण-श्रवण जन्य आकर्षण की रूढ़ि', शिव-पार्वती पूजन रूढ़ि' 'शिव-मन्दिर में कन्या-हरण रूढ़ि' व 'सिंहल द्वीप रूढ़ि' का परिचय दिया है।[1]

डॉ0 इन्दिरा जोशी ने अपनी पुस्तक 'हिन्दी उपान्यासों का लोकवार्त्तापरक अनुशीलन' (1986 ई0) में लोककथा के विकास एवं उनमें प्रयुक्त कथा-तन्तुओं (कथाभिप्रायों) पर विचार प्रस्तुत किए हैं। उन्होंने पाश्चात्य विद्वान मारिस ब्लूमफील्ड, पेंजर एवं स्टिथ थामसन के कथाभिप्राय अध्ययन का उल्लेख करते हुए हिन्दी उपन्यासों- रानी केतकी की कहानी, नासिकेतापाख्यान, नूतन ब्रह्मचारी, चन्द्रकांता, वाणभट्ट की आत्मकथा, कचनार, मृगनयनी, सोना, ब्रह्मपुत्र, पत्थर-अल-पत्थर आदि में प्रयुक्त विविध कथाभिप्रायों को स्टिथ थामसन की अभिप्राय-अनुक्रमणिका के आधार पर तुलनात्मक अध्ययन किया है। उनका निष्कर्ष है कि 'कथातंतु विश्लेषण के आधार पर यदि हम किन्हीं उपन्यासों के कथाविन्यास पर दृष्टिपात करें तो हमें पता चलेगा कि स्टिथ थामसन द्वारा दिए गये कथातन्तु लगभग, सभी उपन्यासों में विद्यमान है।'[2]

इसी तरह डॉ0 सत्यव्रत सिनहा ने अपने 'एक अप्रकाशित लेख'[3] में लोककथाओं में प्रयुक्त अभिप्रायों का विवेचन करते हुए अंत में शिष्टसाहित्य की कहानियों में प्राप्त अभिप्रायों के तीन स्तर गिनाये हैं (1) लोककथात्मक स्तर (2) कलात्मक स्तर (3) प्रतीकात्मक

1- 'मरूभारती,' प्रधान सम्पा0- डॉ0 कन्हैयालाल सहल, पिलानी (राजस्थान) वर्ष- 8, अंक-3, अक्टूबर 1960 ई0, पृ0-53 से 56 तक

2- हिन्दी उपन्यासों का लोकवार्त्तापरक अनुशीलन, डॉ0 इन्दिरा जोशी पृ0-175

3- प्रकाशित 'अनुगमन' (हिन्दी त्रैमासिकी), सम्पा0- हरिशंकर द्विवेदी 'अज्ञान', संख्या-20, जनवरी-मार्च 1986, पृ0-5 से 16 तक

स्तर। उन्होंने प्रेमचन्द्र, जयशंकर प्रसाद, भगवतीचरण वर्मा, धर्मवीर भारती, कमलेश्वर आदि हिन्दी कथाकारों के कथा-साहित्य में प्राप्त विविध अभिप्रायों की ओर संकेत भी किया है। वास्तव में, डॉ० सिनहा इस लेख को 'प्रबंध' का रूप देना चाहते थे, लेकिन यह कार्य अधूरा ही रह गया।

हिन्दी की लोककथाओं के कथाभिप्रायों का अध्ययन

राष्ट्रभाषा हिन्दी और लोकसाहित्य तथा लोककथाओं में कथाभिप्रायों के वैज्ञानिक अध्ययन को प्रारम्भ करने का श्रेय डॉ0 सत्येन्द्र को जाता है। उन्होंने 'ब्रजलोकसाहित्य का अध्ययन' (1949 ई0) प्रस्तुत करते हुए ब्रज की लोककथाओं की कथासरित्सागर, बुन्देलखण्ड, बंगाल, कश्मीर आदि की कथाओं से तुलना करते हुए ब्रज लोककथाओं में प्राप्त अभिप्रायों-प्राण-प्रवेश, प्राणों की अन्यत्र स्थिति, चीर पर लेख, पहेली सुलझाना, सत की रक्षा, सत की तौल, आपत्ति सूचना के साधन, भावी आपत्ति की सूचना एवं भावी संकट, आदि का परिचय प्रस्तुत किया है। उन्होंने वैदिक बीज कथाओं में लोककथाओं के आदि रूप का अनुसंधान करके उनके अध्ययन का एक नया ढंग सुझाया; ब्रज की लोक कथाओं में पाये जाने वाले भारोपीय प्रकारों का अध्ययन किया एवं हिन्दी के मध्ययुगीन साहित्य में लोककथाओं एवं तद्विषयक अभिप्रायों के सम्यक प्रयोग का संकेत भी किया। इसके अतिरिक्त, डॉ0 सत्येन्द्र ने 'जाहरपीर: गुरू गुग्गा' का एक विस्तृत अध्ययन (भारतीय साहित्य , अप्रैल 1956 के अंक में) प्रस्तुत कर लोक-साहित्य के उत्तर-भारतीय कथा के प्रश्न को सुलझाने की भरपूर चेष्टा की एवं 'पद्मावति चरित्र' (ब्रजभारती वर्ष-3, अंक 244 संवत् 2002) में राजवल्लभ द्वारा लोककथा सम्बंधी विवरण प्रस्तुत किया।

हिन्दी भाषा में कथाभिप्रायों पर पहला शोध-प्रबंध 'ब्रज लोककहानियों का अभिप्रायगत अध्ययन' (अप्रकाशित 1957 ई0) डॉ0 सत्येन्द्र की शिष्या डॉ0 सावित्री सरीन ने कलकत्ता विश्वविद्यालय की 'डी0फिल्0' उपाधि के लिए प्रस्तुत किया। उन्होंने अपने शोध-प्रबंध में स्टिथ थामसन की 'अभिप्राय-अनुक्रमणिका' की प्रणाली का हिन्दी क्षेत्र में प्रथम वैज्ञानिक उपयोग किया, जिसमें उन्होंने रोमन अक्षरों के स्थान पर देवनागरी अक्षरों को अपनाया। इसी में, डॉ0 सरीन ने छ: सौ से अधिक ऐसे अभिप्राय ब्रज की लोककथाओं में ढूँढ़ निकाले जो थामसन महोदय की अभिप्राय-अनुक्रमणिका में नहीं है। डॉ0 सरीन के साथ ही डॉ0 सत्येन्द्र ने अपने अन्य शिष्यों से भी कथाभिप्राय सम्बंध अध्ययन व शोध

कार्य सम्पन्न कराया, जिनमें से कुछ है:-

(1) 'हिन्दी क्षेत्रीय लोककथाओं के कथामानक रूप और कथा-अभिप्राय - डॉ0 ललिता सिंह (अप्रकाशित शोध, आगरा, 1965 ई0)

(2) 'ब्रजक्षेत्र की व्रतानुष्ठानिक कहानियों का अध्ययन'- डॉ0 आशा शर्मा (अप्रकाशित शोध, आगरा, 1965 ई0)

(3) सिंहासन बत्तीसी तथा उसकी हिन्दी-परम्परा'- डॉ0 लक्ष्मी सक्सेना (अप्रकाशित-शोध , आगरा 1962 ई0)

डॉ0 कन्हैया लाल सहल के राजस्थानी लोककथाओं में प्राप्त कथाभिप्रायों (मूल-अभिप्राय, रूढ़-तन्तु, प्ररूढ़ियाँ आदि नाम दिया) पर अनेक लेख 'शोध-पत्रिका', 'मरूभारती', 'राष्ट्रभारती', 'वरदा' व 'आजकल' आदि कई पत्रिकाओं में अलग-अलग प्रकाशित हुए, जिनमें डॉ0 सहल ने अभिप्रायों के मूल-स्रोतों की विस्तृत विवेचना करते हुए व लोककथाओं में उनके उपयोग को रेखांकित करते हुए भारतीय साहित्य में उपलब्ध कथाओं व राजस्थानी लोककथाओं को सोदाहरण प्रस्तुत किया है। इनमें से, कथाभिप्राय सम्बंधी कुछ लेख निम्न हैं:-

(1) लोककथाओं का एक मूल-अभिप्राय- 'काव्यगतन्याय'[1]

(2) लोककथाओं की एक प्ररूढ़ि -'रूप परिवर्तन और उसके प्रकार'[2]

(3) लोककथाओं का एक मूल अभिप्राय- 'शरीफ चोर'[3]

(4) लोककथाओं का एक मूल अभिप्राय- 'होणी होय सो होय'[4]

1- शोधपत्रिका, डॉ0 सहल, वर्ष-12, अंक-2, 1960 ई0, पृ0-48 से 52 तक

2- शोधपत्रिका, डॉ0 सहल, वर्ष-13, अंक-3, 1962 ई0, पृ0-1 से 6 तक

3- मरूभारती, डॉ0 सहल, वर्ष-7, अंक-3, 1959ई0, पृ0-8 से 13 तक

4- राष्ट्रभारती, डॉ0 सहल, वर्ष-13, अंक-6, 1963ई0, पृ0-263 से 266 तक

5- लोककथाओं के मूल-अभिप्राय- 'उपश्रवण'[1]

इसके अलावा, डॉ0 सहल की कथाभिप्रायों से सम्बंधित निम्न पुस्तकें भी प्रकाशित हो चुकी हैं-

1- नटो तो कहो मत
2- राजस्थानी लोककथाओं के मूल-अभिप्राय
3- लोककथाओं की कुछ-प्ररूढ़ियाँ
4- लोककथाओं के कुछ रूढ़-तन्तु।

इन पुस्तकों में उन्होंने भारतीय साहित्य व लोक-कथाओं में प्राप्त अनेक अभिप्रायों का राजस्थानी लोककथाओं के परिपेक्ष्य में वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत किया। इस प्रकार, कथाभिप्रायों के अध्ययन के क्षेत्र में डॉ0 सहल का कार्य अत्यंत महत्वपूर्ण व उपयोगी सिद्ध हुआ है। इसी प्रकार 'परम्परा' नामक शोध-पत्रिका के राजस्थानी लोकसाहित्य विशेषांक में डॉ0 मनोहरलाल शर्मा ने राजस्थानी लोककथाओं में प्रयुक्त कथानक रूढ़ियों - सत्य-क्रिया, अक्षयधन, देवी-मानव-दाम्पत्य, भाग्यलेख, उपश्रवण आदि का परिचय दिया है।[2]

डॉ0 शंकर लाल यादव ने अपनी पुस्तक 'हरियाना प्रदेश का लोक-साहित्य' में हरियानी लोककथाओं में प्राप्त विविध अभिप्रायों की सूची दी है। उनके अनुसार- 'कहानी की आत्मा कहानियों में बिखरे पड़े 'अभिप्रायों' (Motifs) में निवास करती है। सच पूछा जाय तो ये 'अभिप्राय' ही कहानी में व्यापकता का द्योतक है।'[3] कुछ कथाभिप्राय निम्न है-

---

1- आजकल, डॉ0 सहल, वर्ष-14, अंक-5, 1958 ई0, पृ0 23 व 24
2- 'परम्परा', राजस्थानी लोककथाएं: एक पर्यालोचन, भाग-21 व 22, 1966 ई0, पृ0-77 से 81
3- हरियाना प्रदेश का लोकसाहित्य, डॉ0 शंकर लाल यादव, पृ0-372

1- कल्पथाली- जिस थाली से भोजन कभी नही समाप्त होता

2- आग लगने से बन हरा हो जाता है

3- कृत्रिम खूनी कपड़े भेजकर पत्नी के सतीत्व की परीक्षा ली जाती है

4- अंगूठी के नग से सुहाग की पहचान, आजकल चूड़ियाँ इस कार्य के लिए काम में आती हैं

5- सुराही गिरती है और पाताल में पहुँच जाती है.........

तथा इसी तरह कुल उनचास कथाभिप्रायों का वर्णन किया है जो हरियानी लोककथाओं में प्राप्त होते हैं।[1]

डॉ0 सरोजनी रोहतगी ने अपने 'अवधी का लोक साहित्य' नामक शोध-प्रबंध में अवधी लोककथाओं का सर्वेक्षण करते हुए उनमें प्राप्त विविध कथाभिप्रायों का भी परिचय दिया है। उनके अनुसार- 'अवधी लोककथाओं में कुछ रूढ़ियों का, जिन्हें अभिप्राय कहते हैं, विशेष स्थान है। यह अभिप्राय कहानी की आत्मा कहे गये हैं।'[2] कुछ कथाभिप्राय ये हैं- (1) फल खाने से पुत्र की उत्पत्ति। कथाओं में एक कद्दू खाने से पुत्र की उत्पत्ति मानी गयी है और दूसरे जैसे-जैसे कद्दू बढ़ता है, पुत्र भी बढ़ता है।

(2) लोककथाओं में प्रायः बलि की भावना प्राप्त होती है। अपनी मनोकामना की पूर्ति के लिए या संकट दूर करने के लिए मनुष्य, पशु या अन्य किसी की बलि बढ़ायी जाती है। आदिम जातियों में यह प्रथा पुरानी है।

(3) लोककथाओं में 'उड़न-खटोला' का नाम प्रायः मिलता है।

(4) मुख से साँप निकलना.......

1- हरियाना प्रदेश का लोकसाहित्य, डॉ0 शंकर लाल यादव, पृ0-372 से 375तक

2- अवधी का लोकसाहित्य, डॉ0 सरोजनी रोहतगी, पृ0-59

आदि कुल तीस कथाभिप्रायों का वर्णन मिलता है।[1] ये सभी कथाभिप्राय अवधी लोककथाओं में मिलते हैं।

डॉ0 मालती सिंह (प्रोफेसर) , हिन्दी विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद के कुशल निर्देशन में डॉ0 वीना गोस्वामी ने अपना शोध-प्रबंध 'ब्रज लोक-कथाओं में कथानक-अभिप्राय'[2] प्रस्तुत किया, जिसमें उन्होंने ब्रज की लोककथाओं में प्राप्त विविध कथाभिप्रायों पर विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत किया है। उन्होंने अपने शोध-प्रबंध में कथाभिप्रायों के सैद्धान्तिक पक्ष पर प्रकाश डालते हुए- (1) अद्‌भुत घटनाओं से सम्बंधित कथाभिप्रायों, (2) निषिद्ध कार्यो के प्रत्यारोपण से सम्बंधित कथाभिप्रायों, (3) चारित्रिक दृढ़ता से सम्बंधित कथाभिप्रायों, (4) दण्ड और पुरस्कार से सम्बंधित कथाभिप्रायों, (5) संकट-सूचना से सम्बंधित कथाभिप्रायों, (6) सहायक घटकों से सम्बंधित कथाभिप्रायों, (7) ज्ञान और बुद्धि से सम्बंधित कथाभिप्रायों, (8) विश्वासघात से सम्बंधित कथाभिप्रायों एवं (9) रहस्योद्‌घाटन से सम्बंधित विविध कथाभिप्रायों का विस्तृत विवेचन किया है। इस कार्य के लिए उन्होंने जापान, दक्षिणी अमेरिका , रूस व 'विश्व की सर्वश्रेष्ठ लोकथाएं' सहित आसाम, कश्मीर, गुजरात, पंजाब, महाराष्ट्र बुन्देली व पश्चिमी भारत आदि की लोककथाओं का सन्दर्भ देते हुए ब्रज की लोककथाओं के साथ तुलनात्मक अध्ययन भी किया है। इस तरह, डॉ0 सावित्री सरीन के बाद कथाभिप्रायों पर हुए शोध-कार्यों में यह शोध-प्रबंध मौलिक एवं महत्वपूर्ण स्थान का अधिकारी है।

प्रोफेसर मालती सिंह के ही निर्देशन में प्रस्तुत शोध-छात्र ने 'बुन्देली लोककथाओं-में कथाभिप्राय' विषय पर अपना शोध-प्रबंध पूरा किया है। इस शोध प्रबंध में लोककथाओं

1- अवधी का लोकसाहित्य, डॉ0 सरोजनी रोहतगी, पृ0-59 से 67 तक

2- ब्रज लोक-कथाओं में कथानक अभिप्राय , वीना गोस्वामी, अप्रकाशित शोध - प्रबंध, 1988 ई0, हिन्दी विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

में प्राप्त विविध कथाभिप्रायों- परकाय-प्रवेश, प्राणों की अन्यत्र स्थिति, रूप-परिवर्तन, निषेध, शर्त-वदना (लगाना), मनुष्य के सहायक घटक, वरदान और शाप, प्रेम-मूलक अभिप्राय, आकाश-गमन, इच्छित भोज्य पदार्थ देने वाले पात्र तथा 'हँसने से फूल बरसना, रोने से मोती' का बुन्देली लोककथाओं के परिप्रेक्ष्य में तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

'पंडित - पंडिताइन'

कथक्कड़- श्रीमती गीता उर्फ गुड्डन

अवस्था- 20 वर्ष, सेक्स-महिला, जाति-कहार

संग्रह स्थल- ग्राम-मकरॉव, हमीरपुर (उ0प्र0)

दिनॉक- तीन फरवरी, 1996 ईसवी

संग्रह क्रमाक- 26 ।

एक थे पंडित एक थी पंडिताइन। पंडित दिन भर भिक्षा मांगते थे फिर भी दिन भर के लिए खाने को नही ला पाते थे। तो एक दिन पंडिताइन ने कहा कि पंडित तुम दिन भर मांगते हो फिर भी एक टाइम (समय) का खाना नही मिल पाता है। तो पडित ने कहा कि बताओ पंडिताइन फिर क्या किया जाय? तब पडिताइन बोली, होय न होय किसी दूसरे गॉव चले। मतलब यहॉ खाने को पूरा नही मिल पाता। पंडित ने कहा, ठीक है चलो और दोनों ने अपना बोरी-बिस्तर बॉधा और पैदल चल दिए। पंडिताइन कभी पैदल तो चली नहीं थी। इधर वह आधान (गर्भवती) से थी। जब चलते-चलते जंगल मिला, जगल में एक जगह पानी भरा था तो पंडित ने कहा कि पंडिताइन मैं स्नान कर लूॅ और स्नान करके थोड़ा पूजा-पाठ कर लूॅ। फिर आगे चले, क्योंकि न जाने किस देश में रुकें। और पंडित स्नान करके समाधि लगाकर बैठ गये। उधर पडिताइन का पेट दर्द करने लगा। जब पेट दर्द करने लगा तो अब पंडिताइन क्या करे? क्योंकि xxxxxx पंडित की समाधि तो बीच में नही खुल सकती थी, चाहे जो भी हो। थोड़ी देर बाद पंडिताइन के बच्चा हुआ और जब पडित की समाधि खुली तो पंडित ने कहा, चलो पंडिताइन चलें। तो पंडिताइन बोली, तुम पंडित कैसे हो? थोड़ा देखा-सुना करो। तो पंडित बोले, क्या देखूॅ सुनूॅ? पंडिताइन ने कहा, देखो इसे (बच्चा को) तुम्हीं लीजिए। पंडित बोले , को! मै तो इसे बारह दिन तक नहीं छुऊॅगा, तुम्ही लो। पंडिताइन ने कहा, परदेश-कलेश में सब करना पड़ता है, ले लो। पडित बोले, मैं नहीं लूॅगा, चाहे तू इसे यही छोड़ दे। तो पंडिताइन भी गुस्से में, अपने बच्चे को वही लिटा दिया और चल दिया। चलते-चलते वे दूर निकल गये, न जाने किस

देश में पहुँच गये। इधर जब रात हुई तो बालक रात में रोया और उसी दिन शंकर और पार्वती को देश घूमने की चिन्ता हुई। गौरा पार्वती ने शंकर जी से कहा, चलो आज देश घूमा जाय, देखे देश में कहाँ क्या हाल-चाल है। और शंकर व पार्वती घूमने चल पड़े, जब उस जंगल में पहुँचे तो उन्हें रोने की आवाज सुनाई पड़ी। गौरा पार्वती ने कहा , देखो शंकर जी आज का हुआ (जन्म लिया) कोई बालक रो रहा है। तो शंकर जी बोले कि इस तरह तो संसार में तमाम लोग रोते-हँसते हैं; कोई हँसता है तो कोई रोता है तो कोई गाता है, कोई कुछ करता है, ये ससार-सागर है, ये क्या देख रही हो। लेकिन गौरा पार्वती ने कहा, नहीं तुम्हें देखना पडेगा, यह आज का हुआ बालक रो रहा है। तो शंकर जी बोले, ठीक है, चलो देखते हैं। जब दोनों उस जगह में पहुँचे तो शंकर जी ने कहा कि ये पंडितो का लड़का है, इसे छोड़कर चले गये हैं। तो गौरा जी ने कहा, शंकर जी अब क्या किया जाय? तो शंकर जी बोले, देखो पार्वती, जो मुझमें जितने गुण हैं, मैं दिए देता हूँ और जितने तुममें गुण हो तुम दे दो। तो गौरा जी बोली, तुममें क्या गुण है? तुम क्या दोगे? शंकर जी बोले, देखो गौरा, मैं अपना डमरू बजाये देता हूँ और जहाँ तक डमरू की आवाज जायेगी, वहाँ तक इसके पास कुछ भी नही आयेगा, न कूड़ा. न करकट, न कीड़ा. न पतिंगा, न स्यार, न संजो (शेर) कुछ भी नही आयेगा। अब शंकर जी ने गौरा पार्वती से कहा कि तुम क्या करोगी, तुममें क्या गुण हैं? तो पार्वती जी ने कहा कि मैं अपने बायें हाथ की छिंगी (अंगुली) काटकर इसके अँगूठे में लगाये देती हूँ और इसके अँगूठे से दूध निकलने लगेगा और अँगूठा इसके मुँह में लगाये देते हैं, जिसे पीकर यह साल भर तक जीवित रह सकेगा। अब पार्वती जी ने कहा कि अब शंकर जी, साल भर के बाद यह क्या करेगा, साल भर तो दूध पियेगा, इसके बाद क्या खायेगा? तो शंकर जी ने कहा कि ऐसा करें, इस जंगल में सभी चीजों के पेड़-पौधे लगा दूँ यानि किसमिस, चिरौंजी, गरी, छुआरा, बादाम सब के पेड़ लगा दूँ और जब तक यह परवस्त होगा, बड़ा होगा तब तक साल भर बाद ये पेड़-पौधे फलै-फूलै लगेंगे तो ये अपना तोड़-तोड़कर खाया करेगा। पार्वती जी ने कहा, ठीक है, इसकी जिन्दगी की गुजर-बसर होती रहेगी। और इस तरह से जब बालक कुछ बड़ा हुआ और पेड़-पौधे भी फलने-फूलने लगे तो वह फल-फूल तोड़-तोड़कर खाने लगा।

एक दिन क्या हुआ कि एक राजा की बारात आयी तो वह कुछ देर के लिए उसी जंगल में रुकी। राजा की उस बारात में दूल्हा काना था। लड़के ने आदमियों को देखा तो डर गया और एक पेड़ पर चढ़ गया। क्योंकि उसने कभी आदमी तो देखे नहीं थे अतः वह डर गया था तथा लोगों के साथ न रहने के कारण वह गूगा भी था, कुछ बोल भी नहीं पाता था। इसलिए वह बिना कुछ कहे-सुने पेड़ पर छिपकर बैठ गया था। उस बारात में जो सबसे बड़ा मुखिया था उसने लड़के को देख लिया था। उसने राजा से कहा, राजा जी मेरी एक बात मानोगे? राजा ने कहा, कहिए मंत्री जी, क्यों नही? मुखिया ने कहा कि राजा साहब उस पेड़ में रस्सी लेकर जाओ, देखो कौन बैठा है? चोर है, डाकू है या कोई बालक है? पता नही कौन है? अब रस्सी लेकर उसको सब बरातियों ने बाँध लिया और साथ में बारात में ले चले। अब वह लड़का बार-बार इधर-उधर झाँक रहा था कि मुझे मौका मिले तो मैं भाग जाऊँ। बाराती भी समझ गये कि यह भागना चाहता है, इसलिए उसको बांधे ही रहे। अब सब बारातियों ने सोचा कि लड़का तो अच्छा है, होय न होय दूल्हे को वापस करके इसी के साथ शादी करा ली जाय, अपने लड़के के साथ गौना करा लिया जायेगा। राजा ने कहा ठीक है, उन्होंने दूल्हे को वापस कर दिया। अब साथ में नऊवा (नाई) ने उस लड़के के बाल काटे, नहला-धुलाकर कपड़े पहनाये तथा कंकन बाँधकर जामा पहना दिया, मतलब उस लड़के को दूल्हे की तरह सजा-संवारकर साथ में लेकर चल दिए परन्तु अब भी उसे बांधे हुए थे कि कहीं भाग न जाय। अब जब बारात टीका (द्वारचार) पर पहुँची तो सभी ने कहा कि लड़का तो अच्छा है लेकिन इसे बांधे क्यों है? राजा से भी पूछा गया तो राजा ने कहा कि मेरा लड़का शादी के लिए अभी तैयार नहीं था, कह रहा था कि मैं अभी पढ़ूँगा, अभी शादी नही करूँगा इसलिए हम इसे जबरन बाँधकर लाये हैं। सभी ने कहा, चलो ठीक है, कौन अभी हमें लड़की बिदा करनी है,तीन साल बाद गवन (गौना) हो जायेगा। परन्तु लड़की की सखी-सहेलियों को शंका हुई, इसलिए उन्होंने लड़की से बता दिया कि दूल्हा तो अच्छा है पर बंधा है। लड़की भी हैरान रह गयी, उसे भी कुछ शंका हुई कि होय न होय कुछ बात जरूर है तभी बांधे है। कुछ देर बाद टीका-चढ़ाव व भाँवरें सब कुछ हो गया। अब रात को चित्रसारी का बुलावा आया तो चारो

कहार लड़के को पालकी में बिठाकर घर के अंदर रख गये। कुछ देर बार लड़की आरती सजाकर आयी तो उसने देखा कि अब भी बंधे हुए हैं। उसने नौकरानी से कहा, इन्हें बांधे क्यों है? इन्हें छोर दो। नौकरानी ने उसे छोर दिया तथा ले जाकर कमरे में बैठा दिया। अब वह लड़की आरती लिए खड़ी है, वह सोच रही है कि ये कुछ बोले। अब स्थिति ऐसी थी कि न लड़की कुछ बोल रही थी न लड़का ही। लड़का बोले भी कैसे क्योंकि वह तो बऊरा (गूँगा) था। इसी सोच में लड़की काफी देर खड़ी रही कि ये कुछ बोले तो मैं बोलूँ, इस तरह काफी देर हो गयी तो वह फिर आरती सजाने चली गयी। अब लड़का खड़ा हुआ और वहाँ पर लगे फोटो (चित्र) पोछने लगा और जब देखा कि वह आ रही है तो फिर बैठ गया। अब लड़की आयी और फिर भी वह कुछ नहीं बोला तो लड़की ने सोचा, हे भगवान! और तो सब ठीक है, आपने इन्हें बोल क्यों नही दिया है? आप इन्हें बोल दे दीजिए और लड़की भगवान की प्रार्थना करने के लिए एक पैर के बल खड़ी हो गयी, प्रार्थना करने लगी। उधर गौरा जी ने यह सब देखकर शंकर जी से कहा कि भोलेनाथ अब तो गड़बड़ हो रही है, लड़की एक पैर के बल खड़ी आपकी प्रार्थना कर रही है। फिर शंकर जी का सिंहासन डोला और वे दौड़-दौड़ भगवान के पास पहुँचे तथा कहा, भगवान जी इस बालक के बोल नहीं है, आप इसे बोल दीजिए। तो भगवान जी जोर से चिल्लाये जिससे लड़के की बोली निकल आयी और वह लड़की से बोला, देख तू सब कुछ बाद में करना पहले मुझे खाना ले आ, मुझे बहुत जोर की भूख लगी है। मुझे खाना नहीं दिया गया तथा ऐसे ही बाँधि-बाँधि यहाँ लाये हैं। अब लड़की ने सोचा , इस समय खाना कहाँ से लाऊँ, क्योंकि सब जगह के दरवाजे बंद है, घर के सभी लोग सो रहे हैं। फिर लड़की ने सोचा, मेरे कोछें (साड़ी का आँचल) में ढाई चावल बंधे हैं, होय न होय उसी की खीर बना दूँ। और फिर उसने उन चावलों की खीर बनाई तथा लड़के को खिलाया। जब वह खा चुका तो लड़की ने उसकी आरती उतारी और बोली कि मैं इतनी देर से खड़ी हूँ आप बोल नहीं रहे थे, क्या आपके बोल नही था? तब लड़के ने कहा, नहीं मैं बोल नही पाता था, जब आपने प्रार्थना की तब मेरे बोल निकला और दोनों बातचीत करते रहे। जब सुबह हुई तो कहार उसे ले जाने के लिए आये, लड़का पालकी में बैठ गया तब कहारों

ने कहा कि इसे बांध दो। तो लड़के ने कहा, क्यों मुझे क्यों बाँध रहे हो, क्या मैं भाग जाऊँगा क्या? तब सब कहारों को शंका हुई कि सारी बारात में कुछ नही बोला, अब कैसे बोलने लगा? लगता है लड़की ने कुछ कर दिया है इसलिए बोलने लगा है और उसे लेकर बारात में चले गये। अब नास्ता-पानी होने के बाद बारात बिदा हो गयी, लड़की को कौन बिदा होना था। जब बारात उसी जंगल में पहुँची तो उससे कहा गया कि अब तुम अपने जंगल में रहो तथा उससे जामा उतरा लिया गया और उससे कहा गया कि तुम्हें जो घोड़ा सबसे अच्छा लग रहा हो, उसे ले लो। लड़के ने एक घोड़ा छाँट लिया, बरातियों ने उसे खाना-दाना सब कुछ देकर वही छोड़कर चल दिए क्योंकि उनका काम तो पूरा हो गया था।

अब जब लड़का सब कुछ जानने लगा तो उसने अपना घोड़ा लिया और सवार होकर घूमने के लिए निकल पडा। वह एक शहर में पहुँचा, वहाँ पर (एक तालाब में) कुछ सखियाँ नहा-धो रही थी। उन्हीं में एक राजा की लड़की थी, जो सोने का हार पहने थी और नहाने जाने से पहले उसने हार को उतारकर अपने कपड़ों के ऊपर रख दिया। इतने में एक चिलिया (चील) आई और वह हार उठा ले गयी। इसी समय वह लड़का घोड़े पर सवार वहाँ से गुजरा। अब राजा की लड़की ने सोचा कि होय न होय यही लड़का मेरा हार लिए है और उसने अपनी सखियों को भेजा कि जाओ उसे पकड़ो । अब सब सखियों ने जाकर उसे घेर लिया और थोड़ी देर बाद राजा की लड़की भी कपड़ा पहनकर आ गयी, उसने कहा कि तुम्हीं ने मेरा हार लिया है। तो लड़के ने कहा, नहीं बहिन, मैने आपका हार नही लिया है। इस तरह दोनों में वाद-विवाद बढ़ने लगा तो लड़के ने कहा, जाओ तुम अपने पिता जी को बुलाकर लाओ, हम उन्हीं से बात करेंगे। राजा साहब आये तो लड़के ने बताया कि आपकी लड़की मुझे चोर कह रही है। तब राजा साहब ने अपनी बिटिया (लड़की) से कहा कि जब तुम्हें दूसरा हार बन जायेगा तो तुम क्यों परदेसी लड़के को परेशान कर रही हो। उसने अपनी लड़की को खूब डाटा लेकिन लड़की ने कहा, नहीं पिताजी इसी ने मेरा हार लिया है। इस तरह जब लड़की हठ करने लगी तब लड़के

ने कहा ठीक है, अगर मैने तुम्हारा हार लिया है तो मै उसे लाऊँगा। लेकिन एक शर्त है कि तुम इसी तालाब मे तब तक खड़ी रहना जब तक में हार लेकर न आ जाऊँ, अगर तुम असली राजा की लड़की हो तो मेरे आने तक यही खडी रहना। इसके बाद लड़के ने राजा से कहा, देखो राजा साहब, वह चिलिया हार लिए है, राजा ने भी देखा तथा कहा , हॉ लिए है। तब लड़के ने कहा, मैं हार लेने जा रहा हूँ और वह पेड़ पर चढ़ने लगा तो चिलिया ने हार को जाकर समुद्र में गिरा दिया। लड़के ने राजा से कहा कि आप जाइए, मै हार लेकर ही आऊँगा तथा वह समुद्र के किनारे पहुँचकर ज्यों ही पानी मे कूदने को तैयार हुआ,तुरन्त शंकर जी की आवाज आई, रूक, जब मैं आ जाऊँ तब कूदना। अब शंकर जी आकर बोले, अब कूद जा, मुझे बार-बार परेशान करता है, जा कूद के मर जा, तुझसे पिड छूटे, जब दुख होता है तभी मुझे परेशान करता है। लडका समुद्र में कूद पड़ा तथा ज्यो ही हार हाथों मे लेकर आने लगा त्यों ही उसे एक मछली निगल गयी। अब वह मछली ऐसे राज्य के समीप पहुँची, जहॉ के राजा की लड़की ने प्रण कर रखा था कि जो लड़का मछली के पेट से पैदा होगा मैं उसी से शादी करूँगी। वह राजा इसी में परेशान था, वह सभी मछुआरों से मछलियॉ पकड़वाता और मछलियों का पेट चिरवाता। एक दिन वह मछली जाल में फॅस गयी और जब उसका पेट चीरा गया तो उसी से लड़का निकला, जिसकी शादी राजा की लड़की से कर दी गयी। जब शादी हो गयी तो उस लड़के ने राजा से कहा कि राजा साहब अब मैं जा रहा हूँ। राजा ने पूँछा, क्यो? लड़के ने कहा कि मैं एक राजा की लड़की को हार देने का वादा करके चला आया हूँ, वह लड़की तालाब मे पानी में खडी होगी, इसलिए मै जाऊँगा। इधर साल - दो- साल बीत जाने पर वह लड़की तालाब मे खड़ी बिल्कुल सूखकर लकड़ी हो गयी थी। अब जब वह लड़का हार लेकर पहुँचा और लड़की को दिया तो वह बोली कि तुम मेरे पीछे इतना परेशान हुए हो अत अब मै तुमसे शादी करूँगी, मै अभी पिता जी को बुला रही हूँ। लड़का बोला, नहीं, मै शादी तो नहीं करूँगा। लेकिन लड़की नहीं मानी और उसने अपने पिता को बुला लिया तो लड़का भी शादी के लिए राजी हो गया। लड़की ने अपने पिता से कहा, पिताजी मैं इसी से शादी करूँगी। राजा ने कहा, ठीक है,तुम अपनी मर्जी से कर रही हो, कर लो, मुझे क्या परेशानी है तथा राजा ने उसकी शादी की तैयारी कर दी। अब जब भॅवरी (भॉवरें)

पड़ने का समय आया तो राजा ने कहा कि तुम किस कुल के लड़के हो? तो लड़के ने कहा कि पता नही, वैसे हम आपसे ऊँचे कुल के ही होंगे, क्योंकि लड़के को इसका कुछ पता तो था नही। राजा ने कोई ऐतराज नही किया, उन्होंने लड़की का कन्यादान कर दिया, शादी सम्पन्न की तथा लड़के को अपना आधा राज-पाट दे दिया और विदा करके उसी जंगल में मकान बनवा दिया, पहरेदार-चौकीदार-सिपाही नियुक्त कर दिए।

अब लड़का अपने सिपाहियों के साथ शिकार करने (खेलने) जाया करता था। एक दिन शिकार करते-करते वह उसी जगह मे पहुँच गया, जहाँ पहले वाली शादी में बारात पड़ी थी और वह बौरा (गूंगा) बनकर गया था। अब उसे थोड़ा-थोड़ा ध्यान आया तो उसने सिपाहियो से कहा कि लगता है, मैं यहाँ घूम गया हूँ। उधर तीन साल बीत जाने के बाद वही काना लड़का उसी लड़की का गवना (गौना) लेने आया जिसकी शादी उस बौरे (गूंगे) लड़के के साथ हुई थी। अब लड़की तो उसे पहचान नहीं सकी, क्योंकि उसकी शादी तो उससे नहीं हुई थी। अत लड़की उसकाने लड़के से पूछने लगी कि अच्छा बताओ, जब मेरी शादी हुई थो तो तुमने खाना क्या खाया था? अब लड़का क्या जबाब देता, क्योंकि उसे तो पता था नहीं, अत. उसने कहा कि क्या खाया था, सब कुछ तो खाया था। तो लड़की बोली,चल भाग यहाँ से, नहीं एक लात दूँगी, कह रहा है सब कुछ खाया था और उसे भगा दिया। अब गवने (गौने) की बारात लौट गयी। काने लड़के ने कहा,भाई लड़की तो बहुत खराब है, सभी को लात मारने की धमकी देती है और भगा देती है। अब लड़की के घर वाले भी परेशान हो गये क्योंकि लड़की ने कहा कि मेरी शादी जिसके साथ हुई है , मैं उसी के साथ जाउँगी, नहीं तो मैं जिन्दगी ऐसे ही गुजार दूँगी। अब उसी जगह जहाँ पहले वाला लड़का (बौरा) खड़ा था, एक नाऊन कुंए में पानी भरने के लिए आयी तो उसने तो लड़के को देखा ही था अतः वह उसे पहचान गयी और लौटकर के राजा से बताया कि राजा जी आपने अपनी बिटिया (लड़की) की शादी जिस लड़के से की थी, वह लड़का कुआ पर चार सिपाहियों के साथ बैठा है। अब राजा ने अपना घोड़ा ताना और वहाँ पहुँच गये। लड़का भी अपने घोड़े पर सवार होकर आगे बढ़ आया तथा राजा

उसे मेहमान बनाकर घर ले आये। जैसे-जैसे वह लड़का घर की ओर जा रहा था, वह कहता जा रहा था, लगता है मैं यहाँ घूम गया हूँ। धीरे-धीरे लड़के को सब याद आने लगा और फिर उसने उस लड़की को भी देखा, लड़की ने भी उसे देखा , दोनों (एक दूसरे को) पहचान गये। लड़के ने उस जगह को भी देखा जहाँ खीर खायी थी और बोला, मैंने यही पर खाना खाया था, तुमने ढाई चावल की खीर बनाकर खिलाई थी। तब लड़की बोली, हाँ, अब आपको याद आया है, इतने दिन कहाँ रहे। फिर दोनों बातें करते रहे और एक रात वहीं गुजारी। जब वह दूसरे दिन चलने लगा तो लड़की बोली कहाँ जा रहे हो मुझे भी ले चलो। अब लड़का बोला नहीं, आज नहीं ले जाऊँगा। फिर कभी ले जाऊँगा। आज तो शिकार खेलने निकला था और यहाँ तक आ पहुँचा। इस तरह वह वहाँ से चला आया और जब अपने घर (जंगल में) पहुँचा तो रानी ने पूछा, राजा साहब, आप रात में कहाँ रूक गये थे, आज आप उदास-उदास क्यों दिख रहे हैं? तब उस राजा ने अर्थात उस लड़के ने उसे पूरी कहानी बतायी कि कैसे-कैसे मेरी पहली शादी हुई और मेरी रानी भी है। तब वह रानी बोली, तो क्या, इससे अच्छा क्या, आप उसे लिवा लाइए, हम दो लोग हो जायेंगे और रहेंगे। राजा ने कहा, अच्छा लड़ोगी तो नहीं। रानी ने कहा, नहीं, हम लोग नहीं लड़ेगी, प्रेम से रहेगी। उसने कहा, ठीक है और उसे भी लिवा लाया।

अब कुछ दिन बाद उसे मछली के पेट से निकलने के बाद हुई शादी वाली बात याद आयी और वह फिर उदास-उदास रहने लगा तो दोनों रानियों ने पूछा राजा साहब, अब क्यो उदास हो? तब उसने अपनी दूसरी शादी की बात बतायी कि कैसे-कैसे मछली के पेट से निकलकर मेरी शादी की गयी। तब दोनों रानियों ने कहा कि इससे अच्छा क्या, उसे भी लिवा लाओ। राजा ने कहा कि तुम तीनों लोग लड़ोगी तो नहीं। उन्होंने कहा नहीं लड़ेगी। अब तीन लोग हो गयी और साथ-साथ रहने लगी।

अब एक दिन फिर राजा अनमन-अनमन हो गया और सोचने लगा कि पता नहीं मैं किस कुल का लड़का हूँ ? ये तो तीनो रानियाँ राजा की लड़की हैं। अब शंकर जी का फिर सिंहासन डोला , वे फिर प्रकट हुए तो लड़के ने कहा, शंकर जी, आप मुझे

बता दीजिए मैं किसका लड़का हूँ, न मेरे बाप का पता है न कुल का, बस पैदा हो गया हूँ। तो शंकर जी बोले, सुन, तू ब्राह्मण का लड़का है और तेरे माँ-बाप इधर से ही गुजरेंगे, अपने पहरेदारों से कह दे कि उन्हें रोके न। उधर उसके मा-बाप बुड्ढे हो गये थे और जब वापस आते समय उसी जगह पहुँचे तो माँ को याद आ गयी कि यही पर मैंने अपना लड़का छोड़ा था उसकी ममता जाग उठी। इधर राजा ने भी पहरेदारों से कह रखा था कि अगर इधर से कोई बुड्ढा-बुड्ढी आये तो मुझे तुरन्त बताना। जब वे दोनों आये और उस जगह को देखकर रोने लगे । राजा ने अपने महल से उन्हे देख लिया और उसने अपनी तीनों रानियों को भेजा और कहा कि जाओ उनके पैर छुओ, वे मेरे माता-पिता हैं, उन्हें लिवा लाओ। तीनों रानियो ने जाकर बुढा-बुढी के पैर छुए तो वे बोले, बिटिया, तुम लोग हमारे पैर क्यों छू रहे हो? उन तीनों ने कहा कि हम लोग आपकी बहुएं हैं। इतने मे राजा भी आ गये और उन्हें महल लिवा ले गये। लड़के ने अपने बाप की सेवा की और तीनो रानियों ने माता की सेवा करनी शुरू कर दी। थोड़े दिन बाद राजा ने तीनों रानियों से कहा कि तुम लोग बारी-बारी से मेरी व मेरे माँ-बाप की एक-एक लोग सेवा करो। इस तरह तीनों रानियाँ उसकी सेवा करने लगी और प्रेम से रहने लगी। किस्सा थी सो हो गयी।

'नि:पुत्री राजा'

कथक्कड़ - श्रीमती गीता उर्फ गुड्डन

अवस्था- 20 वर्ष, सेक्स - महिला, जाति-कहार

संग्रहस्थल- ग्राम-मकरॉव, हमीरपुर (उ0प्र0)

दिनॉक- तीन फरवरी, 1996 ईसवी

संग्रह क्रमांक- 27 ।

एक था निपुत्री राजा यानी उसके कोई बालक नहीं था। सो जमादारिन झाड़ू लगाने आती तो वह रोजाना (प्रतिदिन) अपने द्वारे पर बैठा मिलता। तो वह कहती, हे- निपुत्री, तुम मुझे रोज अपनी सूरत दिखा देते हो, इसलिए मुझे दिन भर खाना नसीब नहीं होता। जमादारिन के इस कथन को एक दिन राजा ने सुन लिया तो उसे बड़ा दुख हुआ। उसने सोचा, जब एक जमादारिन ऐसा कह सकती है तो दूसरे तो कहेंगे ही। अतः उसने अपने नौकरों से कहा कि जाओ, इस जमादारिन के लिए थाली में सब खाना लगाकर ले आओ। नौकर खाना ले आये और जमादारिन को दे दिया। जमादारिन खुश होकर, जब भोजन लेकर अपने घर पहुँची तो उसने देखा कि घर में पानी नहीं है। अतः वह भोजन की थाली रखकर पानी लेने चली गयी। इधर जमादार आया, उसने देखा खाना रखा हुआ है तो उसने थाली का सारा भोजन खा डाला और चला गया। अब जब जमादारिन पानी लेकर आयी तो देखा खाना नहीं है तब उसने फिर कहा, इसीलिए तो कहते हैं कि निपुत्री राजा है, तभी तो मुझे खाना नसीब नहीं हुआ। जब वह फिर जब झाड़ू लगाने गयी तब फिर वही बात कही। जिसे सुनकर राजा को बड़ा दुख हुआ। उसने अपनी रानी से कहा, रानी लगता है मुझे यह देश छोड़ना पड़ेगा, मेरा यहाँ रहना ठीक नहीं है। क्योंकि जब एक जमादारिन मुझे निपुत्री कहकर अपमानित कर सकती है तो और सब लोग क्यों नहीं कह सकते। रानी बोली मैं क्या कर सकती हूँ राजन, यह कोई ऐसी वस्तु तो है नहीं जिसे मै अपनी तरफ से बना सकूँ या बनाकर (अपने पेट में) डाल लूँ, तो हो जाय। भगवान

ने सब कुछ तो दिया है, पर एक बच्चा नहीं दिया है। सो एक दिन भगवान ने राजा को स्वप्न दिया कि देख! मैं तुम्हें एक बालक दूँगा. तुझे निपुत्री नही कहलाने दूँगा, लेकिन एक शर्त है, तू उसकी शादी नहीं करना। राजा ने शर्त स्वीकार कर ली, अब रानी आधान (गर्भवती) से हुई तथा उसके एक बालक पैदा हुआ। जब पुत्र पैदा हआ तो चारों तरफ खुसियाँ मनायी जाने लगी। सभी लोग कहने लगे, निपुत्री राजा के लड़का हुआ। मतलब अब भी राजा निपुत्री नाम से ही जाना जाता था, उसका नाम नहीं बदला था, उसका नाम ही निपुत्री राजा रख दिया गया।

अब धीरे-धीरे लड़का बड़ा हुआ, वह रात दूगनी दिन चौगुना रोज का रोज बढ़ने लगा। जब लड़का सयाना (बड़ा) हुआ तो उसकी सगायी के लिए लोग आने लगे, जिन्हें कुछ दिन तो वापस करते रहे कि अभी शादी नहीं करेंगे, तमाम लोग लौटते रहे। थोड़े दिन बाद राजा-रानी ने सोचा कि सभी के लड़कों की तो बहुए आ गयीं, हमारे भी एक बहू आ जाए तो कितना अच्छा होगा। अतः उन्होंने लड़के की सगाई तय कर ली और बारात लेकर गये। टीका-चढ़ाव सब हो गया , अब भंवरी (भाँवरों) का नम्बर आया तो छ. भाँवरी पड (हो) गयी और सातवीं भँवरी में लड़का मर गया। तो सभी को बहुत सोच हुआ तब राजा को याद आया कि भगवान ने मुझसे कहा था, लड़के की शादी नहीं करना, नहीं लडका मर जायेगा। परन्तु अब कर भी क्या सकते थे, लड़का तो मर चुका था। अतः उसका वही पर एक पीपल के पेड़ के नीचे दाह-संस्कार कर दिया गया और बारात वापस लेकर चले आये। लडकी को ऐसे ही रहने दिया गया, उसने प्रण किया कि मैं अब ऐसे ही जिन्दगी गुजार दूँगी। उसी गाँव में अड़तिया (व्यापारी) रहते थे, वे अपना रात-विरात घर आया करते थे। एक दिन उन्होंने लड़की को बताया कि बिटिया उसी तरह जामा पहने, उसी तरह हाँथ में कंकन बाँधे. उसी तरह सिर पर मौर रखे हुए लड़का उसी पीपल के नीचे रात को बारह बजे बरमदेव (ब्रह्मदेव) की प्रतिदिन पूजा किया करता है। लड़की ने कहा, सच भईया! आप लोग सही कह रहे हैं? उन सभी व्यापारियों ने कहा, हाँ बिटिया (लडकी) हम सच कह रहे हैं। हमने देखा है। लड़की ने कहा, भईया,

मुझे भी ले चलोगे, मुझे भी दिखाओगे। व्यापारियों ने कहा, क्यों नहीं, चलो आज रात में तुम्हे दिखायेंगे। अब वे सब लड़की को लेकर बारह बजे से पहले ही पहुँच गये और पेड़ से कुछ दूरी पर बैठ गये। उन लोगों ने लड़की से कहा बिटिया सोना नहीं, बारह बजे वह पूजा करने आता है। लड़की ने कहा, ठीक है, मैं नहीं सोऊँगी। अब सभी लोग पीपल के पेड़ की तरफ नजर लगाये (गड़ाये) बैठे रहे और उधर लड़की सो गयी। जब रात के बारह बजे तो लड़का प्रकट हुआ और उसने पूजा-पाठ किया। व्यापारियों ने सोचा कि लड़की भी देख रही होगी। जब पूजा समाप्त हो गयी तो उन्होंने लड़की से पूछा कि बिटिया तुमने देखा। तब वह लड़की नींद से जागकर बोली, अरे भईया मैं तो सो गयी थी, मैं नहीं देख पायी। व्यापारियों ने कहा कोई बात नहीं, एक रात और सही, कल देख लेना। फिर दूसरी रात वैसे ही किया, इस बार व्यापारियों ने उस लड़की के बाएं हाथ की छिन्नी (अंगुली) काटकर उसमें मिर्च लगा दिया, जिससे लड़की सोये न। लड़की छरछराहट (जलन) के कारण सोई नहीं, जब बारह बजने को हुआ तो वह आकर पूजा करने लगा। व्यापारियों ने कहा, बिटिया देखो, तुम जाकर उसके पैर पकड़ लो। लड़की दौड़कर गयी और उसके पैर पकड़ लिया। लड़के ने पूछा, तुम कौन हो? मेरे पैर क्यों पकड़ लिया? मेरे पैर छोड़ो। लड़की ने कहा नहीं, मैं नहीं छोड़ूँगी, मैं आपकी पत्नी हूँ। लड़के ने कहा, मेरे पैर छोड़ दो नहीं तो तुझे बरमदेव महाराज मारेंगे। लेकिन लड़की नहीं मानी, पैर पकड़े ही रही और लड़के से जिद करने लगी। तब लड़के ने कहा, अच्छा, तुम नहीं मानोगी, तुम मेरे कमरे की चाबी लो और वहीं जाकर रहो। लड़की ने कहा तुम कभी आओगे कि नहीं, तो लड़के ने कहा मैं बरमदेव महाराज से पूछकर ही आऊँगा, अगर वे कहेंगे तो आऊँगा, नहीं तो मैं नहीं आऊँगा। लड़की ने कहा ठीक है, मैं आपके घर जा रही हूँ। लड़के ने कहा जाओ। तब लड़की वहाँ से चाबी लेकर चली आयी और जब व्यापारियो ने पूछा कि बिटिया (लड़की) क्या बात हुई? तो उसने कहा कुछ भी तो नहीं, वह उनसे कहती भी क्या।

अब वह लड़की अपने घर चली आयी और आकर उसने अपने पिता से कहा, पिताजी, मेरी ससुराल में चिट्ठी डाल दीजिए कि मुझे लिवा ले जाय, मैं वहीं जाकर रहूँगी।

तब उसके माँ-बाप उसे समझाने लगे कि बिटिया अब वहाँ जाकर क्या करोगी, वहाँ अब कौन है? लेकिन लड़की नहीं मानी उसने कहा, नहीं , मैं वहीं रहूँगी। परन्तु उसने चाबी वाली बात नहीं बतायी और न ही यह बताया कि मैं अपने पति से मिल चुकी हूँ। तब उसके पिता ने उसकी ससुराल को पत्र लिखा (भेजा) और पत्र पाकर लड़की के ससुर आये, वे बोले , बेटी तुम वहाँ कैसे रह सकोगी? लेकिन लड़की ने कहा, नहीं, मैं वही रहूँगी। तब राजा (ससुर) उसे लिवा ले गये और वह अपने ससुराल चली गयी। वहाँ जाकर उसने उस बंद कमरे को खोला, जिसकी चाबी उसे लड़के ने दी थी और उस कमरे की सफाई करके रहने लगी। इधर लड़का बरमदेव से अनुमति लेकर बारह बजे रात को लड़की से मिलने आने लगा, दोनो अपना रात-भर बातें करते रहते, सुबह लड़का चला जाता था। इस प्रकार वह रोज उससे बाते किया करती थी। अब उसे बाते करते हुए अगल-बगल की औरतों ने भी सुना तो वे सब आपस में खुसर-फुसर करने लगी कि अरे, राजा की बहू रात में किससे बात किया करती है। एक दिन वे रानी के पास पहुँचकर पूँछने लगी, रानी जी आपकी बहू रात में किससे बातें किया करती है, क्या आप उसके पास लेटती हैं? रानी ने अचम्भित होकर कहा नहीं तो। तब उन औरतों ने कहा कि रानी जी आपकी बहू रात भर किसी से बातें किया करती है। रानी ने अपनी बहू के पास जाकर पूछा, बिटिया, तुम किससे रात भर बातें किया करती हो? मुहल्ले की सभी औरतें कहती हैं। लड़की ने कहा, माताजी, मै तो अपने पति से बाते किया करती हूँ और किससे करूँगी? रानी बोली, बिटिया, कहाँ मेरा बेटा है जो तुम उससे बातें करोगी। लड़की बोली, नहीं माताजी, अगर आपको विश्वास न हो तो आप खुद देख लीजिए, आप रात को बारह बजे मेरे कमरे में अपने बेटे को देखियेगा। रानी ने कहा, ठीक है और लड़की ने अपनी सास को पलंग के नीचे लिटाकर कहा कि रात को बारह बजे देखना, सोना नहीं। लेकिन बारह बजे के लगभग वह सो गयी, लड़का आया और लड़की से काफी देर तक बातें करता रहा। लड़की ने मन मे सोचा कि माताजी तो नीचे से सब देख-सुन ही रही होगी। जब लड़का चला गया तो लड़की ने पलंग के नीचे से माँ को पुकारा और पूछा माँ जी आपने देखा अपने बेटे को? रानी ने कहा, नहीं बिटिया, मैं तो सो गयी थी। लड़की ने कहा, ठीक है मैं

कल दिखाऊँगी। अब लड़की ने अपनी सास को दूसरे दिन भी पलंग के नीचे लिटा दिया। लेकिन आज उसने वही होशियारी की जो व्यापारियों ने उसके साथ किया अर्थात उसने रानी के बाए हाथ की छिन्गी (अगुली) को काटकर मिर्च लगा दिया। अब रात को बारह बजे लड़का आया, लड़की ने उसकी आरती उतारी पैर छुए और उससे बातें करती रही। थोड़ी देर बाद लड़का चला गया, जब लड़का चला गया तो लड़की ने सास से पूछा कि माँ जी देखा आपने? रानी ने कहा, हाँ बिटिया, मैंने देखा ये तो मेरा हीरा (बेटा) है। तब लड़की बोली, अब तो आपको विश्वास हो गया कि मैं किससे बाते किया करती हूँ। रानी ने कहा, हाँ। तब लड़की बोली, अब आप मान जाये तो मान जाये, नहीं तो कोई बात नहीं , बाहरी लोगो को कहने दो, मैं तो अपने पति से ही बातें करती हूँ। तब रानी बोली, नहीं बिटिया तुम बातें किया करो, यह ससार - सागर है, सब कोई बकते रहते हैं, बकने (कहने) दो यह कहकर रानी चली गयी।

कुछ दिनो बाद वह आधान (गर्भवती) से हुई तो मुहल्ले की औरतों ने फिर रानी से कहा, रानी जी, आपकी बहू ठीक नहीं है, पता नही किससे बातें किया करती है? रानी ने कहा, ठीक है, तुम लोग रहने दो, मेरी बहू ठीक है, तम्हें क्या पड़ी है? अब कुछ दिन बात उसके बालक पैदा हुआ, वह बच्चा भी बिल्कुल राजा के लड़के के समान था। एक दिन भगवान आये, तब लड़की ने भगवान के पैर छुवे और भगवान को हरनी हराया (वचन लिया) कि भगवान अब तुम मुझे मेरे पति को दो, मुझ पर सब लोग थूकते हैं। इतने दिन तो मैंने गुजार दिए, मगर अब नहीं गुजार पाऊँगी, अब आपको मेरे पति देव को वापस करना होगा, नहीं तो आप मुझे देते ही नहीं। आपने उनको मेरा पति क्यों बनाया था? अब मेरी जिन्दगी ऐसे नहीं कटेगी, आपको देना पड़ेगा। भगवान ने कहा ठीक है दूँगा, लेकिन लड़की ने भगवान से त्रिवाचा हरवा लिया कि हाँ, हम तुम्हारा पति तुमको वापस करेंगे। अब भगवान ने लड़की से कहा कि जब वह आज रात को आवे और जाने के लिए कहने लगे तो तुम उसके पैर पकड़ लेना, नहीं तो वह कौन रूकेगा, फिर चला जायेगा। लड़की ने कहा ठीक है, मैं पकड़ लूँगी। जब लड़का रात को आया और

उससे काफी देर बाते करता रहा और जब जाने लगा तो लड़की ने तुरन्त उसके पैर पकड़ लिया। उसके कहा, तुमने मुझे आज क्यो पकड़ लिया? मुझे जाने दो, नहीं तो मुझे मेरे बरमदेव महाराज मारेंगे। लड़की ने कहा, नहीं, मैंने आपको आज भगवान से मांग लिया है, अब आप नहीं जा सकते, अब आपको मेरे पास ही रहना होगा, मैं तुम्हें नहीं जाने दूंगी, मैने भगवान से त्रिवाचा हरवा ली है। इस प्रकार समय निकल जाने पर (सुबह हो जाने पर) वह लड़का वहीं रुक गया और रहने लगा। परन्तु शर्म के कारण वह बाहर नहीं निकलता था कि गाँव के सब लोग क्या सोचेगे कि यह तो मर गया था, जिंदा कैसे हो गया? इसी प्रकार शर्म के कारण वह अपने माता-पिता के पास नहीं जाता था। फिर धीरे-धीरे वह माँ-बाप के पास जाने लगा और फिर घर से बाहर भी निकलने लगा और प्रेम से सब लोग रहने लगे। किस्सा थी सो हो गयी।

'उजबासा रानी'

कथक्कड़- श्रीमती गीता उर्फ गुड्डन

अवस्था- 20 वर्ष, सेक्स-महिला, जाति-कहार

सग्रह स्थल- ग्राम-मकरॉव, हमीरपुर (उ0प्र0)

दिनॉक- तीन फरवरी, 1996 ईसवी

संग्रह क्रमांक- 28 ।

अइसे-अइसे एक रहै राजा एक रहै रानी। राजा ने कहा, होय न होय रानी हम भी पुण्य का कोई काम करें। रानी ने कहा, ठीक है। राजा ने कहा, होय न होय एक कुआँ खुदवा ले। रानी ने कहा, ठीक है। राजा ने कुआँ खुदवाया परन्तु उसमें पानी नहीं निकला। अतः राजा पडितो के पास गये और उनसे कहा कि पडित जी हमने साठ हाथ गहरा कुआँ खुदवाया फिर भी पानी नहीं निकला। तब पंडित जी बोले, सुनो राजा, तुम आसपास डुग्गी पिटवा दो (ऐलान करवा दो) कि जो भी इस कुवे को सोने-चादी से भर देगा, तो मैं उसके साथ अपनी लड़की की शादी करूँगा। इससे तुम्हें अपनी लड़के के लिए वर नहीं ढूँढना पड़ेगा, वह स्वय वर ढूढ लेगी तथा कुआँ भी भर जायेगा। राजा ने कहा, ठीक है, मेरे दोनों काम बन जायेंगे तथा उससे ऐसी ही डुग्गी पिटवा दी। अब लड़की ढबिया (महल का ऊपरी खण्ड) में बैठकर देखा करती थी। बड़े-बड़े राजा-महाराजा आये, उन्होंने अपना सारा सोना-चॉदी कुवे में डाल दिया फिर भी कुआँ नहीं भरा और वह राजा सब सोना-चॉदी उलीचकर अपने घर में रख लेता था। एक बार एक राजा का लड़का आया, वह प्यासा था अतः वह उसी कुवे की तरफ जाने लगा तो मालिन उसे देखकर बोली कि लाला कहा जा रहे हो। तो लडका बोला, दाई मुझे प्यास लगी है, मैं पानी पीने कुवे में जा रहा हूँ। तो मालिन बोली, बेटा, लो पानी तुम मेरे पास से पी लो, उस कुवे मे पानी नहीं है। लेकिन लड़के ने कहा, क्यो दाई, उसमे पानी क्यों नहीं है, मैं जाकर देख आऊ उसमें पानी क्यों नहीं

है? तब उस मालिन ने उसे सारी कहानी बताई कि इसलिए इसमें पानी नहीं है और शर्त भी बतायी। तब वह लड़का कुवे के पास गया तो वह लड़की (वहाँ आकर) तुरन्त बोली, क्या देख रहे हो, कुआँ देखने आये, तुम्हें कुआँ भरना है? लड़के ने कहा, हाँ, हम कुआ भर देगे। तब लड़की ने उसे एक अँगूठी दी और कहा, लो इसे ले लो और अँगुली में पहन लो और जब कुआँ न भरे तो यह अगूठी उतारकर डाल देना और जब कुआँ भर जाये तो अँगूठी फिर निकाल कर पहन लेना और अब अपने घर जाकर धन सम्पत्ति ले आओ। चूँकि लड़की ने लड़के को पसंद कर लिया था, इसलिए उसने अँगूठी उस लड़के को दे दिया। क्योंकि उसके अलावा कुवे को कोई नहीं भर सकता था, मतलब यह लक्ष्मी आप लिए थी। अब लड़का अपने घर जाकर सारा सोना चाँदी ले आया और कुवे में डाल दिया, फिर भी कुआँ थोड़ा सा खाली रह गया। अब लड़के का ध्यान अपने हाथ की तरफ गया, उसने अँगूठी उतारी और कुवें में डाल दी, कुआँ भर गया। उसने अँगूठी निकालकर फिर से पहन लिया, कुँआ वैसे ही भरा रहा। अब राजा के पास खबर पहुँची कि आपका कुआँ भर गया है तो राजा आये और शादी का इन्तजाम किया और कुवे का सारा सोना-चाँदी अपने यहाँ रखा। अब शादी के समय जब लड़की की माँ लड़की को चोटियाँ गूँथ रही थी तो उसने सोचा कि लड़का तो अपने घर से सारा सोना-चाँदी ले आया है, अब इन्हें हम विदा करेगे तो ये क्या खायेंगे। अतः उसने यही सोचकर लड़की की चोटी में दो अशर्फियाँ भी गूँथ दी कि अपना दोनों इसे बेचकर कुछ खा-पी लेंगे और लड़की को विदा कर दिया। चलते-चलते वे दोनों काफी दूर निकल आये, तब एक जगह लड़की ने अपने पति से कहा, राजा जी, मुझे भूख लगी है। लड़का बोला, यहाँ क्या रखा है, जो कुछ भी था, सब कुछ तो मैंने तुम्हारे माता-पिता को दे आया, अब कुछ नहीं है मेरे पास। तब लड़की को अशर्फियाँ याद आई जो उसकी चोटी में गूँथी थी। अत· उसने एक अशर्फी निकालकर राजा (लड़के) को दिया और कहा, लीजिए, जो चाहे आप ले आये, मैं बनाऊँगी खिलाऊँगी। तब राजा ने सोचा कि यहाँ जंगल में बनाने-खाने से अच्छा है, कहीं से मिठाई ले आऊँ, तो दोनो लोग खा लें। अतः वह मिठाई लेने चला गया, जब वह एक दूकान पर पहुँचा तो वहाँ एक डायन (औरत) रहती थी। उसने एक लड़के को पकड़ रखा था और उसे बार-बार

चुटकी काट लेती थी, जिससे वह बालक रोने लगता था। तो राजा ने पूछा, दाई बालक को काहे रुला रही हो? तो उसने कहा, ऐसे ही रो रहा है। इसके बाद फिर उसने बच्चे के चुटकी काट ली, जिससे वह फिर रोने लगा। तब राजा ने फिर टोका कि ऐ बुढ़िया, क्यों लड़के को रुला रही हो? तब बुढ़िया बोली कि लगता है यह आपकी अँगूठी को मचल रहा है। राजा ने कहा, इतना छोटा बच्चा अँगूठी जानता है और उसने गुस्से में उसे अँगूठी उतारकर दे दी कि ले बच्चे को अँगूठी दे दे। अब वह बुढ़िया वहाँ से चली आयी, बच्चे को छोड़ दिया और अँगूठी लेकर रानी (लड़की) के पास आकर बोली कि बिटिया (लड़की) तुम यहाँ कहाँ बैठी हो, घर चलो, मैं तुम्हारी मौसी हूँ, देखो लाला ने मुझे अँगूठी देकर भेजा है कि जाओ, लिवा लाओ। अब लड़की ने जब अपनी अँगूठी देखी तो वह विश्वास करके उसके साथ चल दी। अब वह बुढ़िया उस लड़की को लेकर दूसरे राजा के यहाँ पहुँच गयी। वह जोड़ में जोड़ मिलाया करती थी, क्योंकि उसे ऐसा करने से आधा राज-पाट मिल रहा था और वह उस लड़की को उस दूसरे राजा के पास छोड़ आयी। इस प्रकार वह लड़की चंगुल में फस गयी; उधर वह लड़का उस जगह पर पहुँचा तो रानी को न देखकर हैरान रह गया और वह पागल-सा इधर-उधर भटकने लगा, बस यही रटा करता था, हाय! मेरी उजवासा रानी, हाय! मेरी उजवासा रानी, तू कहा चली गयी।

इधर उस लड़की ने नये राजा से कहा कि राजा, मैं तुम्हारे पास ऐसे नहीं रहूँगी। राजा ने कहा, फिर कैसे रहोगी? तो लड़की बोली, मेरी एक शर्त है कि आप पहले अपना पूरा महल तोड़वाकर नया महल बनवाये, तब मैं आपके पास रहूँगी। तब राजा ने महल तोड़वा डाला और नया महल बनवाया। अब महल में सिर्फ छपाई (प्लास्टर) होने को शेष था, महल के छत पर बालू पड़ी थी। एक दिन रानी छत पर घूम रही थी तो उधर से वही लड़का हाय मेरी उजवासा रानी, हाय मेरी उजवासा रानी कहता हुआ निकला; तब रानी ने उसे देखकर थोड़ी सी बालू उठाकर उसके ऊपर फेंका, जिससे उसने ऊपर की ओर देखा तो रानी बोली, चुप रहना, तुम रात को चुपचाप रस्सा और घोड़ा लेकर आ जाना,मैं चुपके से उतर आऊँगी। यह सब बाते एक दूसरा काना राजा सुन रहा था। अत. उससे

पहले ही वही काना राजा चस्मा (ऐनक) लगाकर आ गया। रानी ने समझा वही आया है और वह उतरकर घोड़े पर सवार होकर चल दी। जब रानी ने घर जाकर शक्ल देखी तब वह पहचान सकी कि फिर धोखा मिला। अब वह वहाँ से निकलने का उपाय सोचने लगी। अतः उसने उस काने से कहा कि राजा मैं नशा-पत्ती करती हूँ, मुझे भांग चाहिए। राजा ने कहा ठीक है, मैं ला रहा हूँ और वह उसे घर में बंद करके चला गया और भांग लेकर आया। रानी ने उससे कहा कि इसके दो गोले बनाओ। काने राजा ने उसके दो गोले बनाये। तब रानी बोली, अच्छा पहले एक गोली तुम खाओ। राजा एक गोली खा गया। तब रानी ने कहा, अच्छा राजा तुम मेरे पति हो,इसलिए अब एक गोली मेरे हाथ से खाओ और काना राजा इन्कार न कर सका और दूसरी गोली भी खा गया। अब उसे नशा ज्यादा हो गया और वह सो गया। जब सो गया तो रानी ने उसके सारे कपड़े उतारे और उसके कपडे खुद पहन लिए। अपने कपड़े उसके ऊपर डाल दिया और तीन-कमान लेकर, घोड़ा मे बैठकर चल दिया। चलते-चलते उसे एक लड़का मिला, वह लड़का चिड़िया मार रहा था। रानी ने उससे पूछा कि ये क्या कर रहे हो? तो उसने कहा कि अरे भाई! मैं चिड़िया मार रहा हूँ। तब वह मर्दाने वेष मे सजी रानी ने कहा कि लाओ, मै मारे देता हूँ और तीर-कमान से चिडिया मार दी। तब उस लड़के ने प्रसंशा की और कहा, दोस्त चलो तुम, आज मेरे घर चलो। इस प्रकार रानी उसके घर गयी और खाना-पीना खाया-पिया और उससे कहा, दोस्त तुम्हारे घर मे यदि कोई कमरा खाली हो तो मुझे उसके चाबी दे दो, मै उसी में लेटूँगा और घोड़ा भी बाधूँगा। लड़के ने कहा, हाँ है तथा उसे कमरे की चाबी दे दिया और वह घोड़ा लेकर कमरे में चली गयी। अब थोड़ी देर बाद घर की औरतें आपस में बातचीत करने लगी कि होय न होय, यह लड़की है, केवल वेषभूषा मर्दो की धारण किए है। कितना अच्छा हो, अपने लाला (लड़के) की शादी इसके साथ हो जाय। जब रानी ने ये सब सुना तो वह वहाँ से चुपचाप ताला खोलकर, घोड़े में सवार होकर चली गयी। चलते-चलते उसे एक बुढ़िया मिली जो (आटा) पीस रही थी और रोती जा रही थी। तब उसने पूछा कि ऐ बुढ़िया, तुम रो क्यों रही हो? तो बुढ़िया बोली कि आज मेरे लाला (लडके) की धानु (दानव) मारने की उसरी (बारी) है और मेरा लडका है नहीं।

सिपाही आयेंगे तो मैं क्या जबाब दूँगी। तब उस रानी ने कहा कि ठीक है, कह देना कि यही मेरा लड़का है, क्योंकि रानी मर्दाने वेशभूषा में थी। बुढ़िया बोली ठीक है और उसने अपना घोड़ा बाँध दिया। अब बुढ़िया अन्दर चली गयी, कुछ देर बाद सिपाही आये तो बोले कि ऐ बुढ़िया, तेरा लड़का कहाँ है? बुढ़िया ने कहा, साहब यही है मेरा लड़का। सिपाहियों ने उससे कहा, ऐ, जाओ राजा का हुकुम है, धानु मार के लाओ। सो उसने अपना तीर-कमान उठाया, घोडा लिया और दानव को मारने चल पड़ी तथा एक पेड़ पर चढ़कर बैठ गयी। अब जब दानव आया तो तुरन्त उसे मार दिया तथा उसके नाक कान काट कर घर ले आयी। अब गाँव के सभी लड़कों ने देखा कि आज दानव अच्छा सो रहा है, उन सभी ने पत्थर मारना शुरू किया परन्तु वह हिला-डुला भी नही। तब वे सब उसके पास आये और सोचा हम भी इस दानव को मार लें और सबने मिलकर उसके ऊपर उछलना-कूदना शुरू किया। अब सब राजा के यहाँ पहुँचकर कहने लगे, हमने मारा दानव, हमरे मारा दानव। तब राजा बोले, ठीक है, अच्छा सब लोग बैठो और राजा ने अपने सिपाहियो को उसी बुढ़िया के यहाँ भेजा कि जाओ, उस बुढ़िया के लड़के को लिवा कर ले आओ। पुलिस आई ओर उस लड़के अर्थात मर्दाना वेष में रानी को लिवा ले गये। अब राजा ने उससे पूछा, तुमने दानव को मारा? तो उसने रूमाल में बंधे दानव के नाक-कान दिखलाये। राजा ने उसे शाबासी दी और कहा, मैं तुम्हारे साथ अपनी लड़की की शादी करूँगा। मर्दाना वेषधारी रानी ने सोचा, अब क्या हो? खैर किसी तरह उसका टीका-चढाव सब कुछ हो गया और जब भँवरी (भाँवरें) पड़ने का नम्बर आया तो उसने खूब बहाना बनाया कि मेरा पेट दर्द कर रहा है, मेरी तवियत सही नहीं है, मैं भँवरी में नहीं बैठ पाऊँगा। राजा ने उसे दवा वगैरा देने को कहा, लेकिन उसने कहा, नहीं, मैं कुछ नहीं खाऊँगा। तब राजा ने सोचा, चलो हटाओ, टीका-शादी तो हो गयी है न पड़ने दो भँवरी , क्या हुआ। अब राजा ने उन्हें बिदा कर दिया और कहारों से कहा कि ऐ कहारो, इनको ले जाओ और जहाँ ये कहें वही रोक देना। चारों कहार डोला लेकर चल दिए। जब एक जंगल मिला तो दूलहा बनी रानी ने कहा, ऐ कहारो, यही पर डोला रख दो। कहारों ने डोला रख दिया और दोनों उतर गये। वही पर तुरन्त महल बनवाया और पुलिस का पहरा लगा दिया। जब पुलिस वगैरह लग गये तो एक दिन दूल्हा बनी रानी ने कहा, ऐ सिपाहियो, जाओ, चार बेवकूफों को पकड़ लाओ। अब पुलिस परेशान

कि चार बेवकूफ कैसे मिलें, किसी को बेवकूफ कैसे कहा जाय, उसे कैसे पहचाना जाय? कुछ देर बाद सिपाहियों को चार लोग अंट-संट बकते हुए मिले। सिपाहियों ने सोचा कि लगता है ये ही बेवकूफ हैं, क्योंकि अंट-संट बक रहे हैं। अतः वे उन चारों को पकड़ ले गये और राजा (मर्दानी वेषधारी रानी) के सामने प्रस्तुत किया। उसने कहा कि ठीक है, एक बास का डंडा तोड़ लाओ और इन दो के खूब मार लगाओ। जिनमें से पहला कह रहा था 'झूठ घाट का पिलावै, न जाने कहाँ चली गयी' और दूसरा कह रहा था, 'भेष-करै मर्दाना , मै भडुवा न पहचाना', इन दोनों को पिटवा कर भगा दिया गया। अब तीसरा जो कह रहा था, 'दो दिन की कसर रह गयी, न जाने किधर चली गयी', उसे व्याह करके लायी गयी रानी को दे दिया और चौथा बचा जो खुद उसी का यानि उजबासा रानी का पति था,जिसके साथ वह प्रेम से रहने लगी। किस्सा रहे सो हो गयी।

'राजा की लड़की'

कथक्कड़- श्रीमती गीता उर्फ गुड्डन

अवस्था - 20 वर्ष, सेक्स-महिला, जाति-कहार

संग्रह स्थल- ग्राम-मकरांव, हमीरपुर (उ0प्र0)

दिनॉक- चार फरवरी, 1996 ईसवी

सग्रह क्रमांक- 29 ।

एक था राजा, एक थी रानी, उनके एक लड़की थी। एक दिन राजा ने रानी से कहा कि रानी, तुम्हारे एक ही लड़की है और तुम उसकी भी सेवा (देखभाल) नहीं कर पाती हो। रानी बोली, मुझे खुद से समय नहीं मिलता, मैं लड़की की सेवा क्या करूँगी? एक नौकरानी लगा दीजिए। राजा ने कहा, ठीक है तथा उन्होंने एक नौकरानी (औरत) लगा दी। अब वह नौकरानी उस लड़की की सेवा करती, उसके कपड़े धुलती, उसे नहलाती, उसके बाल संवारती , सब कुछ करती। एक दिन जब नौकरानी लड़की के बाल सवार रही थी तो लड़की के बालो से एक जुवां निकला। तब उसने उस जुवें को रानी को दिखाया और कहा, देखिए रानी जी, आपकी लड़की के सिर से जुवां निकला है। रानी ने देखा और बोली , ठीक है, इसे एक शीशी में बंद करके रख दो, राजा साहब को दिखायेंगे। नौकरानी ने उसे एक शीशी मे बंद करके रख दिया, जब राजा साहब आये तो उन्हें दिखाया गया। राजा ने भी उस जुवें को देखा और उसे एक टीन के कनस्तर में रखवाकर, उसे तेल से भरवा दिया। कुछ दिन बीत जाने के बाद वह जुवां बड़ा होकर एक कीड़े का रूप धारण कर लिया।

तब एक दिन राजा ने उस कीड़े को अपने आंगन में एक घरघूला बनवा कर उसमे रखवा दिया और पचायत बुलाकर कहलवा दिया कि जो कोई इसे पहचान लेगा और बता देगा कि यह क्या है? तो मैं अपनी लड़की की शादी उसे से कर दूंगा। अब बड़े-बड़े राजा-महाराजा आये, देखा, परन्तु कोई भी उस जुवें को पहचान न सका। उधर से ही

एक नाऊ (नाई) निकला, उसने कहा, राजा साहब, मै बताऊँ, आप मेरे साथ अपनी लड़की की शादी करेंगे। राजा ने कहा, हाँ करेगे। इस प्रकार जब नाई ने राजा से शादी का वचन ले लिया तब उसने कहा, राजा साहब, यह जुवां है। तब राजा को अपनी लड़की की शादी उस नाऊ के साथ करनी पड़ी। शादी हो गयी और राजा ने अपनी लड़की को बारात के साथ बिदा कर दिया। जब बारात बिदा होकर कुछ दूर निकल गयी तो बारातियों ने सोचा कि यही पर कुछ देर विश्राम कर लें, खाना-पीना , कुछ नास्ता वगैरा कर लें और वहीं पर लड़की का डोला (डोली) रख दिया गया। तो लड़की मन में सोचने लगी कि हे भगवान। मेरे पिताजी को इतना भी याद न रहा कि कहाँ मैं एक राजा की लड़की और कहाँ मैं इस नाऊ के साथ रहूँगी। अत उसने भगवान से प्रार्थना की कि हे भगवान। धरती माता, मैं इसी जगह समा जाऊँ तो वह सचमुच उसी जगह समा गयी। अब नाऊ क्या करता? उसने कहा, जा तूने मेरा साथ छोड़ा है, भगवान करे, तेरी दाढ़ी दिन का दिन खूब बढ़े और इस तरह कहकर वह चला गया।

अब उसी रास्ते से एक दूसरे राजा की बारात निकली, वह किसी दूसरे देश (शादी कराने) जा रही थी और वह बारात भी विश्राम के लिए उसी जगह पर आकर रुक गयी, वहाँ पर डेरा डाल दिया और उस बारात का लड़का भी वहीं पर उतार दिया गया, ठीक उसी जगह जहाँ वह राजा की लड़की समा गयी थी। जब लड़का (दूल्हा) पालकी से उतरकर हाथ-मुंह धोने लगा तो उसने जमीन पर थोड़े-थोड़े दिख रहे, सोने जैसे बाल देखे। उसने अपने पिता को बुलाकर कहा, देखिए पिताजी, इस जगह पर कुछ चमक रहा है, आप इस जगह को खुदवाइए। राजा ने कहा, नहीं बेटा, कुछ मत खुदवाओ, कहीं कोई देवी वगैरा न हो? लेकिन लड़का नहीं माना, उसने कहा, नहीं पिताजी आपको खुदवाना पडेगा नहीं तो मैं शादी कराने नहीं जाऊँगा, आप जाइए बारात लेकर, मैं यही रहूँगा। अब राजा की लडके की हठ के आगे झुकना पड़ा, क्योंकि बिना लड़के के वे बारात लेकर जाकर करते भी क्या? अतः उन्होंने बरातियों से कहकर उस जगह खुदवाया तो वही लड़की पूरा श्रृगार किए खड़ी मिली, जिस श्रृंगार के साथ वह समा गयी थी। जब लड़की को बाहर निकाला गया तो वह बोली, राजा साहब, मुझे छोड़ दो, मैं कही नही जाऊँगी, मुझे मत

ले जाइए। लेकिन लड़के ने कहा, नही अब तो मैं तुम्हें ले ही जाऊँगा, तुम्हें ही रखूँगा और वे उस लड़की को डोला मे बिठाकर घर ले आये और बारात भी बीच से ही लौट आयी। उधर लड़की वाले बैठे ही रह गये। लड़के वालों को तो सुन्दर- सी लड़की मिल गयी, सो वे वापस चले आये।

अब एक दिन मुहल्ला में ही चूल्हा-न्योता (निमंत्रण) था। अतः कुछ औरतें रानी को लिवाने के लिए आई तो रानी ने पूछा, ठीक है, कितनी देर लगेगी। उन औरतों ने कहा, ज्यादा से ज्यादा एक घंटे लगेगा। तो रानी बोली, ठीक है, अच्छा आप लोग थोड़ी देर के लिए बाहर घूम आइए, तब तक मैं तैयार हो रही हूँ। जब वे औरतें चली गयी तो रानी तैयार होने लगी तो उसने अपनी बढ़ी हुई दाढ़ी देखा, क्योंकि नाऊ ने उसे श्राप दिया था। तो वह बोली, हे दाढ़ी! अगर तुममें सत्त (सत्) है तो तू एक घंटे के लिए उतर जा। सो दाढ़ी सचमुच उतर गयी और रानी ने उसे उठाकर ऐसे ही खुली बखरी (आँगन) के ऊपर दौरी (डलिया) में रख दिया। थोड़ी देर बाद औरतें उसे लिवा ले गयी। अब वहाँ न्योते में एक घंटे के बजाय पूरा दिन लग गया, जिससे रानी परेशान हो रही थी। इधर उसके घर में थोडी देर बाद मालिन फूल डालने आयी तो रानी की दाढ़ी उसी के चिपक गयी। अब वह बेचारी अपना मुंह बंद किए चली जा रही थी तो रास्ते में वही नाऊ मिल गया। नाऊ ने कहा, तुम्ही मुझको बीच में छोड़कर धरती में समा गयी थी और उसकी खूब पिटाई की,जिससे मालिन वहीं पर गिर पड़ी। जब गिर पड़ी तो नाऊ उसे छोड़कर चला गया कि कहीं यह मर न जाये तो मैं भी फंस जाऊं। अब मालिन अपने घर गयी तो उसने माली से सारा हाल कह सुनाया। माली ने कहा, यह किसी का सत्त (सत्) है, जो तुम्हें परेशान किए हुए है। अब रानी जब अपने घर आयी तो वहाँ पर दाढी को न देखकर खूब खुश हुई कि भगवान मेरे जी का जंजाल खत्म हो गया। अब जब राजा आये तो देखा , बड़े खुश हुए और दोनों खूब प्रेम से रहने लगे। किस्सा थी सो हो गयी।

'निपूता राजा'

कथक्कड़- श्रीमती गिरजा देवी

अवस्था- 50 वर्ष, सेक्स-महिला, जाति-क्षत्रिय

संग्रह स्थल- ग्राम-मकरांव, हमीरपुर (उ0प्र0)

दिनॉक- 6 नवम्बर, 1994 ईसवी

संग्रह क्रमांक- 10 ।

अइसे-अइसे एक रहै राजा, उसके चार रानियॉ थीं, तो उनमें से किसी के लड़का नहीं (पैदा) होता था। एक दिन उनके घर एक बाबा आया, उसने पूँछा- बच्चा के मकान में को है? राजा ने कहा, बाबा मैं हूँ और मेरे चार रानियॉ हैं, परन्तु मेरे एक भी सन्तान नहीं है, जिससे मैं ज्यादा दुखी रहता हूँ। बाबा ने कहा, राजा मेरी एक बात मानोगे? राजा ने कहा, क्यों नही। तो बाबा बोला कि मैं एक उपाय बताता हूँ, जिससे तुम्हारी चारों रानियों के पुत्र हो सकते हैं। परन्तु उन चार पुत्रों में से जेठे पुत्र को मैं अपने साथ ले जाऊँगा, तीन को तुम अपने पास रखना। राजा ने कहा, ठीक है। तब बाबा ने राजा से कहा कि तुम जिस आम के पेड़ में चार आमों का गुच्छा लगा हो, उसको एक हाथ से यह डंडा लेकर मारना और दूसरे हाथ से लोक (लपक) लेना। इसके बाद प्रत्येक रानी को एक-एक आम खिला देना, जिससे तुम्हारे चार पुत्र पैदा होंगे।

अब राजा ने बाबा से डंडा लेकर वैसा ही किया, आम लाया और तीन छोटी रानियों को खिला दिया, बड़ी रानी को न दिया क्योंकि वह उससे प्रेम नहीं करता था। यह सब कुछ बड़ी रानी की दासी ने देखा तो उसने आकर बड़ी रानी से बताया कि रानी जी, राजा जी से एक बाबा आम तोड़कर खिलाने को कह गया है और जेठे पुत्र को मांग गया है; लेकिन राजा जी ने आपको आम नहीं दिया, बाकी तीनों रानियों को दिए हैं। रानी बोली, न देने दो, उनकी मर्जी, जिसका पुत्र देना होगा, उसको खिलायेंगे, मुझे क्या?

लेकिन उस दासी का जी (मन) नही माना, वह छोटी रानी के महल में पहुँच गयी और उसी जगह पर जाकर बैठ गयी जहाँ आम के छिलके पड़े हुए थे। छोटी रानी ने दासी से पूँछा कि क्यों, आज कैसे घूम पड़ी? दासी ने कहा, ऐसे ही, रानी जी सो गयी थी तो मैंने सोचा कि चलो छोटी रानी जी के दर्शन कर आऊँ और उसने आमों के छिलके को अपने आँचल के छोर में बाँधकर चुरा लायी और उन्हें पीसकर बड़ीरानी को ठंढ़ाई बताकर पिला दिया।

अब छोटी रानियों के साथ बड़ी रानी के पेट में भी बच्चा आ गया और जब तीनों रानियों के लड़का हुआ तो उसके भी हुआ। तीनों रानियों के महल में हर्षोल्लास मनाया गया तो बड़ी रानी के महल में भी हर्षोल्लास मनाया गया। कुछ दिन बाद वे लड़के बड़े हुए तो बाबा आया; उसने पूछा,बच्चा के मकान में कौन-कौन है? तो राजा बोला, बाबा सब कोई हैं। बाबा ने कहा, ठीक है, अपने लड़कों को बुलाओ। तो राजा उन तीन लड़कों को सजा-संवारकर बाबा के सामने लाया। बाबा ने उनसे पूछा, बच्चा छः महीने की डगर चलोगे या साल भर की। तो लड़कों ने कहा, बाबा छः महीने की। अब बाबा ने डंडा पीटते हुए कहा, जेठे पुत्र को लाओ। अब राजा बहुत घबराया, क्योंकि उसने बड़ी रानी को खाने के लिए आम तो दिए नहीं थे, जाय तो कैसे जाय? किसी तरह संकोच करते-करते राजा बड़ी रानी के महल में पहुँचा तो वही दासी मिल गयी। दासी ने राजा से पूँछा, आज राजा जी कैसे भूल पड़े? तो राजा ने कहा, आम तो खिलाया नहीं, अब बाबा जेठा पूत (पुत्र) मांगता है, दे तो कैसे दें? तो दासी के मुंह से जल्दी से निकल गया, हाँ देंगे जेठा पूत (पुत्र) । अब बड़ी रानी दासी को डांटने लगी कि तूने क्यों छिलका लाकर मुझे खिलाया था; जिसको वह आम खिलाता, उसी से लेकर लड़का देता, मुझे क्या? इतने में उसका लड़का भी आ गया, वह बोला, माताजी, अब तुम परेशान न हो, मुझे जाने दो। राजा उसे सजा-संवारकर बाबा के सामने लाया। बाबा ने उससे पूछा, बच्चा छः महीने की डगर चलोगे कि साल भर की। लड़के ने कहा, बाबा साल भर की। बाबा ने कहा, ठीक है, मैं इसी को अपने साथ ले जाऊँगा।

अब लड़के ने बाबा से कहा, थोड़ी देर के लिए रुकिये, मैं अपनी महतारी (माता) से मिल लूँ। बाबा ने कहा, ठीक है। वह लड़का अपनी माँ के पास गया और बोला, माताजी अब तो मैं बाबा के साथ जा रहा हूँ, आज तुम मुझे अपने हाथ से खाना बनाकर खिला दो, पता नही फिर आऊँ कि न आऊँ। बड़ी रानी ने लड़के को खाना-खिलाया और रोते-रोते बिदा किया। जब लड़का जाने लगा तो एक 'आश का बिरवा' आँगन में लगाकर अपनी माँ से बोला कि माँ यदि यह बिरवा (पेड़) हरा-भरा बना रहे तो समझना मैं अच्छी तरह हूँ और अगर यह मुरझा जाये तो समझना मैं कष्ट में हूँ और अगर यह टूटकर गिर जाये तो समझना मैं मर गया हूँ। अब वह लड़का इतना कहकर बाबा के साथ चला गया। जब अब वह बाबा की कुटी में पहुँचा तो बाबा उसे वहाँ पर छोड़कर टट्टी-कुल्ला (नित्य-क्रिया) करने चला गया। अब लड़के ने वहाँ पर ढेर सारी हड्डिया और खोपड़ी के कंकाल पड़े हुए देखे। वे हड्डिया और कंकाल लड़के को देखकर हँसने लगे तो लड़के ने पूछा, क्यों भई, क्यों हंस रहे हो। वे खोपड़िया बोली कि थोड़ी देर बाद तू भी हमारे साथ मिल जायेगा। लड़के ने पूछा, कैसे, मैं कैसे मिल जाऊँगा। तो वे बोली कि अभी बाबा जब टट्टी-कुल्ला करके आयेगा तो कहेगा, बच्चा लीपो भट्ठी। तो तू ही लीपेगा और बाबा पीछे रहेगा। बाबा फिर कहेगा, बच्चा फूको भट्ठी। तो तू ही फूकेगा (जलायेगा), बाबा पीछे रहेगा। फिर कहेगा, बच्चा चढ़ावो कढाइया। तो तू ही चढ़ायेगा। फिर बाबा कहेगा, बच्चा फिरो पैकरमा। तो तू ही आगे फिरेगा और बाबा पीछे रहेगा तथा तुम्हें उसी कढाई में डाल देगा और पकाकर खा जायेगा और हड्डिया फेंक देगा। अब लड़का बोला, तो फिर क्या उपाय किया जाय? हड्डियों ने बताया कि जब बाबा तुझे यह सब करने के लिए बोले तो तू कहना कि 'आगे गुरू तो पीछे चेला'। इस तरह जब बाबा आगे-आगे पैकरमा करे तो तू बाबा को उठा के भट्ठी में डाल देना और जब बाबा चुर (पक) जाय तो वही मांस हम सब हड्डियों में कनार (छिड़क) देना तो हम लोग भी जीवित हो जायेंगे और इस तरह तू भी बच जायेगा। क्योंकि बाबा को रोज एक घोड़ा और एक लड़का खाने की आदत है।

अब जब बाबा नहा-धोकर आया और लड़के से बोला कि बच्चा लीपो भट्ठी। तो लड़का बोला कि पहले गुरू तो पीछे चेला। अब जब बाबा आगे-आगे लीपै तो पीछे-पीछे लड़का भी लीपता जाय। इस तरह जब पैकरमा करने की बारी आयी तो बाबा ने कहा, बच्चा फिरो पैकरमा। तो लड़का बोला, बाबा, आगे गुरू तो पीछे चेला। अब मजबूरन बाबा को आगे-आगे पैकरमा करना पड़ा। जब वह पैकरमा करने लगा, तब तक भट्टी में ताव भी आ गया था। अतः लड़के ने पीछे से बाबा को उठाकर भट्ठी में डाल दिया। अब बाबा उसमें फद्फदाकर चुर गया और जब ठंडा हो गया तो लड़के ने उसके मांस को उन हड्डियों पर उछाल दिया जिससे सभी एक से एक घोड़े और एक से एक लड़के जीवित हो गये। अब सबने लड़के की बड़ाई की (धन्यवाद दिया) कि तुमने हमको बचा लिया। लड़के ने कहा कि आप लोगों ने युक्ति बताकर मुझे बचाया, इसलिए मैंने आपको बचाया।

अब सब लोग अपने-अपने घर को चलने लगे। वह लड़का भी अपने घर की ओर चला तो उसे रास्ते में एक डोकन्ना (बुढ़िया) मिली, जो बाबा की ही तरह खूब चालाक थी और इसी तरह छल-कपट करके, जुँआ खेल-खेल कर ढेर सारी धन-दौलत और घोड़े इकट्ठे कर लिए थे। अब जब लड़का उसके पास से गुजर रहा था तो डोकन्ना बोली, कहा जा रहे हो लाला, आओ कुछ देर जुँआ खेलें। लड़का थोड़ी देर के लिए रूककर, जो भी उसके पास आठ-आना, चार-आना, पैसे थे, उनसे जुंआ खेलने लगा तो सब कुछ हार गया, घोड़ा भी हार गया। अब लड़का बोला कि दाई, मेरे पास तो अब कुछ भी नहीं है, तो उसने अपने को जुँआ में लगा दिया तथा हार गया। अब उस बुढ़िया ने उसे भी अपने घर में बंद कर लिया। अब जब लड़का भूख-प्यास से व्याकुल , परेशान हुआ तो उधर उसके घर में आश का बिरवा मुरझाने लगा। जिससे उसकी माँ को पता चल गया कि मेरा लाला कष्ट में है, वह बहुत दुखी हुई। वही पर छोटी रानी का लड़का मौजूद था। उसने कहा, अम्मा तुम दुखी न हो, मैं अपने भाई को जरूर ढूँढकर लाऊँगा। अब वह छोटी रानी का लड़का उसे ढूढने निकला पड़ा और उसी बुढ़िया के यहाँ पहुँच गया तो बुढ़िया ने लड़के से कहा कि आ बच्चा थोड़ी देर के लिए जुँआ खेल ले। तो लड़का समझ गया कि यह बुढ़िया बहुत चालाक है। अब लड़का जुँआ खेलने बैठ गया। बुढ़िया भी अपना पांसा लेकर

बैठ गयी। तो लड़का बोला कि दाई पहले मुझे थोड़ा सा पानी पिला दो, मैं बहुत प्यासा हूँ। अब जब बुढ़िया पानी लेने चली गयी तो लड़के ने अपना पांसा बुढ़िया की तरफ रख दिया और उसका जितंता (जिताने वाला) पांसा अपनी तरफ रख लिया। जब बुढ़िया पानी लेकर आयी और जुँआ खेलने लगी तो हारने लगी। अब वह बुढ़िया धीरे-धीरे अपने पास जमा सब धन-दौलत हार गयी। तब उसने घोड़े दांव पर लगाये तथा वो भी हार गयी। जब लड़के ने देखा कि ये घोड़ा मेरे भाई का है तो वह समझ गया कि मेरा भाई भी यही पर होगा। अब धीरे-धीरे बुढ़िया अपना सब कुछ हार गयी तो उस लड़के का बड़ा भाई भी निकला। तब लड़के ने कहा कि दाई अब तेरे पास क्या है जुआ खेलने को। तो बुढ़िया बोली, का है, मै ही हूँ, मुझे ही ले लो। तो लड़के ने बुढ़िया को पकड़कर नरवा (नाले) में फेंक दिया। अब लड़के ने अपने बड़े भाई को नहला-धुलाकर खिलाया-पिलाया और जितनी धन-दौलत निकली थी, उसे बांट दिया। उधर बड़ी रानी के घर का आश का बिरवा पुनः हरा-भरा होने लगा तो रानी समझ गयी कि मेरा लड़का मिल गया है, अतः वह बहुत प्रसन्न हुई। इस प्रकार दोनों भाई धन-दौलत के साथ खुशी-खुशी अपने घर आ गये। किस्सा रहै सो हो गयी।

'शंकर-घरघालन'

कथक्कड़- श्रीमती गिरिजा देवी

अवस्था- 50 वर्ष, सेक्स-महिला, जाति-क्षत्रिय

संग्रह स्थल- ग्राम-मकरॉव, हमीरपुर (उ0प्र0)

दिनॉक- छः नवम्बर, 1994 ईसवी

संग्रह क्रमांक- 11 |

एक जगह दो भाई रहते थे। बड़े का नाम शंकर था, छोटे का नाम घरघालन। शंकर बेचारा सीधा-सादा आदमी था और घरघालन बड़ा होशियार था। उन दोनों के पास साझे में एक भैंस थी, उसके लिए वे दोनों लड़ा करते थे। तो गॉव वालों ने सुझाव दिया कि भाई लड़ते क्यों हो, बॉट क्यों नही लेते। उन दोनों ने भैंस को बॉट लिया। अब घरघालन चालाक था , सो उसने कहा कि भइया, भैस के आगे का हिस्सा तुम ले लो और पीछे का हिस्सा मैं लिए लेता हूँ। अब बेचारा शंकर भैस के अगले हिस्से में उसका मुँह होने के कारण उसे खिलाता-पिलाता और सुबह-शाम घरघालन बैठकर उसका दूध दुह लेता, क्योंकि भैस का पिछला थनो वाला हिस्सा उसे मिला था। जब शंकर ने देखा कि मुझे तो भैस का दूध दुहने-खाने को मिलता ही नहीं, सिर्फ उसे खिलाता-पिलाता ही रहता हूँ तो उसने घरघालन से कहा, ले भइया ले, तू पूरी भैस ले ले, अब मैं जा रहा हूँ और वह तंग होकर घर छोड़कर चला गया।

अब शंकर दूसरे गॉव में एक बनिया के यहॉ नौकरी के लिए पहुँचा। तो बनिया ने उससे पूछा कि क्या लेगा? खाड़ा भर रोटी या पत्ता भर महेरी (दलिया)। शंकर ने सोचा कि पत्ता भर महेरी से क्या होगा, अतः वह खाड़ा भर रोटी रोज पर काम करने को राजी हो गया। लेकिन बनिया ने एक शर्त रखी कि यदि तू काम छोड़कर जायेगा तो मैं तेरी नाक-कान काट लूगा और यदि मैं तुमसे काम छुड़वाऊँ तो तुम मेरी नाक-कान काट लेना। अब शंकर दिनभर बनिया के यहॉ खूब काम करता और शाम को बनिनिया

उसे खाड़ा-भर रोटी दे देती, जिससे वह भूखा रह जाता। कुछ दिन बाद बेचारा शंकर मारे भूख के बहुत दुबला-पतला हो बिल्कुल कमजोर हो गया, फिर भी बनिया उससे जी-तोड़ मेहनत करवाता। अब एक दिन हार कर उसने बनिया से कहा कि भइया लो, मेरे नाक-कान काट लो, अब मैं अपने घर जाऊँगा। बनिया ने नौकरी की शर्त के अनुसार उसके नाक-कान काट लिए और वह वापस अपने घर चला आया।

अब शंकर जब घर पहुँचा तो उसके छोटे भाई घरघालन ने उसका हाल देखकर पूछा कि सब क्या करा आये? तो शंकर ने पूरा हाल कह सुनाया कि फलां गाँव के बनिया ने ऐसा हाल किया है। अब घरघालन बोला, ठीक है, अब तू भैंस दुह-खा और मैं जाता हूँ उसके यहाँ। अपने बड़े भाई शंकर से बनिया के गाँव का पता पूछकर घरघालन उसी बनिया के यहाँ पहुँचा, जिसे मुफ्त में काम करवाने की लत पड़ गयी थी। अतः बनिया ने घरघालन को भी बुलाकर पूछा कि खाँड-भर रोटी में रहोगे या पत्ता भर महेरी में। घरघालन ने सोचा कि खाँड भर रोटी में क्या होगा? अतः वह पत्ता भर महेरी में काम करने को राजी हो गया। बनिया ने उसके सामने भी वही नाक-कान काटने की शर्त रखी, जिसे घरघालन ने स्वीकार कर लिया। अब दिन भर थोड़ा बहुत काम करने के बाद, शाम को खाने के समय घरघालन एक बड़ा सा पुरइन (कमल) का पत्ता तोड़ लाया। बनिनिया शंकर की ही तरह उसे सीधा-साधा जानकर, छिउली (टिसू) के छोटे से पत्ते में एक चमचा महेरी लेकर आयी। तो घरघालन ने कहा, पत्ता भर महेरी की बात तय हुई थी, अब यह पत्ता चाहे जिसका हो, मैं इस पुरइन के पत्ते भर महेरी रोज लूँगा। बनिनिया, मन-मसोसकर रह गयी। उसने सोचा कि यह चालाक है। अब बनिनिया को पूरी बटोई भर महेरी पकानी पड़ती, जिसे वह पुरइन के बड़े - से पत्ते में डालकर भर पेट खाता और जो बचती उसे कुतिया को खिला देता। जिससे वह कुतिया वहाँ रोज आ जाती और उससे लहट गयी।

अब एक दिन खूब बरसात हुई और ओले भी पड़े तो बनिनिया बोली कि

घरघालन आज चूल्हा नहीं जल रहा है, जाकर कहीं से चैला (लकड़ी) फाड़ लाओ। अब घरघालन कुल्हाडी लेकर गया और खेती की जुताई-बुवाई के लिए जितने हल-बक्कर रखे थे उन सबको फाड़ लाया और बनिनिया को दे दिया। जिससे वह बहुत प्रसन्न हुई। अब इसी तरह एक दिन बनिनिया बोली कि घरघालन जाओ जंगल से शिकार कर लाओ, आज शिकार खाने का मन है। तो घरघालन ने कहा ठीक है, चार रोटी बांध दो, मैं शिकार करके लिए आ रहा हूँ। अब वह रोटी लेकर अपने साथ जंगल में कुतिया को ले गया और उसे रोटी खिलाकर, बाद में काट-पीटकर ले आया तथा बनिनिया को दे दिया। अब बनिनिया ने खुशी-खुशी उसको पकाया और दोनों बनिया-बनिनिया ने मिलकर खूब खाया। घरघालन को तो पत्ता भर महेरी से ही काम था। शिकार खाने के बाद जब हड्डिया बची तो बनिनिया तू-तू करके कुतिया को बुलाने लगी। तो घरघालन बोला कि तू-तू किसे कर रही हो, अभी खाया क्या है? बनिनिया सनक कर बोली, क्या तू कुतिया काटकर ले आया था। घरघालन ने कहा, और क्या, तुम्हारे लिए हिरना मारकर मैं कहाँ से लाता? बनिनिया बोली, अच्छा चुप रहना, किसी से बताना नहीं। नहीं तो जाति-बिरादर वाले हमको बाहर कर देंगे। घरघालन बोला,मुझे क्या करना है, तुम लोग जानो। खाया तो तुम्हीं लोगों ने है, मैंने कौन खाया है?

अब जब अषाढ़ आया तो बनिनिया बोली कि घरघालन, जाओ खेत जोत आओ। तो घरघालन बोला कि पहले हल-बक्खर बनवाइए। बनिया बोला कि काहे का हो गये हल बक्खर, रखे तो होंगे। तो घरघालन बोला कि चूल्हे में अभी तक क्या जलाते रहे हो? बनिनिया बोली कि काहे तू हल-बक्खर फाड़ लाया था क्या? उसने कहा, और नहीं तो क्या, कहाँ तुम्हारे लिए बबूल रखे है? अब दोनों बनिया-बनिनिया चौकन्ना हुए कि लगता है यह शंकर का भाई है, हमसे बदला लेने आया है। बनिया ने किसी तरह से नये हल-बक्खर बनवाकर उसे दिया और खेत में ले जाकर उससे कहा कि इसी कुड़े-कुड़ जाना और इसी की सीध में कुड़े-कुड़ आना और ऐसे ही खेत जोतते रहना। अब घरघालन उसी एक कुड़ से हल जोतते चला जाता और उसी से लौट आता। पूरा खेत ऐसे ही पड़ा रहा।

जब कुवार (अश्विन) में खेत बोने का समय आया तो बनिया बोला, घरघालन जाओ खेत बो आओ जाकर। अब घरघालन खेत बोने गया तो उसने बनिया से बताया कि इसमें तो हल ही नहीं चलता है। बनिया चौंका, उसने कहा, काहे चार महीने क्या करते रहे हो? तो घरघालन ने बताया कि आपने जैसे कहा था कि कुड़े-कुड़ जोते रहना, मैंने वैसे ही जोता है। अब बनिया की खेती पड़ती पड़ गयी।

अब दोनों बनिया-बनिनिया परेशान रहने लगे। उन्होंने 'जान लिया कि यह शकर का भाई है। अब यह हमारे नाक-कान काट के मानेगा। सो उन्होंने सलाह बनाई कि रात को घर छोड़कर कहीं भाग चलें और घर में ताला लगा देंगे। जब यह घर में ताला लगा देखेगा तो अपने आप चला जायेगा। फिर कुछ दिनों बाद वापस आकर रहने लगेंगे। घरघालन सब कुछ बरामदे में पड़ा सुनता रहा, जब कि उन्होंने समझा था कि कहीं बाहर होगा। अब बनिनिया ने खूब खाने के लिए बनाया, जिसे एक बड़े से बक्से में भर लिया। रात को उन्होंने अपनी तैयारी पूरी कर ली और सोचा कि सुबह धुंधलके (अंधेरे) में निकल पड़ेंगे, अभी थोड़ा सो लें। जब दोनों सो गये तो घरघालन उनके बक्से में घुसकर बैठ गया। अब जब सुबह होने को हुई तो बनिया जागा और बोला, उठ बनिनिया, चल जल्दी से भाग चले। बनिनिया ने तुरन्त बनिया के सिर पर बक्सा रखवा दिया और भागते चले जा रहे थे, मारे डर के कि कहीं घरघालन जागकर आ न जाय। कुछ दूर चले तो बनिया का सिर काफी गरूवाया तो वह बोला कि बहुत गरू बक्सा है, क्या बनाके रखा है? तो बनिनिया बोली, सब कुछ बना के रख लिया है, चार-छह दिन के लिए खाने को तो हो ही जायेगा। अब बक्से के भीतर लेटे घरघालन को पेशाब लगा तो उसने पेशाब कर दिया, जो बनिया के सिर से होता हुआ उसके मुँह तक पहुँचा। तो बनिया बोला कि इसमें क्या रखा है? बड़ा नुनखर-नुनखर (नमकीन-नमकीन) लगा रहा है। बनिनिया बोली कि हाँ, उसमें तरकारी (सब्जी) रखी है, उसी का रसा टपकता होगा।

अब जब कुछ दूर पहुँचे, घर काफी पीछे छूट गया तो एक कुआ मिला। बनिया ने कहा कि चलो यही पर कलेवा कर लिया जाय। अब बनिनिया ने बक्सा उतार

के जमीन पर रखवाया। अब जब बक्सा खोला तो उसमें घरघालन लेटा था। अब दोनों बनिया-बनिनिया सन्न होकर एक दूसरे की ओर देखते रह गये। बनिया बोला, कहो घरघालन तुम कैसे? घरघालन बोला कि जहाँ आप वहाँ मैं, मैं तो आपका नौकर हूँ। खैर बनिया ने घरघालन को भी खिलाया। उसे भगा तो सकते नहीं थे, क्योंकि नाक-कान काटने की शर्त थी। अब सब लोग जब खा पी चुके तो बनिया ने घरघालन के सिर पर बक्शा रखवाया और वे थोड़ी दूर ऐसे ही चलते गये, क्योंकि उनको कहीं जाना तो था नहीं। जब वे दूसरे कुऐ के पास पहुँचे तब तक शाम हो चली थी। सो तीनों जने उंसी जगह पर रूक गये। अब बनिया ने कहा कि जाओ घरघालन टट्टी-कुल्ला (नित्य-कर्म) कर आओ। तो घरघालन गया ओर कुऐ के जगत (घेरा) की दूसरी ओर छिपकर बैठ गया। अब एकान्त जानकर बनिया अपनी बनिनिया से बोला कि देख बनिनिया, रात को सोते समय घरघालन को कुऐ की तरफ लिटा देंगे। तुम बीच में लेटना तथा जैसे ही मैं तुम्हें धक्का दूँ, तुम तुरन्त उठ बैठना। फिर दोनों लोग घरघालन को कुऐ में फेंककर यहाँ से चल देंगे। बनिनिया बोली कि ठीक है। घरघालन छिपे-छिपे यह सब सुनता रहा और थोड़ी देर बाद खांस खखारकर सामने आ गया। अब सब लोग खा-पीकर रात होने पर लेट गये। बनिया-बनिनिया दोनों सफर के कारण थके मांदे तो थे ही, तुरन्त सो गये। जब वे सो गये तो घरघालन ने उठकर अपनी जगह बनिनिया को लिटा दिया और उसकी जगह स्वयं चुपचाप लेट गया। अब आधीरात के समय बनिया चटपट उठा ओर जल्दबाजी में उसने धोखे में अपनी औरत को ही कुऐ में धक्का देकर डाल दिया। अब जहाँ उसकी औरत रात को लेटी थी, उस जगह पहुँचकर बोला, उठ री, चल जल्दी से भाग चले। तो घरघालन उठकर बैठ गया और बोला, चलो, कहा भाग चलना है? जब बनिया ने देखा तो वह आश्चर्यचकित रह गया। वह निराश होकर घरघालन से बोला, तूने मेरा धन बर्बाद किया, धर्म बिगाड़ा और अब मेरी औरत को मुझी से कुऐ में डलवा दिया। लो भाई, अब मैं तुमसे हार गया, तुम मेरे नाक-कान काट लो। घरघालन बोला, हाँ काटूँगा, तूने मेरे भाई शंकर का यही हाल किया था। अब घरघालन ने बनिया के नाक-कान काटे और वापस अपने घर भाई के पास आकर प्रेमपूर्वक रहने लगा। किस्सा रहै सो हो गयी।

'तुम्हई आय पयार तरे मुसै रहा'

कथक्कड़ - श्रीमती गिरिजा देवी

अवस्था- 50 वर्ष , सेक्स-महिला, जाति- क्षत्रिय

संग्रह स्थल- ग्राम-मकरॉव, जिला- हमीरपुर (उ0प्र0)

दिनॉक- छ. नवम्बर, 1994 ईसवी

संग्रह क्रमांक- 12 ।

एक था किसान और उसके एक पत्नी थी। किसान सीधा-सादा था, मगर उसकी पत्नी बड़ी चलते-पुरजा (चालू किस्म की) थी। किसान जब अपना खेत जोतने जाता तो इधर घर में उसकी पत्नी एक मुसलमान के साथ मौज करती। जब किसान खेत जोतकर आता तो पूछ्ता कि अभी खाना नही बना क्या? तो पत्नी बिगड़कर बोलती कि मुझे क्या मालूम तू आ रहा है और किसान से कहा कि कल से तुम एक ढोलक लेते जाना और गॉव के बाहर से पीटते हुए आना, जिससे मुझे मालूम हो जायेगा कि तू आ रहा है तो मै खाना बनाने लगूँगी। अब बेचारा सीधा-सादा किसान कुछ न बोला, उसे समय से खाना नहीं मिलता था। अतः वह पत्नी के कहने पर ढोलक भी साथ में ले जाने लगा और जब खेत जोतकर वापस आता तो बेचारा ढोलक को बजाते हुए आता। लोग देखते तो फब्तियां कसते कि देखो, 'या सार ढोलक बजावत जात है कि मेहेरिया (पत्नी) रोटी पवै (बनावै) और वह दिन-भर घर मा मुसलमान का राखे रहति है।' इधर जैसे ही घर में पत्नी ढोलक की आवाज सुनती, मुसलमान को निकाल देती तथा चूल्हा जलाकर रोटी बनाने लगती।

एक दिन किसान का भाजा आया और वह उसे खेत में ही मिल गया तो उसने देखा कि मामा ढोलक रखे हैं। उसने पूछा कि मामा या ढोलक किसलिए रखे हो। किसान बोला, लाला तुम्हारी माई समय से रोटी नहीं बनाती। इसलिए जब मैं घर जाता हूँ तो गॉव के बाहर से ही ढोलक पीटने लगता हूँ, जिसे सुनकर तुम्हारी माई चूल्हा जलाकर

रोटी बनाना शुरू कर देती है। भाजे को इसमें कुछ चाल समझ में आई। उसने कहा, ठीक है मामा, हम घर चल रहे है, तुम आना।

अब जब भांजा घर आया तो उसने किवाड़ की दराज से सब नजारा देखा। उसने दरवाजा खटखाटाते हुए कहा कि मांई-मांई दरवाजा खोलो। मांई ने झट से मुसलमान को बखरी में पड़े हुए पयार तरे छिपा दिया, भांजे ने किवाड़ की दराज से देख लिया। जब मांई ने दरवाजा खोला तो वह बोला, मांई मामा ने कहा है कि बखरी में जो पयार रखा है उसे कूट डालना। उसकी मांई ने कहा, अरे लाला! पहले पानी-वानी पी लो, फिर करना जो करना हो। लेकिन भांजे ने कहा, नहीं मांई, मामा ने कहा है कि पहले पयार कूट लेना। अब भांजे ने लाठी लेकर पयार को कूटना शरू कर दिया तो उसमें छिपा मुसलमान गुहार मार के भाग गया।

अब जब शाम को किसान घर आया तो उसके भांनजे ने कहा, मामा मैं आपके घर का पानी नही पीऊँगा, मांई घर में मुसलमान को बेड़े (अन्दर किए) रहती है। तो मामा बेचारा सीधा-सादा कुछ न बोल पाया, उसने कहा, तो क्या किया जाय? भांजे ने कहा, मामा कथा सुन डालो तथा सभी को खिला-पिला दो। अतः किसान ने शाम को कथा सुनी तो सभी भाईयों को निमंत्रण दिया गया। अब मांई ने भांजे को बुलाकर कहा, लाला उसको (मुसलमान) को भी न्योता दे देना। भांजे ने कहा, ठीक है मांई। अब जब शाम को सब लोग खाने बैठे तो खाना परोसने के लिए भांजा खड़ा हुआ। भांजा गाँव के अन्य सभी लोगों को खाने की सब चीजें कई बार परोसता पर जब मुसलमान के पास जाता तो कहता कि - 'तुम्हई आय पयार तरे घुसै रहा।' तो मुसलमान झट से बोलता, 'नही-नहीं।' इससे अगल-बगल के लोग समझते कि खाना-खाने के लिए मना कर रहा है, क्योंकि लड़का उसके कान में धीरे से बोलता था कि कोई सुन न पाये। उधर उसकी मांई की नजर उसी मुसलमान पर थी। उसने भांजे को बुलाकर कहा, लाला, उसको भी पूड़ी दे आओ। भांजा बोला, अच्छा ठीक है माई और वह मुसलमान के पास जाकर फिर धीरे से उसके काम में बोला, 'तुम्हई

आय पयार तरे घुसै रहा।' मुसलमान फिर झट से बोला, 'नहीं-नहीं।' भांनजे ने फिर उसे पूड़ी नहीं दी। अब उसकी मांई सोचती कि पता नहीं ये भांजा क्या कह देता है? जो वह न कर देता है।

अब अगले दिन सुबह मामा बोला, लाला जाना हो तो चले जाना , नहीं तो बने रहना। भांजा बोला, नहीं मामा, मै वापस जाऊँगा। तो मामा बोला कि ठीक है, मांई से प्रसाद बंधवा लेना लड़कों के लिए और चले जाना। इतना कहकर किसान खेत जोतने चला गया। अब उसकी मांई ने भांजे को खिला-पिलाकर और प्रसाद बाँधकर घर से बिदा कर दिया। भाजा जब चला गया तो वह फिर मुसलमान को अपने घर में बुला लाई और उससे पूछने लगी कि न जाने कल भांजा क्या कह देता था, जो तुम पूड़ी नहीं लेते थे, क्या हो गया था? और मुसलमान को दही-पूड़ी मीसकर खिलाने लगी। इतने में वह भांजा लौटकर फिर घर आ गया तथा किवाड़ की दराज से सब देखकर बोला, मांई-मांई किवाड़ खोलो। मांई ने सुना तो वह फिर जल्दी से मुसलमान को ले जाकर बखरी (आँगन) के एक कोने में छिपा आयी और उसके ऊपर एक फटा-पुराना गद्दा डाल दिया। भांनजे ने किवाड़ की दराज से यह सब देख लिया। अब आकर मांई ने दरवाजा खोला और पूँछा, लाला काहे लौट आये? तो भांजे ने कहा, मांई, मामा ने कहा है कि लाला फटा-गद्दा लेते जाना, घर मे लड़को के लेटने मे दिक्कत होती होगी। तो माई बोली, अरे लाला, फटा-पुरा गद्दा ले जाकर क्या करोगे, इन नये वाले गद्दों में से कोई ले जाओ, मामा का तो दिमाक फिर गया है। और मांई ने तरह-तरह के गद्दे दिखाये, लेकिन भांजे ने कहा, नहीं माई , मामा फटे-गद्दे के लिए ही बोले हैं, दूसरा कोई ले जायेंगे तो मामा नाराज होगे। अत मै फटा-गद्दा ही ले जाऊँगा। अब भांजे ने एक रस्सी ली और बखरी के कोने मे लिपटे गद्दे को कसकर बाँध लिया, उसे खोला भी नहीं कि कहीं वह फिर भाग न जाय। और उस बंधे गद्दे को ले जाकर एक कुएं में फेंक दिया, जिससे उसमें बंधा मुसलमान भी कुएँ मे चला गया। अब भांजा अपने मामा के पास आकर बोला कि मामा, अब मांई आपको समय से खाना बनाकर खिलायेगी। मामा बोला, क्यों? तो भांजे ने मामा से सब हाल कह सुनाया और अपने घर चला गया। किस्सा रहै सो हो गई।

'राजा के लड़के व नेऊरा'

कथक्कड़- श्रीमती गिरिजा देवी

अवस्था- 50 वर्ष, सेक्स-महिला, जाति-क्षत्रिय

संग्रह स्थल- मकरॉव, जिला-हमीरपुर (उ0प्र0)

दिनॉक- सात नवम्बर, 1994 ईसवी

संग्रह क्रमांक- 13 ।

एक था राजा, उसके चार रानियॉ थीं, उनके लड़के नहीं होते थे। एक दिन एक बाबा आया और राजा ने उनसे पुत्र-प्राप्ति का वरदान मांगा। तो बाबा ने राजा को आम के चार फल दिए और बोला चारो रानियों को एक-एक आम दिखला देना। राजा ने चारों रानियों को एक-एक आम दे दिया। अब तीन रानियों ने तो तुरन्त अपने आम खा लिए लेकिन चौथी रानी ने आम को एक जगह रख दिया। इतने में एक नेऊरा आया और आम को सूँघ गया। जब थोड़ी देर बाद रानी ने आम खा लिया तो उसके नेऊरा पैदा हुआ और बाकी तीनों रानियो के लड़के पैदा हुए। अब घर में लड़कों की तो कद्र होती लेकिन उस नेऊरा की कोई कदर न करता। लेकिन नेऊरा बड़ा पैजौशी था। अब जब लड़के बड़े हुए तो नौकरी करने के लिए बाहर जाने लगे। नेऊरा अपनी मॉ से बोला कि मैं भी अपने भाईयों के साथ जाऊँगा। तो उसकी मॉ लड़कों से बोली कि लाला, नेऊरा कह रहा है कि मै भी साथ जाऊँगा। लड़के बोले इसको कहाँ साथ ले जायेंगे, हम लोग तो नौकरी करेगे, ये क्या करेगा? और वे लड़के चल दिए तो नेऊरा नहीं माना, वह भी पीछे पीछे सरकता हुआ चला गया।

अब जब लडके कुछ दूर पहुँचे तो एक बेरी का पेड़ मिला, जिसमें खूब बेर लगे हुए थे। वे लड़के आपस मे कहने लगे कि अगर नेऊरा को साथ लाये होते तो पेड़ पर चढ़कर बेर तोड़ता। तो नेऊरा पीछे से बोला, मै हूँ भईया। भाईयों ने कहा, ठीक है,

चढ़ जा पेड़ पर। अब नेऊरा बेरी के पेड़ पर चढ़ गया और वह पके-पके बेर खाता जाता तथा कच्चे-कच्चे नीचे गिराता जाता जिससे उन तीनों भाईयों को बड़ी गुस्सा आई। उन्होंने पेड़ के चारों ओर झाँखर लगा दिया, जिससे कि नेऊरा उसी मे फँसा रह जाय और आगे चल दिए। लेकिन नेऊरा किसी तरह झाँखर फाँदकर फिर पीछे-पीछे हो लिया। थोड़ी दूर बाद एक आम का पेड़ मिला तो लड़के फिर बोले कि अगर नेऊरा को लाये होते तो आम तोड़वाकर खाते। नेऊरा फिर पीछे से बोला, मैं हूँ भईया। भाईयां ने फिर कहा, चढ़ जा पेड़ पर और पके-पके आम नीचे गिराना। अब नेऊरा पेड़ पर चढ़ गया और फिर उसी तरह पके-पके आम खा जाता तथा कच्चे-कच्चे नीचे गिरा देता। जिससे भाईयों ने फिर उसे झाँखरों से रूँध दिया। लेकिन नेऊरा फिर किसी तरह निकलकर उनके पीछे हो लिया।

अब जब भाईयों ने देखा कि यह फिर पीछे-पीछे आ रहा है तो कुछ दूर पर उनको एक धोबी मिला, उन्होंने धोबी से पूछा कि भईया नौकर रखोगे? धोबी ने कहा, हाँ रखेगे। तो वे बोले, ये मेरा नेऊरा रख लो और ये जो भी छोटा-मोटा काम करे, वैसे हमें वापस आने पर पैसा दे देना। अब नेऊरा को धोबी के पास नौकर रखकर वे लड़के आगे बढ गये। नेऊरा धोबी के गधे चरा लाता और उसके लड़के-बच्चों को खेलाता रहता।

अब आठ-दस साल बाद नेऊरा के भाईयों की चिट्ठी धोबी के पास आई कि भाई हम इस दिन आ रहे हैं, हमारे नेऊरा का जो पैसा हो, उसे रखे रहना, हम आकर ले लेंगे। उसी रात धोबी का लड़का हगासा (टट्टी लगना) हुआ तो धोबिन ने कहा, ऐ नेऊरा, जा लड़के को हगा ला। अब नेऊरा उस लड़के को घर से बाहर लाया और उससे बोला कि देख हगना तो मूतना नहीं और यदि मूतना तो हगना नहीं। नहीं तो मैं तुझे जान से मार डालूँगा। अब धोबी का लड़का बेचारा मारे डर के ऐसे ही लौट आया। थोड़ी देर बाद फिर उसने अपनी माँ को जगाया। उसकी माँ ने झल्लाकर नेऊरा से कहा कि नेऊरा जा इसे हगा ला और अगर न हगे तो नासकटे को वहीं गाड़ देना, मुझे रात में बार-

बार तंग कर रहा है। अब नेऊरा लड़के को बाहर लाया और उससे बोला कि देख तू अभी बता दे कि तेरे माँ-बाप ने सोना-चाँदी कहाँ छुपा रखा है, नहीं तो मैं तुझे इसी जगह गाड़ दूँगा। अब धोबी के लड़के ने डर के मारे बता दिया कि जहाँ अम्मा-बप्पा सोते हैं, वहीं पलंग के नीचे चार घड़े गड़े हैं। अब नेऊरा ने लड़के को पुचकार कर सुला दिया और रात को चुपचाप पलंग के नीचे खोद-खोदकर चारों घड़ों से सोना-चाँदी , पैसा निकाल कर धोबी की एक मरी (कमजोर) गदहिया के पेट में भर आया।

अब जब सुबह उसके भाई घोड़ों में चढ़कर आ गये और बोले, धोबी, हमारे नेऊरा का जो होता है, उसे दो। उन्हें नेऊरा को अपना भाई कहने में शर्म आती थी, क्योंकि वे तो ठहरे राजा के लड़के। धोबी बोला, सरकार, कल तो आपकी चिट्ठी आई है, इतनी जल्दी मैं पैसे का इन्तजाम तो नहीं कर पाया। हाँ, आपको इन गदहियों में जो अच्छी लगे छाँट लीजिए। अब नेऊरा उसी मरी-सी गदहिया को लेने को तैयार हुआ, जिसके पेट में उसने सोना-चाँदी भरा था। धोबी बोला, अरे नेऊरा , अच्छी-अच्छी कोई ले ले। नेऊरा बोला, नहीं मैं यही लूँगा। अब उसके भाईयों ने भी कहा कि धोबी भाई, यही दे दो, तुम्हारा दोष नहीं है, जब इसे यही पसन्द है तो दे दो।

अब नेऊरा उसी मरी गदहिया को लेकर घर चल दिया। उसके भाई तो घोड़ों में थे, अतः वे जल्दी-जल्दी घोड़े दौड़ाकर आगे निकल गये। नेऊरा बेचारा गदहिया की पीठ मे बैठकर धीरे-धीरे आ रहा था। क्योंकि गदहिया के पेट में उसने सोना-चाँदी भर दिया था अतः गदहिया का पेट फूला हुआ था, इसलिए वह और धीरे-धीरे चल रही थी। अब जब वे लड़के घर पहुँचे तो नेऊरा की माँ ने पूँछा, लाला मेरा नेऊरा भी आ रहा है? लड़कों ने कहा, हाँ, आ रहा होगा पीछे, मरी गदहिया लिए धीरे-धीरे आता होगा।

अब नेऊरा जब शाम को घर पहुँचा तो आते ही बोला, अम्मा, अगवार (आगे) लीप, पिछवार (पीछे) लीप, धोबी का मुगरा (डंडा) लाव। उसकी माँ ने जल्दी से ऐसा ही

किया। अब नेऊरा ने मुगरा से गदहिया को कूटना (मारना) शुरू कर दिया तो उसके पेट से झर-झर करके सोना-चाँदी , पैसे गिरने लगे। गदहिया को मारते-मारते नेऊरा ने उसके पेट से सब पैसा निकाल लिया और गदहिया जब मर गयी तो नेऊरा उसे बकरे का मांस बताकर गाँवभर में बेंच आया। इधर घर में नेऊरा की माँ ने सोना-चाँदी , पैसे सब एक डहरिया (मिट्‌टी का बड़ा सा वर्तन) में भर लिए, कुछ इधर-उधर भी गिर गये। अब सुबह जब उसकी जेठानी आयी तो उसने इधर-उधर पैसे पड़े देखा तो पूँछा कि क्यों री, तेरा नेऊरा बहुत पैसा कमाकर लाया है क्या? नेऊरा की माँ ने बताया किं हाँ जीजी, एक गदहिया लाया था, उसी को कूटा था, जिससे थोड़ा-बहुत पैसा निकल आया है।

अब उसकी जेठानी अपने घर पहुँची तथा उन तीनों लड़कों से बोली, क्यों रे, तुम लोगों ने अपने-अपने घोड़ों को क्यों नहीं कूटा? नेऊरा ने अपनी गदहिया को कूट-कूटकर पैसे निकाले है। अब लड़कों की माताओं ने नेऊरा की माँ से पूँछा कि तुम्हारा नेऊरा कैसे आया था? उसने बताया कि गदहिया पर द्वार में आकर बोला था, अम्मा, अगवार लीप, पिछवार लीप, धोबी का मुगरा लाव। अब तीनों लड़के अपने-अपने घोड़ों में बैठकर कुछ दूर गये तथा वापस आकर उन्होनें अपनी माताओं से वैसा ही करने को कहा और अपने-अपने घोड़ों को मुगरा से कूटने लगे। लेकिन उन घोड़ों के पेट में पैसा तो भरा नहीं था अतः वे लीद छोडते छोड़ते मर गये पर पैसा नहीं निकला। अब उन्होंने घोड़ों का मांस बेचने के लिए नेऊरा से पूँछा तो नेऊरा ने कहा, जाओ चिल्लाकर कहना, घोडे का मांस ले लो। अब उन तीन लड़कों ने वैसा ही कहा तो वे तीनों सिपाहियों द्वारा पकड़ लिए गये कि कहीं घोड़े का मास बिकता है? अब उन लड़कों को पैसा देकर छुड़ाया गया और इधर नेऊरा और उसकी माँ आराम से रहने लगे।

******

सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

(1) सगीत शास्त्र: के0 वासुदेव शास्त्री, 1968 ई0

(2) संगीत की कहानी: भगवतशरण उपाध्याय, 1957 ई0

(3) लोकसाहित्य का अध्ययन. डॉ0 त्रिलोचन पाण्डेय, 1974 ई0

(4) बुन्देलखण्ड का लोकजीवन: अयोध्या प्रसाद गुप्त 'कुमुद', 1997 ई0

(5) भारत की चित्रकला: रायकृष्णदास, 1974 ई0

(6) हिन्दी साहित्य का आदिकाल: डॉ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी, 1961 ई0

(7) संस्कृत साहित्य का इतिहास: ए0बी0 कीथ, अनु0- मंगलदेवशास्त्री, 1960 ई0

(8) लोकसाहित्य विज्ञान. डॉ0 सत्येन्द्र, 1962 ई0

(9) लोककथा विज्ञान: श्रीचन्द्र जैन, 1977 ई0

(10) मध्यकालीन हिन्दी प्रबंध काव्यों में कथानक- रूढ़ियाँ: डॉ0 ब्रजविलास श्रीवास्तव, 1968 ई0

(11) मानव और संस्कृति: श्यामाचरण दुबे, 1960 ई0

(12) लोकसाहित्य की भूमिका. सत्यव्रत अवस्थी, 1957 ई0

(13) बुन्देलखण्ड का भाषा-शास्त्रीय अध्ययन: डॉ0 रामेश्वरदयाल अग्रवाल, 1963ई0

(14) मध्यदेश: धीरेन्द्र वर्मा, 1955 ई0

(15) हिन्दी-भाषा का इतिहास धीरेन्द्र वर्मा, 1962 ई0

(16) बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास. गोरेलाल तिवारी, 1933 ई0

(17) बुन्देली और उसके क्षेत्रीय रूप: डॉ0 कृष्णलाल हंस, 1976 ई0

(18) बुन्देलखण्ड का वृहद् इतिहास: डॉ0 काशीप्रसाद त्रिपाठी, 1991 ई0

(19) बुन्देलखण्ड की सस्कृति और साहित्य: रामचरण ह्यारण 'मित्र' 1969 ई0

(20) बुन्देलखण्ड की प्राचीनता: डॉ0 भागीरथ प्रसाद त्रिपाठी 'वागीश शास्त्री', 1965ई0

(21) बुन्देलखण्डी फड़ साहित्य. डॉ0 गनेशीलाल बुधौलिया, 1987 ई0

(22) भारत का भाषा-सर्वेक्षण (भाग 6 व 9) : जार्ज ग्रियर्सन, प्राक्कथन- 1914 ई0, हिन्दी संस्करण- 1967 ई0

(23) भारत का भाषा सर्वेक्षण: सर जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन, 1927 ई0, अनु0- उदय नारायण तिवारी, 1959 ई0

(24) हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास (षोडश भाग): सं0- महापंडित राहुल सांकृत्यायन, डॉ0 कृष्णदेव उपाध्याय, 1960 ई0

(25) मध्यदेशीय भाषा (ग्वालियरी). हरिहर निवास द्विवेदी, 1955 ई0

(26) प्राचीन भारतीय संस्कृति, कला, राजनीति, धर्म तथा दर्शन: डॉ0 ईश्वरी प्रसाद, 1980 ई0

(27) हरियाना प्रदेश का लोकसाहित्य: डॉ0 शंकर लाल यादव, 1960 ई0

(28) बुन्देली लोक-काव्य (दो भागों में): सं0 - डॉ0 बलभद्र तिवारी, 1977 व 1979ई0

(29) बुन्देली लोकसाहित्य: डॉ0 रामस्वरूप श्रीवास्तव 'स्नेही', 1975ई0

(30) भारत के लोकनृत्य: डॉ0 श्याम परमार, 1974 ई0

(31) लोकाचरण: डॉ0 गनेशीलाल बुधौलिया, 1991 ई0

(32) लोकसाहित्य की भूमिका. डॉ0 कृष्णदेव उपाध्याय, 1992ई0

(33) अवधी का लोकसाहित्य: डॉ0 सरोजनी रोहतगी, 1971 ई0

(34) चन्देलकालीन महोबा और हमीरपुर जनपद के पुरावशेष: वासुदेव चौरसिया, 1994 ई0

(35) भारत की जनजातीय संस्कृति: विजयशंकर उपाध्याय व विजय प्रकाश शर्मा, 1993 ई0

(36) लोककथाओं के कुछ रूढ़-तन्तु: डॉ0 कन्हैयालाल सहल, 1965 ई0

(37) कुशललाभ के कथासाहित्य का लोकतात्विक अध्ययन: रुक्मिणी वैश्य, 1979ई0

(38) हिन्दी उपन्यासों का लोकवार्तापरक अनुशीलन: डॉ0 इन्दिरा जोशी, 1986 ई0

(39) कथासरित्सागर (तीन खण्डों में): अनु0- पं0 केदारनाथ शर्मा 'सारस्वत', जटाशंकर झा व प्रफुल्लचन्द्र ओझा; बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना; भूमिका- 1960ई0

(40) महाभारत (छः खण्डो मे) ; अनु0- साहित्याचार्य पण्डित रामनारायणदत्त शास्त्री पाण्डेय 'राम'; गीता प्रेस, गोरखपुर; 1966ई0

(41) श्रीमद्भागवत (दो भागों में) सं0- प0रूपनारायण पाण्डेय, हिन्दुस्तानी बुक डिपो, लखनऊ, 1940 ई0

(42) श्रीरामचरितमानस. श्रीमद्गोस्वामी तुलसीदास विरचित; गीताप्रेस, गोरखपुर; 1996 ई0

(43) महाभारत कथाः चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली

(44) भागवत कथा: सूरजमल मेहता, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली; 1985 ई0

(45) श्रीमद्भागवतपुराणः सत्यवीर शास्त्री, साधना पाकेट बुक्स, नई दिल्ली; 1984 ई0

(46) श्रीभक्तमालः गोस्वामी श्री नाभा जी, टीका- श्री प्रियादास जी, नवलकिशोर प्रेस, बुक डिपो, लखनऊ; 1962 ई0

(47) श्रेष्ठ पौराणिक कथाएँ: राजकुमारी श्रीवास्तव, सामायिक प्रकाशन दरियागंज, नई दिल्ली; 1985 ई0

(48) बेताल पच्चीसी यशपाल जैन, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली

(49) सिंहासन बत्तीसी. यशपाल जैन, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली

लोककथा-संग्रह

(1) पाषाण नगरी (बुन्देलखण्ड की लोककथाएँ): शिवसहाय चतुर्वेदी, 1950 ई0

(2) बुन्देलखण्ड की ग्राम-कहानियाँ: शिवसहाय चतुर्वेदी, 1947 ई0

(3) गौने की बिदा(बुंदेलखण्ड कीलोककथाएँ): शिवसहाय चतुर्वेदी, 1953 ई0

(4) बुन्देली लोक-कहानियाँ : शिवसहाय चतुर्वेदी, 1955 ई0

(5) केतकी के फूल (बुन्देलखण्ड की लोककथाएँ): शिवसहाय चतुर्वेदी, 1955 ई0

(6) जैसी करनी वैसी भरनी (बुन्देलखण्ड की लोककथाएँ): शिवसहाय चतुर्वेदी, 1955ई0

(7) हमारी लोककथाएँ(विभिन्न अँचलों की लोककथाएँ): सम्पा0-शिवसहाय चतुर्वेदी, 1995ई0

(8) पुण्य की जड़ हरी (ब्रज की लोककथाएँ): आदर्श कुमारी, 1993 ई0

(9) ब्रज की लोककहानियाँ: डॉ0 सत्येन्द्र, 1947 ई0

(10) भाग्य की बलिहारी (राजस्थान की लोककथाएँ): लक्ष्मीनिवास बिड़ला, 1993ई0

(11) चौबोली रानी (राजस्थान की लोककथाएँ): लक्ष्मी निवास बिड़ला, 1991 ई0

(12) लखटकिया (राजस्थान की लोककथाएँ): लक्ष्मीनिवास बिड़ला, 1993 ई0

(13) सतवन्ती (मालवा की लोककथाएँ): चन्द्रशेखर दूबे, 1993 ई0

(14) उत्तर प्रदेश की लोककथाएँ: सावित्री देवी वर्मा, 1992 ई0

(15) मारीशस की शकुन्तला (मारीशस की लोककथाएँ): प्रह्लादशरण, 1989 ई0

पत्र-पत्रिकाएँ

(1) राष्ट्रीय सहारा (हिन्दी-दैनिक): लखनऊ से प्रकाशित

(2) आजकल (मासिक-पत्र), प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली

(3) मधुकर (पाक्षिक-पत्र): सं0- बनारसीदास चतुर्वेदी, श्री वीरेन्द्र-केशव- साहित्य-परिषद, टीकमगढ़

(4) लोकवार्ता (मुख्यतः बुन्देलखण्ड से सम्बन्धित शोध-पत्रिका): सं0- कृष्णानन्द गुप्त, लोकवार्ता कार्यालय, टीकमगढ़

(5) ईसुरी (शोधपत्रिका): सं0- कान्ति कुमार जैन, बुन्देली पीठ, हिन्दी विभाग, सागर विश्वविद्यालय, सागर

(6) मामुलिया (शोध-पत्रिका): सं0-डॉ0 नर्मदा प्रसाद गुप्त, बुन्देलखण्ड साहित्य अकादमी, छतरपुर

(7) चौमासा (आदिवासी एवं लोककथाओं पर केन्द्रित शोध-पत्रिका): सं0- कपिल तिवारी, मध्य प्रदेश आदिवासी एवं लोककलापरिषद, भोपाल

(8) विन्ध्य-भूमि (शोध-पत्रिका): सं0- विद्यानिवास मिश्र, सूचना एवं प्रचार विभाग, विन्ध्य प्रदेश, रीवा

(9) मरुभारती (त्रैमासिक शोध-पत्रिका): सं0- डॉ0 कन्हैयालाल सहल, मरुभारती कार्यालय, पिलानी (राजस्थान)

(10) शोध-पत्रिका (राजस्थान शिक्षा-विभाग द्वारा स्वीकृत): साहित्य संस्थान, राजस्थान विद्यापीठ, उदयपुर

(11) परम्परा (शोध-पत्रिका): सं0- नारायण सिंह भाटी, राजस्थानी शोध संस्थान, जोधपुर

(12) राष्ट्रभारती (शोध-पत्रिका): सं0- मोहनलाल भट्ट, हृषीकेश शर्मा; राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दी नगर, वर्धा (महाराष्ट्र)

(13) सम्मेलन-पत्रिका: हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

(14) हिन्दुस्तानी (त्रैमासिक): हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद

(15) अनुगमन (हिन्दी त्रिमासिकी): सं0 हरिशंकर द्विवेदी 'अज्ञान',मीरापुर, इलाहाबाद

(16) कल्याण (पुराणकथांक) : गीता प्रेस, गोरखपुर

(17) कादम्बिनी : (मासिक-पत्रिका) हिन्दुस्तान टाइम्स प्रकाशन, नई दिल्ली

(18) बालहँस (मासिक-पत्रिका): राजस्थान पत्रिका प्रकाशन, जयपुर

कोश

हिन्दी

(1) हिन्दी साहित्य कोश (दो भागों में): सं0- धीरेन्द्र वर्मा, 1985 ई0

(2) हिन्दी शब्दकोश: सं0- डॉ0 हरदेव बाहरी, 1993 ई0

(3) बुन्देली कहावत कोश: सं0 श्रीकृष्णानन्द गुप्त, 1960 ई0

(4) प्रासंगिक कथा कोश : सं0- श्रीमती गुलाब मेहता, 1954 ई0

अंग्रेजी

(5) Dictionary of World Literature: Edited by- Joseph T. Shiplay, 1972 A.D.

(6) A Dictionary of Literary terms: Edited by- J.A. Cudden, 1980 A.D.

(7) The Oxford English Dictionary (Vol. VI), 1933 A.D.

(8) Encyclopadia Americana (Vol-17)

(9) Encyclopadia Britanica (Vol-IV)

(10) The Ocean of Story (Vol-1 to 10): Edited by- N.M. Penzer, 1924 A.D.

अप्रकाशित शोध-प्रबंध

(1) ब्रज लोक-कथाओं में कथानक अभिप्राय: बीना गोस्वामी, हिन्दी विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद की 'डी0फिल्0' उपाधि के लिए प्रस्तुत- 1988 ई0।